भारतीय साहित्य

भारतीय भाषाविज्ञान तथा साहित्य का शोधपरक त्रैमासिक

अक्टूबर १९६०

[वर्ष ५ अंक ४]

सम्पादक

डा० विश्वनाथ प्रसाद

क० मुं० हिन्दी तथा भाषाविज्ञान विद्यापीठ,
आगरा विश्वविद्यालय, आगरा

प्रकाशक
संचालक,
क० मुं० हिन्दी तथा भाषाविज्ञान,
विद्यापीठ, आगरा विश्वविद्यालय, आगरा।

वार्षिक मूल्य १२)
इस अंक का मूल्य ७)

भारतीय साहित्य
वर्ष ५, अंक ४

मुद्रक,
हरिकृष्ण कपूर
आगरा यूनिवर्सिटी प्रेस,
आगरा।

विषय-सूची

निवेदन

१. प्रस्तुत अंक केवल एक निबंध में ही पूरा हुआ है। यह लोकवार्त्ता विषयक है। आशा है, कि पाठकों को यह विविध उपयोगी सामग्री से युक्त और रोचक प्रतीत होगा।

२. भले ही यह एक निबंध हो, पर इसमें यथावश्यक कई अन्य निबंध कुछ अन्य विद्वानों के लिखे जहाँ तहाँ उद्धृत किये गये हैं। भविष्य पुराण से, तथा अन्यत्र से भी कुछ अंश उद्धृत किये गये हैं। इससे वैविध्य भी आया है, तथा रोचकता भी आयी होगी। ज्ञानवर्द्धन और प्रसंग-पुष्टि के लिए भी उनकी आवश्यकता थी।

३. जिन पत्र-पत्रिकाओं से, तथा ग्रंथों से जिन लेखकों के लेख इस प्रकार लिये गये हैं उनमें से प्रायः सभी के नामोल्लेख यथास्थान किये गये हैं, फिर भी कुछेक स्थानों पर ऐसा उल्लेख रह गया है। मैं उन सभी के प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता हूँ, और जिनके उल्लेख यथास्थान छूट गये हैं, उनसे क्षमा चाहता हूँ। आशा है वे मेरे इस प्रमाद के लिये मुझे अवश्य क्षमा कर देंगे।

४. यह समस्त सामग्री यहाँ वस्तुतः शोध की दृष्टि से प्रारंभिक रूप की मानी जानी चाहिये। जहाँ तहाँ 'लोकतत्व' का गहरा विवेचन भी मिलेगा, पर वैसा विवेचन सभी विषयों पर होना चाहिये था। यह कार्य एक अलग प्रयत्न के लिये छोड़ दिया गया है, वह प्रयत्न या तो हमारे शोध-छात्र करेंगे या किसी स्वतन्त्र ग्रंथ में उसे प्रस्तुत किया जा सकेगा।

५. इसमें ब्रज की थापे की कला का भी बहुत कुछ समावेश हुआ है। इस कला पर और उसके अनुष्ठान पर भी स्वतंत्र कार्य अपेक्षित हैं। एक प्राध्यापक इसी पर अनुसंधान कर रहे हैं। आशा है इस सामग्री से ऐसे अनुसंधाताओं को भी सहायता मिलेगी।

६. तुलना के लिये भी कहीं-कहीं अन्य क्षेत्रों की सामग्री दी गयी है। वांछनीय यह था कि ऐसी तुलना आद्योपान्त पूर्ण होती। किन्तु यह हमारा विषय नहीं था। हाँ, इस विषय में तुलना मूलक परिपाटी का कुछ दिग्दर्शन इसके द्वारा हो सकेगा।

७. यह भी अपेक्षित था कि ब्रज के समस्त क्षेत्र का परिपूर्ण सर्वेक्षण कराया जाता। पर जिस बड़ी कठिनाई के कारण वह महान् कार्य संपन्न नहीं हो सकता था, उसी के निवारणार्थ यह अंक प्रकाशित किया गया है। इसके आधार पर वह परिपूर्ण सर्वेक्षण ठीक-ठीक किया जा सकेगा।

८. इस विषय पर अब तक जो कार्य हुए हैं, उनमें कुछ कहानियों या कुछ गीतों को ही दिया गया है। व्रत के पूर्ण विधान का वर्णन प्रायः नहीं मिलता। पुराणों में

व्रत-विधान वर्तमान लोक-व्रत विधान से भिन्न है, यह इस निबंध में उद्धृत अंशों से ही सिद्ध होता है। इस दृष्टि से यह कार्य कैसा भी हो, अपना एक निजी महत्व रखता है। संभवतः सभी पक्षों को लेकर इतनी अनुसंधान-योग्य सामग्री ऐसी गंभीर विचारणा और तुलना के साथ हिन्दी में पहली बार ही प्रकाश में आयी है।

६. पारिभाषिक शब्दावली देना भी अपेक्षित था। किन्तु स्थानाभाव से उसे भी नहीं दिया जा रहा। आगे किसी अंक में सुविधानुसार उसे देने का प्रयत्न किया जायगा।

—सं०।

ब्रज के लोक व्रतानुष्ठान

विषयानुक्रम पृष्ठ

डा० सत्येन्द्र

ब्रज के लोक-व्रतानुष्ठान

पीठिका

अ. ब्रज के लोक-व्रतानुष्ठान के साहित्य पर यह अनुसंधान प्रस्तुत करते मुझे अत्यन्त प्रसन्नता हो रही है । कारण स्पष्ट है कि जब से लोक-साहित्य संबंधी संकलन और अध्ययन में मैं प्रवृत्त हुआ तभी से लोक-व्रतानुष्ठानों ने मुझे विशेषतः आकर्षित किया था । 'ब्रजलोक साहित्य का अध्ययन' नामक प्रबंध लिखते समय इन व्रतानुष्ठानों पर कुछ प्रकाश डाला गया था । उस समय में इस निष्कर्ष पर पहुँचा था कि ये व्रतानुष्ठान ही वास्तविक लोकतत्व से युक्त लोक-मानस का रूप प्रस्तुत करते हैं । ये वस्तुत: हमारी संस्कृति की प्रथम नींव हैं, और इनमें अत्यन्त प्राचीन अवशेष आज भी विद्यमान हैं । उस प्रबंध के समय भी मन में यह संकल्प था कि इस संबंध की समस्त सामग्री एकत्र की जाय और उसे प्रकाश में लाया जाय ।

आ. इसके बाद धीरे-धीरे जहाँ-तहाँ से सामग्री संकलित की जाती रही । विशेष मार्मिक अनुष्ठानों पर विशेष विमर्श भी जब-तब प्रकाशित कराये जाते रहे । दिवाली की लोकवार्ता, और अोघ द्वादशी पर पृथक् भी निबंध रूप में प्रकाशन हुआ ।

इ. क० मु० हिन्दी विद्यापीठ की स्थापना से इस क्षेत्र में ही आजाने से इस ओर विधिवत् कार्य करने का विचार हुआ । इस संबंध में विद्यापीठ के विद्वद्वर्य आचार्य डा० विश्वनाथ प्रसाद जी ने बड़ी उदारतापूर्वक ६०० रुपये का अनुदान प्रदान किया । यह अनुदान सन् १९५७ में मिला ।

ई. इस अनुदान के उपरांत इस कार्य के लिए कुछ सहायक समय समय पर नियुक्त किये गये, और उनसे संकलन भी कराया गया तथा किसी-किसी क्षेत्र का सर्वेक्षण भी कराया गया । इस समस्त प्रयत्न का फल इस ग्रंथ के रूप में प्रस्तुत है ।

उ. इसमें जिस सामग्री का उपयोग किया गया है वह ब्रज में आगरा-मथुरा के निम्न गाँवों से प्राप्त की गयी है—लोहबन, मथुरा, अकबरपुर, बल्टीगढ़ी, अड़की, माँट, नींवगाँव, मिट्ठौली, सुरीर, भोगीपुरा, छोटी बसई, नवादा, नगलापदी, सादाबाद, खेरागढ़, गिड़ोह,

ऊ. इसमें प्रत्येक व्रत का सामान्य विवरण, तत्संबंधी साहित्य : कहानी, गीत आदि, तथा उसके भित्ति-चित्र तो दिये ही गये हैं, यथावश्यक कुछ विवेचन भी प्रस्तुत किया गया है। तुलना के लिए पुराणों से तथा अन्य क्षेत्रों से जो सामग्री सहज ही मिल सकी, उसे उद्धृत कर दिया गया है। भित्ति-चित्रों के कारण इसमें लोक-साहित्य ही नहीं लोक-कला का भी समावेश हो गया है। इसमें ब्रज से संकलित की गयी कहानियाँ ८६ हैं। वे मोटे टाइप में छापी गयी हैं।

ए. इस प्रकार ब्रज के व्रतानुष्ठान और तद्विषयक सामग्री की एक रूपरेखा इस ग्रंथ के द्वारा प्रस्तुत हो जाती है। इसके आधार पर अभी और भी व्यापक सर्वेक्षण की अपेक्षा है। लोक-साहित्य और लोक-कला में बहुत वैविध्य मिलता है। उस समस्त वैविध्य पूर्ण सामग्री का एक एक अंश एकत्र होकर आजाना चाहिये। तब उसका वर्गीकरण और विवेचन किया जा सकता है।

ऐ. धनाभाव से यह आरंभिक कार्य ही दिया जा रहा है। इसके आगे वैज्ञानिक विधि से सर्वेक्षण का कार्य सुगम हो जायगा। तब एक एक विषय के समस्त रूपान्तरों को सामने रख कर तुलनापूर्वक कोई निष्कर्ष दिये जा सकेंगे।

ओ. इस रूप में भी यह कार्य कम महत्व का नहीं। लोकवार्त्ता का एक यथार्थ रूप तो इसके द्वारा प्रस्तुत हो ही जाता है।

औ. इस सामग्री को एकत्र कराने में अनेकों परिचित और अपरिचित व्यक्तियों का हाथ रहा है। उन सबके नाम देना संभव नहीं। कहीं कहीं यथास्थान उनका उल्लेख किया भी गया है, पर जिनका उल्लेख नहीं हो सका है और नहीं कर पा रहा हूँ, उन सबके प्रति मैं अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता हूँ।

अं. जिन ग्रंथों से और पत्र-पत्रिकाओं से इसमें सहायता ली गयी है और उद्धरण दिये गये हैं उनका नामोल्लेख भी यथास्थान कर दिया गया है। उनके प्रति भी मैं अत्यन्त कृतज्ञ हूँ।

अः अंत में—

मोरा इसमें कुछ नहीं, जो कुछ है सो तोर
तेरा तुझको सौंपते, क्या लागै है मोर ॥

व्रत और अनुष्ठान

१. लोक जीवन में व्रत और अनुष्ठान का अत्यंत ही महत्वपूर्ण स्थान है। इन व्रतों और इनके अनुष्ठानों में कौटुम्बिक मंगल, कल्पना-समृद्धि, दूध-पूत से फलने-फूलने की भावना व्याप्त रहती है। अमंगलों और कष्टों, विघ्नों तथा संकटों से बचने या बचे रहने की भावना भी इनके साथ है। ये बहुधा तो एक नियमित रूप से किये जाते हैं। इनके इस प्रकार नियमित परिपालन से वर्ष भर का मंगल दृढ़ होता है। कभी कभी कुछ व्रतानुष्ठान विशेष मनौती[1] के साथ होते हैं। ये या तो कृतज्ञता-ज्ञापन[2] के रूप में होते हैं या शुल्क-दान[3] के रूप में।

२. भारत भर में व्रत और अनुष्ठानों की परिव्याप्ति है। कोई घर ऐसा नहीं मिलेगा, जिसमें किसी न किसी प्रकार का व्रतानुष्ठान न हो।

३. भारतीय साहित्य भी व्रतानुष्ठानों के निरूपण और महत्व अथवा माहात्म्य से परिपूर्ण है। वैदिक काल के पूर्व से लेकर आज तक व्रतानुष्ठान रहे हैं, निश्चय ही इनके रूप और तत्वों में कितने ही महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं, पर उनका अभिप्राय: मोटे शब्दों में वही "दूधों नहाना और पूतों फलना" रहा है। 'समृद्धि-सुख और सन्तति-सुख' इसी के निमित्त वैदिकों ने यज्ञ किये, सत्र किये, बलिविधान किये। सूत्रों में विस्तार पूर्वक उन अनुष्ठानों का निरूपण किया गया।

४. पौराणिक काल में ये व्रतानुष्ठान और भी अधिक महत्व प्राप्त करने लगे और प्राय: प्रत्येक पुराण में इनका विशद वर्णन प्रस्तुत किया गया।

५. इनके उपरान्त व्रतानुष्ठानों पर अनेकों पृथक ग्रंथ भी लिखे गये। इनमें उनका माहात्म्य, विधि तथा उनका स्वरूप, सभी पूरे विस्तार के साथ दिया गया।

६. किन्तु इन सभी साक्षियों से एक बात यह भी बहुत स्पष्ट हो जाती है कि जो स्थिति साहित्य और भाषा की होती है, वही स्थिति व्रतानुष्ठानों की भी होती है। वैदिक संहिता, ब्राह्मण, गृह्य-सूत्र, पुराण, व्रत-शास्त्रों में जिन व्रतों का उल्लेख होता है, वे किसी काल-विशेष में एक विशिष्ट स्तर की मान्यता ही ग्रहण किये होते हैं। लोक-व्रतानुष्ठानों की धारा उससे अलग होकर अपने रूप में चलती रहती है, अत: संस्कृत स्तर और लोकस्तर का भेद प्रस्तुत हो जाता है और लोक-धारणा की एक अपनी परंपरा बनती चली जाती है।

७. वैदिक व्रतानुष्ठानों से पौराणिक व्रतानुष्ठानों की तुलना करने से, और इन पौराणिक व्रतानुष्ठानों से आज लोक में मान्य व्रतानुष्ठानों की तुलना से यह बात अत्यन्त

---

१. मनौती—किसी विशेष अभिप्राय की प्राप्ति के लिए व्यक्ति यह मानसिक संकल्प करता है कि वह जो चाहता है यदि वह पूरा हो गया तो इस प्रकार का अनुष्ठान करेगा या करायेगा—ऐसे संकल्प को ही मनौती कहते हैं।

२. कृतज्ञता-ज्ञापन—बिना पहले संकल्प किये, कार्य सिद्ध हो जाने पर जिस इष्ट की कृपा से वह सिद्ध हुआ है, उसके प्रति कृतज्ञता प्रकट करने के लिए।

३. शुल्क दान—जब मानसिक संकल्प से कोई अनुष्ठान करना होता है तो उसे शुल्क-दान के रूप में किया गया माना जा सकता है। इसमें यह भय रहता है कि यदि वह अनुष्ठान नहीं किया गया तो देवता अप्रसन्न होकर हानि पहुँचा देगा।

स्पष्ट हो जाती है। केवल कुछ तत्व अवशेष के रूप में इस परंपरा में चलते चले जाते हैं, शेष बहुत कुछ नया रूप धारण कर लेते हैं। कुछ के अर्थ बदल जाते हैं, कुछ नये तत्व लोक के किसी अन्य क्षेत्र से आकर उसमें सम्मिलित हो जाते हैं और इस प्रकार उनमें विकास या विकार होता चला जाता है।

८. एक बहुत बड़ा अन्तर आज के व्रतानुष्ठानों और वैदिक-पौराणिक व्रतानुष्ठानों में हमें यह विदित होता है कि उन सब में प्रधानता प्रायः पुरुषों की प्रतीत होती है। आधुनिक लोकानुष्ठानों में प्रधानता स्त्रियों की है। कुछेक अनुष्ठानों में तो, जिनमें ब्राह्मण-पुरोहित-पंडित वैदिक संस्कृत मंत्रों से उनको सम्पन्न करता है, आज भी पुरुष का महत्व दिखायी पड़ता है, शेष में स्त्री की प्रधानता रहती है, पुरुष तो केवल कहीं-कहीं ही उसमें योग देता दिखायी देता है।

९. अ. अतः आज के लोक-प्रचलित व्रतानुष्ठानों में पुरुषानुष्ठान और स्त्री-अनुष्ठान का भेद हो गया है, और इनकी पारस्परिक प्रकृति में भी अन्तर हो गया है।

९. आ. लोकानुष्ठानों में अधिकांशतः पौरोहित्य का लोप हो गया है, केवल कुछ पुरुषों के द्वारा किये जानेवाले अनुष्ठानों में या गणेश या सत्यनारायण की कथा जैसे अनुष्ठानों में कहीं कहीं पंडितों की अपेक्षा रहती है। निश्चिय ही इन कथाओं का मूलाधार अब भी संस्कृत भाषा ही है यद्यपि मूलतः ये लोक-कथाएँ ही हैं।

९. इ. शेष अनुष्ठानों में पुरोहित का उपयोग नहीं होता। पुरुषों द्वारा होने वाले अनुष्ठानों में घर के पुरुष पौरोहित्य करते हैं, स्त्रियों वाले में स्त्रियाँ। किसी पंडित की अपेक्षा नहीं होती।

१०. लोक व्रतानुष्ठानों में कई प्रकार के विधि-विधान होते हैं जिनमें से कुछ ये हैं :

१. तैयारी: अ. आवश्यक सामग्री आवश्यक विधि से जुटाना।
इ. घर की आवश्यक सफाई करना।
ई. अनुष्ठान स्थल को तैयार करना आदि।
२. उपवास रखना, 'जिन व्रतों में आवश्यक हो।'
३. चित्रण-अंकन
४. गौर स्थापन या अन्य मूर्तविधान
५. पूजन प्रक्रिया
६. गीत
७. कहानी
८. समाप्ति विधान
९. प्रसाद या बाँयना आदि

११. इस प्रकार लोक-अनुष्टानों के स्वरूप, प्रकृति, प्रवृति सभी अपनी एक निजी सत्ता रखते हैं। और एक पर्याप्त विशाल क्षेत्र में वे कुछ हेर फेर के साथ समान रूप से व्याप्त मिलते हैं। उनका वैसा उल्लेख शास्त्रों और ग्रन्थों में नहीं मिलता। अत: आज उनको समझना आवश्यक है। क्योंकि वे हमारे लोक-मानस और लोक-संस्कृति के एक विशेष स्वरूप को प्रकट करते हैं जिसको हृदयंगम करना अपेक्षित है।

१२. इसी उद्देश्य से यहाँ हम ब्रज-क्षेत्र के व्रतानुष्ठानों का विवरण प्रस्तुत कर रहे हैं। इन समस्त व्रतानुष्ठानों को हम मोटे रूप में निम्नलिखित वर्गों में विभाजित कर सकते हैं।

१२.१ तिथिवारक—वे त्यौहार जो तिथि के आधार पर हैं अर्थात् किसी विशेष तिथि को मनाये जाते हैं। इनके दो भेद किये जा सकते हैं :

(अ) स्वतंत्र तिथिक

(आ) मास तिथिक

१२.१. (अ) स्वतंत्र तिथिक के अन्तर्गत वे व्रतानुष्ठान आयेंगे जिनमें केवल तिथि का ही महत्व है, महिने का नहीं। जैसे एकादशी, त्रयोदशी, प्रत्येक महीने की महत्वपूर्ण हैं।

१२.१. (आ) मास तिथिक—वे व्रत जो किसी विशेष मास की विशेष तिथियों से निबद्ध हैं।

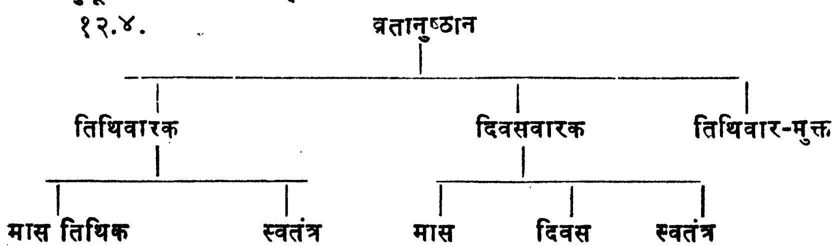
१२.२. दिवस परक—वे व्रत जो 'वार' अथवा दिवस के होते हैं। रविव्रत आदि। ये भी दो प्रकार के हो सकते हैं: (अ) स्वतंत्र तथा (आ) मास-निबद्ध

१२.२. (अ) कुछ दिवस स्वतंत्र रूप से ही व्रत योग्य होते हैं। जैसे, मंगल व्रत है। प्रत्येक मंगल को ही रखा जाना चाहिये।

१२.२. (आ) कुछ दिवस विशेष महिनों में विशेष महत्व धारण कर लेते हैं। सोमवार के व्रत का श्रावण के महीने में विशेष माहात्म्य होता है।

१२.३. तिथिवार-मुक्त—सामान्य—कुछ ऐसे भी व्रतानुष्ठान हैं जो किसी तिथि-वार से नहीं बँधे, किसी भी तिथि या बार को आवश्यकता के अनुसार या विशेष अवसरानुकूल किये जा सकते हैं। संक्षेप में—

१२.४.



१३. यहां एक फलक द्वारा ब्रज में होने वाले मास-तिथिक व्रतानुष्ठानों का नाम-निर्देश किया जाता है, इसमें प्रत्येक मास की तिथि का उल्लेख है। उसके साथ एक स्तम्भ में उन त्यौहारों का उल्लेख है जिन्हें श्री गुप्ते महोदय ने अपने ग्रन्थ 'हिन्दू होलीडेज तथा सेरीमोनियल्स' में दिया है, उसके साथ के स्तम्भ में ब्रज के त्यौहारों का उल्लेख है। इस फलक से एक दृष्टि में ही यह विदित हो जाता है कि किन महीनों की किन तिथियों का कोई महत्व नहीं आंका गया, और किन महिनों में किन तारीखों में ऐसे त्यौहार पड़ते हैं। ब्रज के त्यौहारों का उल्लेख पहली पंक्ति में डा० रा० द० भारद्वाज की पुस्तक से लिया गया है। बाद का हमारा अपना दिया गया है। [दृष्टव्य, फलक ७-८]

१४. इनके अतिरिक्त विशेष व्रतानुष्ठान नीचे दिये जा रहे है :

१४.१. **विशेष व्रतानुष्ठान**

(१) दिवस	(१) तिथि
(१) मंगल-चंडी—प्रति मंगलवार	(१) अमावस्या—विशेषत: मौनी अमावस्या, सोमोती या सोमवती
(२) सकट व्रत—प्रति शुक्रवार विशेषत: श्रावण में	(२) प्रदोष : प्रत्येक द्वादशी को
(३) बुधव्रत	(३) साधन द्वादशी प्रत्येक द्वादशी को
(४) बृहस्पतिव्रत	(४) एकादशी—प्रत्येक एकादशी, विशेषतः निर्जला, देवशयनी या धोंधा, देवठान ।
(५) सोमबार व्रत, विशेषत: श्रावण में	(५) शिवतेरस: प्रत्येक महीने की त्रयोदशी
(६) लक्ष्मी पूजा—पौष, चैत्र तथा भाद्र के शुक्लपक्ष के बृहस्पति वार को,	(६) गणेश चतुर्थी—प्रत्येक चौथ, विशेषत: भादों के महीने की

(७) मंगल संक्रान्ति--दूसरे, चौथे, छठे, आठवें, दसवें तथा बारहवें महिने के शुक्ल पक्ष के अन्तिम मंगलवार को।

१४.२. **सामान्य**

सत्यनारायण की कथा

उत्तर प्रदेश तथा व्रज के व्रत

१५. व्रज उत्तर प्रदेश का एक अंश है। उत्तर प्रदेश में जिन पर्वो को सामान्यत: मनाया जाता है उनका एक विवरण उत्तर प्रदेश की सरकार द्वारा प्रकाशित सूचना पंचांग में दिया हुआ है। उसमें से उन व्रतों का उल्लेख यहाँ करते हुए व्रज में उनकी स्थिति-विषयक टिप्पणी साथ में दी जा रही है, इससे व्रज के व्रतानुष्ठानों के अपने रूप पर कुछ प्रकाश पड़ेगा—

उत्तर प्रदेश के पर्वो का संक्षिप्त विवरण

(१) राम नवमी—मर्यादा—पुरुषोत्तम का जन्म दिन है। आज्ञा पालन, त्याग, तपस्या, प्रजातन्त्र, दुष्टदमन के प्रतीक राम की स्मृति में व्रत तप, आदि उस दिन करना चाहिए।

व्रज विषयक टिप्पणी

श्री रा० द० भारद्वाज ने बताया है कि चैत्र शुक्ल नवमी को राम नवमी मनायी जाती है। राम जन्म का उत्सव मनाया जाता है। किन्तु सामान्यत: इस नवमी को राम का इतना महत्व नहीं रहता जितना कि देवी का हो जाता है। यह व्रज में देवी नवमी के रूप में विशेषत: मनायी जाती है। कन्या-लाँगुरों को भोजन कराया जाता है। एक स्थान पर दीवाल पर सिंदूर के दो त्रिशूल काढ़े जाते हैं, और उन्हें अग्यारी करके लोंग-बतासे चढ़ाये जाते हैं। देवी का कीर्तन होता है।

२. **अक्षय तृतीया**—यह महात्मा श्री परशुराम जी का जन्म दिन है। जब क्षत्रिय लोग अपने मुख्य धर्म को भूलकर मद में हो गये तब भगवान ने ब्राह्मण वंश में अवतार लेकर देश की रक्षा की, उनके मद को दूर किया और प्रजा पालन का सदुपदेश दिया। उस दिन परशुरामजी का पूजन-भजन करना चाहिए।

अक्षय तृतीया अखतीज कहलाती है। व्रज में परशुराम से इसका कोई सम्बन्ध नहीं प्रतीत होता। जैनों में इसके देवता ऋषभदेव महाराज हैं। वे ऋषभदेव की पूजा करते हैं। कुल्हिया में शर्बत होता है, दूब, हल्दी रोली से छींटे लगाते हैं, ककड़ी, सूत, घड़े, पंखे आदि मंसे जाते हैं :—

(३) **गंगादशहरा**—ज्येष्ठ मास, शुक्ल पक्ष, दशमी तिथि, बुधवार, हस्त के गुरु, ये दशयोग दशहरा के हैं। इनमें जिस दिन अधिक योग मिलें उसी दिन दशहरा-स्नान का महत्व है। किसी की राय में भौमबार है। इसी दिन गंगाजी स्वर्ग से अवतरित हुई थीं। उक्त योग में गंगा में स्नान करने से निम्नांकित १० दस पाप छूट जाते हैं :—

(१) अपात्र को दान, (२) कठोर वाक्य बोलना, (३) हिंसा, (४) अविघातन, (५) परदारा-गमन, (६) कायिक पाप, (७) कठोर वाक्य बोलना, (८) झूठ बोलना, (९) पिशुनता, (१०) असम्बद्ध प्रलाप, (१०) वाणी सम्बन्धी ४ पाप।

सामान्य

४. **गुरु पूर्णिमाः**—प्राचीन काल में इसी दिन गुरु की पूजा करके सत्रारम्भ होते थे। अपने गुरु और व्यास की पूजा करनी चाहिये।

गुरु पून्यों : व्रज में इसका यह नाम तो प्रचलित है किन्तु किसी विशेष व्रतानुष्ठान का पता नहीं चलता।

५. सूर्य ग्रहण—ग्रहण में सूतक होता है, सूतकान्त में स्नान आवश्यक है अतः इसमें कुरुक्षेत्र में स्नान की महत्ता है।

सामान्य : ग्रहणकाल में महतरों को दान में अन्न, वस्त्र, पैसे देना आवश्यक है।

६. रथयात्रा : विष्णु की चार अवस्थाएँ होती हैं। एक अवस्था पूजन की है, एक अवस्था तपस्या की है, एक सर्जन की है, एक बिहार की है। तपस्या वाली मूर्ति बदरिकाश्रम है, पूजा वाली अवस्था जगन्नाथ की है। इस पर्व के दिन जगन्नाथ जी का दर्शन करना चाहिए।

सामान्य

७. चन्द्र ग्रहण—काशी में गंगा स्नान का माहात्म्य है।

सामान्य: । इस ग्रहण पर भी महतरों को दान दिया जाता है: अन्न, वस्त्र, पैसे। किसी पात्र में तेल भरकर इसमें ग्रहण के चंद्र को देखकर उसे भी दान में दिया जाता है।

८. नागपंचमी—नागपूजा का पर्व है। ऋषियों ने सर्व धर्मों को आत्मसात् करने के लिए नागपूजा स्वीकार की है। प्रसिद्ध व्याकरण-प्रणेता पतंजलि को भी नाग का अवतार माना है। उस दिन काशी में नाग-कूप पर शास्त्रार्थ भी होता है।

नागपंचमी—श्रावण शुक्ल पंचमी को होती है। सामान्य।

९. रक्षाबंधन—प्राचीन काल में ऋषि लोग श्रावणीकर्म करके अपने को परम पवित्र बनाते थे और पूर्ण तेज से नगर में प्रवेश कर, राजा की रक्षा के लिए कपास, क्षौम, या वस्त्र द्वारा निर्मित वस्तु से एक वर्ष होती थी। अत: यह पर्व ब्राह्मणों का पर्व माना गया।

ब्रज में इसे सलूनों कहते हैं। राखी भी बाँधी जाती हैं। घूँगा, भुजरियाँ या फुलरियाँ लगायी जाती हैं। भीत पर सोना या श्रवणकुमार काढ़े जाते हैं, अन्धी-अन्धा को लिये हुए उनकी राखी और सेंमई से पूजा होती है। झूला झूलने का उत्सव होता है। ब्रज में यह सामन का महापर्व है। इसमें राखी का महत्व तो कुछ गौण हो गया है।

१०, **गणेशचौथ**—भाद्र कृष्ण चतुर्थी के व्रत का नाम है बहुला-गणेश चौथ व्रत। उस दिन सन्तान-कामना से गणेश जी का व्रत रह कर पूजन करना चाहिये। सत्य तथा अनाथ-रक्षण की प्रतिज्ञा करनी चाहिए।

सामान्य: इस व्रत के दिन ब्रज में गणेश जी की कथा भी कही जाती है। कथा के उपरांत चन्द्रमा को अर्घ्य भी दिया जाता है।

११. **कृष्णजन्माष्टमी व्रत**—यह उस अपौरुषेय पुरुष का जन्म दिवस है, जिसने धर्म, राजनीति और युग-संचालन का पाठ विश्व को पढ़ाया है, जिसकी गुण-गाथा से लाखों पृष्ठ रँगे गये और न जाने कितने पृष्ठ रँगे जायेंगे। इस दिन व्रत रहकर श्रीकृष्ण का पूजन करना चाहिये।

सामान्य: बहुत धूम से मनाया जाता है। पालने डाले जाते हैं। रात्रि के बारह बजे कृष्णजन्म का आनन्द मनाते हैं।

१२. **हरतालिका तीज**—यह स्त्रियों का व्रत है। पार्वती जी ने इसी कठोर व्रत को निरन्तर करके शिव को प्राप्त किया था। स्त्रियाँ पति की मंगल-कामना से इस व्रत को निर्जल रहकर करती हैं और पार्वती शंकर की पूजा करती हैं।

सामान्य: इसका बहुत कम अनुष्ठान कहीं-कहीं ही होता है।

१३. **अर्कषष्ठी**—जिनकी सन्तान होकर मर जाती हैं उनको यह व्रत करना चाहिये और कूष्माण्ड सहित सपत्नीक लोलार्क कुण्ड में स्नान करना चाहिये और स्नान में भीगे वस्त्रों को उसमें छोड़ देना चाहिये।

ब्रज में इस षष्ठी की मान्यता नहीं है।

१४. **महालक्ष्मी व्रत**—भाद्रपद शुक्ल आठ से आश्विन कृष्ण ८ तक यह व्रत होता है। इस व्रत से लक्ष्मी प्रसन्न होती हैं।

ब्रज में इसका कोई संधान नहीं मिलता।

१५. **अनन्त चतुर्दशी व्रत**—इसका व्रत दोपहर तक होता है। अनंत विष्णु भगवान् की पूजा होती है और १४ ग्रन्थियों का सूत्र भुजा में धारण किया जाता है। कुछ लोग अनन्त नाम का स्वर्ण भूषण भी धारण करते हैं।

अनन्त या अनन्त चौदस के नाम से इसका अनुष्ठान होता है। स्त्रियाँ इस दिन अनन्त भगवान् का पटे पर चित्र बना, उस पर अनन्त रखकर अनन्त की कथा भी सुनती हैं, उसी के बाद अनन्त बाँधे जाते हैं। यह भाद्रपद शुक्ल १४ को होता है।

१६. **जीवित् पुत्रिका व्रत**—अपनी सन्तान की दीर्घायु के लिए माताएँ बड़ा कठोर व्रत करती हैं। यहाँ तक कि मुख का थूक भी भीतर नहीं जाने देतीं।

भारद्वाज जी ने लिखा है कि यह आश्विन कृष्णा या शुक्ला अष्टमी को किया जाता है। इसका दूसरा नाम उन्होंने ने जिउतिया दिया है आगरा-मथुरा की ओर इसका विशेष विधान नहीं मिलता।

१७. मातृनवमी—स्त्रियों के श्राद्ध का दिन है।

ब्रज में सामान्यतः नहीं होती।

१८. **पितृविसर्जन**—ऋषियों के मत के अनुसार पितर लोग चन्द्रमा के उरपर वास करते हैं। "विधूर्ध्वभागे पितरो वसन्ति" (भास्कराचार्य)। अमावस्या को चन्द्र का क्षय रहता है। अतः अमावस्या को ही पितरों को अन्तिम पिण्ड-दान दिया जाता है।

पितरामवस्या कहलाती है। यह श्राद्धों का अन्तिम दिन होता है।

१९. **दुर्गापूजा**—यह वर्ष में दो बार होती है। शरद्काल में महापूजा का विधान है। शारदीय नवरात्रारम्भ से नव दिन तक दुर्गा का आवाहन किया जाता है।

ब्रज में भी यह दो बार होती है। शरद काल की नवरात्रि कही जाती है। इसमें स्त्रियाँ और बालिकाएँ नौरता बना कर गौर चढ़ाकर खेल के रूपक में पूजा करती हैं। देवी का व्रत किया जाता है और अष्टमी-नवमी को विशेषतः देवी-पूजन होता है।

२०. **विजया दशमी**—यह क्षत्रियों का पवित्र त्यौहार है। इस दिन मर्यादा पुरुषोत्तम राम ने विश्व के उद्धारार्थ रावण का वध किया था। उस दिन प्राचीन काल में राजा लोग शस्त्र-पूजा तथा अपनी सीमा का उल्लंघन करते थे। इसमें राज्य के विस्तार की भावना निहित थी।

ब्रज में इसे दशहरा या क्वार का दशहरा कहते हैं। रामलीला का इन दिनों महत्व होता है। दशहरे पर विविध वर्ग अपने-अपने औद्योगिक उपादानों तथा पशुओं का पूजन भी करते हैं।

२१. धन तेरस—इस दिन सायंकाल धन्वन्तरि नाम के प्रसिद्ध वैद्यजी की उत्पत्ति हुई थी। बर्तन के व्यापारी उस दिन बर्तनों का विक्रय करते हैं। व्यवसायी नया बर्तन क्रय करके उसीमें लक्ष्मी-गणेश का पूजन करते हैं।

इस दिन ब्रज में यह आवश्यक समझा जाता है कि कम से कम एक नया बर्तन खरीदा जाय।

२२. **कार्तिकी अमावस्या**—इसी दिन लक्ष्मी का पूजन होता है। यह वैश्यों का प्रसिद्ध त्यौहार है। कहीं-कहीं इन्द्र के पूजन का भी विधान है। आधीरात के समय महाकाली का पूजन होता है।

यह ब्रज में दिवालीके नाम से विख्यात है। लक्ष्मी पूजन होता है, कहीं-कहीं साथ में सरस्वती पूजन भी होता है, दीपमालिका प्रज्वलित की जाती है।

२३. **गोवर्द्धनपूजा**—इस दिन भगवान् कृष्ण ने यादवों से गोवर्द्धन-पर्वत के व्याज से ऋषि की पूजा करायी थी, अनेक प्रकार के पक्वान्नों का भोजन ऋषि को कराया गया था। उसी स्मृति में बड़े बड़े देवालयों में अनेक पक्वान्न देवताओं को चड़ाये जाते हैं और उन्हीं खाद्य पदार्थों से पहाड़ (गोवर्द्धन) बनाया जाता है। उसी दिन राजा बलि की भी पूजा होती है। गायें भी पूजी जाती हैं।

ब्रज में गोबर से गोबर्द्धन थापे जाते हैं। उनकी परिक्रमा रात को जैकारों के साथ की जाती है। कहीं-कहीं अन्नकूट भी होता है।

२४. **भ्रातृ-द्वितीया**—इस दिन भगिनी के घर भोजन किया जाता है और शक्ति भर बहिन को दान दिया जाता है। इससे शरीर पुष्ट होता है। इसी दिन प्रधानतः कायस्थों में चित्रगुप्त की पूजा होती है।

ब्रज में इस दिन भैयादूज को भाई-बहिन यमुना स्नान करते हैं। बहिन भाई का टीका करती है और भाई दक्षिणा देता है। कुछ लोगों में लक्ष्मी-सरस्वती की तथा कलम-दवात तथा औद्योगिक उपकरणों की पूजा होती है।

२५. **देवोत्थान एकादशी**—इसी दिन विष्णु शेषनाग पर से उठते हैं और भारत के सभी शुभ कार्य प्रारम्भ होते हैं।

इसे देवठान कहते हैं। इस दिन सभी घर को लीप-पोत कर गेरू तथा खड़िया से विविध मांगलिक चित्रों से उसे चित्रित करते हैं। शाम को देवों को उठाया जाता है।

२६. **कार्तिक पूर्णिमा**—इसी दिन त्रिपुर का नाश शंकर भगवान् ने किया था। अतः उत्सव मनाया जाता है।

ब्रज में कार्तिकी पूनों कार्तिक स्नान के अन्त में पड़ती है। इसलिए इसका महत्व है। मेले भी लगते हैं।

२७. **गणेश चौथ**—इसी दिन गणेशजी की उत्पत्ति हुई थी। अतः गणेशोत्सव मनाया जाता है। व्रतपूजन होता है।

सामान्य।

२८. **मकर संक्रान्ति**—सूर्य उत्तरायण होते हैं। हिन्दुओं के सभी शुभ कार्य प्रारम्भ होते हैं

सामान्य, ब्रज में मकर संक्रान्ति को 'खिचड़ी' पकाने का विशेष चलन है। अपने कुटुम्ब की सभी कन्याएं न्यौंती जाती हैं, और खिचड़ी पहले उन्हें खिलायी जाती है। बिना पकी खिचड़ी, तिल के लड्डू गजक आदि वस्तुएं ब्राह्मणों को दान में दी जाती हैं।

२६. **मौनी अमावस्या**—इस दिन प्रातःकाल से ही मौन होकर त्रिवेणी या गंगा में स्नान करना चाहिए। स्नान के बाद बोलना चाहिए। इसकी महत्ता का वर्णन महाभारत के वनपर्व में है, पुलस्त्य ने युधिष्ठिर से कहा है।

सामान्य।

३०. **बसंत पंचमी**—इसी दिन सरस्वती की उत्पत्ति हुई थी। उसी उपलक्ष में उत्सव मनाया जाता है।

सामान्य। बसंती वस्त्र पहने जाते हैं, बसंती पुष्प तथा सरसों के पीले पुष्प सजाये जाते हैं।

३१. **महाशिवरात्रि**—शिवजी का दिन है, वैद्यनाथ भगवान् का जन्म-दिन है। शैव लोग निर्जल रहकर शिवजी की पूजा रात्रि में ३ बार करते हैं। यह तिथि अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इसी दिन पार्वतीजी से शंकरजी का विवाह हुआ था।

यह ब्रज में सौंमर्त के नाम से विख्यात है। स्त्रियाँ-पुरुष उपवास रखते हैं। सिंघाड़े के कतरे तथा कूटू की पूरियाँ, पकौड़ियाँ, आलू आदि ही खाये जाते हैं। मंदिर में पूजा की जाती है। बेर खाने का विशेष माहात्म्य है।

३२. **होलिका दहन**—इसमें प्रह्लाद से सम्बन्ध रखने वाली एक कथा भी है जिसमें होलिका नाम की बुआ ने अपने भतीजे प्रह्लाद को जलाने का उपक्रम किया था, परन्तु वह स्वयं जल गयी। न्याय ने अन्याय को दबोच लिया। वस्तुतः यह पर्व वर्षान्त पर्व है। हिन्दू लोग अपने सभी पापों को जलाते हैं।

३३. बसन्तोत्सव : दूसरे दिन बसन्तोत्सव मनाया जाता है। वस्तुतः आर्य लोग एकता को स्थिर रखने के लिए शूद्रों, श्वपचों आदि सभी से उस दिन गले मिलते थे, राष्ट्रीयता को प्रोत्साहन देते थे, दोपहर को स्नान कर आम के बौर खाते थे।

एक सार्वजनिक निश्चित स्थान पर होली जलायी जाती है, जो बसंत पंचमी से रखी जाती है। घरों में घरगुली बना कर गूलरियों का एक व्यूह उस पर खड़ा करके होली की आग से उसे जलाते हैं और उसका पूजन करते हैं तथा उस पर नवान्न भून कर बाँटते खाते हैं।

यह ब्रज मे धूल या 'धुलैंड़ी' कहलाता है।

उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा प्रकाशित इस पंचांग में दिये हुए व्रतादि पर विचार करने से एक बात तो यह विदित होती है कि इनका मूलाधार प्रायः काशी-क्षेत्र ही है। दूसरे यह भी विदित होता है कि इसमें ऐसे ही व्रतों का विशेषतः उल्लेख हुआ है जिनका सार्वजनिक रूप पुरुष-प्रधान ही विशेष है। ब्रज में लोक प्रचलित लगभग २४ व्रतोत्सवादि का उल्लेख इसमें नहीं हुआ है, यह बात प्रघट्टक १३ की तालिका में पड़े अंकों से जानी जा सकती है। ऐसे २४ व्रत ये हैं—

चैत्र	बैसाख	ज्येष्ठ
१. बासौड़ा	३ नरसिंह चौदस	४ बड़मावस
२ गनगौर	२४ आसचौथ	५ निर्जला एकादशी
आषाढ़	**श्रावण**	**भादों**
६ धौंधा ग्यारस	७ भैया पाँचै	६ बल्देव छठ
	८ हरियाली तीज	१० राधाष्टमी
		११ ओघ द्वादशी
		१२ गाज
क्वार	**कार्तिक**	**अगहन**
१३ शरद पूनौं	१४ करवा चौथ	
	१५ अहोई आठैं	
	१६ नरक चौदस	
	१७ गोपाष्टमी	
	१८ अखैनौमी	
	१९ कार्तिकी पूनौं	

पूस	माघ	फाल्गुन
	२० सकट चौथ	२२ फुलैरा दौज
	२१ बूढ़ा बाबू	२३ रंगभरनी एकादशी

ये २४ व्रतोत्सावादि व्रज में काफी महत्व रखते हैं। इनमें से कुछ तो जिन्हें रेखांकित कर दिया गया है बड़े लोकोत्सव हैं और इन पर मेले आदि भी जहाँ तहाँ होते हैं। कुछ जिन्हें बड़े अक्षरों में दिया गया हैं स्त्रियों में बड़ी निष्ठा से सर्वत्र मनाये जाते हैं।

१७. इनके अतिरिक्त प्रघट्टक १५ में जिन व्रतों का उल्लेख हुआ है, उनमें से बहुत से व्रत तो सामान्य हैं। इनके संबन्ध में ब्रज में कोई उल्लेखनीय विशेषता नहीं मिलती, किन्तु जिन व्रतोत्सवों आदि के संबंध में ब्रज में विशेष चाव और उत्साह मिलता है, उनका रूप और आत्मा व्रज लोक ने बदल दी है, उसे वह अपने संशोधित रूप में मनाता है और उसमें उस त्यौहार के उस विशिष्ट रूप का प्राय: लोप रहता है, जिसका प्रतिपादन पंचांग में हुआ है।

१८. 'हिन्दू होली डेज एण्ड सेरीमौनियल्स' में जिन व्रतोत्सवादि का उल्लेख हुआ है, उनमें से निम्न लिखित ४६ व्रतादिका का ब्रज में पता नहीं चलता। यह बात हम अपने अनुसंधान के आधार पर कह रहे हैं। आगरे के ओर-पास लगभग ४० घरों में हमने पूछताछ करायी। ये सभी वर्ग के घर थे। उन्हीं के अनुसार यह सूची दी जा रही है।

वे व्रतोत्सवादि जिनका ब्रज में पता नहीं

चैत्र	बैसाख	ज्येष्ठ
१. ध्वजारोपण	१. हविषमंगल चण्डी	१. आमषष्ठी
२. दोल्हारा	२. परशुराम जयन्ती	
३. गुढ़ी पड़वा	३. कूर्मावतार पूर्णिमा	
४. अशोक षष्ठी		

आसाढ़	सावन	भादों
१. शयायी एकादशी	१. अदिति रनुवाई	१. अहेवा नवमी
२. दिव्याची अमावस	२. दावाचि चौथ	२. संकष्ठ चतुर्थी
३. दीप अमावस्या	३. शुक्र व्रत	३. चम्रषष्ठी
४. शयन एकादशी	४. लोटन षष्ठी	४. कपिलषष्ठी
	५. मंगल गौर	५. मावस पूजा
	६. पिथोरी व्रत	६. सौभाग्य तृतीया
	७. पवति पूर्णिमा	७. वामन द्वादशी
	८. संपद संवार	८. वसुबारा या वत्स द्वादसी
	९. शील सप्तमी	९. अविधवा नवमी
	१०. शिराल षेत	
	११. स्वर्ण गौरी पूजा	
	१२. वर्ण षष्ठी	

क्वार	कार्तिक	अगहन	माघ
१. अर्जे पड़वा	१. अवली भोज	१. चम्पाषष्ठी	१. शीतल षष्ठी
२. दुर्गाषष्ठी	२. कूष्माण्ड नवमी	२. दत्त जयंती	
३. जिताष्टमी	३. भाव बीज	३. इतु पूजा	
४. ललित पंचमी		४. क्षेत्रव्रत	
		५. नताई व्रत	

ब्रज में व्रतानुष्ठानों का सामान्यतः जो क्रम होता है वह यहाँ नीचे दिया जा रहा है—

व्रत-त्यौहार और उनका लोकसाहित्य

महीना	व्रत	अनुष्ठान
चैत	नौदेवी-नौदुर्गा: मानता के अनुसार कोई कोई जागरण कराते हैं। भगत आते हैं। होम होता है। गीत गाये जाते हैं। एक भगत पर देवी आती है। नौमी को बड़ा भोज होता है। मानता के ही अनुसार लोग देवी की जात को जाते हैं।	चैत्र प्रतिपदा से अष्टमी तक प्रायः स्त्रियाँ व्रत रखती हैं। सिंदूर से दो त्रिशूल दिवाल पर काढ़े जाते हैं। अग्यारी पर प्रतिदिन लौंग के जोड़ों से होम किया जाता है। आठें को कन्या लांगुरा जिमाये जाते हैं। हलवा और चनों की नमकीन कौमरी अवश्य रहती हैं। देवी के गीत गाये जाते हैं।
बैशाख	अखतीज	कहानी होती है। घड़े कुल्हड़ सीरा, फुलका, से पूजे जाते हैं। चार मिट्टी के डेल घड़ों से लगाये जाते हैं। जितने डेल भीगे उतने ही महीने वर्षा।
	आस चौथ:	पट्टे पर चार औरतें मिट्टी से काढ़ी जाती हैं। गाज और जीभ की शकल की पूड़ी, घी और गुड़ से पूजा होती है।
ज्येष्ठ	निर्जला एकादशी	व्रत, कतीर, फल, पंखा, और घड़ों का दान।
आषाढ़	धोंधा एकादशी	पांच धोंधा पोतनी मिट्टी के, पांच काली मिट्टी के।
सावन [श्रावण]	रक्षाबंधन : सलूनों	सावन के गीत राखी बाँधी जाती है। घरों में उगाये हुए जौ-गेहूँ की पौध कानों में बाँधी जाती है, सरमन द्वार पर काढ़े जाते हैं, सेंवई चावल से पूजे जाते हैं।

	हरियाली तीज :	सावन के गीत : गौर बनायी जाती है, क्वारी लड़की पूजा करती है ।
	हरियाली मावस	सावन के गीत किसान हल की पूजा करते हैं, हल्दी का भीत पर चौक काढ़ा जाता है। उसमें हल्दी के नाग रखे जाते हैं ।
भादों	नागपंचमी	कोयला दूध में घिसकर दिवाल पर नाग रखे जाते हैं, इनकी पूजा होती है ।
	कृष्णाष्टमी	जन्म अष्टमी रखी जाती है। साँपों पर कृष्ण बनाये जाते हैं ।
	अनन्त चौदस	कहानी होती है : अनन्त बाँधे जाते हैं । मिट्टी से पट्टे पर एक आदमी का रेखाचित्र बनाते हैं, पूड़ी आदि से पूजा होती है ।
	चट्टा चौथ	चट्टा के गीत
क्वार:	नौ देवी	देवी के गीत
	न्यौरता	न्यौरते के गीत न्यौरता बनाया जाता है, प्रतिदिन गौर चढ़ायी जाती है, सांझी रखी जाती है ।
	दशहरा	दशहरे के दिन अस्त्र-पूजा होती है।
	टेसू	टेसू के गीत लड़के टेसू खेलते हैं ।
	झांझी	झांझी के गीत लड़कियाँ झाँझी खेलती हैं ।
कार्तिक	कार्तिक स्नान	गीत तथा कहानी पूरे महीने प्रातःस्नान किया जाता है। राई दामोदर की पूजा होती है। गीत और कहानियाँ प्रति दिन होती हैं ।
	करवा चौथ	गीत तथा कहानी दिवाल पर करवा चौथ रखी जाती है। रात्रि में चन्द्र को अर्घ्य देकर भोजन होते हैं। उससे पूर्व कहानी सुनी जाती है। गौर भी बनायी जाती है। गौर और करवा चौथ के चित्र की पूजा की जाती है। चावल के ऐंपन से करवाचौथ रखी जाती है।

अघोई (अहोई) आठें	कहानी। दिवाल पर चित्र बनाया जाता है। उसकी पूजा होती है। चन्द्रमा को अर्घ्य दिया जाता है।
दिवाली	दिवाली दूध और नारियल के खोपड़े के कोयले को मिला कर दिवाल पर रखी जाती है उसकी पूजा होती है।
स्याहू	गीत तथा कहानी प्रात: गोबर का एक गोला रख लिया जाता है। उसमें सींकें लगादी जाती हैं। उनमें हल्दी में रँग कर रुई के फाहे लगा दिये जाते हैं।
गोवर्द्धन	गोवर्द्धन गोबर के बनाये जाते हैं। रात को पूजा होती है और परिक्रमा दी जाती है।
भैया दौज	भूमि लीप कर चौक पूर कर गोबर की गौर बनायी जाती है। उसके हाथ पैर मुँह नहीं बनाते। उढ़ायी भी नहीं जाती। उसके सिर पर आब रखी जाती है। आब रुई और कपास मिला कर बनायी जाती है। करवा चौथ के बचे ऐंपन में हल्दी मिला कर उस रुई और कपास को गुने की शक्ल का बना लिया जाता है। ये सूप में रखली जाती हैं, उसमें खील बताशे, हल्दी का दिवला भी रहता है और भूमि पर गोबर का घर बना कर उसमें कटेरी के पत्ते बिछाकर रखा जाता है। हल्दी से पूजने वाली बाँये हाथ से ऊपर साँतिया रख लेती है और ब्याही चार आब क्वारी दो आब बाँये हाथ से गौर पर चढ़ाती हैं। फिर कहानी होती है। कहानी हो जाने पर गौर हटादी जाती है, कटेरी पर लोटा रखा जाता है। उस पर हल्दी का साँतिया काढ़ा जाता है। लोटे के

		गले में हँसली डाल दी जाती है उसमें बायें हाथ की छिगुनी उँगली डाल ली जाती है फिर गीत गायें जाते हैं। इसके उपरान्त हँसली पहनली जाती है। एक धनकुटे पर पाँच जगह हल्दी के बंध लगा दिये जाते हैं। कटेरी और घर का गोबर लिया जाता है, द्वार पर जाकर बांयी ओर जमीन पर कटेरी, गोबर, खील, बतासे, पूड़ी के टुकड़े डालकर बाँयें हाथ से धनकुटे से उसे पानी डाल डालकर कूटते हैं, गीत गाते जाते हैं फिर दिवाल पर पानी डाल कर कौरे ठंडे कर दिये जाते हैं, वहीं दरवाजे के दोनों ओर हल्दी से साँतिये बना दिये जाते हैं। लौटते समय स्त्रियाँ बधावा गाती हुई लौटती हैं।
अगहन	देवठान	गीत गाया जाता है जमीन पर एक लिपे पुते स्थान पर आँगन के बीच में एक आदमी का रेखा चित्र बनाया जाता है उसे डलिया से ढक देते हैं। समस्त आँगन चित्रों से चित्रित कर दिया जाता है। पुरुष रात्रि में देवताओं को जगाते हैं, उठाते हैं, उन्हें तपाया जाता है, गन्ने का रस पिलाया जाता है, पूजा जाता है, उनकी परिक्रमा की जाती है।
पूष	...	...
माघ	बसंत पंचमी	...
फाल्गुन	होली	घरगुली रखी जाती है। प्रति दिन चून की टिकुलियाँ रखी जाती हैं और गोबर की गूलरी, ढाल, तलवार, बनायी जाती है, उनकी माला बना कर घरगुली पर रखी जाती है, होली की आग से उसे जलाया जाता है।

चैत्र	भैयादौज	कहानी गीतः सारा पूजा विधान दिवाली की भैया दौज के समान, पर चौक गुलाल से पूरा जाता है और आव गुलाल घोलकर उससे रँगी जाती है।

ऊपर सार्वजनिक महत्वपूण त्योहारों और व्रतों का उल्लेख हुआ है। इनके अतिरिक्त अन्य अनेकों स्थानीय त्योहार व्रत भी मिल जाते हैं, उनका उल्लेख यहाँ नहीं हो सकता।

१९. व्रज में जो व्रतोत्सवादि 'हिन्दू होलीडेज' के नाम वाले मिलते हैं, उनका संक्षिप्त परिचय हमारे एक अनुसंधित्सु ने ४० घरों[१] की छानबीन करके दिया है, वह नीचे दिया जाता है:—

---

१. (अ) हमारे अनुसंधाता ने जिन स्थानों और मुहल्लों में पूछ-ताछ की वे ये हैं:—
१. छोटी बसई, २. नबादा ताजगंज, ३. मंटोला, ४. आगरा कैंट, ५. नाई की मंडी, ६. वजीरपुरा, ७. कौसलपुरा, ८. नगरापदी, ९. जमुनाब्रिज, १०, जमुना किनारा, ११. जीवनीमंडी, १२. नमक की मंडी, १३. पथवारी, १४. बाँस दरवाजा, १५. कचहरी घाट, १६. छमछमगली, १७. रावतपाड़ा, १८. धूलियागंज, १९. बारहभाई गली, २०. नाला कंस द्वार, २१. मोती कटरा, २२. नामनेर, २३. गोकुलपुरा, २४. राजामंडी, २५. बलकावस्ती, २६. लोहामंडी, २७. जगदीशपुरा, २८. शाहगंज, २९. गालवपुरा।
(आ) इन जातियों से संपर्क स्थापित किया:—१. महतर, २. जाटव, ३. ब्राह्मण ४. धोबी, ५. कोली, ६ गड़रिया, ७. जैन, ८. ठाकुर, ९. काछो, १०. तेली ११. वैश्य, १२. कायस्थ, १३. पटवा।

(इ) अवस्था-क्रम में ये लोग ३० से ८० वर्ष के बीच के हैं। ३० वर्ष की आय से कोई छोटा नहीं था। इनमें ३६ स्त्रियाँ थीं और १६ पुरुष थे।

२०. ब्रज के इन व्रतानुष्ठानों में कितनी ही प्रकार की प्रक्रियाएं और विधियां होती हैं, जैसे :

१. गृह-स्वच्छता
२. पूजा-स्थल की तैयारी
३. पूजन सामग्री
४. भोग सामग्री
५. पूजा—पूजा के कई अंग होते हैं :
    १. पूजन सामग्री को चढ़ाना रोली, हल्दी, अक्षत, पुष्प, लौंग आदि ।
    २. भोग-चढ़ाना
    ३. गीत गाना
    ४, कहानी सुनना
    ५. जल चढ़ाना
    ६. आब चढ़ाना
    ७. दीपक जलाना
    ८. अग्यारी करना
    ६. वैरियरा कूटना
    १०. परिकम्मा (परिक्रमा) देना
    ११. सूत्र बांधना
    १२. धूप लोबानादि
    १३. आरती उतारना
६. पूज्य—इन व्रतों में जिनकी पूजा की जाती है वे कई प्रकार के होते हैं :
    १. धातु मूर्ति
    २. मृण्मूर्ति
    ३. गौर (मिट्टी की)
    ४. कलश तथा करवा
    ५. चित्र–पूजा (काढ़ने) : जैसे करवाचौथ दीवाल पर काढ़ी जाती है ।
        (अ) दीवाल पर काढ़ने
        (आ) भूमि पर काढ़ने
        (इ) पट्टे पर काढ़ने

    धरने : गोबर या मिट्टी से कोई बड़ी चीज बनायी जाती है—जैसे गोबर्द्धन धरा जाता है या कोट या साँझी धरी जाती है ।

    खोदने : जैसे होली के लिए घरगुली खोदी जाती है ।

    ६. कलम दवात या अन्य उद्योग संबंधी पदार्थ
    ७. पशु
    ८. लता-वृक्षादि

९. मनुष्य—'कन्या, लांगुरा, ब्राह्मण'
१०. सिक्का ।

७. व्रताहार
८. बांयना
९. दक्षिणा
१०. त्यौहारी

२१. व्रज के व्रतादि के संबंध में यह बात स्पष्ट परिलक्षित होती है कि उसके उपादान ग्रामीण संस्कृति से संबंधित हैं, और समस्त अनुष्ठान में एक ग्रामीण वातावरण प्रस्तुत हो जाता है। इसके मूल में यह तत्व व्याप्त मिलता है कि ग्राम के प्रत्येक काम करने वाले (जिन्हें कमीन कहा जाता है) का योग उस अनुष्ठान में हो। शायद ही कोई ग्रामीण धन्धा होगा, जिससे व्रतादि के लिए प्रत्येक घर में अपेक्षित सामग्री न आती हो। जैसे कुम्हारिन से कलश या करवा या घट, मालिन से पुष्पमाला आदि ।

२२. अब व्रज के इन व्रतों का यहाँ विस्तृत ब्यौरा दिया जाता है ।

२३ चैत्र के त्यौहार तथा व्रत

२३ : १. व्रत

१. धुलैंड़ी, २. भाई दूज, ३. बासौड़ा, ४. नव दुर्गा
(अ) गणगौर, (आ) देवी आठें, (इ) राम नवमी (देवी नवमी) :

२३ : १ : १ प्रतिपदा

चैत्र महीने में प्रतिपदा को पड़ने वाली धुलैंड़ी और दौज की भैयादौज एक प्रकार से होली के अंग होकर आते हैं। फागुन ही जैसे दौज तक फैला हुआ है।

धुलैंड़ी के दिन के त्यौहार विषयक कृत्यों में :—

१. गाँव या मुहल्ले की प्रदक्षिणा
२. परस्पर आलिंगन
३. अबीर-गुलाल-रंग चन्दन धूलादि से परस्पर खेलना ।
४. मंडलियाँ बाँधकर गाना-नाचना
५. गाली गलौज करना, हँसी-मजाक आदि मुख्य हैं।

१. यह दिन हास परिहास से परिपूर्ण रहता है। कोई विशेष अनुष्ठान इसमें नहीं होता ।

२. भाई दूज : इस भाई दूज का समस्त अनुष्ठान प्रायः दिवाली की भाई दूज की भाँति होता है। केवल कुछ अन्तर रहता है। घरगुली के स्थान पर से गूलरियों की राख हटा कर उसे लीपा जाता है। गुलाल से चौक पूरा जाता है। और गौर पर गुलाल से रँगकर आब चढ़ायी जाती है। अन्य विवरण दिवाली के वर्णन में देखिये ।

भैयादूज पर अनुष्ठान में गीत और कहानी का उपयोग होता है। इस अनष्ठान में भूमि लीप कर गुलाल से चौक पूरकर गौर गोबर की बनायी जाती है, उसके

हाथ पैर मुंह नहीं बनाते, उढ़ायी भी नहीं जाती। उसके सिर पर 'आब' रखी जाती है। आब रुई और कपास मिला कर बनायी जाती है। उस रुई और कपास को गुलाल के घोल में रँग कर गुने की शक्ल का बना लिया जाता है। ये सूप में रखली जाती हैं, उसमें खील, बतासे, तथा हल्दी का दिवला भी रहता है। और गौर को भूमि पर गोबर का घर बना कर उसमें कटेरी के पत्ते बिछा कर रखा जाता है। पूजने वाली हल्दी से बाँये हाथ के ऊपर साँतिया रख लेती है। तब व्याही चार आब, क्वारी दो आब बाँयें हाथ से गौर पर चढ़ाती हैं फिर कहानी होती है। कहानी हो जाने पर गौर हटा दी जाती है। कटेरी पर लो। रखा जाता है। उस पर हल्दी का साँतिया काढ़ा जाता है। लोटे के गले में हँसली डाल दी जाती है, उसमें बायें हाथ की छिगुनी उँगली डाल ली जाती है फिर गीत गाये जाते हैं। इसके उपरान्त हंसली पहन ली जाती है। एक धनकुटे पर पाँच जगह हल्दी के बंध लगा दिये जाते हैं। कटेरी और घर का गोबर बटोर लिया जाता है। द्वार पर जाकर बाँयी ओर जमीन पर कटेरी, गोबर, खील, बताशे, पूड़ी के टुकड़े डाल कर बाँयें हाथ से धनकुटे से उसे पानी डाल कर कूटते हैं। इसे वैरियरा कूटना कहते हैं, वैरियरा का गीत गाते जाते हैं फिर दिवाल पर पानी डाल कर 'कोरे ठंडे' कर दिये जाते हैं। वहाँ दरवाजे के दोनों ओर हल्दी से साँतिये बना दिये जाते हैं। लौटते समय बधाया गाती हुई स्त्रियाँ लौटती हैं।

२३ : ३ : **बासौरा : शीतला सप्तमी या शीतला अष्टमी**

यह वस्तुतः शीतला माता की पूजा का त्यौहार है। किसी घर या मुहल्ले में यह सप्तमी को होता है, किसी में अष्टमी को। एक दिन पूर्व पूजा का सामान पकवान तैयार कर लिया जाता है। यह बासी सामान लेकर ही शीतला माता की पूजा की जाती है। होली के स्थान पर गाँव की सभी देवियों पर इसे चढ़ाया जाता है। इस दिन बासी खाना खाया जाता है।

२३ : ४ : नववर्षारंभ-नौदुर्गा :

नये संवत का पहला दिन शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा को होता है। इसी दिन से नवदुर्गा व्रत आरम्भ होता है। नवदुर्गा व्रत के प्रथम समारंभ में व्रज में नये संवत् के आरम्भ का महत्व गौण हो गया है। नवदुर्गा देवी-पूजन का नौ दिन का सत्र है। इसमें स्त्रियाँ पूरे आठ दिन उपवास व्रत रखती हैं, नवें दिन उसे तोड़ती हैं। जिन घरों में पूरे नौ दिन उपवास नहीं रखा जा सकता उनमें अष्टमी को उपवास रखा जाता है और देवी-पूजन होता है। नवमी को भी देवी पूजन होता है और कन्या लाँगुरा न्यौते जाते हैं।

२३ : ४ : १ :

देवी पूजन में भीत पर लीप कर रोली-घी या सिंदूर-घी से दो त्रिशूल : : बनाकर या दो हाथ के थापे (पूरी पाँचों उँगलियों के थापे) लगा कर देवी के रूप में उन्हें मान कर अग्यारी की जाती है। लौंग के जोड़े घी में डुबा कर अग्यारी पर रखे जाते हैं। बताशों का प्रसाद बाँटा जाता है। फूल मालाएँ चढ़ायी जाती हैं। ज्योति जलायी जाती है।

२३ : ४ : २ :

देवी पूजन का एक दूसरा विशाल आयोजन भी होता है।

यह किसी मान्यता विशेष के उपलक्ष में होता है। अष्टमी को देवी का विशाल होम किया जाता है। इसी रात्रि को रात्रि-जागरण (जागन्नु) होता है। देवी पूजकों की एक मंडली आती है। ये भगत कहलाते हैं। वे देवी-पट लगा कर उसके सामने पुनः अपना होम करते हैं, और जागरण का गीत गाते हैं। इसमें देवी के आने पर धार भी दी जाती है। धार देने के अर्थ हैं होमाग्नि में शराब की आहुति देना। देवी आने पर एक व्यक्ति खेलने लगता है, और कोड़े अपनी पीठ पर बरसाने लगता है। इस जागन्नु में माता की भेंट, मोहनदे या सुआ सेवरा, मोरंग दाने कौ जुज्झु, पलंका चढ़ाई, ज्वाला जी कौ जुज्झु, जगदेव तथा देवी के साहिले, अहिरामन लीला आदि गीत गाये जाते हैं।

२३ : ४ : ३ :

इस व्रत में स्त्रियाँ गीत गाती हैं। इसके ये गीत दो प्रकार के हो जाते हैं। एक तो, घर में रह कर गाये जाते हैं। दूसरे देवी की जात के जो चलते चलते गाये जाते हैं। इन गीतों का कुछ परिचय 'ब्रजलोक साहित्य का अध्ययन' नामक ग्रन्थ में दिया जा चुका है।

२३ : ५ : १ : **गनगौर**

नवदुर्गाओं में तृतीया के दिन गनगौर-पूजन और मेला होता है। इसी का श्री गुप्ते महोदय ने चैत्र गौरी नाम से उल्लेख किया है। नवदुर्गाओं की और किसी पूजा में कथा का विधान नहीं पर गनगौर के पूजन में कथा का भी विधान है।

२३ : ५ : २ : **गनगौर की कहानी—**

गनगौर पूजन में जो कहानी कही जाती है वह यह है :

गनगौर की कहानी

एक दिन भोले जी (महादेव जी) जंगल को गये तो पार्वती ने कही कै मैंऊ तुम्हारे साथ जंगल चलूंगी। महादेव जी ने कई कै पार्वती तुम मेरे संग जंगल में कां चलौगी, मां तौ कछू खाने पीने मिलैगा नई। मां तुम भूखी मर जाओगी, जा से तुम घर ही रहौ। पार्वती जिद्द पकड़ गयीं। नईं महादेव जी मैं तौ चलूंगी, चाएं भूखी रहूँ, चाएं प्यासी। महादेव जी नें कई कै नांएं मान रहीं तौ तुम चलौ। दोनों जने चले। चल्ते-चल्ते भौत दूर निकरि गए तौ पार्वती नें कई कै महादेव जी मोइ तौ बड़ी जोर की प्यास लग रही है। महादेव जी नें कई, देखौ पार्वती मैंने तुमते मनें करी कै तुम मती चलौ मेरे संग, तुम जिद्दि कर कें मेरे संग आईं अब मैं तुम्हारे काजें पानी कांते लाऊँ, जा जंगल में पानी कांते लाऊँ। चलौ अगाड़ी बढ़ौ, चलते चलते पार्वती बोली, महादेव जी मेरौ तौ गरौ सूखि रौ है। महादेव जी नें देख कें कई कै इतें चील कउआ उड़ि रहे हैं। मां जाउ, मां पानी होगौ। पार्वती गईं तौ मांई 'गनगौर'। सो अपने-अपने घर ते मटका रखि-रखि कें कोरे-कोरे मूड़ि पै। कछू तौ आइ रहीं कछू नहाइरईं, उनके मेंहदी महावर पैरों में लगि रहे, पार्वती जी देखि कें सोच में पड़ गईं

और एक बइग्रर ते पूछी कै आज कहा ए, जो तुम सिर ते न्हा रही हौ।[१] तौ बिन बइग्ररन नें कई कै तू ऐसी कां ते आई है। तो तू ना जानती कै आज गनगौरें, हम बर्तो एं। पार्वती सुन कें चुप है गई। प्यास तौ भूलि गई अब वो खूब न्हाईं। सिर से न्हाकैं उननें कई कै में बर्त काए ते खोलूंगी। ज्या तौ जंगलै। एक बुढ़िया गैया चरा रई, उननें बुढ़िया ते कई कै अम्मा तू हमें कहानी सुनादेगी[२] बानें कई सुना दऊंगी। तौ पार्वती नें रेतिया के गुना[३] बनाए। एक ठिंकुड़ी दक्षिणा रख दी। बुढ़िया नें कहानी सुना दई। बुढ़िया की भोरी में १६ गुना रखि दए और ठिंकुड़ी रख दई। बुढ़िया तौ घर चली गई और अपनी बऊ ते कई कै एक बासन लइओ री, रेतिया के गुना भरि कैं रख दऊं। तौ बऊ नें कई कै जे कोंनें दए हैं। कऊं रेतिया के गुना होंतें। फेंकौ रेतिया ऐ। तुमारी ऐसी आदतै कै रेतिया ऊ ऐ भरि लाईं एँ। तू समझै नाएं रैतिया ऊ काऊ न काऊ काम आ जागी, मेरौ नुकसान काए बानें रखि दए। तौ रात में गुना के तौ पगे भए गुना है गए और ठिंकुड़ी सोनो और अशर्फी है गई। पार्वती जी कहानी सुनि कें महादेव जी के पास पहुँची और महादेव जी ते कही कै मेरौ तौ आज बर्त कौ दिनै, मैं पानी नईं पीऊंगी जब तक, कछू तुम ज्या के लें करोगे नईं। मैं पानी पीवे गई तौ माँ कछु तौ बइग्रर न्हा न्हा कें जा रहीं, कछु न्हा रहीं, तौ मैंने पूछी कै आज कहाऐ तौ बिननें बताई गनगौरें। तौ मैंनें पानी नईं पीयौ अब मैं पानी जब पीऊंगी जब ज्या कुछ करौगे। उननें कई जे तौ खटराग लगेई रहतें। जंगल में काये के बर्त। पार्वती नें कई नईं जाय तौ करवाय लऊँगी, जि तौ सुहाग कौ कामैं। तौ महादेव जी नें वो नांदी सुहाग की घोरीं। पार्वती नें सबेरे सहर में डोंड़ी पिटवाइ दई। जितनी औरतेंईं चली आईं। तौ महादेव जी नें छींटा मार दए सुहाग के। तो वो तौ लै गईं सुहागें और पीछें ऊँची जात की आईं[४] सजबज

१. स्त्रियों को सिर से नहाने में कई प्रतिबन्ध हैं। पर जब कोई व्रतादि होता है तो सिर से स्नान करना होता है। पार्वती जी ने सिर से स्नान करने वाली स्त्रियों को देख कर ही यह अनुमान लगाया कि आज कोई विशेष बात है।

२. इस से यह प्रकट होता है कि यथासंभव गनगौर की कहानी किसी बुढ़िया से सुननी चाहिये।

३. यह एक पकवान होता है। मैदा की लूंड़ बना कर उसकी लोई से बड़े आकार के गोल कड़े जैसे बनाये जाते हैं। उनमें स्थान-स्थान पर गुटके उभरे रहते हैं, उनकी शक्ल कुछ ऐसी होती है:



गुना

४ इसमें ऊँच जाति को कम सुहाग मिला है, नीच जाति को अधिक। यह एक कारण मूलक (Actiological) कहानी है। नीच जाति में विधवाएँ कम हैं क्योंकि एक पति के बाद उनमें दूसरा विवाह हो सकता है। ऊंच जाति में पति की मृत्यु के पश्चात् विवाह नहीं हो सकता। नीच जाति में ऐसे विवाह गौरा पार्वती के वरदान रूप में हैं यह संगति प्रचलित प्रथा के लिए बैठायी गयी है।

कें नांदी का सुहाग निभट गया। जि का भयौ अब जे तौ तुम्हें बात रखनी पड़ेगी। तौ महादेव जी नें उंगली काटि कें नांदी में सुहाग बढ़ायौ, छींटा मारे सब पै, जा पै भरपूर छींटा पड़ि गयें बाकें तो भरपूर सुहाग, जा काऊ पै नईं पड़े उनकौ अधूरौ सुहाग। गौरा पार्वती चले गये दुनियां में मालूम पड़ गई कै बो गौरा पार्वती ए।[1]

२३ :५:२: १

राजस्थान में गनगौर की कथा का रूप कुछ और ही है। वह भी यहाँ दिया जाता है :—

२३:५:२:१ कथा :

एक राजा था और एक था माली। दोनों ने अपने नगर में खेती करने का विचार किया। राजा ने जौ चने की खेती की और माली ने अपनी बाड़ी में दूब लगाई। राजा के जौ चने दिन पर दिन बढ़ने लगे परन्तु माली की दूब दिन पर दिन घटती जाती थी। एक दिन दोनों ने मिल कर सोचा, क्या कारण है कि जौ चने तो बढ़ रहे हैं और दूब घट रही है। घूम फिर कर देखने पर उन्हें मालूम हुआ कि दूब किसी के द्वारा प्रतिदिन तोड़ी जा रही है। माली बाड़ी में गाड़ी के नीचे छिप कर बैठ गया। प्रतिदिन की भाँति नगर की लड़कियाँ आईं और दूब तोड़ने लगीं। माली को अब दूब घटने का कारण मिल गया। वह बाहर निकला और किसी लड़की का हार खोंसने लगा तथा किसी का टेवटा। लड़कियाँ घबराईं और उस माली से प्रार्थना करने लगीं, 'हम गणगौर का पूजन कर रही हैं। अगर हमें दूब नहीं मिलेगी तो हमारी पूजन-विधि में विघ्न होगा। तुम हमें दूब ले जाने दो। हम सब तुमको उसका १६ दिन का पुजापा ला देंगी।" माली मान गया और वे लड़कियाँ दूब ले जाती रहीं।

अपना पूजन सानन्द सम्पन्न कर वे लड़कियाँ पुजापा लेकर माली के आईं। दैव संयोग से माली किसी कार्यवश किसी दूसरे गाँव गया हुआ था। वह घर नहीं मिला। उसकी माँ घर पर मिली। लड़कियाँ उस की माँ को वह पुजापा देने लगीं। उसने नहीं लिया और कहा, उसकी ओबरी में रख दो। वह आने पर सँभाल लेगा। लड़कियों ने ऐसा ही किया।

कई दिनों बाद माली आया। आने पर उसने अपनी माँ से उन लड़कियों के पुजापे का जिक्र किया। माँ ने कहा, बेटा वे ओबरी में रख गयी हैं, सँभाल ले। माली गया और ओवरी खोलने लगा। परन्तु वह नहीं खुली। एक लात मारी, दो मारीं, तीन मारीं, परन्तु वह नहीं खुली। वह अपनी माता के पास आया और बोला—"माँ! ओबरी नहीं खुल रही है। तुम्हीं चल कर खोल दो।" माँ ने बड़ा अचम्भा किया और कहा, "तेरे से ओबरी ही नहीं खुलती है तो पराई जाई (बहु) को कैसे डाटेगा। जा, फिर जा। अब की बार खोल।" माँ साथ गयी।

---

१ ठीक यही कहानी ब्रज में ही अन्यत्र करवाचौथ पर कही जाती है। यह सौभाग्य से संबंधित है। जिस कुटुम्ब में करवाचौथ पर यह कहानी सुनी थी वह जैन कुटुम्ब था।

माँ ने अपने ठीके में से रोली निकाली, कोए में से काजल निकाला, चिटली अँगुली में से मेंहदी निकाली और उनको मिला कर छींटा दिया । ओबरी खुल गयी । अन्दर ईसर-गणगौर बैठे हुए दिखायी दिये । ईसर जी तो पगड़ी बाँधे बैठे हैं । गौरा उनकी पगड़ी सँवार रही है ।

यहाँ आगे राजस्थानी लोकगीत गाया जाता है—

"ईसर जी तो पेचो बाँधे गौराबाई पेच सुंवारै ओ राज, म्हे ईसर थारी साली छाँ"[1]

२३:६ देवी आठें

चैत्र शुक्ल अष्टमी को दुर्गा का व्रत रखा जाता है । जो लोग पूरे नौ दुर्गा व्रत नहीं रखते, वे भी इस व्रत को रखते हैं । इस दिन मुख्यतः देवी का जागरण भी होता है । भगत आते हैं, होम रचा जाता है, और रात्रि पर्यन्त देवी के जागरण गीत गाये जाते हैं ।

२३:७ रामनवमी

यह ब्रज में देवी नवमी ही कहलाती है । ब्रज में रामनवमी वस्तुतः जन्माष्टमी के उपरांत वाली नवमी होती है । फिर भी कहीं-कहीं इसे भगवान राम के जन्मदिवस के रूप में भी मनाया जाता है । देवी नवमी के रूप में यह नौ दुर्गाओं का अन्तिम दिन है । इस दिन पूजा के उपरांत कन्या-लांगुरा को भोजन कराके व्रती व्रत खोलता है ।

देवी के गीत गाये जाते हैं । इस देवी-पूजन की धूमधाम में राम का महत्व ब्रज में नगण्य हो गया है ।

२३ :७: १.

राजस्थान में इस व्रत में राम का ही महत्व है । इसका विवरण इस प्रकार है ।

२३ :७: २.

यह व्रत प्रतिवर्ष चैत्र शुक्ला ९ को आता है । राजस्थानी महिलाओं के लिए इसका अलग ही महत्व है । इस दिन सभी सधवा स्त्रियाँ स्नानादि करके एक पट्टे पर साँतिया (स्वस्तिक चिह्न) अंकित करती हैं, एक जलपात्र (कलश) पट्टे पर रखती हैं और पट्टे पर ही गणेशजी की स्थापना साधारणतया अपनी अंगुली में से छल्ला निकाल कर करती हैं । फिर अपने हाथ में अनाज के कुछ दाने लेकर वे कहानी सुनती हैं । कहानी सुनने के पश्चात् मन्दिर से भगवान का चरणामृत तथा पंचामृत मँगाकर भोजन के पूर्व उसे लेती हैं । तत्पश्चात् भोजन किया जाता है ।"

२३ :७:२: १.

इसकी कहानी इस प्रकार है :—

"राम, लक्ष्मण और सीता बन में जा रहे थे । चलते चलते लक्ष्मण थक गए तो उन्होंने राम से प्रार्थना की कि कहीं ठहर कर विश्राम किया जावे और थकान दूर की

१. उद्धत

जावे। सीता भी यही चाह रही थीं। नजदीक ही एक गाँव आया । उसी में विश्राम का निश्चय किया गया । विश्राम के लिए स्थान तलाश करते-करते एक बुढ़िया के घर पहुँचे। वह चरखा कात रही थी । उन्होंनें वहाँ ठहरने के लिए उससे कहा। बुढ़िया ने बड़ा सम्मान किया । उनको बैठाया, स्नान कराया, भोजन दिया। मगर राम ने भोजन नहीं किया और कहा, "पहले हमारे हंस के लिए मोती दो। तब हम भोजन करें।" बुढ़िया मोतियों का नाम सुनकर सकपकाई। बिचारी ने कभी मोती आँख से भी नहीं देखे थे । सारा जीवन गरीबी में बिताया था । चरखा ही उसका काऊ था । कुछ समझ न पड़ा, मोती कहां से आवें परन्तु अतिथियों को इन्कार करना भी धर्म नहीं। आखिर हिम्मत करके वह राजा के पास गई और एक आंदला (अंजली) मोती उधार माँगे। राजा बुढ़िया की बात सुन कर खिलखिला कर हँसा और बोला—अरी बुढ़िया, क्यों मुझे ठगती हो? खाने को दाने नहीं और मोती उधार माँगती हो। कब वापस करोगी? परन्तु खैर! जब तुम माँगने ही आगई तो तुम्हें तो देंगे ही। राजा ने नौकरों को आज्ञा दी कि उसे पुराने पड़े-गिरे मोती एक अंजली दे दो । पड़े गिरे बेकार मोती बुढ़िया को दे दिए गए ।

बुढ़िया खुशी के मारे फूली हुई मोती लेकर घर आई। राम के हंस के सामने मोती रखे। हंस को भोजन करवा कर बुढ़िया ने अपने अतिथियों की सुध ली। अपनी ओबरी में से वह बासी रोटी और खट्टी छाछ निकाल कर लाई और उनके सम्मुख रख दी। सभी ने बड़े प्रेम से भोजन किया। रात भर विश्राम किया। सुबह होते ही बुढ़िया से आज्ञा माँग वन में आगे बढ़। जाते समय रामजी बुढ़िया के परिन्डे (जलागार) में मोती का एक वृक्ष लगा गये ।

समय पाकर मोती का वृक्ष बड़ा हुआ। उसके फली लगने लगी और वे झड़-झड़कर पड़ने लगीं। बेचारी बुढ़िया को खबर ही नहीं। पड़ोसिन चुग चुगकर ले जाती। एक दिन बुढ़िया उसकी छाया में बैठकर चरखा कातने लगी। कातते-कातते एक फली झड़ कर उसकी गोद में आकर गिरी। उसने फली को उठाया और फोड़कर देखा। भीतर मोती निकले। तब उसने ध्यान से देखा तो पेड़ के नीचे मोतियों का ढेर लगा पड़ा था। बुढ़िया को राजा की याद आई और एक पोटली में मोती बाँधकर गढ़ में अपना कर्ज चुकाने गई ।

राजा ने बुढ़िया को आते देखकर समझा कि यह फिर कुछ माँगने आई है । राजा बुढ़िया को कुछ कहने वाला था कि उसने राजा के सामने वह मोतियों की पोटली रखदी और अपना कर्ज जमा करने को कहा। राजा बुढ़िया के पास इतने मोती देखकर असमंजस में पड़ गया और उससे पूछा—"अरी बुढ़िया! तुमने कहाँ से चोरी की है? इतने मोती कहाँ से आये?" बुढ़िया ने सरल भाव से निवेदन किया—"महाराज, मेरे घर में इसका पेड़ लगा हुआ है। एक दिन मेरे घर अतिथि आये थे। वे ही उस पेड़ को लगा गए हैं।" राजा का मन ललचाया। उसने बुढ़िया से पूछा—"अगर उस पेड़ को हमारे यहाँ लगा लें तो तुम हमें दे सकतीं हो" बुढ़िया लरल स्वभाव थी । उसने कहा—"मुझे क्या आवश्यकता है उन मोतियों की। उसके मोती तो पड़ोसिन चुग चुग ले जाती है। तुम ले आओ उस पेड़ को"। राजा ने पेड़ अपने यहाँ मँगवा कर दरवाजे में लगा लिया।

२०. ब्रज के इन व्रतानुष्ठानों में कितनी ही प्रकार की प्रक्रियाएं और विधियां होती हैं, जैसे :

१. गृह-स्वच्छता
२. पूजा-स्थल की तैयारी
३. पूजन सामग्री
४. भोग सामग्री
५. पूजा—पूजा के कई अंग होते हैं :
    १. पूजन सामग्री को चढ़ाना रोली, हल्दी, अक्षत, पुष्प, लौंग आदि।
    २. भोग-चढ़ाना
    ३. गीत गाना
    ४, कहानी सुनना
    ५. जल चढ़ाना
    ६. आव चढ़ाना
    ७. दीपक जलाना
    ८. अग्यारी करना
    ९. वैरियरा कूटना
    १०. परिकम्मा (परिक्रमा) देना
    ११. सूत्र बांधना
    १२. धूप लोबानादि
    १३. आरती उतारना
६. पूज्य—इन व्रतों में जिनकी पूजा की जाती है वे कई प्रकार के होते हैं :
    १. धातु मूर्ति
    २. मृण्मूर्ति
    ३. गौर (मिट्टी की)
    ४. कलश तथा करवा
    ५. चित्र–पूजा (काढ़ने) : जैसे करवाचौथ दीवाल पर काढ़ी जाती है।
        (अ) दीवाल पर काढ़ने
        (आ) भूमि पर काढ़ने
        (इ) पट्टे पर काढ़ने
    धरने : गोबर या मिट्टी से कोई बड़ी चीज बनायी जाती है—जैसे गोबर्द्धन धरा जाता है या कोट या सांझी धरी जाती है।
    खोदने : जैसे होली के लिए घरगुली खोदी जाती है।
    ६. कलम दवात या अन्य उद्योग संबंधी पदार्थ
    ७. पशु
    ८. लता-वृक्षादि

९. मनुष्य—'कन्या, लांगुरा, ब्राह्मण'
१०. सिक्का ।

७. व्रताहार
८. बांयना
९. दक्षिणा
१०. त्यौहारी

२१. व्रज के व्रतादि के संबंध में यह बात स्पष्ट परिलक्षित होती है कि उसके उपादान ग्रामीण संस्कृति से संबंधित हैं, और समस्त अनुष्ठान में एक ग्रामीण वातावरण प्रस्तुत हो जाता है। इसके मूल में यह तत्व व्याप्त मिलता है कि ग्राम के प्रत्येक काम करने वाले (जिन्हें कमीन कहा जाता है) का योग उस अनुष्ठान में हो। शायद ही कोई ग्रामीण धन्धा होगा, जिससे व्रतादि के लिए प्रत्येक घर में अपेक्षित सामग्री न आती हो। जैसे कुम्हारिन से कलश या करवा या घट, मालिन से पुष्पमाला आदि ।

२२. अब व्रज के इन व्रतों का यहाँ विस्तृत ब्यौरा दिया जाता है ।

२३ चैत्र के त्यौहार तथा व्रत

२३ : १. व्रत

१. धुलैंड़ी, २. भाई दूज, ३. बासौड़ा, ४. नव दुर्गा
(अ) गणगौर, (आ) देवी आठें, (इ) राम नवमी (देवी नवमी) :

२३ : १ : १ प्रतिपदा

चैत्र महीने में प्रतिपदा को पड़ने वाली धुलैंड़ी और दौज की भैयादौज एक प्रकार से होली के अंग होकर आते हैं। फागुन ही जैसे दौज तक फैला हुआ है।

धुलैंड़ी के दिन के त्यौहार विषयक कृत्यों में :—

१. गाँव या मुहल्ले की प्रदक्षिणा
२. परस्पर आलिंगन
३. अबीर-गुलाल-रंग चन्दन धूलादि से परस्पर खेलना ।
४. मंडलियाँ बाँधकर गाना-नाचना
५. गाली गलौज करना, हँसी-मज़ाक आदि मुख्य हैं ।

१. यह दिन हास परिहास से परिपूर्ण रहता है। कोई विशेष अनुष्ठान इसमें नहीं होता ।

२. भाई दूज : इस भाई दूज का समस्त अनुष्ठान प्रायः दिवाली की भाई दूज की भाँति होता है। केवल कुछ अन्तर रहता है। घरगुली के स्थान पर से गूलरियों की राख हटा कर उसे लीपा जाता है। गुलाल से चौक पूरा जाता है। और गौर पर गुलाल से रँगकर आब चढ़ायी जाती है। अन्य विवरण दिवाली के वर्णन में देखिये ।

भैयादूज पर अनुष्ठान में गीत और कहानी का उपयोग होता है। इस अनुष्ठान में भूमि लीप कर गुलाल से चौक पूरकर गौर गोबर की बनायी जाती है, उसके

हाथ पैर मुंह नहीं बनाते, उढ़ायी भी नहीं जाती। उसके सिर पर 'आब' रखी जाती है। आब रुई और कपास मिला कर बनायी जाती है। उस रुई और कपास को गुलाल के घोल में रँग कर गुने की शक्ल का बना लिया जाता है। ये सूप में रखली जाती हैं, उसमें खील, बतासे, तथा हल्दी का दिवला भी रहता है। और गौर को भूमि पर गोबर का घर बना कर उसमें कटेरी के पत्ते बिछा कर रखा जाता है। पूजने वाली हल्दी से बाँये हाथ के ऊपर साँतिया रख लेती है। तब व्याही चार आब, क्वारी दो आब बाँयें हाथ से गौर पर चढ़ाती हैं फिर कहानी होती है। कहानी हो जाने पर गौर हटा दी जाती है। कटेरी पर लो ा रखा जाता है। उस पर हल्दी का साँतिया काढ़ा जाता है। लोटे के गले में हँसली डाल दी जाती है, उसमें बायें हाथ की छिगुनी उँगली डाल ली जाती है फिर गीत गाये जाते हैं। इसके उपरान्त हँसली पहन ली जाती है। एक धनकुटे पर पाँच जगह हल्दी के बंध लगा दिये जाते हैं। कटेरी और घर का गोबर बटोर लिया जाता है। द्वार पर जाकर बाँयी ओर जमीन पर कटेरी, गोबर, खील, बताशे, पूड़ी के टुकड़े डाल कर बाँयें हाथ से धनकुटे से उसे पानी डाल कर कूटते हैं। इसे वैरियरा कूटना कहते हैं, वैरियरा का गीत गाते जाते हैं फिर दिवाल पर पानी डाल कर 'कोरे ठंडे' कर दिये जाते हैं। वहाँ दरवाजे के दोनों ओर हल्दी से साँतिये बना दिये जाते हैं। लौटते समय बधाया गाती हुई स्त्रियाँ लौटती हैं।

२३ : ३ : बासौरा : शीतला सप्तमी या शीतला अष्टमी

यह वस्तुतः शीतला माता की पूजा का त्यौहार है। किसी घर या मुहल्ले में यह सप्तमी को होता है, किसी में अष्टमी को। एक दिन पूर्व पूजा का सामान पकवान तैयार कर लिया जाता है। यह बासी सामान लेकर ही शीतला माता की पूजा की जाती है। होली के स्थान पर गाँव की सभी देवियों पर इसे चढ़ाया जाता है। इस दिन बासी खाना खाया जाता है।

२३ : ४ : नववर्षारंभ-नौदुर्गा :

नये संवत का पहला दिन शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा को होता है। इसी दिन से नवदुर्गा व्रत आरम्भ होता है। नवदुर्गा व्रत के प्रथम समारंभ में व्रज में नये संवत् के आरम्भ का महत्व गौण हो गया है। नवदुर्गा देवी-पूजन का नौ दिन का सत्र है। इसमें स्त्रियाँ पूरे आठ दिन उपवास व्रत रखती हैं, नवें दिन उसे तोड़ती हैं। जिन घरों में पूरे नौ दिन उपवास नहीं रखा जा सकता उनमें अष्टमी को उपवास रखा जाता है और देवी-पूजन होता है। नवमी को भी देवी पूजन होता है और कन्या लाँगुरा न्यौंते जाते हैं।

२३ : ४ : १ :

देवी पूजन में भीत पर लीप कर रोली-घी या सिंदूर-घी से दो त्रिशूल : 　　　: बनाकर या दो हाथ के थापे (पूरी पाँचों उँगलियों के थापे) लगा कर देवी के रूप में उन्हें मान कर अग्यारी की जाती है। लौंग के जोड़े घी में डुबा कर अग्यारी पर रखे जाते हैं। बताशों का प्रसाद बाँटा जाता है। फूल मालाएँ चढ़ायी जाती हैं। ज्योति जलायी जाती है।

२३ : ४ : २ :

देवी पूजन का एक दूसरा विशाल आयोजन भी होता है।

यह किसी मान्यता विशेष के उपलक्ष में होता है। अष्टमी को देवी का विशाल होम किया जाता है। इसी रात्रि को रात्रि-जागरण (जागन्नु) होता है। देवी पूजकों की एक मंडली आती है। ये भगत कहलाते हैं। वे देवी-पट लगा कर उसके सामने पुनः अपना होम करते हैं, और जागरण का गीत गाते हैं। इसमें देवी के आने पर धार भी दी जाती है। धार देने के अर्थ हैं होमाग्नि में शराब की आहुति देना। देवी आने पर एक व्यक्ति खेलने लगता है, और कोड़े अपनी पीठ पर बरसाने लगता है। इस जागन्नु में माता की भेंट, मोहनदे या सुआ सेवरा, मोरंग दाने कौ जुज्झु, पलंका चढ़ाई, ज्वाला जी कौ जुज्झु, जगदेव तथा देवी के साहिले, अहिरामन लीला आदि गीत गाये जाते हैं।

२३ : ४ : ३ :

इस व्रत में स्त्रियाँ गीत गाती हैं। इसके ये गीत दो प्रकार के हो जाते हैं। एक तो, घर में रह कर गाये जाते हैं। दूसरे देवी की जात के जो चलते चलते गाये जाते हैं। इन गीतों का कुछ परिचय 'व्रजलोक साहित्य का अध्ययन' नामक ग्रन्थ में दिया जा चुका है।

२३ : ५ : १ : **गनगौर**

नवदुर्गाओं में तृतीया के दिन गनगौर-पूजन और मेला होता है। इसी का श्री गुप्ते महोदय ने चैत्र गौरी नाम से उल्लेख किया है। नवदुर्गाओं की और किसी पूजा में कथा का विधान नहीं पर गनगौर के पूजन में कथा का भी विधान है।

२३ : ५ : २ : **गनगौर की कहानी—**

गनगौर पूजन में जो कहानी कही जाती है वह यह है :

गनगौर की कहानी

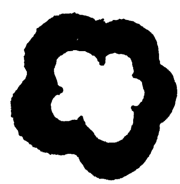
एक दिन भोले जी (महादेव जी) जंगल को गये तो पार्वती ने कही कै मेंऊ तुम्हारे साथ जंगल चलूंगी। महादेव जी ने कई कै पार्वती तुम मेरे संग जंगल में काँ चलौगी, माँ तौ कछू खाने पीने मिलैगा नईं। मां तुम भूखी मर जाओगी, जा से तुम घर ही रहौ। पार्वती जिद्द पकड़ गयीं। नईं महादेव जी मैं तौ चलूंगी, चाएँ भूखी रहूँ, चाएँ प्यासी। महादेव जी नें कई कै नांएं मान रहीं तौ तुम चलौ। दोनों जने चले। चल्ते-चल्ते भौत दूर निकरि गए तौ पार्वती नें कई कै महादेव जी मोइ तौ बड़ी जोर की प्यास लग रही है। महादेव जी नें कई, देखौ पार्वती मैंने तुमते मनें करी कै तुम मती चलौ मेरे संग, तुम जिद्दि कर कें मेरे संग आईं अब में तुम्हारे काजें पानी कांते लाऊँ, जा जंगल में पानी कांते लाऊँ। चलौ अगाड़ी बढ़ौ, चलते चलते पार्वती बोलीं, महादेव जी मेरौ तौ गरौ सूखि रौ है। महादेव जी नें देख कें कई कै इतें चील कउआ उड़ि रहे हैं। मां जाउ, मां पानी होगौ। पार्वती गईं तौ मांईं 'गनगौर'। सो अपने-अपने घर ते मटका रखि-रखि कें कोरे-कोरे मूड़ि पै। कछू तौ आइ रहीं कछू नहाइरईं, उनके मेंहदी महावर पैरों में लगि रहे, पार्वती जी देखि कें सोच में पड़ गईं

और एक बइअर ते पूछी कै आज कहा ए, जो तुम सिर ते न्हा रही हौ।[1] तौ बिन बइअरन नें कई कै तू ऐसी कां ते आई है। तो तू ना जानती कै आज गनगौरें, हम बर्ती ऐं। पार्वती सुन कें चुप है गई। प्यास तौ भूलि गई अब वो खूब न्हाईं। सिर से न्हाकें उननें कई कै मैं बर्त काए ते खोलूंगी। ञा तौ जंगलें। एक बुढ़िया गैया चरा रई, उननें बुढ़िया ते कई कै अम्मा तू हमें कहानी सुनादेगी[2] बानें कई सुना दऊंगी। तौ पार्वती नें रेतिया के गुना[3] बनाए। एक ठिंकुड़ी दक्षिणा रख दी। बुढ़िया नें कहानी सुना दई। बुढ़िया की झोरी में १६ गुना रखि दए और ठिंकुड़ी रख दई। बुढ़िया तौ घर चली गई और अपनी बऊ ते कई कै एक बासन लइओ री, रेतिया के गुना भरि कें रख दऊँ। तौ बऊ नें कई कै जे कौनें दए हैं। कऊँ रेतिया के गुना होंतें। फेंकौ रेतिया ऐ। तुमारी ऐसी आदतें कै रेतिया ऊ ऐ भरि लाईं एँ। तू समझै नाऐं रेतिया ऊ काऊ न काऊ काम आ जागी, मेरौ नुकसान काऐ बानें रखि दए। तौ रात में गुना के तौ पगे भए गुना है गए और ठिंकुड़ी सोनो और अशर्फी है गई। पार्वती जी कहानी सुनि कें महादेव जी के पास पहुँची और महादेव जी ते कही कै मेरौ तौ आज बर्त कौ दिनै, मैं पानी नईं पीऊंगी जब तक, कछू तुम ञा के लें करोगे नईं। मैं पानी पीबे गई तौ माँ कछ तौ बइअर न्हा न्हा कें जा रहीं, कछू न्हा रहीं, तौ मैंने पूछी कै आज कहाऐ तौ बिननें बताई गनगौरें। तौ मैंनें पानी नईं पीयौ अब मैं पानी जब पीऊँगी जब ञा कुछ करौगे। उननें कई जे तौ खटराग लगेंई रहतें। जंगल में काये के बर्त। पार्वती नें कई नईं जाय तौ करवाय लऊँगी, जि तौ सुहाग कौ कामैं। तौ महादेव जी नें दो नाँदी सुहाग की घोरीं। पार्वती नें सबेरे सहर में डोंड़ी पिटवाइ दई। जितनी औरतेंईं चली आईं। तौ महादेव जी नें छींटा मार दए सुहाग के। तो वो तौ लै गईं सुहागें और पीछें ऊँची जात की आईं[4] सजबज

१. स्त्रियों को सिर से नहाने में कई प्रतिबन्ध हैं। पर जब कोई व्रतादि होता है तो सिर से स्नान करना होता है। पार्वती जी ने सिर से स्नान करने वाली स्त्रियों को देख कर ही यह अनुमान लगाया कि आज कोई विशेष बात है।

२. इससे यह प्रकट होता है कि यथासंभव गनगौर की कहानी किसी बुढ़िया से सुननी चाहिये।

३. यह एक पकवान होता है। मैदा की लूंड़ बना कर उसकी लोई से बड़े आकार के गोल कड़े जैसे बनाये जाते हैं। उनमें स्थान-स्थान पर गुटके उभरे रहते हैं, उनकी शक्ल कुछ ऐसी होती है:



गुना

४ इसमें ऊँच जाति को कम सुहाग मिला है, नीच जाति को अधिक। यह एक कारण मूलक (Actiological) कहानी है। नीच जाति में विधवाएँ कम हैं क्योंकि एक पति के बाद उनमें दूसरा विवाह हो सकता है। ऊंच जाति में पति की मृत्यु के पश्चात् विवाह नहीं हो सकता। नीच जाति में ऐसे विवाह गौरा पार्वती के वरदान रूप में हैं यह संगति प्रचलित प्रथा के लिए बैठायी गयी है।

कें नांदी का सुहाग निभट गया। जि का भयौ अब जे तौ तुम्हें बात रखनी पड़ेगी। तौ महादेव जी नें उंगली काटि कें नांदी में सुहाग बढ़ायौ, छींटा मारे सब पै, जा पै भरपूर छींटा पड़ि गयें बाकें तो भरपूर सुहाग, जा काऊ पै नईं पड़े उनकौ अधूरौ सुहाग। गौरा पार्वती चले गये दुनियां में मालूम पड़ गई कै बो गौरा पार्वती ए।[1]

२३ :५:२: १

राजस्थान में गनगौर की कथा का रूप कुछ और ही है। वह भी यहाँ दिया जाता है :—

२३:५:२:१ कथा :

एक राजा था और एक था माली। दोनों ने अपने नगर में खेती करने का विचार किया। राजा ने जौ चने की खेती की और माली ने अपनी बाड़ी में दूब लगाई। राजा के जौ चने दिन पर दिन बढ़ने लगे परन्तु माली की दूब दिन पर दिन घटती जाती थी। एक दिन दोनों ने मिल कर सोचा, क्या कारण है कि जौ चने तो बढ़ रहे हैं और दूब घट रही है। घूम फिर कर देखने पर उन्हें मालूम हुआ कि दूब किसी के द्वारा प्रतिदिन तोड़ी जा रही है। माली बाड़ी में गाड़ी के नीचे छिप कर बैठ गया। प्रतिदिन की भाँति नगर की लड़कियाँ आईं और दूब तोड़ने लगीं। माली को अब दूब घटने का कारण मिल गया। वह बाहर निकला और किसी लड़की का हार खौंसने लगा तथा किसी का टेवटा। लड़कियाँ घबराईं और उस माली से प्रार्थना करने लगीं, 'हम गणगौर का पूजन कर रही हैं। अगर हमें दूब नहीं मिलेगी तो हमारी पूजन-विधि में विघ्न होगा। तुम हमें दूब ले जाने दो। हम सब तुमको उसका १६ दिन का पुजापा ला देंगी।" माली मान गया और वे लड़कियाँ दूब ले जाती रहीं।

अपना पूजन सानन्द सम्पन्न कर वे लड़कियाँ पुजापा लेकर माली के आईं। दैव संयोग से माली किसी कार्यवश किसी दूसरे गाँव गया हुआ था। वह घर नहीं मिला। उसकी माँ घर पर मिली। लड़कियाँ उस की माँ को वह पुजापा देने लगीं। उसने नहीं लिया और कहा, उसकी ओबरी में रख दो। वह आने पर सँभाल लेगा। लड़कियों ने ऐसा ही किया।

कई दिनों बाद माली आया। आने पर उसने अपनी माँ से उन लड़कियों के पुजापे का जिक्र किया। माँ ने कहा, बेटा वे ओबरी में रख गयी हैं, सँभाल ले। माली गया और ओवरी खोलने लगा। परन्तु वह नहीं खुली। एक लात मारी, दो मारीं, तीन मारीं, परन्तु वह नहीं खुली। वह अपनी माता के पास आया और बोला—"माँ! ओबरी नहीं खुल रही है। तुम्हीं चल कर खोल दो।" माँ ने बड़ा अचम्भा किया और कहा, "तेरे से ओबरी ही नहीं खुलती है तो पराई जाई (वहु) को कैसे डाटेगा। जा, फिर जा। अब की बार खोल।" माँ साथ गयी।

---

१ ठीक यही कहानी ब्रज में ही अन्यत्र करवाचौथ पर कही जाती है। यह सौभाग्य से संबंधित है। जिस कुटुम्ब में करवाचौथ पर यह कहानी सुनी थी वह जैन कुटुम्ब था।

माँ ने अपने ठीके में से रोली निकाली, कोए में से काजल निकाला, चिटली अँगुली में से मेंहदी निकाली और उनको मिला कर छींटा दिया । ओबरी खुल गयी । अन्दर ईसर-गणगौर बैठे हुए दिखायी दिये । ईसर जी तो पगड़ी बाँधे बैठे हैं । गौरा उनकी पगड़ी सँवार रही है ।

यहाँ आगे राजस्थानी लोकगीत गाया जाता है—

"ईसर जी तो पेचो बाँधे गौराबाई पेच सुंवारै ओ राज, म्हे ईसर थारी साली छाँ"[१]

२३:६ देवी आठें

चैत्र शुक्ल अष्टमी को दुर्गा का व्रत रखा जाता है । जो लोग पूरे नौ दुर्गा व्रत नहीं रखते, वे भी इस व्रत को रखते हैं । इस दिन मुख्यतः देवी का जागरण भी होता है । भगत आते हैं, होम रचा जाता है, और रात्रि पर्यन्त देवी के जागरण गीत गाये जाते हैं ।

२३:७ रामनवमी

यह ब्रज में देवी नवमी ही कहलाती है । ब्रज में रामनवमी वस्तुतः जन्माष्टमी के उपरांत वाली नवमी होती है । फिर भी कहीं-कहीं इसे भगवान राम के जन्मदिवस के रूप में भी मनाया जाता है । देवी नवमी के रूप में यह नौ दुर्गाओं का अन्तिम दिन है । इस दिन पूजा के उपरांत कन्या-लांगुरा को भोजन कराके व्रती व्रत खोलता है ।

देवी के गीत गाये जाते हैं । इस देवी-पूजन की धूमधाम में राम का महत्व ब्रज में नगण्य हो गया है ।

२३ :७: १.

राजस्थान में इस व्रत में राम का ही महत्व है । इसका विवरण इस प्रकार है ।

२३ :७: २.

यह व्रत प्रतिवर्ष चैत्र शुक्ला ९ को आता है । राजस्थानी महिलाओं के लिए इसका अलग ही महत्व है । इस दिन सभी सधवा स्त्रियाँ स्नानादि करके एक पट्टे पर साँतिया (स्वस्तिक चिह्न) अंकित करती हैं, एक जलपात्र (कलश) पट्टे पर रखती हैं और पट्टे पर ही गणेशजी की स्थापना साधारणतया अपनी अंगुली में से छल्ला निकाल कर करती हैं । फिर अपने हाथ में अनाज के कुछ दाने लेकर वे कहानी सुनती हैं । कहानी सुनने के पश्चात् मन्दिर से भगवान का चरणामृत तथा पंचामृत मँगाकर भोजन के पूर्व उसे लेती हैं । तत्पश्चात् भोजन किया जाता है ।"

२३ :७:२: १.

इसकी कहानी इस प्रकार है :—

"राम, लक्ष्मण और सीता बन में जा रहे थे । चलते चलते लक्ष्मण थक गए तो उन्होंने राम से प्रार्थना की कि कहीं ठहर कर विश्राम किया जावे और थकान दूर की

---

१. उद्धृत

जावे। सीता भी यही चाह रही थीं। नजदीक ही एक गाँव ग्राया। उसी में विश्राम का निश्चय किया गया। विश्राम के लिए स्थान तलाश करते-करते एक बुढ़िया के घर पहुँचे। वह चरखा कात रही थी। उन्होंनें वहाँ ठहरने के लिए उससे कहा। बुढ़िया ने बड़ा सम्मान किया। उनको बैठाया, स्नान कराया, भोजन दिया। मगर राम ने भोजन नहीं किया ग्रौर कहा, "पहले हमारे हंस के लिए मोती दो। तब हम भोजन करें।" बुढ़िया मोतियों का नाम सुनकर सकपकाई। विचारी ने कभी मोती ग्राँख से भी नहीं देखे थे। सारा जीवन गरीबी में बिताया था। चरखा ही उसका काऊ था। कुछ समझ न पड़ा, मोती कहां से ग्रावें परन्तु ग्रतिथियों को इन्कार करना भी धर्म नहीं। ग्राखिर हिम्मत करके वह राजा के पास गई ग्रौर एक ग्रांदला (ग्रंजली) मोती उधार माँगे। राजा बुढ़िया की बात सुन कर खिलखिला कर हँसा ग्रौर बोला—ग्ररी बुढ़िया, क्यों मुझे ठगती हो? खाने को दाने नहीं ग्रौर मोती उधार माँगती हो। कब वापस करोगी? परन्तु खैर! जब तुम माँगने ही ग्रागई तो तुम्हें तो देंगे ही। राजा ने नौकरों को ग्राज्ञा दी कि उसे पुराने पड़े-गिरे मोती एक ग्रंजली दे दो। पड़े गिरे बेकार मोती बुढ़िया को दे दिए गए।

बुढ़िया खुशी के मारे फूली हुई मोती लेकर घर ग्राई। राम के हंस के सामने मोती रखे। हंस को भोजन करवा कर बुढ़िया ने ग्रपने ग्रतिथियों की सुध ली। ग्रपनी ग्रोबरी में से वह बासी रोटी ग्रौर खट्टी छाछ निकाल कर लाई ग्रौर उनके सम्मुख रख दी। सभी ने बड़े प्रेम से भोजन किया। रात भर विश्राम किया। सुबह होते ही बुढ़िया से ग्राज्ञा माँग वन में ग्रागे बढ़। जाते समय रामजी बुढ़िया के परिन्डे (जलागार) में मोती का एक वृक्ष लगा गये।

समय पाकर मोती का वृक्ष बड़ा हुग्रा। उसके फली लगने लगी ग्रौर वे झड़-झड़कर पड़ने लगीं। बेचारी बुढ़िया को खबर ही नहीं। पड़ोसिन चुग चुगकर ले जाती। एक दिन बुढ़िया उसकी छाया में बैठकर चरखा कातने लगी। कातते-कातते एक फली झड़ कर उसकी गोद में ग्राकर गिरी। उसने फली को उठाया ग्रौर फोड़कर देखा। भीतर मोती निकले। तब उसने ध्यान से देखा तो पेड़ के नीचे मोतियों का ढेर लगा पड़ा था। बुढ़िया को राजा की याद ग्राई ग्रौर एक पोटली में मोती बाँधकर गढ़ में ग्रपना कर्ज चुकाने गई।

राजा ने बुढ़िया को ग्राते देखकर समझा कि यह फिर कुछ माँगने ग्राई है। राजा बुढ़िया को कुछ कहने वाला था कि उसने राजा के सामने वह मोतियों की पोटली रखदी ग्रौर ग्रपना कर्ज जमा करने को कहा। राजा बुढ़िया के पास इतने मोती देखकर ग्रसमंजस में पड़ गया ग्रौर उससे पूछा—"ग्ररी बुढ़िया! तुमने कहाँ से चोरी की है? इतने मोती कहाँ से ग्राये?" बुढ़िया ने सरल भाव से निवेदन किया—"महाराज, मेरे घर में इसका पेड़ लगा हुग्रा है। एक दिन मेरे घर ग्रतिथि ग्राये थे। वे ही उस पेड़ को लगा गए हैं।" राजा का मन ललचाया। उसने बुढ़िया से पूछा—"ग्रगर उस पेड़ को हमारे यहाँ लगा लें तो तुम हमें दे सकतीं हो" बुढ़िया सरल स्वभाव थी। उसने कहा—"मुझे क्या ग्रावश्यकता है उन मोतियों की। उसके मोती तो पड़ोसिन चुग चुग ले जाती है। तुम ले ग्राग्रो उस पेड़ को"। राजा ने पेड़ ग्रपने यहाँ मँगवा कर दरवाजे में लगा लिया।

अब पेड़ में मोतियों की फली लगने के बजाय कांटे लगने लगे। पेड़ आते-जाते लोगों के कपड़े फाड़ने लगा तथा कांटे एड़ियों में चुभने लगे। सभी ने राजा से उसको उखाड़ने की प्रार्थना की परन्तु विफल गई। एक दिन रानी की एड़ी में कांटा गढ़ गया। रानी को बड़ी पीड़ा हुई। उसी समय रानी के कहने पर वह पेड़ वापस बुढ़िया के घर लगवा दिया गया।

बुढ़िया आनन्द से उस पेड़ का उपयोग करने लगी और उदारता से उसके मोती बांटने लगी।[1]

द्वितीय कथा—

एक गरीब बुढ़िया थी। उसके पास खाने को कुछ भी नहीं था। चरखा ही उसका एकमात्र सहारा था। परन्तु चरखे की कताई से पेट नहीं भरता था। एक दिन उसने सुना कि जो राम का व्रत करते हैं और उनके ही सत पर रहते हैं, भगवान उन्हें अपने आप ही पूरते हैं। घर में खाने को था नहीं। उसने सोचा कि राम के सत पर भूखी रह लूंगी। वह दिन भर भूखी पड़ी रही। रात हो गई। कुछ भी नहीं खाया और खाये भी कहाँ से घर में कुछ हो तो।

रामजी ने लक्ष्मण जी से कहा कि यह बुढ़िया मेरे सत पर भूखी पड़ी है। इसकी परीक्षा लें। लक्ष्मण ने कहा अच्छी बात है। वे भेष बदल कर बुढ़िया के पास आए और एक झाकरा गूंदगिरी के लड्डुओं का बुढ़िया को दिया। बुढ़िया ने अपना व्रत खोला।

कुछ दिनों के उपरान्त एक दिन फिर रामजी और लक्ष्मण जी भेष बदल कर आए और बुढ़िया से राम के सत पर रह कर व्रत करने के लिए पूछा। बुढ़िया ने कहा—"अब तो मेरे पास गूंद के लड्डू हैं। मेरे से व्रत नहीं होता। मैं सत पर नही रह सकती।" लक्ष्मणजी ने बुढ़िया के इस प्रकार के विचार सुनकर कहा—"तब तो तुम्हारे पास गूंदगिरी के लड्डू भी नहीं रह सकते। तुम भूखी मरोगी। "इस पर किसी प्रकार से लड्डू रह सकें, इसका कोई उपाय बुढ़िया ने उनसे पूछा। लक्ष्मणजी ने कहा कि अगर साल में एक बार भी राम का व्रत कर लोगी तो कभी भी गूंद का झाकरा खाली नहीं होगा और न कभी भूखी ही रहोगी। बुढ़िया ने उनकी बात मान ली। और साल में एक बार राम का व्रत करने लगी। इस प्रकार अपनी जिन्दगी के शेष वर्ष वह आनन्द से बिताने लगी।"

२३ : ८.

नौदुर्गाओं में जो जागरण होता है, उसमें क्या क्या होता है इसका वर्णन हमें एक भगत से मिला है, जो स्वयं जागरण कराता है।

---

१. राजस्थानी महिलाओं का प्रत्येक व्रतकथा को समाप्त करने का अपना एक विशेष ढंग है। प्रत्येक कथा के अन्त में एक विशेष सम्पुट दिया जाता है। जैसे—"बैंने दियो सो सब कोई न दिए। कहता नैं, सुणता नैं, हुंकारो भरता नैं, अधूरी हो तो पूरी करिए, पूरी हो तो परवाण करिए।" आदि।—द्धृत

वह जागरण का आरम्भ एक मंत्र जैसे गीत से करता है, वह गीत यह है : —

सुरख बांधूं
सीसार बांधू
और आगें लटा बांधू
मोर बांधूं
खोर बांधूं
बनी कौ सिंघ बांधू
हात बांधूं
पांइ बांधू
औरु चारौ अंग बांधू
घात बांधूं
पमन बांधू
दुहाई पीर पैगम्बर की
दुहाई माता-पिता की
दुहाई गोरखनाथ की
कहना मेरा दुआ फकीर की
उस नूं तौ जुसुनू कैसा लागै
जैसें तीर-कमान
सोते कूं जगाता
बैठे कूं उठाता
दिल काटि करेजी मँगाता ।

जागरण में आगे—

१. माताजी के भजन
२. जगद्दव का पँवारा
३. अहिरामन लीला
४. मोरंग दाने की लड़ाई
५. देवी के साहिले

गाये जाते हैं ।

२३:८:१.

इस देवी के जागरण में अनुष्ठान विषयक जो सामग्री काम में आती है वह यह है:—

१. चंदोबा—यह देवी का पट होता है । यह दिवाल पर टाँग दिया जाता है ।

२. बानौ—जनेऊ पेटी । यह बाना उसको पहनना होता है जिस पर देवी आती है । यह जागरण में गीतों के साथ नृत्य करता रहता है । इसे बघेलखंड में 'बरुआ' कहते हैं ।

३. नवेर
४. झाँझ
५. गजा
६. झूमरा (कोड़ा) यह लोहे का होता है।
७. देवी की मूर्ति।

इसमें पूजन के लिए उस भगत ने नीचे लिखी सामग्री आवश्यक बतायी :—

लौंग, धूप, बताशे, लड्डुआ (मोतीचूर के प्रेत के लिए), पेड़ा (लाँगुरा के लिए), गिरी-मेवा (देवी के लिए), जायफल (काली के लिए), धार अर्थात् सुरा (देवी को), और सिंदूर।

२३:८:२. लोकसाहित्य में देवी अर्चना

भारतीय प्रकृति के षटऋतु विधान में बसंत और शरद सर्वोत्तम ऋतुएँ हैं। इन ऋतुओं में भारत भर उत्सवों से उमँग उठता है। इन समस्त उत्सवों पर ध्यान देने से एक बात यह अत्यन्त स्पष्ट दिखायी पड़ती है कि सबसे प्रबल और प्रधान धारा देवी-अर्चना की होती है। हमारे यहाँ दो नव-रात्रियाँ होती हैं। एक चैत में दूसरी क्वार में। प्रत्येक अवसर पर नौ दिन तक यह देवी पूजा और देवी व्रत चलता है। अष्टमी तथा नवमी को यह अपने चरम पर पहुँच जाता है। क्वार की नौ देवियों अथवा नवरात्रियों में 'न्यौरता' पूजन होता है। वस्तुतः लोक में यह न्वौरता पूजन नहीं कहलाता, न्यौरता खेलना कहा जाता है। प्रायः प्रत्येक घर में न्यौरता स्थापित किया जाता है। न्यौरते का रूप गुहा की आकृति का माना जा सकता है। बीच में एक गुफा सी बना कर दोनों ओर सीढ़ियाँ बनादी जाती हैं और इस छोटी सी गुफा के नीचे पैर बना दिये जाते हैं, ऊपर दोनों ओर दो भुजाएँ बना दी जाती हैं। दो मुख बना दिये जाते हैं, एक शिव का एक पार्वती का। प्रतिपदा से अष्टमी तक प्रातः सूर्योदय से पूर्व घर की कन्याएँ, मुख्यतः, साथ में सहारे और विधि बताने के लिए अन्य स्त्रियाँ भी इस न्यौरते पर 'गौर' चढ़ाती हैं। मिट्टी की छोटी-छोटी सूच्याकार आकृतियाँ बनाकर गीत गाते हुए ये गौरें उन सीढ़ियों जैसी पार्श्ववर्त्ती जगह पर सजा दी जाती हैं। इस विधि से शारदीय नवरात्रि में प्रातः से ही देवी मंगल की ध्वनि से घर गूँज गठता है। गौर चढ़ाने का काम समाप्त होने पर लोटे के जल में दृष्टि डालती हुई ये स्त्रियाँ और बालिकाएँ गौर की झाँई देखती हैं, यह गीत गाती जाती हैं:—

अपनी गौरि की झाँई देखूं।
का पहिरे देखूं।

······झाँई देखकर यह प्रातः की अर्चना या खेल समाप्त हो जाता है।

गौरी गौरा अथवा गौरि के साथ खेलने के विचार की संघित् ठीक बनती हैं। "अष्ट वर्षाभवेत् गौरी"। गौरी आठ वर्ष की कन्या कहलाती है। देवी के कुमारी रूप के पूजन का यह आयोजन है। बालिकाएं आठ वर्ष की देवी के साथ खेल में ही पूजन का भाव प्राप्त करती हैं। खेल समाप्त हो जाता है। इसको आरम्भ करते समय गाया जाता है।

"गौरी रे गौरा खोलो किवरियाँ"

(शिव का नाम "गौरा" दृष्टव्य है)।

पार्वती और शिव दोनों को किवाड़ खोलने के लिए इस प्रकार आवाज दी जाती है। किवाड़ खुलने पर ही तो देवी के दर्शन तथा पूजा हो सकती है। इस पूजन में यथार्थतः खेल का भाव विद्यमान है क्योंकि एक गीत में देवी पूछती है—

"खेल खिलंतर बेटी का का मांगे ?"

भले घर की बेटियाँ गौरी के साथ खेल खेलती हैं तो उन्हें भी तो प्रसन्न किया जाना चाहिये। बेटियाँ भी जानती हैं कि वे किसी साधारण कन्या के साथ नहीं खेलीं। मन भर कर माँगती हैं – किसी का व्याह, किसी के लिए पुत्र, किसी को वैभव आदि।

कुमारी-पूजन का खेल, बाल-ख्याल से यह प्रारम्भ, कितने स्वस्थ, पवित्र और मनोरम धरातल पर है। कुमारी पूजन भारत के लिए ही कोई अनोखी चीज नहीं। कुमारी-पूजा विश्व भर में किसी न किसी रूप में विद्यमान मिलती है। ईसाई धर्म का एक रूप कुमारी मेरी की बहुत पूजा करता है। उसी के कौमार्य से, बिना कौमार्य भंग हुए ही, ईसा मसीह उत्पन्न हुए थे। यूनान और रोम में कुमारी माता से सूर्य का जन्म माना जाता है। भारत में किसी युग में पाँचो पाण्डवों का पूजन होता था, उसका मूल कुमारी पूजन में ही विदित होता है। कुन्ती का विवाह कराया गया है, पर पति व्यर्थ कर दिया गया है। पति न भी होता तो पश्रा 'कर्ण' की भाँति ही तो शेष पाँडवों का जन्म हुआ था ! कुन्ती और उसके छः पुत्रों की कहानी में श्लेष ही है। शैव षड़ानन का ही वैष्णव रूपान्तर कुन्ती की कहानी मे है। और यह रूपान्तर उस युग में हुआ जब सप्त मातृकाओं के स्थान पर षटमातृकाओं की मान्यता थी। पहाड़ों में जहाँ देवी पूजन का विशेष महत्व है पांडवों की भी पूजा होती है और पांडव भी सिर आते हैं। देवी के इस नवरात्रि उत्सव की समाप्ति पर "कन्या-लाँगुरा" जिमाये जाते हैं। भोजन कराया जाता है, कन्या में उसी कुमारी भाव से गौरी की मान्यता रहती है। कन्या के रूप में भवानी के दर्शन एक गीत में स्पष्टतः होते हैं—

कन्या रूप भवानी मैंने आजु देखी
वरु अगवारे मैया वरु पिछवारे पीपर
धरम दुआर मैंने आजु देखी। कन्या०
मैया के द्वारे एक बाँझ पुकारै बाँझ की
गोदी भरि देउ मैंने आजु देखी। कन्या०
मैया के द्वारें एक कोढ़ी पुकारै कोढ़ी की
काया करि देउ मैंनें आजु देखी। कन्या०
मैया के द्वारे एक अँधरा पुकारै
अँधरे की आखें करि देउ-मैंने आजु देखी। कन्या०

देवी मां है। कन्या होते हुए भी मां है। मां की पूजा भी सभी देशों में मिलती है और वह मातृपूजा सम्भवतः प्राचीनतम धर्म का मुख्य आधार रही है। क्योंकि प्राचीन ऐतिहासिक ही नहीं प्रागऐतिहासिक काल की खुदाई से मातृकाओं की मूर्तियाँ प्राप्त हुई ह। भूमध्यसागर के दोनों ओर महीमाता की पूजा प्रागऐतिहासिक काल में होती थी, उसी

का रूप हमें अत्यन्त प्राचीन मिश्र की देवी आइसिस में मिलता है, और रोम की चीरीस तथा यूनान की दमिता में। पृथ्वी की उत्पादिका शक्ति के साम्य से इसी महीमाता का उस पर आरोप हुआ और अब पृथ्वी माता होगयी। यूनान में गैया या गइया अथवा गे पृथ्वी का नाम हुआ। यूनान के प्रसिद्ध दो तीर्थों में पृथ्वीमाता अथवा गइया की पूजा का बहुत प्रचलन था। यै दो तीर्थ थे आलिम्पिया तथा डेल्फी के। महीमाता को लेकर यौन भावना का भी प्राबल्य हुआ। और इसी के आधार पर महीमाता की पूजा फ्रीजिया और पश्चिमी एशिया में होने लगी। अब इस माता को कहीं सीबेले, रहीमा, आदिस्तिस या दिंदचमेन नाम मिला। समय के विकास के साथ यह महीमाता 'देवताओं की माता' हो गयी। उत्तरी अफ्रीका में कुमारीं कल्लैस्तीस के पूजन के साथ बेदेसिन्धिया का भीं पूजन होता है। यह बेदेसिन्धिया दैवताओं की माँ है। विद्वानों का मत है कि इसी मातृदेवी पूजा के प्रभाव स्वरूप ईसाई धर्म में भी ईसा की माँ की पूजा का विधान प्रबल हुआ।

इस महीमाता का ईरान में नाम था अनाइनिस, अनाहित अथवा अनाहीद। फिलिस्तीन में इसे अनत कहा गया और एशिया माइनर में ननइ या नना अथवा तनइस कार्थेज में तैनित। और यही महीमाता वेदों में 'अदिति' है। यह अदिति देवमाता है।

अदितिर्देवमाता च सुरभच गवां प्रसूः।
(ब्रह्मवैवर्त्त १।१२६)

अदिति महीमाता है—

विजस्यनु प्रसवे मातकं महीमदितिं नाम बचस करामहे—
(यजु० १८.३०, ९.५)

महीम यु मातर सुव्रनाना मृतस्य पत्नीवस्यो हवेम।
तुविक्षत्राम जरन्ती मुरूची सुशर्माणमदिति १० सुप्रणीतिम
(यजु: २१.५)

अदिति पृथ्वी या धरतीमाता है—

इदम् पृथिवी वै देवी अदितिविश्व रूपी।
(तै० १।७।६।७)

अदिति गाय या धेनु है—

गां मा हिंसी रदितिं विराजम
(यजु० १३,४३)

तथा

माता रुद्राणां दुहितावसूनां
स्वसादित्यानामभृतस्य नाभिः
प्रनुवोचम् चिकितुषे जनाय
मा गामना गामदितिं वधिष्ट
(ऋग्० ८,९०.१२.)

अदिति है इड़ा, सरस्वती तथा वाक—

इडे रन्ते हव्ये काम्ये
चन्द्रे ज्योतिरदविते
सरस्वति महि विश्रुति ।
एता ते अघ्न्ये नामानि
देवेभ्यो मा सुकृतं ब्रतान ।।

उधर निघण्टु ने वाक् के ये पर्याय दिये हैं :

इडा, गौः, गौरी, भारती, मेना, सूर्या, सरस्वती, धेना, नना, कशा, मही, अदितिः शची, नौः, धेनुः, सुपर्णी ।

देवी के गीतों में एक 'सुरही' नाम का गीत महत्वपूर्ण हे । सुरभि नाम की गाय को एक सिंह पकड़ लेता है । गाय कहती है मैं बच्चों को दूध पिला आऊँ और विदा ले आऊँ । सिंह मान जाता है । गाय बच्चों को दूध पिलाकर लौटती है । बच्चे भी साथ चलते हैं, और कहते हैं मामा मुझे पहले खाइये । सिंह गाय और बच्चों के इस शील को देखकर और मामा (अर्थात् गाय सुरभी का भाई) बन जाने के कारण किसी को नहीं खाता और उनकी रक्षा करता है । देवी के गीतों में सुरभि का यह गीत पहले कुछ आश्चर्य में डालता है, पर देवी गौ भी हैं यह ऊपर स्पष्ट हो चुका है । अतः लोकगीत में गौ के भाव से देवी की ही अर्चना उक्त गीत में हुई है । यह 'सुरही' का गीत मेरठ के और पास 'गावितरी' कहा जाता हैं ।

किन्तु देवी के वर्णनों में उसके रूद्र रूपों का भी समावेश है । 'ज्वाला' भी देवी का एक नाम है ।

इन ज्वालामाई का एक दर्शन तो भक्त ने इस गीत में किया है--

सो धन्य मेरी ज्वाला मैया जै-जै रानी ।
पत्थर फोड़ि पहाड़िते निकरी,
अगिनि जोति सो हहरानी । सो धन्य० ।
ऊंचौ आसनु अटल सिंहासनु,
तीनि लोकनों जग जानी । सो धन्य० ।
सिंहपौरि पै सिंह दहारैं लाँगुरि,
जोधा अभिमानी । सो धन्य० ।

किन्तु वह यह गीत गाकर और ज्वालामाई के दर्शन मात्र से संतुष्ट नहीं हुआ । उसने माता के रौद्र रूप के दर्शनों के लिए उसके युद्ध का भी एक उल्लेख किया है जो 'ज्वाला जी का जुज्झ' कहा जाता है--ज्वालाजी के जुज्झ की कुछ पंक्तियाँ यहाँ दी जाती हैं—

ज्वाला जी कौ जुज्झु

१. **सुमिरूं सुरजन माइ सुरसुती बासै आई**
नइ कें लागूं पांइ अकलि गुरु देउ बताई

आदि पुरिस कूं सैरिये सैरूं देव गनेस
जुज्झ कहूं ज्वाला रानी कौ रन जीती कुरखेत
अरी मेरी आदि भमानी

२. द्वापर वाने हने महाकरि दुंदु मचायौ
राजा लीए जीति सरग कूं बीरा लायौ
बड़े बड़े जोधा चढ़े इन्द्र चढ़े घनघोरि
बरसौं सौल झरें मरवाने असुर जमाइ रहे जोरि
अरी मेरी आदि भमानी

३. कृस्न कचहरी जोरि सभा में बीरा डार्‌यौ
बीरा कोई न खाइ बहुत देवन अकुलान्यौ
अलख सरीरा औतरे और चकत्ती माय
तन में लुक्क अगिनि की भभकै सै सै कला समाय
अरी मेरी आदि भमानी

४. सैस कला के तेग सभा सितगुर की हौटी
सब कांपे दरबार सिंहासन ज्वाला बैठी
थलहर कांपे देवता मनहर संक्या होय
तिरलोकी ज्वाला के काजें बीरा धर्‌यौ बनाय
अरी मेरी आदि भमानी

५. बीरा लैकें चली बिदा है रन कूं धाई
आई विकट उजारि जहां एक सुन्दरि पाई
पत्थर सिलाएं जाइकें बैठी आसनु मारि
आसनु छोड़ि सिंगासन बैठी जाकी
नारदु ढोरें ब्यारि
अरी मेरी आदि भमानी।

आदि

देवी की जात के अवसर पर नौदुर्गाओं में प्रतिदिन तथा देवी जागरण के अवसर पर चारों ओर देवी और लाँगुरा के गीतों की ध्वनि गूंजती रहती है। कहीं-कहीं अखंड क्रम रहता है।

किन्तु यह तो विशेषतः देवी के विशेष त्यौहार से ही संबंधित वर्णन है। इस देवी अथवा माता के कई नाम आये हैं, जैसे जालपा, माता, ज्वाला, भमानी (भवानी) भवन की माता, नगरकोट की माता, करौलीवाली माता, केला, बेलोन की माता, मैनपुरी की माता, जगदम्बा देवी, हिंगुलाज की माता।

देवी की मान्यता हमें लोकसाहित्य में अन्य अवसरों पर भी मिलती है, और वहाँ हम उसका उपयोग दो रूपों में देखते हैं।

१—मंगलाचारण की भाँति स्मरण करने में।

विशेष परिश्रम साध्य गीतों में देवी का विशेष मनोयोग से स्मरण किया जाता है, जैसे 'ढोला' का गायक ढोला कहने से पहले देवी को विशेष आग्रह से मनाता है। वह अन्य देवी-देवताओं की भी मनुहार करता है, साधारण गीतों में स्मरण के रूप में।

२—एक पात्र के रूप में।

कितने ही गीत लोक-साहित्य में प्रचलित हैं जिनमें देवी आकर भक्त की किसी न किसी रूप में सहायता करती हैं। ये संकट (औखा) के अवसर होते हैं। भक्त देवी का सुमिरन करता है। देवी सिंह सजाकर चलती है। अथवा कभी-कभी अपने वीर अथवा वीरों को ही भेज देती हैं। ढोला में देवी का ऐसा सहयोग अनेकों बार नल को मिला है। जाहरपीर में भी गोरखनाथ के साथ देवी सहायता के लिए आती है। जगदेव भी देवी का भक्त है। उसके पमारे में देवी की सहायता का उल्लेख इस प्रकार हुआ है :—

सुमिरी ऐ भमानी हिंगुलाज की,
जाकी बैठो ऐ भुजन पै आइ।
हातु लगाऊं मेरी सिरु नबै,
मेरी पति बाने की जाय।
ठोकर मारी बाएं पाँइ की,
तकुआ सी लई ए उठाइ।

यही नहीं जब लोक रंगमंच या स्वाँग या भगत के लिये स्थापना होती है तो देवी का पूजन विशेषतः होता है, और देवी को विशेषतः मनाया जाता है। आगरा की भगतों में आरम्भ में यह मंगलाचरण ही बहुत लम्बा है क्योंकि प्रत्येक अभिनेता पहले आकर मंगलाचरण अवश्य कर जाता है। इस मंगलाचरण का रूप यातो सैक्युलर अथवा अत्यन्त उदार सर्वधार्मिक होता है, इसमें छोटे-बड़े सभी देवी-देवताओं, और पीर पैगम्बर, गुरू आदि का स्तवन रहता है, पर प्रमुखता देवी की रहती है। अतः लोक साहित्य के भीतरी स्तर पर देवी का महत्व बहुत ही अधिक है, और यह देवी का एक ही रूप है जो सामान्यतः शाक्तों मे संबंधित है। ऐसा विदित होता है कि किसी समय शाक्तों का जग-जीवन में अत्यन्त प्राबल्य था। उसके लोक-साहित्य के प्रबल अवशेष आज भी उसकी गवाही दे रहे हैं।

देवी को 'वाक' भी माना गया है। यह वाक् हमें ताँत्रिकों के समीप ले जाता है जहाँ शब्द ही ब्रह्म हो जाता है, और समस्त साधना शब्द-मंत्रों के द्वारा ही हो सकती है। अभी लोक-साहित्य का सन्तोषपूर्ण संग्रह नहीं हो पाया है कि जिससे देवी विषयक यथार्थ प्रबलता का पता चल सके। इस दिशा में कार्य करने की आवश्दकता है।

किन्तु अन्य देवियां भी हैं जिनकी पूजा-उपासना लोक-साहित्य में होती है —

'सरस्वती' इस में साहित्यकारों की दृष्टि से प्रमुख स्थान रखती है। लोक-साहित्य के मंगलाचरण का नाम ही 'सुरसुती' है। यह सरस्वती केवल लोक-कवि ही

काव्य की दृष्टि से नहीं मानता साधारणतः समस्त जन-समुदाय ही किसी न किसी रूप में सरस्वती पूजन करता है। किसी-किसी समुदाय में सरस्वती पूजन जिस भक्ति से होता है, वह हिन्दी मंत्रों में होता है —जैसे—

सरसुत-सरसुत तुम जगजैंनी
हंस चढ़ी लटकाग्रौ बैंनी
तुम्हारे चटिया लख सें साठि
खेती करें न बंजें जाहिं
विद्या के बल बैठे खांय
विद्या गुसाईं तुम सरसुती
माथे चढ़ै बेल की पती।
तनिक बलैगा लौलौ
पतिया तोरन जाय,
पतिया तोरत गिरि पर्यौ
बबा-बबा चिल्लाइ
बाबा दोनों लात की
मय्या लियौ उठाइ

'सरस्वती' के अनन्तर 'लक्ष्मी' आती है'। यों साहित्य में सरस्वती की भाँति लक्ष्मी का स्मरण नहीं मिलेगा पर जन-साधारण में लक्ष्मी की पूजा का प्रचलन बहुत है। यह लक्ष्मी का पूजन दीपावली पर विशेषतः होता है।

इन प्रमुख देवियों के बाद शीतला, माता, चामुंडा, खेरे की देवी, बाराही देवी आदि कितनी ही अन्य देवियों की उपासना लोक में होती है। इन सबका अध्ययन अत्यन्त रोचक है। यह ध्यान में रखने की बात है कि देवी का मूल रूप शक्ति ही है। यह शक्ति आरम्भ में शिव से भी संलग्न थी, किन्तु बाद में इस शक्ति धर्म ने भारत के सभी धर्मों को प्रभावित किया—बौद्ध और जैनों को भी। तंत्र और वाममार्ग ने इसको अत्यन्त गुह्य महत्व प्रदान किया। आज यह आवश्यक है कि अपने क्षेत्रों में प्रचलित देवी-पूजा और उसके इतिहास का समग्र संकलन किया जाय और उसका चूड़ान्त अध्ययन भी।

२३:८:३. देवी के गीत

देवी गीतों के दो प्रकार हैं: एक स्फुट गीत, दूसरे प्रबन्ध गीत। स्फुट गीतों में देवी की प्रार्थना, स्तुति, उसके पराक्रम का उल्लेख, उसके स्थान का तथा शोभा का वर्णन, जात की तैयारी और यात्रियों की कठिनाई का वर्णन मिलता है।

एक स्त्री अपने पति से कहती है **'चलि पीया दोऊ मिलि जायें, परसें देवी जालिपा ग्रौ माय'**। पति कहता है, दोनों कैसे चल सकते हैं; घर में घोड़ी है, भैंसि है, बहू है, बेटी है, पूत है। इनको कहाँ छोड़ा जाय? स्त्री समाधान बतलाती है—घोड़ी को घुड़सार में, भैंसि गवारिया को, बहू घरबार को, बेटी ससुरार को, दूध गूजरी को दे चलो और पुत्रों को

साथ ले चलो। चलो दोनों मिलकर देवी जालपा को परसें। एक गीत में पुत्रों को धाय को दे चलने का सुझाव है। तैयारी होने लगी। पर तैयारी में पहले तो पंडित बुलाना चाहिये कि वह निर्मल घड़ी बता सके। चैत का महीना आ गया है। पिता को बुलाना चाहिये क्योंकि उनसे पूरा पूरा खर्च लेना होगा। माँ को बुलाना आवश्यक है उससे शान्ति मिलेगी। ननद की केसर तिलक लगाने के लिए अपेक्षा है। भावज बिना देवी के छन्द कौन गायेगा। स्त्री पुत्रों को तो साथ ही चलना है। उन पर तो जात बोली ही गयी है। पंडित बुलाया गया, पोथी खोलकर उसने बताया दौज तीज का चलना ठीक नहीं, शनिश्चर की सातें ठीक है। स्त्री आँगन लीप रही है, माँ चौक पूर रही है, बहिन टीके की तैयारी कर रही है, पर

"घर ही में बाबुल बरजन लागे
कठिन पंथ देवी को, देवी को
भैया सिंह ढहाइ कजरी को
बारह कोस बर्नाहि बन कहिये
सिंह ढहाइ कजरी को।

तब वह पुत्र कहता है '**सिहं मारि जालिपा परसों, तौ बालुक जननी कौ**' जाती को मां के पास जाना ही होगा, मां भी तो बाट देख रही है :

मैया लेजु कसनि कसु डारि जियरा मेरा तोई सों लगौ
परबत चढ़ि कें देखै मोरी माय जाती मेरौ कहाँ बिलमौ।

पिताजी ने खरच बँधाने में देर करदी है, चाचा ने रुपया भुंनाने में देर करदी है, भाई ने घोड़ा सजाने में, मां ने पूड़ियाँ सेकने में, चाची ने लडुआ बाँधने में, बैंदुल ने छन्द गाने में, बुआ ने तिलक सजाने में, स्त्री ने पंथ सिराने में, रोक लिया है।

यात्री अन्ततः मन्दिर के पास पहुँच गया। कैसा है यह मन्दिर, एक गीत में यात्री उसका वर्णन कर रहा है :

दुखहरनी मैया मेरौ दुख तुम न हरो,
काहे को मन्दिर मैया कौ, ए दुखहरनी मैया,
काहे के लागे चारों खम्भ। दुख०

सोने कौ मन्दिर मैया कौ, ए दुखहरनी मैया, चंदन लागे चारों खम्भ।
ऊँचे पै मन्दिर मैया को, दुखहरनी मैया, नीचे बहै श्री गंग। दुख०
ओरपास लौंगनि के जोड़ा, दुखहरनी मैया, बिराजे जगदंबे, दुख०
तोइ सुमरि मैया तेरौ छंद गाऊँ, दुखहरनी, मैया जग्न में होउ सहाई। दुख०

माँ को लौंग विशेष प्रिय हैं। यात्री पहुँच चुका है, पर माँ भवन में नहीं है। वह प्रार्थना करता है, माँ भवन में आओ, मैं तेरी आशा करके आया हूँ पर

एक बनु कहियत फूलनि कौ फूल रहे मेहकाय देवी जी बिराजि रहीं बाई बन में।
एक बनु कहियत लौंगनि कौ लौंग रहीं मेंहकाय देवी जी बिरमि रहीं बाई बन में।

माँ लौंग के बन में ही लकड़ी बीनने चली जाती हैं, तभी मंदिर में नहीं हैं। माँ ने एक एक लकड़ी बीनी, जूने से उसकी गठरी बाँधी, तभी एक असुर आगया, उसने माँ की लकड़ियाँ बखेर दीं। देवी ने लाँगुर बीर को आज्ञा दी :

"नौ नौ ठौंकौ कील दरदु नेंकों मति करिओ"

पर असुर की चतुर स्त्री ने असुर को समझा कर माता के चरणों में भेज दिया। उसने माताजी के चरण पलोटे। एक एक लकड़ी बीन कर माता की गठरी बाँध दी। माँ दयार्द्र होगयी :

"सुनि रे लंगुरिया बीरु असुर मेरे चरननु आयौ,
नौ नौ खेंची कील कसरि नेंकौ मति रखियो।

मैया नंदन बन को भी चली जाती है। पुष्प उन्हें बहुत प्रिय हैं, वह 'फूलनि की लोभिनियाँ' हैं, उसके द्वार पर अंधा खड़ा है, आँख माँग रहा है, कोढ़ी खड़ा है, काया माँग रहा है। बाँझ खड़ी पुत्र माँग रही है। निर्धन धन की पुकार लगा रहा है।

माँ है ही नहीं, लाँगुर परेशान है। वह ढूँढता डोलता है। क्या हुआ माँ को, वह सो गयी है या पृथ्वी में समा गयी है। पर नहीं—

"नां तेरी मैया सोइ गई है परि ना गई धरती समाइ
कनहीं जाती कें होम रच्यौ ऐ परि माँह रि जगी सिब राति
धुजा औ नारियल लोंग सुपारी जें मो पै दए ऐं चढ़ाइ
सौंने को दिवला कपूर की बाती परि आरति लइ है उतारि।"

माँ आ गयी है। पर मंदिर के द्वार के वज्र किवाड़ अभी बन्द हैं। यात्री प्रार्थना कर रहे हैं कि माँ किवाड़ खोलो। माँ किवाड़ खोल देती है :

बेलोनि* है बकुंठ खम्भ जामें लगे हैं धरम के
मैनपुरी* है बैंकुंठ खम्भ जामें लगे हैं धरम के
मैया बैठी है तखतु बिछाइ लंगुरू जाकी बियारि ढोरत ऐ
जाके शेर गुंजत हैं द्वार जाती तो डरपें मुलिकनि के।
दये मैया बजुर किवार जाती तो ठाड़े मुलिकनि के।
खोलो मैया बजुर किवार जाती तो भीजें मुलिकनि के।
खोलो मैया बजुर किवार जाती तो लौनें मुलिकनि के।
मैया जी के चरन पलोटि जाती तो आये मुलिकनि के।

किवाड़ खुले, अब यात्री देख रहा है।

भमन में लटकि रहे फुंदना,
हरौ हरौ गुबरा पियरी सी माँटी तो रोजु लिपाऊँ अँगना,
नंगेउ पाइनि आमें जातीअरे हाथ जगडा,
नंगेउ पाँइनि आमें तिरिआ तौ हाथ लएँ गड़ुआ,

जूना : मूँज या घास पात की बनी काम चलाऊ रस्सी।

*ये वे स्थान हैं जहाँ देवी के मन्दिर हैं और जहाँ की जात या यात्रा होती है।

अरु लट छुटकामें मैया आमें गोद लयें ललना। भमन०
कर रे जोरि के ठाड़े जतीअरे देत गउँनि की दच्छिना। भमन०
तोइ सुमरि मैया तेरौ छंदु गाऊँ औखा में होउ सहाई। भमन०

देवी को कन्या रूप में भी यात्री ने देखा है। **'कन्या रूप भमानी मैंने आजु देखी'** **इस देवी के बरु अगबारे, बरु पिछवारे, पीपर धर्म द्वारे'** है। इस देवी की पूजा के लिए, अर्चना के लिए विविध तैयारी करके यात्री आया है।

काँहर उपजी डाँडुरी औ, काँहर मारुअरे के खम्भ,
भवन में गरजति आदि भमानी
आरे बारे उपजी डाँडुरी औ, पिछवारे मरुअरे के खम्भ। भवन में०
काइ रे काटू डाँडुरी औ, काइ रे मारूअरे के खम्भ। भवन में०
कुठरीनु काटू डाँडुरी के खम्भ औ, मरूअरे के खम्भ। भवन में०
कौन भए बलि बाढ़ई औ, कौन भए सुत ढार। भवन में०
लछिमन भए बलि बाढ़ई, राम भए सुत ढार। भवन में०
काए रे लावूँ डाँडुरी औ, काए रे मारूअरे के खम्भ। भवन में०
गाढ़न लावौ डाँडुरी औ, गाड़िन मारूअरे के खम्भ। भवन में०
गढ़यौ रे हिंडोलौ सांपरो, गढ़यौ ऐ जलफदे के द्वार। भवन में०
पहरि पटोरि की धोबती, झूलौ जलफदे के द्वार। भवन में०
लाँगुरि दीयौ झोटिका, टूट्यौ ऐ लोंगन कौ हारु। भवन में०
काए समेटूँ, कहा गुहूँ औ, का भरि ऊतर वेंउ भवन में। भवन में०
हाथ समेटूँ, नाइ गुहूँ औ, मुँह भरि ऊतर वेंउ भवन में। भवन में०
गुह्यौ रे गुहायौ सांपरौ, धर्यौ ऐ जलफदे के सीस। भवन में०
माँगनों होइ सो माँगि मलिनियाँ, जो मन इच्छा होइ। भवन में०
कहा माँगू कहा देइगी, कहा मेरे हतु नाँइ। भवन में०
मेरौ मलिया अमरु करि देउ, अमरु न देवी और देवता।
मलिया अमरु कैसें करि दें।
अमर ऐ जलफदे की चूंदरि, अमरु लँगुरिया कौ चीरु। भवन में०

एक भक्त माता के आँगन में केवड़े को सींचकर उसका हार गूंथ कर देवी पर चढ़ाता है।

माता के आंगन केवरो जै जै के गुन हरियल होइ हो माय,
कै सींचें जाको मालिया जै जै कै ढुरि बरसैगो मेउ हो माय,
ना सींचें जाको मालिया जै जै न ढुरि बरसैगो मेउ हो माय,
जाती तो आये तीनों लोक के जैसे सींचि गये निराति हो माय,
सींचि सींचि पर्वतु भयौ जै जै बोरो ए अनी अनी भाँति हो माय,
को जाको डार नवाइये जै जै को जाके तोरे फूल हो माय,

मलिया के डार नवाइये जै जै मालिन टोरै जाके फूल हो माय,
टोरि टोरि मालिन लै गई जै जै गूंदौ ऐ नौलख हारु हो माय,
गूँदि गाँदि मालिन ले चली जै जै धरो ए जलफदे के सीस हो माय,
माँगनि होइ सो माँगि लै री मालिन जो मन इच्छा होइ हो माय,
बूष पूत तुम सबु में दश्रो जै जै मालिये श्रमरु करि देउ हो माय,
अमरु न दई देवता जै जै मलिया अमरु कैसें होइ हो माय,
अमरु जा धरती पै तीन ऐं जै जै पानी पमनु गंगानीर हो माय,
अमरु जलफदे की चूंदरी जै जै और लँगुरिया की पाग हो माय ।

यों तैयार होकर भक्त स्त्री कह रही है, **"लैउ मैया बीरा, में कब की ठाड़ी ।"** वहाँ वह "ध्वजा नारियल" राजा से चढ़वाती है, लाल और हीरा भी । माँ कहती है वरदान माँगो, वह कहती है, **"राज पाटु मैया तेरौ दश्रो ऐ रजवै अमर करि दीश्रो ।"** फिर जैसा ऊपर के गीत में है वैसे ही इस में उत्तर मिलता है ।

"जा धरती पै रानी कोई ना अमरु है, रजवा अमरु कैसे हुइ है ।"

अमर जलफदे की चुंदरी कहिए, अमरुलँगुरिया की पगिया । वरदान में अमरता ही नहीं माँगी गयी । एक गीत में अनेकों चीजें माँग डाली गयी हैं ।

ठाड़ी माँगू बरदान देवी के मन्दिर में,
माँगूँ मैं हरी हरी चुरियाँ, हरी हरी चुरियाँ,
मोतिन भरि माँग देवी के मन्दिर के भीतर,
माँगूँ में दस पाँच बिवरा, मैं दस पाँच दिवरा,
ननदुलि माँगूँ एक देवी के मन्दिर के भीतर,
ठाड़ी माँगूँ बरदान देवी के मन्दिर में,
माँगूँ मैं सात पाँच बेटा, में सात पाँच बेटा,
बेटी माँगूँ एक, देवी के मन्दिर के भीतर,
माँगूँ में सात पाँच भैया, में सात पाँच भैया,
बहंदुलि माँगूँ एक देवी के मन्दिर के भीतर,

इस प्रकार जात करके यात्री लौटता है । घर उससे पूछा जाता है कि **"कैसे पिया वे देश कि जिन भुमि तुम गये ।"**

धानू की धनुअलि औं कहै, कैसे पिया वे देश कि जिन भुमि तुम गए । उत्तर मिलता है—

'टाटी तौ लागी ऐ पहार की, लगे एँ धरम के खम्म, सुरति बाई देस की' और वहाँ क्या होता है :

अंधेनु नेत्तर दै रही, कोढ़िन काया दै रही,
बाँझन पुत्तर दै रही, सुरति बाई देश की ।

इस प्रकार देवी के स्फुट गीतों की यह रूपरेखा है। देवी के गीतों में प्रबन्ध-कल्पना लिए हुए भी गीतों का अभाव नहीं है एक गीत तो अत्यन्त सुन्दर है—

कजरी रे बन ते चाली सुरही गाय,
नन्दन बन चरिबे गई हों माय,
साँझ भई दिन छिपन पै जाय, सुरही रे चरिकें बाहुरी हो माय।
ऊँचो सी एक पूंठरी रे जापै बैठो सिंह
रख्यौ री रखायौ नंदन बन क्यों चर्यौ हो माय
आग्रौ री मेरो सुरही मैया जान न दुंगो तोय
नाहें रे मेरे सिंह राजा जामन दीजौ मोय
खिरक रँभाएँ मेरे बाछरा हो माय
एक बच दो बच तीन भरि जाऊँ
बचनन की बींधी सुरही ना रहै हो माय
आग्रौ रे मेरे बालक बच्चे खीचों मेरौ क्षीर,
बचनन की बीधी सुरही ना रहे हो माय।
नाहें री मेरी सुरही माता क्षीर न खैंचौं जाय
बचनन कौ बींधौ दुद्धा ना पिएँ हो माय।
आगें आगें बालक बच्चे पीछें सुरही जाय,
बचनन की बींधी सुरही चाली है हो माय,
ऊँची सी एक पूंठरी जापै बैठो सिंह,
बचनन की बींधी सुरही आई है हो माय,
ऊँची सी एक पूंठरी रे जापै बैठौ सिंह,
एक गई द्वै बाहुरी हो माय,

आग्रो रे मेरे सिंह मामा पहिले भखो मोय,
जा पीछे माऐ बिनासिये हो माय,
आग्रौ री मेरी सुरही बहिना चालो मेरे संग,
नगरकोट को चालिए हो माय,
आगे आगे बालक बच्चे पीछे सुरही गाय।
नगरकोट को चाली हैं हो माय,

आग्रोरी मेरी सिंह नानी पूजौ इनके पाँय
पहिरँ नंबन यह भानजौ हौ माय,
नाहें रे मेरे सिंह, राजा जाकौ भेद बताय,
कहा गुन लागे बछरा भानजो हो माय,
नाहें री मेरी सिंह रानी माकी जायी ब्हेंन,
इनके जाये बछरा रे भानजे हो माय,
दौरी दौरी आई रानी ननद के पास,
भानजु गोदी में लै लयौ हो माय,

आओ री मेरी सिंह रानी कोस पठावें जाय,
यहि ननदी यह भानजे हो माय,
आगें आगें बालक बच्चे पीछें सुरही गाय,
कोतुक सुरही पठाई है हो माय।

देवी के गीतों के साथ "लँगुरिया' अवश्य गाये जाते हैं। ये गीत देवी के लाँगुर से सम्बन्ध रखते हैं। देवी का यह लाँगुर या लँगुरिया विचित्र प्राणी है। उससे जाति पूछी जाती है "**भैया लाँगुरा रे अपनी जाति बताउ**" तो वह उत्तर देता है—

'**बम्मन के हम बालका, उपजे तुलसी के पेड़**' उसकी माँ समझती है कि लाँगुर कुछ नहीं खाता, पर वह "**बारा बाटी मदु पियें सौ रे बोकरा खाइ**"। लाँगुर की माँ कहती है कि छै महीने की रात्रि है, पर लाँगुर सोता ही नहीं। यह लाँगुर माता को बड़ा प्रिय है। उसका सहायक है, उसका आज्ञाकारी है। देवी आज्ञा दे तो असुर के नौ-नौ कीलें ठोक दे। आज्ञा दे तो उन्हें निकालने में कोई कसर नहीं छोडता। वह भी देवी की ढूंढ खोज में व्यस्त रहता है, यदि कहीं भी माता चली जाती है तो वह उसे ढूँढता फिरता है। भक्तों से उसका क्या सम्बन्ध है, देवी माँ का पुत्र होने के कारण वह भक्तों की सेवा का अधिकारी तो है ही। एक भक्त तो दिन भर उसे गाँजे की चिलम भर भर कर पिलाता है, **मेरो चिलम भरत दिन जाइ लाँगुरिया बड़ौ पिवैया गाँजे कौ**। उसके लिए दस बीघा गाँजा बोया गया है, नौ बीघा भंग। गाँजा लाँगुरिया पीता है, भांग महादेव जी पीते हैं। भक्त स्त्रियाँ उसे किस रूप में ग्रहण करती हैं और किस भाव से देखती हैं यह कुछ गीतों की निम्न प्रारंभिक पंक्तियों से प्रकट होता है।

१—कारी चुंदरिया में दाग न लगइयो लाँगुरिया
२—ए लाँगुरिया तेरी धन खाइ लई कारे नाग नें
अरे कछु खाई, कछु डसि लई, और कछु मारी फुसकारि
ए लाँगुरिया—

३—दहिअ बिलौवें दारी गूजरिया निलबावें लाँगुरिया
४—बसंती रँग रँगवाइ दुंगी, जा लाँगुरिया की टोपी
५—मति खेंचे रे लाँगुरिया तलवारि तेरोई घर जाइ, मैं हँसती कब देखी।
६—तेरौ करूँगी भमन में ब्याव, लँगुरिया मति हँसै
७—काऊ वेस चोरी जइयौ लाँगुरिया, काऊ जाटिनि के
झुमका बारी लइयो लाँगुरिया।

८—दरद कौ मारौ लाँगुरिया मरि मरि जाइ।
लाँगुर तुम लोटा हम डोर सरकि आऔ जाई बन में
९—करौली बारी नदिया बहाए लिए जाय
जब नदिया मेरे पाइँन आई
सम्हारि बारे लाँगुरिया, मेरे बिछुआ भीजे जाइँ

१०—केला मइया नें बुलाई जब आई लाँगुरिया।

११—ए लाँगुरिया हँसि मति अइयो काऊ और ते,
मैं मरूँगी जहर बिस खाइ।

१२—करि लीए दूसरौ ब्याउ लँगुरिया मेरे भरोसे मति रहिओ।
मोइ लीपि न आवै लीपनौं और काढ़ि न आवै खूँट
मोइ पीसि न आवै पीसनौं और ढारि न आवै कौर
मोइ राँधि न आवै राँधनौं और मोइ परसि न आवै थार

एक गीत और यहाँ उद्धृत करना होगा—

अनोखी मालिनियाँ भैंना करै तो डरपै काए कूँ।
तेरे हाथ कौ मूंदरा, लाँगुर दीयो गढ़ाइ। अनोखी मालिनियाँ
तेरे सिर की चूंदरी, भैंना लाँगुर दई रंगाइ। अनोखी मालिनियाँ
तेरी गोद कौ ललुआ, लाँगुर की उनहारि। अनोखी मालिनियाँ
ना काऊ के घर गई, ना मैंने लीयौ बुलाइ। अनोखी मालिनियाँ
रस कौ बींध्यौ लाँगुरा, आइ गयौ मेरी सेज। अनोखी मालिनियाँ

लाँगुरिया को बारा या छोटा बहुधा बताया गया है। उसी के अनुकूल कहीं-कहीं उसे वात्सल्य भाव से देखा गया है। 'रँगीली टोपी' रँगवाने में वही अर्थ है। किन्तु यह बालापन भी पतित्व लिये हुए दीखता है, जैसा बहुधा गीतों में 'बारे नाह' का उल्लेख होता है। यह पति के प्रति अत्यन्त लाड़ का द्योतक है। भारतीय घरों में स्त्री पति का ऐसे ही पोषण करती है, जैसे किसी बालक का। यह भी हो सकता है कि देवी की जात के लिए जाने वाले पुत्र और पति दोनों में ही देवी के लाँगुर भाव का आरोपण कर दिया जाता हो, फिर भी यह यथार्थ प्रतीत होता है कि लाँगुर में पति-भाव विशेष है। अन्त में जो गीत दिया गया है उसमें लाँगुर पर-पुरुष के रूप में भी दिखायी पड़ता है। मालिन ने स्वीकार भी कर लिया है। लाँगुरिया के गीतों में व्यंग, विनोद, हास्य सभी भरा हुआ है। देवी के गीतों के साथ देवी सम्बन्धी कुछ अन्य विषयों पर भी गीत होना अनिवार्य माना जाता है। ये विषय हैं : लाँगुरिया, सुरही, काजर, मेंहदी, भाग, पौढ़ना (शयन)। लाँगुरिया और सुरही ऊपर दिये जा चुके हैं। शेष गीतों में पहले तो यह वर्णन रहता है कि कहाँ से आया है वह पदार्थ फिर देवी के द्वारा उपयोग का उल्लेख होता है। जिसमें पहले देवी के प्रसिद्ध भक्त धानू का नाम लिया जाता है, फिर जिस घर में गीत गाये जाते हैं उसके समस्त स्त्री-पुरुषों का नाम लिया जाता है।

इन गीतों में देवी अथवा माता के कई नाम आये हैं। जालपा देवी, माता, ज्वाला, नगरकोट की माता, करौलीवाली माता, केला, बेलोन की माता, मैनपुरी की माता, जगदम्बा, देवी। नगरकोट की माता बज्रेश्वरी भी कहलाती है। इसी कारण संभवतः माता के मन्दिर के बज्र किवाड़ों का उल्लेख हुआ है। मंदिर के नीचे गंगा बहने का भी वर्णन है। यह गंगा बान गंगा हो सकती है। सोने के मन्दिर से अभिप्राय नगरकोट से एक मील

दूर 'भवन' नामक नगर के मन्दिर से हो सकता है[1]। ब्रज क्षेत्र में करौली, केला, मैनपुरी माने जा सकते हैं।

२४. वैशाख

वैशाख महीने में ब्रज में निम्नलिखित त्यौहार प्रचलित हैं:—

१. आस चौथ।

२. अखैतीज।

३. जानकी नवमी।

४. नरसिंह चौदस

इनमें से केवल एक **आसचौथ** कृष्णपक्ष में मनायी जाती है। शेष शुक्ल पक्ष में आती हैं।

२४:१ आसचौथ

आसचौथ में चार प्राकृतिक शक्तियों का उल्लेख होता है—'भूख, प्यास, नींद तथा आस'। लोक-मानस ने इन चारों को देवियों का स्वरूप दिया है। उसकी कल्पना में ये चारों देवियाँ बुढ़ियाँ हैं। ब्रज में इसके अनुष्ठान और कहानी का रूप इस प्रकार है :—

२४:१:१ अनुष्ठान

आस चौथ वैशाख कृष्ण पक्ष की चौथ को होती है।

कच्चे सूत की एक अँड़िया को होली के दिन होली की झरप दिखा कर रख दिया जाता है। होली के बाद जो दौज आती है उस दौज को एक ब्राह्मणी चूड़ियों में उस अँड़िया के धागे बाँधती डोलती है। इस बाँधने के लिए उस को पैसे दिये जाते हैं। सात डोरों की एक गुच्छी को गाज कहते हैं। इस गाज को वैशाख की चौथ के रोज खोला जाता है' इस दिन मीठी पूड़ी बनती हैं। विवाहिता स्त्रियों की दो पूरियाँ होती हैं तथा क्वारियो की एक। इन पूरियों को गौंठा जाता है। इन सब पूरियों को थाली में पूजा के लिए घी गुड़ आदि के साथ रखा जाता है तथा पट्टे पर मिट्टी को गीला कर चारों देवियाँ नींद, भूख, प्यास, और आस बनायी जाती हैं, और उनके सम्बन्ध में कहानी कही जाती है।

२४:१:२ कहानी—१

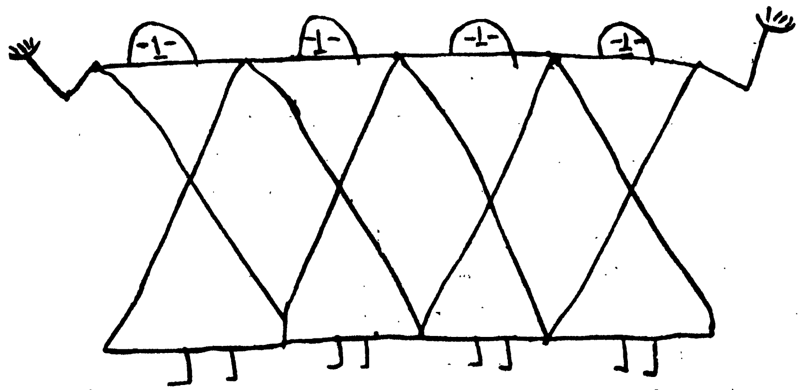
चार बुढ़िया थीं। वे चारों आपस में झगड़ा कर रही थीं कि मैं बड़ी हूँ, नहीं मैं बड़ी हूँ। एक बहू जो थी वह विदा होकर आयी थी। नीम के नीचे विश्राम के लिए उसकी पालकी को उतार दिया गया। चारों बुढ़ियाएँ बोलीं कि वह ब्याहुली आयी है उससे हम न्याय करायें जो वह कहेगी वही माना जायेगा। वे चारों मिल कर उसके पास गयीं और बोलीं "हमारा न्याव कर दो"। तब उस बहू ने उनका न्याव करने के लिए यह कहा कि तुम लोग सब कोई अपने अपने विषय में बताओ। तब उनमें से एक बुढ़िया ने कहा—मैं भूख मइया

१. देखिये—ज्योग्राफिकल डिक्शनरी आफ ऐन्शियेण्ट मिडीवल इंडिया। नन्दूलाल दे, पृष्ठ १३५।

हूँ, मैं बड़ी हूँ, तब बहू बोली, तुम कैसे बड़ी हो—भूख की क्या भूख में सूखी साखी सभी अच्छी लगती है। इसलिए तुम बड़ी नहीं हो। इसके बाद प्यास मइया बोली कि मैं बड़ी हूँ क्योंकि मेरे बिना आदमी का जीना मुश्किल है। आदमी पानी के बिना कुछ नहीं कर सकता। तब वह बहू बोली कि प्यास की क्या? प्यास में जैसा पानी मिल जाता है वही पी लेते हैं इसलिए तुम बड़ी नहीं हो। इसके बाद तीसरी बुढ़िया बोली कि मैं नींद मइया हू तब वह बोली कि तुम भी बड़ी नहीं हो क्योंकि नींद में मनुष्य को कुछ खबर नहीं रहती। अगर कंकर पत्थर पर नीद आ जाती है तो वह वहीं सो जाता है। तब चौथी बुढ़िया बोली कि मैं आस मइया हूँ। तब बहू ने उसके पैर छूये और कहा कि तुम सबसे बड़ी हो क्योंकि आशा से मनुष्य सौ बरस तक जी सकता है, बिना आशा के कोई काम नहीं हो सकता।

२४:१:३

पोतनी मिट्टी हथेली में घोल कर के एक पट्टे पर चारों माइयों के चित्र इस रूप में बनाये जाते हैं:—



२४:१:४

यही व्रत राजस्थान में चैत के महिने में शुक्ल तृतीया को या उसके बाद ही किसी दिन होता है।

२४:१:४:१

राजस्थान में इसके अनुष्ठान का यह रूप है—

एक पट्टे पर साँतिया अंकित कर, एक कलश रख छल्ले का गणेश जी स्थापित कर और हाथ में अनाज के कुछ दाने लेकर 'आसलो बाबलियों' की कहानी सुनी जाती है। इस व्रत के दिन कई स्त्रियाँ गर्म भोजन करती हैं और कई बासी भोजन से ही अपना व्रत खोलती हैं। परन्तु पक्की रसोई करना आवश्यक है, चाहे होवे वह साधारण ही, जैसे गुड़ का चूरमा। इस व्रत का कहीं-कहीं पर गंडा भी धारण किया जाता है।

२४:१:४:२

राजस्थान में इस दिन जो कहानी कही जाती है उसमें ब्रज की कहानी को देखते हुए तीन अंग माने जा सकते हैं—

एक—भूमिका।

दो—माइयों की बात।

तीसरे—आशीष तथा फल।

२४:१:४:३ भूमिका

भूमिका ब्रज की कहानी में नहीं है। चारों माताओं में 'बड़ी' होने की होड़ वहाँ अकारण ही दिखायी गयी है। पर राजस्थान में अच्छी और पक्की भूमिका है। वह यों है—

"एक साहूकार था। उसके सात लड़के थे। एक का नाम था आसला। वह जूए-सौदे का शौकीन था। सारा समय जूए-सौदे में ही खोता था। कमाता नहीं था एक पैसा भी। जुवारियों को जीतने की आशा सदैव ही बनी रहती है। वह इसी आशा में हमेशा घर से कुछ न कुछ ले जाता। परन्तु लाता नहीं था एक फूटी कौड़ी भी। इस प्रकार घर में प्रतिदिन की हानि कैसे सहन हो। फिर भी उसके माता पिता ने सहन किया और उसके भाइयों ने भी माता पिता की हाँ में हाँ मिलाई। परन्तु औरतों को यह बात कब सहन हो। आपस में देवरानी जिठानी बातें करने लगीं और सभी मिलकर आसला को ताने मारने लगीं। उसको अपनी भाभियों के ताने सहन नहीं हुए। वह एक दिन प्रातः-काल ही उठकर कमाने के लिए निकल पड़ा।

वह अपने घर के पीछे से गुजर रहा था कि वहाँ उसकी पत्नी उपले बनाती हुई मिली। वह अपने पति की ऐसी हरकतों पर शर्मिन्दा थी। वह अपने सास ससुर की सेवा करती, घर का सारा काम करती और अपना नीरस जीवन व्यतीत करती। वह जी में बड़ी दुःखी थी। न उसके पास खर्च करने को एक पैसा था और न पहिनने को एक भी जेवर। उसने पति को जाते हुए देख लिया। उसको बुलाया। वह आया। उसने आसला को गोबर के बने हुए पाँच गट्टे अर्थात् पांसे दिये और उनको चोटी में बाँध लेने को कहा। साथ ही उसने कहा कि अगर मैं सत की हूँ तो ये पांसे तुम्हारे हर समय काम आवेंगे। वह उन गट्टों को अपनी चोटी में बाँध कर आगे बढ़ा।

आसला अपने मन में अनेक प्रकार के विचार करता हुआ जा रहा था। न खाने को उसको कहीं भोजन मिला और न पीने को पानी। आगे चलकर उसे चार बुढ़ियाँ सामने आती हुई दिखायी दीं। उसने उनको प्रणाम किया। उनको बड़ी प्रसन्नता हुई किन्तु शंका उठी कि इसने सबसे पहले किसको प्रणाम किया। इसलिए उन्होंने पूछा, "यात्री! सच बताओ, तुमने हमें लोगों में से किसको सबसे पहले प्रणाम किया?" आसला बोला कि तुम में से जो सबसे बड़ी है मैंने उसी को पहले प्रणाम किया है।

२४:१:४:४—माइयों की बात

यह कहानी का मुख्य अंग है। इसमें 'आस मइया' का बड़प्पन दिखाया गया है। साथ ही भूख, प्यास और नींद को उससे छोटा। इस अंश का रूप दोनों में, ब्रज और राजस्थानी में, एक जैसा है। भूख, प्यास और नींद को छोटा बताने के कारण दोनों में समान हैं। ब्रज के कारण ऊपर की कहानी में दिये जा चुके हैं। राजस्थानी में 'भूखमाता' के लिए यह कारण दिया गया है—"तुम्हारी एक सी स्थिति नहीं है। तुम्हारा कोई मुख्य लक्ष्य नहीं है। कहीं पर तुम अच्छे भोजन से शान्त होती हो तो कहीं पर रूखे-सूखे टुकड़े खाकर भी प्रसन्न रहती हो।"

प्यास के लिए यह है—"तुम भी कहीं पर मीठे रस तथा गंगाजल से प्रसन्न होती हो, तो कहीं पर तालाब का गन्दा, पानी पीकर ही सन्तुष्ट हो जाती हो।"

नींद को छोटा बताने के लिए कहा गया है कि "पुष्पों की शैय्या पर भी तुम आनन्द मनाती हो तो वैसा ही आनन्द तुमको खेत के ढेलों पर, खुरैरी जमीन पर तथा खुले आकाश के नीचे आता है।

आस-माता के लिए यह कहा गया है कि—"जैसे ये तीनों मनुष्यों को तंग करती हैं वैसे ही तुम मनुष्यों को आराम देने वाली हो। शान्ति देनेवाली हो। प्रसन्न रखने वाली हो। मैंने तुम्हीं को प्रणाम किया।" इनसे यह स्पष्ट है कि 'आस मइया' को बड़ा बताने के कारण दोनों में समान है। ब्रज की कहानी में निर्णय एक नयी ब्याहुली ने दिया है। राजस्थानी में एक पुरुष ने।

२४-१-४-५ आशीष तथा फल

यह अंश भी ब्रज की कहानी में नहीं है। अपनी प्रशंसा से आस माता प्रसन्न हुई और उन्होंने 'आसलो' को युक्ति बतायी जिससे वह बहुत सुखी हुआ। राजस्थान की कहानी में यह अंश यों है:—

"आसला आस माता से मिलकर बहुत प्रसन्न हुआ और उसको अपना दुखड़ा कह सुनाया। उसका सम्मान किया। जाते समय आस माता ने कहा, "आगे चलकर एक नगर आवेगा। नगर के किनारे पर एक सरोवर है। उसकी पाल पर तुम बैठ जाना और स्वतः ही पाँसों से खेलना। उस नगर का राजा इनका बड़ा खिलाड़ी है। वह तुम्हें बुलावेगा तुम जाना मत। अब जावो सब काम ठीक होगा।" आसला आगे बढ़ा, नगर आया। सरोवर भी आया। उसने सरोवर को खूब घूम फिर कर देखा और एक घाट पर पेड़ की छाया में बैठ गया तथा पांसे डालने लगा और स्वयं ही उठाने लगा। ऐसा करते उसे एक स्त्री घंटे भर तक देखती रही। आखिर वह बोल ही पड़ी, "तुम पाँसों के बड़े शौकीन हो। स्वयं ही उन्हें डालते हो और स्वयं उठाते हो। अगर ऐसे ही शौकीन हो तो हमारे राजा के पास चलो। वह तुम्हें हरा देगा। हमारा राजा भी बड़ा खिलाड़ी है।" "मैं किसी के पास खेलने नहीं जाता। यह मेरे गुरु का आदेश है। अगर किसी को चाव हो तो वह स्वयं आ सकता है। मैं तैयार हूँ।" आसले ने उत्तर दिया।

आसले की प्रशंसा सारे नगर में फैल गयी। धीरे-धीरे राजा के कानों में भी पड़ी। राजा पांसे का बड़ा शौकीन तथा पक्का खिलाड़ी था। उसने आसले को बुलाया।

एक बार, दो बार, तीन बार। आखिर न रहा गया, तब स्वयं ही उसके पास गया। फिर भी आसला अपनी मस्ती में ही रहा और खेलने से इन्कार किया। राजा बड़ा उतावला हो रहा था। उसने कहा कि अगर मैं हार जाऊँगा तो मेरा सम्पूर्ण राज्य तुम्हें दे दूँगा, परन्तु तुम मेरे साथ पांसे डालो जरूर। मैं तुम्हारे हाथ देखना चाहता हूँ। पांसे डाले गये। राजा के आये तीन काने, आसले के पौ बारह पच्चीस। राजा हार गया। वह अपना राज्य भी हार गया। अब नगर का राजा बना आसला। राजा को सवा पहर समय दिया गया। इस बीच में वह चाहे जो निकाल सकता है। राजा के जो कुछ हाथ की चीज थी, लेकर अपने राज्य से चला गया। आसला बड़े आनन्द से राज्य करने लगा।

उधर साहूकार के बुरे दिन आये। व्यापार में घाटा लगा। जमीन जायदाद बिक गयी। वे सब बे-घरबार हो गये और दाने-दाने को तरसने लगे। आखिर उनको अपना गाँव भी छोड़कर जाना पड़ा। कई दिनों तक वे मारे-मारे फिरते रहे। अंत में चलते-चलते एक नगर में पहुँचे। मालूम पड़ा, राजा को नौकरों की आवश्यकता है। वे राजा के पास गये। राजा ने उनको नौकरी दी। साहूकार के छःहों पुत्रों को राजा ने अपने घोड़ों को दाना देने, पानी पिलाने आदि कामों पर रखा और उनकी स्त्रियों को महलों में दासी बनाकर रखा। साहूकार तथा उसकी स्त्री को अपने पास रखा। उनको कोई काम नहीं दिया।

इस प्रकार रहते रहते उनको लगभग एक साल होने को आया। एक दिन राजा ने साहूकार की स्त्री से कहा कि मेरे सिर के बालों को धुले बारह और बारह चौबीस साल होने को आये। अब मैं इनको धोना चाहता हूँ। तुम किसी को बाल धोने के लिए भेज देना। साहूकार की स्त्री ने सोचा किसे भेज दूँ? अगर लड़कियों को भेजती हूँ तो मेरे जँवाई नहीं मानते। बहुओं को भेजती हूँ तो मेरे लड़के नहीं मानते। फिर भी किसी को तो कल भेजूंगी ही। साहूकार की स्त्री ने वादा किया। दूसरे दिन उसने आसले की स्त्री को, जो विचारी उनके ही पास रहती थी, राजा की सेवा में भेज दिया। आसले की बहू राजा के पास गयी और उसके सिर के बाल तथा चोटी धोने लगी। धोते-धोते उसकी आँखों में आँसू आ गये। वह क्या देखती है कि उसके पति की भाँति ही राजा की पीठ में मश है तथा वे ही गट्टे (पाँसे) जो उसने चलते समय अपने पति को दिये थे, उसकी चोटी में से निकले। वह मन ही मन खूब रोयी। रोते-रोते अचानक एक आँसू राजा की पीठ पर आ गिरा। राजा ने फिर कर देखा कि वह रो रही है। राजा के पूछने पर उसने सारा किस्सा कह सुनाया। वह आसला था और वह थी उसकी दुखिया स्त्री। चौबीस वर्षों के बाद दोनों फिर मिले। वे दोनों बड़े प्रसन्न हुए और फिर अपना जीवन आनन्द में बिताने लगे। अच्छा भोजन खाने को, अच्छे वस्त्र और कीमती जेवर पहिनने को तथा अच्छा महल रहने को मिल गया। उसकी देवरानी-जेठानी को यह बात सहन नहीं हुई। वे सब मिलकर उसकी बदनामी करने लगीं। पर पुरुष के पास रहने का दोष लगाने लगीं। अपनी भाभियों के मारे उसके नाक में दम था। उनकी शंका निवारण करने के लिए उसने एक दिन अपनी माँ को वस्त्र का कपड़ा पहिनाया और आशा देवी से प्रार्थना करने लगा, "हे देवी! अगर यह मेरी सच्ची माँ है तो इसके स्तनों की धार से

मेरी मूंछ दाढ़ी भीग जावे।" उसने अपना दुपट्टा और अपनी स्त्री की चुंदरी हवा में उड़ाकर कहा कि अगर हम सच्चे स्त्री पुरुष हैं, तो हमारा गठ-बन्धन पवन-पानी से हो जावे। दोनों ही बातें हुईं। माँ के स्तनों से दूध निकल कर मूंछों पर गिरा और हवा में ही दुपट्टे और चुँदरी की गाँठ लग गयी। इस प्रकार सब को सन्तुष्ट करके वे बड़े आनन्द से रहने लगे। आसले ने अपने भाइयों तथा भाभियों का काम भी छुड़वा दिया।"

एक दिन आसले को अपने देश जाने की इच्छा हुई। वह अपने माता-पिता, भाइयों तथा भाभियों सहित रवाना हुआ। रास्ते में उसे वही भूखमाता फिर मिली। उसके लिए चारों ओर सदाव्रत खुलवा दिये। आगे चलकर प्यासमाता मिली। उसके लिए चारों ओर कूंए खुदवा दिये और प्याऊ लगवा दी। फिर नींदमाता मिली। उसके लिए उसने स्थान स्थान पर धर्मशालाएँ बनवा दीं। अन्त में उसी प्रकार उसे आसमाता मिली। आसले ने उनको प्रणाम किया। उसका बहुत सम्मान किया। उसको भेंट चढ़ायी। अपने नगर में आकर उसने चारों ओर ढिंढोरा पिटवा दिया कि भाई की बहिन, पति की पत्नी और पुत्र की माता सभी आसमाता का व्रत किया करें और विधिपूर्वक कहानी सुना करें।"*

२४:१:५

दोनों की तुलना से यह तो विदित होता है कि राजस्थान की कहानी पूर्णतः सुनियोजित है। इस दृष्टि से वह एक पूरी कहानी है। ब्रज की कहानी ने 'आस मइया' विषयक मूल भाग को ही अपनाया है।

२४:१:५:१

राजस्थान की कहानी को सुनियोजित करने के लिए जिन तत्वों को अपनाया गया है, वे ये हैं :—

१. भूमिका भाग में आसलो का अपमान और उसका घर छोड़कर प्रस्थान।

२. प्रस्थान के समय उसकी स्त्री ने उसे गोबर की गोटें प्रदान कीं, और चोटी में बांध लेने का आदेश दिया।

३. चार बुढ़ियाओं का मिलना, उनसे आसले ने नमस्कार किया।

२४:१:५:२

आसलो के इस नमस्कार से कहानी का मूल भाग आरम्भ होता है। इस नमस्कार से चारों बुढ़ियाओं में यह जिज्ञासा पैदा होती है कि इसने हम में से किसे नमस्कार किया है? इसी के उत्तर और उसकी शाखाओं से "आस मइया" के बड़े होने के भाव का प्रतिपादन होता है।

२४:१:५:३

(अ) कहानी के उपसंहार भाग में 'आशा' अपने प्रशंसक को आशीर्वाद स्वरूप एक विधि बताती है, जिससे वह अन्त में राजा हो जाता है।

*यह कहानी उद्धृत है।

(आ) सिर की चोटी में बंधे जूड़े के गुटकों से अन्त में स्त्री अपने पति को पहचान पाती है। पति भी इसी संकेत से पत्नी को पहचान पाता है।

ये तत्व सिद्ध कर देते हैं कि कहानी सुनियोजित तथा सुगठित है।

२४:१:५:४

यह भी स्पष्ट है कि इस कहानी में मौलिक अभिप्राय तो वही है जो 'चारों माइयों' से संबंधित है। शेष भाग के अभिप्रायः अन्यत्र अनेकों लोक-कहानियों में विद्यमान मिल जाते हैं।

२४:२ अखतीज या अक्षय तृतीया—

यह वैशाख के शुक्ल पक्ष की तृतीया को मनायीं जाती है।

इस दिन एक कोरा घड़ा [मटका] पानी से भरकर रखा जाता है। इसके करीके के रूप में चारों ओर चार मिट्टी के ढेले लगा दिये जाते हैं। सीरा-फुलका से इस घट का पूजन होता है। घर के सदस्य भी भोजन में सीरा-फुलका ही खाते हैं। यह घट शकुन के काम भी आता है। इसके नीचे लगे मिट्टी के ढेलों में से जितने भीग जायँ, यह विश्वास किया जाता है कि उतने ही महीने वर्षा होगी। एक ढेला चातुर्मास के एक महीने का द्योतक है। यह अखतीज समस्त ब्रज में घर घर मनायी जाती है।

२४:३

जानकी नवमी या सीता नवमी का त्यौहार ब्रज में विशेष नहीं मनाया जाता। यह सीता का जन्म दिवस कहा जाता है।

२४:४ नरसिंह चौदस

यह त्यौहार भी घर-घर में नहीं मनाया जाता। कहीं कहीं इस दिन नरसिंह लीला और नरसिंह नृत्य होते हैं। मथुरा की नरसिंह लीला बहुत प्रसिद्ध है। इसमें नरसिंह का 'मुँह मटकना' (मुखौटा) मुख पर लगा कर नृत्य किया जाता है। यह 'मुँह मटकना' बहुत भारी होता है। बहुत अनुष्ठान के उपरांत ही यह धारण किया जाता है। धारण करने वाला बलवान ही होता है।

२५.

ज्येष्ठ के महीने में निम्नलिखित व्रतानुष्ठान होते हैं :—

१—वरसांयत
२—गंगा दशहरा
३—निर्जला एकादशी

२५:१

बरसांयत, बड़मावस, वट-अमावस्या अथवा वटसावित्री ज्येष्ठ महिने का प्रथम प्रमुख व्रत और त्यौहार है। इस दिन स्त्रियाँ बड़ की १०८ परिक्रमाएँ करती हैं। कच्चे सूत की पौनी[1] से परिक्रमा लगाते समय १०८ बार सूत लपेटा जाता है। साथ में जौ का

१. पौनी—कते कच्चे सूत की अँड़िया

एक-एक दाना भी चढ़ाया जाता है। १०८ गिनकर कोई पदार्थ मंसा[२] जाता है, और ब्राह्मणों को बाँट दिया जाता है। यह स्त्रियों का अविधवात्व या 'अहिबात' संबंधी व्रत है। यह माना जाता है कि इससे अहिबात अचल हो जाता है। मूलत: यह अनुष्ठान बड़ के साथ उस सावित्री की पूजा का है जिससे ऐसे ही एक वट वृक्ष (बड़) के नीचे अपने सतीत्व अथवा पातिव्रत से यम को परास्त कर अपने मृतक पति को पुनरुज्जीवित किया था और अतिरिक्त लाभ के रूप में अपने सास ससुर और माता-पिता को भी ऐश्वर्य, राज्य तथा पुत्र सुख दिलाया था। व्रज में तो यह पूजा ही होती है, पर राजस्थान में तो इसकी एक कहानी भी कही-सुनी जाती है। यह कहानी माहात्म्य कहानी के रूप में होती हे। भारत में कहीं कहीं यह पूजा अमावस्या को न होकर पूर्णिमा को होती है; साथ ही इस दिन कहीं कहीं बड़ का भित्ति चित्र बनाया जाता है। यह हल्दी तथा चावल के ऐंपन से धरा जाता है। कहीं कहीं इसका बहुत विशद चित्र बनाया जाता हैं, और चंदन का लेप तैयार कर उससे दीवाल पर काढ़ा जाता है।

२५:१:१

राजस्थान में इस दिन जो कहानी कही जाती है वह मूल में तो वरदान विषयक ही है, पर वह पुन जीवन-दान की कहानी भी मानी जा सकती है। उसे संक्षेप में यहाँ दिया जाता है :—

२५:१:२ कहानी

एक राजा के सात पुत्र थे। सबसे छोटे पुत्र की स्त्री के बाल बच्चे नहीं थे। हर समय उदास रहती। घर में उसे अपमान ही सहना पड़ता। उसकी दासी ने चारों ओर खबर फैलादी कि कुँवरानी गर्भवती है। इससे उसका आदर-भाव बढ़ा।

नौ मास पूरे होने पर दासी ने दाई को एक सोने का टका दिया और उसी के द्वारा राजा से कहलवा भेजा कि बहू के लड़का हुआ है। अब तो बच्चे की छठी भी पुजायी गयी, उससे जलवा पुजायी गई और भी आवश्यक संस्कार हुए। दासी ने पंडित को भी सोने का टका देकर उसके द्वारा राजा को कहलवा भेजा कि लड़के के पिता को इसका मुंह १२ वर्ष से पहिले नहीं देखना चाहिये। देखने से उसकी (पिता की) मृत्यु हो जायगी।

न कुंवरानी बाहर आती और न कोई लड़के को देख सकता। ग्यारह वर्ष बीत जाने पर लड़के के विवाह-संस्कार की तयारियाँ हुई। एक राजा की कन्या से सगाई करदी गयी। बांन, बनोरी, निकासी आदि सभी दस्तूर विधिवत् हुए किन्तु लड़के को कोई नहीं देख सका।

अब दासी ने आटे को पानी से गूंदकर एक मानवाकृति बनायी। उसे दूल्हा बनाकर एक रथ में बिठा दिया, अब भी किसी को उसे देखने नहीं दिया गया। दासी ने अपने स.थ कुछ सिपाही लिये और वर-यात्रा प्रारम्भ हुई।

चलते चलते वे एक गाँव के निकट आये। उसी दिन वट पूजन (बड़सायत) का दिन था। दासी ने एक वट के नीचे रथ रुकवा दिया। वहाँ कुछ स्त्रियाँ वट-पूजन कर

२. मंसा—मानसिक संकल्प

रही थीं। दासी ने उनसे प्रार्थना की, 'बहिनों, हम आगे विवाह करने जा रहे हैं। रथ में वर अकेला बैठा है। अभी बच्चा है। आप उसकी निगरानी रखो तो मैं भी गाँव में जाकर गेहूं और गुड़ लें आऊँ तथा बड़सांयत की कहानी यहीं सुन लूं।' वट के नीचे पूजन करने वाली स्त्रियों ने अपनी स्वीकृति दे दी। वह गाँव की ओर रवाना हुई। स्त्रियाँ अपनी कहानी सुनने में लीन थीं। पीछे से कुछ कुत्ते आये और उन्होंने दूल्हे को पहिनाये हुए वस्त्र फाड़ डाले और आटे को चट कर गये। दासी लौटी और रथ में केवल फटे हुए वस्त्र देख कर जोर से चिल्लायीं। स्त्रियाँ रथ के पास आयीं। वे सभी स्त्रियां समझीं कि उनकी भूल से पर्व के दिन उस दूलहे की हत्या हो गयी है। हत्या के दोष से अपना सारा पुण्य व्यर्थ समझने लगीं। इस कलंक को मिटाने के लिए स्त्रियों ने अपने देवता से प्रार्थना की कि 'हे वट देवता, अगर हमने सच्चे मन से तेरी पूजा की है तो हमारे अब तक के पूजन के फल से इसका लड़का जीवित आ जाये।' तभी एक परम सुन्दर बारह साल का बालक रथ में आ बैठा। सभी को बड़ी प्रसन्नता हुई। दासी ने भी शान्ति से वट-पूजा की।

दासी कुमार को लेकर वधू के घर पहुँची। बड़ी धूमधाम से विवाह संस्कार हुआ। दासी वर-वधू को लेकर अपने गांव लौट आयी। राजा बड़ी प्रसन्नता से अगवानी के लिए गया। बारह साल हो चुके थे। अतः राजा ने प्रथम बार पुत्र का मुंह देखा। सभी बड़े आनन्दित हुए।

रात पड़ने पर कुमार की माता ने दासी से इस घटना का सारा रहस्य पूछा। दासी ने उसे सारा वृत्तान्त कह सुनाया और प्रति वर्ष वटपूजन करने का उससे आग्रह किया। वह प्रति जेष्ठ कृष्णा अमावस्या को वटपूजन करने लगी।*

२४ : १ : २ : १

इस कहानी का वृत्त एक सामान्य लोक-कहानी का वृत्त है, पर कथाकार ने उसे वट-सावित्री की माहात्म्य कथा बना दिया है। वट-सावित्री की पौराणिक कहानी से भी यह कहानी एक कदम आगे बढ़ गयी है। सावित्री ने तो अपने विवाहित पति को मृत्यु के उपरांत जीवित कराया था। इस कहानी में तो वर या दुलहा वस्तुतः कोई था ही नहीं। उसका प्रतीक मात्र था, आटे का पुतला। आदि से अन्त तक दासी का मिथ्याचार था, पर वह एक परिवार को सुखी बनाने की दृष्टि से था। कन्या का संबंध अवश्य हो गया था, पर वह भी शून्य से ही हुआ था; उस पुत्र से तो हुआ था ही नहीं। तब भी वट-सावित्री की पूजा के फल से उस कन्या का एक दुलहा आ ही गया, और दासी का वह प्रयत्न सफल हो गया। फल यह हुआ कि वट-सावित्री की पूजा से केवल मृत-पति ही जीवित नहीं हो सकता, शून्य की भी पूर्ति हो सकती है; और भावी पति भी अस्तित्व में आ सकता है। अतः, यह कहानी, पति-लाभ की ही कहानी नहीं, पुत्र-लाभ की भी है।

२५ २ : गंगादशहरा

शुक्ल पक्ष में आता है। और स्नान-पर्व है। इस दिन गंगा में स्नान करने का बहुत माहात्म्य है। ब्रज में कहीं-कहीं इसी दिन लड़कियाँ अपनी गुड़ियों का खेल

*यह समस्त कहानी उद्धृत है।

खत्म कर उन्हें खेतों में कहीं गाड़ आती हैं, और इस उपलक्ष्य में कौंमरी[1] बांटी जाती है।

२५ :३ निर्जला एकादशी

यह एकादशी व्रत और दान-पुण्य करन की एकादशी है। इस दिन के व्रत में पानी नहीं पिया जाता। व्रत में कतीर[2] खाया जाता है। जल से पूर्ण घड़े या सुराहियां, मौसमी फल (खरबूजे ककड़ी आदि) तथा पंखे दान में ब्राह्मणों को दिये जाते हैं।

२५ : ३ : १

ब्रज में तो हमें निर्जला एकादशी की कोई कहानी नहीं मिली। पर राजस्थान में इसके माहात्म्य की कहानी भी प्रचलित है—जो इस प्रकार है :—

कहानी

एक ब्राह्मण था। वह रोज भिक्षा माँगकर अपना गुजारा चलाता। एक बार वह ग्यारस के दिन भिक्षा लेने निकला। उसे भिक्षा में पूली (गेहूँ की सूखी हुई वालों का गट्ठर) मिली। पूलियां लेकर वह अपने गाँव की ओर आ रहा था। रास्ते में उसे प्यास लगी। प्यास बुझाने के लिए वह निकट के तालाब में पानी पीने के लिए गया। पूलियाँ तालाब की पाल (मेंड) पर छोड़ दीं थीं। पीछे से एक गाय आयी और पूलियाँ खाने लगी। ब्राह्मण गाय को पूलियाँ खाते देख क्रोधित हो उसे मारने दौड़ा। वह गाभिन थी। अचानक तेज दौड़ने के कारण उसका गर्भपात हो गया। इस पर गाय ने क्रोधित होकर ब्राह्मण को गधा बन जाने का शाप दिया। वह तत्काल ही गधा बन गया।

दिन समाप्त हो गया। ब्राह्मण को घर न आता देख ब्राह्मणी बड़ी चिन्तित हुई। थोड़ी देर में उसने एक गधे को घर में प्रवेश करते देखा। ब्राह्मणी बुद्धिमती एवं पतिव्रता थी। वह समझ गयी कि वह गधा ही उसका पति है और शाप-वश मनुष्य से गधा हो गया है। वह गधे को ही बड़े आराम से रखने लगी। रोज भोजन उसके सामने रखती, पानी पिलाती तथा उसका स्थान साफ सुथरा करती। यही क्रम हमेशा चलता रहता।

एक दिन नगर के लोग कुम्भ-स्नान के पर्व पर जाने लगे। कइयों ने ब्राह्मणी को समझाया, "तुम्हारा पति शाप-वश खर हुआ है। तुम इसे कुम्भ-स्नान कराओ। इसका पाप छूट जावेगा। और यह पुनः मानव शरीर धारण कर लेगा।" ब्राह्मणी को विश्वास हो गया। वह भी संघ के साथ चल पड़ी। संघ कुम्भ पर पहुँचा। सभी ने स्नान किया। ब्राह्मणी ने स्वयं स्नान किया तथा अपने खर रूपधारी पति को भी स्नान कराया।

---

१. कौंमरी।

२. कतीर।

संघ स्नान करके अपने गाँव लौट रहा था। रास्ते में एक राजा ने सारे संघ के सब व्यक्ति भोजन के लिए न्यौते। सभी उस भोज में सम्मिलित हुए, किन्तु वह ब्राह्मणी वहाँ नहीं गयी। राजा को एक व्यक्ति ने ब्राह्मणी के न आने की सूचना दी। ब्राह्मणी को बुलावा भेजा गया। उसने खर के साथ होने के कारण जाने में अपनी असमर्थता प्रकट की। इस पर राजा ने उसे खर सहित आने के लिए बुलावा भेजा। अब वह गयी और खर भी साथ गया। दोनों ने भोजन किया। खर ने एक साधारण व्यक्ति के समान ही खुराक खायी। राजा को इस घटना पर अचम्भा हुआ। इस रहस्य को जानने के लिए उसने विद्वानों को इकट्ठा किया। विद्वानों ने उसे कहा, "यह ब्राह्मण ग्यारस के दिन भी भिक्षा लेने जाया करता था। एक बार ग्यारस के दिन इसने एक गाय का गर्भ गिरवा दिया। उसी गाय के शाप से यह खर बना हुआ है। अगर इसे कोई अपनी ग्यारस का फल दे दे तो यह पुनः मानव शरीर धारण कर सकता है।" राजा असमंजस में पड़ गया। अब किससे ग्यारस का फल माँगे। उस नगर में उसकी दुहागिन रानी के अतिरिक्त कोई भी व्यक्ति ग्यारस का व्रत नहीं रखता था। परन्तु वह किस मुँह से दुहागिन रानी के पास जाकर उससे ग्यारस का फल माँगे। राजा को उसे छोड़े बारह साल हो गये थे। फिर भी वह परोपकार के लिए दुहागिन रानी के महल में गया।

राजा सीढ़ी पर चढ़ता और फिसल पड़ता। दुहागिन रानी के महलों में जाने की उसकी हिम्मत न थी। ऐसा करते उसे लगभग एक घंटा होने को आया। रानी ने उसे देख लिया। वह लज्जित हो गया। रानी के पूछने पर उसने अपने आने का कारण बतलाया और उससे अपनी ग्यारस का फल देने की प्रार्थना की। रानी दयालु थी। ब्राह्मण की दुर्दशा दूर करने के लिए उसने एक हाथ में एक पैसा तथा जल लेकर अपनी ग्यारस का फल देने का संकल्प छोड़ा। सकल्प का जल छोड़ते ही ब्राह्मण का शरीर पुनः मनुष्य जैसा हो गया, परन्तु उसका मुँह खर जैसी आकृति का ही बना रहा। राजा बड़ा चकित हुआ। इस पर रानी को अपने ग्यारस के व्रत की शुद्धता पर शंका हुई। उसे आत्म-ग्लानि हुई। ब्राह्मणी अपने भाग्य को कोसने लगी और सारा संघ ब्राह्मण को पापी बताने लगा।

राजा को अब भी चैन नहीं। उसने पुनः विद्वानों को इकट्ठा किया और उस ब्राह्मण के मुँह की आकृति खर जैसी ही रहने का कारण पूछा। विद्वानों ने कहा, 'रानी की ग्यारस शुद्धता से नहीं हो सकी। रानी के महलों के नीचे एक हलवाई की दुकान है। उसकी दुकान से अनाज की गन्ध रानी को आती रहती है। अतः इसकी ग्यारस में कमी पड़ती है। इसी कारण ब्राह्मण पूर्णतया मनुष्याकृति में नहीं आ सका। राजा ने विद्वानों से ब्राह्मण को पूर्णतया मनुष्याकृति में आने का उपाय पूछा। विद्वानों ने बतलाया, 'इसी रानी की एक दासी है। उसको रानी ने दसमीं के दिन मारपीट कर निकाल दिया था। उसने ग्यारस के दिन एक अणुमात्र भी अन्न नहीं खाया है। उसकी ग्यारस पूर्णतया शुद्ध हुई है। अगर वह ग्यारस का फल देदे तो ब्राह्मण की मुखाकृति बदल सकती है। राजा ने दासी को बुला कर सारा हाल कह सुनाया। उसने अपने व्रत का फल ब्राह्मण को दिया। संकल्प का जल छोड़ते ही ब्राह्मण की मुखाकृति भी मनुष्य जैसी

हो गयी। राजा, रानी, दासी तथा सारा ही संघ बड़ा प्रसन्न हुआ। ब्राह्मणी की प्रसन्नता की तो कोई सीमा ही नहीं रही। सभी ने ग्यारस के महत्व को माना और व्रत रखने का नियम लिया। राजा ने अपने नगर में ढिंढोरा पिटवा कर ग्यारस के महत्व को और बढ़ाया और नगर के सभी लोग एकादशी का व्रत रखने लगे।

२६ आषाढ़

आषाढ़ के कृष्ण पक्ष में कोई व्रत या अनुष्ठान नहीं मिलता। हाँ प्रति सोमवार को शीतला देवी के मंदिर में पूजा करने की प्रथा अवश्य है।

२६:१. धोंधा ग्यारस

शुक्ल पक्ष में एकादशी का व्रत होता है। यह देवशयनी एकादशी या धौंधा एकादशी कहलाती है।

२६ :१: १.

यह माना जाता है कि इस दिन समस्त देवता शयन करते हैं। इस दिन स्त्रियाँ व्रत रखती हैं और पोतनी मिट्टी और पीली मिट्टी के पाँच धौंधे या थूए बनाये जाते हैं, ये गुड़ की बड़ी से बड़ी भेली के आकार के होते हैं। इनके मध्य में अंगुष्ठाकार छोटा सा गड्ढा भी कर दिया जाता है। दूर्वा लगादी जाती है और इनका पूजन होता है। इन्हीं धौंधों के कारण हम इसे धोंधा एकादशी या धोंधा-ग्यारस भी कहते हैं। इस एकादशी में धोंधा पूजन ही प्रधान अनुष्ठान रहता है। आज बहुत सी इस व्रत को करने वाली स्त्रियाँ यह भूल ही गयी हैं कि इसका संबंध देवशयन से है। यों सामान्यतः वे यह अवश्य जानती हैं कि अब देवता चार महीने के लिए सो गये हैं अतः कोई विवाहादि शुभ कार्य नहीं किया जा सकता।

२६ :१: २.

भविष्य पुराण में इसे 'गोविंदशयन व्रत' का नाम दिया है। उसमें भगवान गोविन्द की मूर्ति को विधिपूर्वक सुलाने का विधान है। इस पुराण में कृष्ण ने बताया है कि पूर्वकाल में योग निद्रा ने बड़ा तप किया था। वह यह चाहती थी कि वह हमारे (कृष्ण) शरीर में निवास करे। वक्ष में लक्ष्मी, चारों भुजाओं में शंख, चक्र, गदा, पद्म, नाभि के नीचे गरुड़, शिर पर मुकुट, कानों में कुंडल, कहाँ रहे वह। तब कृष्ण ने कहा कि तुम चार महिने हमारे नेत्रों में रहो। इसी एकादशी से योगमाया भगवान कृष्ण के नेत्रों में निवास करती है, तभी वे चार महिने के लिए शयन करते हैं।

२६:२. गुरु पूनों

आषाढ़ शुक्ल पूर्णिमा को गुरु पूनों होती है। यह कहीं-कहीं मनायीजाती है, किन्तु इसका कोई अनुष्ठान विशेष नहीं मिला।

२७.

श्रावण के महिने में निम्नलिखित व्रत-त्यौहार होते हैं :—

१—भैया पांचे

२—दूबरी सातें

३—हरियाली मावस

- ४—हरियाली तीज
- ५—नागपंचमी
- ६—सती पूजा
- ७—घूंघा झूलनी चतुर्दशी
- ८—रक्षा बंधन–सलूना

२७:१. भैया पांचें—नाग पांचें

ये दोनों पंचमियाँ नाग-पूजा से सम्बन्ध रखती हैं। भविष्य पुराण में उल्लेख है कि 'पंचमी तिथि नागों को आनन्द देने हारी है। इस दिन नागों के लोक में बड़ा उत्सव होता है[1]। 'इसी पुराण से अनुसार नागों को यह पंचमी इसलिए प्रिय है कि ब्रह्मा जी ने पंचमी के दिन नागों को वर दिया था कि उनकी माता कद्रु के शाप वश जब जनमेजय नाग-यज्ञ करेगा तो वासुकि की बहिन जरत्कारु से जरत्कारु नामक ब्राह्मण पति से उत्पन्न आस्तीक ने नागों की रक्षा करेगा। भविष्य पुराण के दोनों खण्डों (पूर्वार्द्ध तथा उत्तरार्द्ध) में पंचमी व्रत को भाद्र शुक्ल पंचमी से आरम्भ कर वर्ष भर में प्रत्येक शुक्ल पंचमी को व्रत करने का विधान बनाया है[2]। पर सामन, भादों और क्वार की पंचमियों का विशेष उल्लेख है।

२७:१:१.

विधान है कि श्रावण शुक्ल पंचमी को द्वार दोनों ओर गोबर के नाग बनाये, दही, दूध, दूर्वा, पुष्प, कुशा, गन्ध, अक्षत और अनेक प्रकार के नैवेद्यों से पूजन करें…… ।

२७:१:१:१.

भाद्रपद पंचमी को अनेक रंग[3] के नाग लिख कर घी, पायस, दूध, पुष्प आदि से पूजन कर गूगुल का धूप देवें।

२७:१:१:२.

आश्विन की पंचमी को कुशा के नाग बनाय इन्द्राणी सहित उनका पूजन करें।

२७:१:२.

गरुड़ पुराण में भी उल्लेख है कि श्रावण, भाद्र, आश्विन या कार्तिक में शुक्ल पंचमी को दैवी नागों (वासुकी, तक्षक, कालीय, मणिमंडल, ऐरावत, धृतराष्ट्र, कर्कोटक और धनंजय को) घृत में स्नान कराये। इसमें भी बारह महिनों के लिए नागों के नाम गिनाये

---

१. भविष्य पुराण भाषा, पृ० १०६, नवलकिशोर प्रेस, तीसरी बार, लखनऊ, जून सन् १८९१ ई०।

२. अनन्त, वासुकि, शंख, पद्म, कम्बल, कर्कोटक, अश्वतर, धृतराष्ट्र, शंखपाल, कालिय, तक्षक और पिंगल इन बारह नागों का बारह महीनों में क्रम से पूजन करें।

३. इसी पुराण के उत्तरार्द्ध में उल्लेख है कि "भाद्र शुक्ल पंचमी को रंग से कृष्ण वर्ण के नाग" लिखे।

ये हैं। कुछ अन्तर के साथ दोनों के नाम प्रायः एक से हैं। इस पुराण में भी लिखा है कि इन दैवी नागों के चित्र मकान के द्वार के दोनों ओर काढ़े जाने चाहिये भाद्र शुक्ल पंचमी को, और उनकी पूजा करनी चाहिये ! इसे दष्टोद्धार पंचमी कहा है।

२७:२.

पुराण कथा में वासुकी की बहिन जरुत्कारु का विवाह जरत्कारु नाम के ब्राह्मण से हुआ है। इस प्रकार नागों की बहिन मनुष्य जाति को मिली, यह संकेत है। नागकुल में स्त्री के मायके की कल्पना इस पुराण-कथा में विद्यमान है।

२७:३

ब्रज में तीन नाग-पंचमियों के मानने का पता चलता है। पहली नाग-पंचमी भैया पांचें कहलाती है। यह श्रावण कृष्ण पक्ष की पंचमी को पड़ती है। दूसरी और तीसरी नाग पांचें ही कहलाती हैं। एक श्रावण शुक्ल पक्ष की पंचमी को मानी जाती है, दूसरी भादों शुक्ल पंचमीं को।

२७:३:१.

ब्रज में नाग पंचमी को जो कहानी कही जाती है उसे पंचमी पूजन की पूर्ण कहानी का 'पूर्वार्द्ध' माना जा सकता है। भैया पांचे को पूरी कहानी कही जाती है। ये श्रावण मास की पंचमियों की कहानियां इस प्रकार हैं :—

२७:३:१:१.

नागपंचमी की कहानी (पूर्वार्द्ध) ब्रज की लोक कहानियों से उद्धृत—

२७:३:१:१: नाग.पंचमी की कहानी

(१)

एक ग्राम में एक लुगाई ई। ब्वाके पीहर में कोई हतु नाओ। एक दिनां की बात—एकु करियल स्यांपु एक घर में ते भाजि कें आइ रह्यौ ओ ब्वा स्यांपु के पीछें-ई-पीछें एक आदिमी डंडा हात में लएँ ब्वाइ मारिबे कूं आइ रह्यौ ओ। करनी कौ खेल बु लुगाई ब्वाई वखत घूरे पै कतना भरि कें कूरौ डारिबे आई—स्यांप पै ब्वाइ तर्सु आइगौ। ब्वानें ब्वाके ऊपर अपनौं कतना ढाँपि दीयौ। सबु आदिमी तौ हटि गए। बु म्वांई ठाड़ी रही। स्यांपु नें कही—आजु ते तू मेरी धरम की बैहन और मैं तेरौ भैया। लुगाई ने कही कै भैया मेरे पीहर में कोई हतु नाएँ। आजु ते तेरौ ही घरु मेरो पीहरु। सामन में मोइ लैबे कूं अइयो।

(२)

सामनु आयौ। सबु भैया अपनी अपनी बहनिन्नें लैबे कूं आए। स्यांपु ऊ अपनी धरम की भैनि ऐ लैबे कूं आयौ। स्यांपु भइया नें कोथरी तौ अपनी पीठि पै बाँधी और अपनी धरम बैहनि ऐ लैकें चलि दीयौ। एक करील के नीचों ब्वाकी बाँबी ई। बाँबी के ऊपर ब्वानें अपनी बहिन उतारी। राति भई और बु सोइ गई। स्यांपु अपनी सोमती बहिन ऐ भीतर लै गौ, म्वाँ बड़े बड़े महल बनि रहे। मनिन के दीए जरि रहे। बु स्यांपु सबु स्यांपन को सरपंचु ओ। कुनबा ब्वाकौ बड़ौ ओ। एक बूढ़ी मा, एकु बाप और भौतु

से भैया ए। जब सबु स्याँपु बाहिर चले जाँइ तब बु बूढ़ी मा कहै—बेटी, अपने भैया भतीजन कूँ दूधु सिराइ दै। बु रोजु कटोरन में दूधु सिराइ दौ करै। नेंक खटका कर दे। ब्वाइ सुनिकें सबु स्याँप आइ जाँइ।

एक दिनाँ की बात होंनी बलमान। दूध तातौ रहि गौ और ब्वानें खटका करि दियौ। कैंतौ बिननें दूधु पीयौ सोई सबके मौंह पजरि गए। छोटे छोटे स्याँप तौ रिस्याए। परि बा पंच स्याँप और ब्वाकी माँनें सबु चुप्पु करि दीए।

सामनु बीति गयौ। सनूनों ऊ हैगौ। ब्वानें अपने सबु भैयान के राखी बाँधी। लुगाई नें कही कै भैया अब मोइ जान दै। स्याँपु नें कही कै में महमान पै खबरि करिबे जाँतू। उनई के संग तोइ बिदा करुंगो। स्याँपु महमानें संगई लिवाइ लायौ। बड़ी खातिर-दारी करी। बिदा कौ समैया आयौ। बिदा में स्याँप ने अपनी बहिन ए एकु मनिन कौ हारु दीयौ और बु दोऊ बिदा है गए। स्याँप नें कही कै भैना अब में तोइ लैबे कूँ आऊ तबई आइ जैयौ। भैनिनें कही कि अच्छा।

(३)

महमानु बिदा होंती पोत अपनों एकु दुपट्टा भूलि आयौ। बुं रस्ताई में ते दुपट्टा ऐं लैबे कूं गयौ। म्वाँ ब्वाइ करील के पेड़ के सिवाइ कछु न पायौ। परि ब्वा करील पै दुपट्टा टंगि रह्यौ औ। ब्वाइ घर कूँ लै आयौ।

एक दिनाँ कहा भयौ कि बु लुगाई अपनी छत्ति ऐं लीपिल्हेसि रही और ब्वा मनिन के हार ऐ पहरि रही ई। ब्वा सहरपना की जो रानी हति काई ब्वाकी नजरि ब्वा हार पै परि गई। रानी घर आइकें खटपाटी लैकें परि रही। राजा नें कारनु बूझ्यौ। ब्वानें हार लैबे की राजी परगट करी। राजा नें ब्वा लुगाई कौ मालिकु बुलायौ। और हार की बात पूछी। ब्वानें कही कि मेरी भौटिया [बहू] ऐ बु ब्वाके पीहर ते मिल्यौ ऐं। राजा नें कही कै द्वै दिनाँ कूँ हमें ब्वा हार ऐ दै जा। ब्वाई नमूना कौ एकु हारु बनमामनो है। ब्वानें हारु लाइ कें दै दीयौ।

(४)

कै तौ रानी नें बु हारु पहर्‌यौ सोई ब्वामें स्याँपई स्याँप। फिर राजा नें बुही बुलायौ। परि ब्वाकी हिम्मिति ब्वा हार ऐ उतारिबे की न परी। फिर ब्वानें अपनी लुगाई भेजी। ब्वाने बु हारु रानी के गरे में ते उतारि लीयौ। बु फिरि मनिन कौ हारु हैगौ।

राजा ने भेदु पूछ्यौ। ब्वानें सब बात बताइ दईं।

२७:३:१:२ भैया पाँचें की कहानी : सामन बदी ५ :

: उत्तरार्द्ध :

फिरि दूसरे सनूने पै बु स्याँपु अपनी ब्वाई धरम की भैंनि ऐ लैबे कूँ आयौ। और ब्वाइ लिवाइ गौ। अबकी बेर ब्वा बहिन नें फिरि खता खाई और जब तक दूधु गरमुई औ तब तक ई खटका करि दीयौ। स्याँपु जब दूध पीबे कूँ आयौ तब ब्वाकी पूंछ ब्वा दूध के बासन में जाइ परी। सोई ब्वाकी पूंछ जरि गई। अब तौ बु स्याँपु 'लँडरा'

है गयौ। ब्वाइ बड़ी रिस ग्राई ग्रौर भैनि ऐ खाइबे कूँ तैयार भयौ। स्याँप की माँ नैं कही कि बेटा जाइ चों खांतु ऐ। जि ग्रब ग्राजु ते इतमें ग्रपने लँडूरा भैया की सौगंद खाग्रौ करैंगी। ब्वानें कही कि मेरी झूँठी सौगंद खाई तौ। माँ ने कही कै बेटी बहिन ग्रपने भैया की कबऊँ झूँठी सौगंद नाँएं खाग्रौ कति। स्याँपु जा बातै मानि गौ।

एक दिनाँ बहन के हात में ते पंखा नीचें जाइ परयौ। ब्वाके खसम नें कही कै पंखा ऐ उठाइ दीजौ। ब्वानें कही—'में नाँऊ उठामति।' मालिक नें फिरि कही कै ग्ररि उठाइ दै। ब्वानं ज्वावु दीयौ : 'लँडूरा भैया की सौगंद, में न उठाउँगी।' स्याँपु जो रोजु ब्वाकी जांच करिबे ग्राग्रो करतु ग्रो, इन सब बातन नें देखि रहयौ ग्रो। ग्रब ब्वाइ साँचु ग्राइ गौ कि मेरी भैनि ग्रपने लँडूरा भैया की सौगंद झूंटी नाँइ खाँति।

एक दिनाँ ब्वाकी सासु ब्वाके छुई-छोरन नें खिलाइ रही। एक छोरा नें कहा कामु करयौ कि बुहारी की सींक इत्तर-बित्तर कर वईं। सासु ने कही : 'बजमारे, तैंनें सींक चों फैलाइ दईं। कहूं तेरौ मामा सोने की सींक न बें जाइगौ।' स्याँपु तो ग्रपनी भैनि के घर गुप्पु-चुप्पु रोजु ग्रायौ ई करतु ग्रो। ब्वानें जि बात सुनि लईं। दूसरे दिनां झट्ट वु सौने की सींक ई बखेरि गौ।

एक दिनाँ छोरा नें नाजु फैलाइ दीयौ। सासु ने कही कि कहूं तेरौ मामा सोने के जौ न बखेरि जाइगौ। ए बु स्याँपु तौ दूसरे दिना सौने के जौ ई बखेरि गौ।

ऐसी बु भैनि ई ग्रौर ऐसौ ब्वाकौ भैया ग्रो। ऐसी बहिन ग्रौर ऐसौ भैया सबु काऊ कौ होइ।

२७:३:१:३

प्राय : यही कहानी बँगला में नाग पंचमी या मनसा की कहानी है, यही प्रायः राजस्थान की नागपंचमी की कहानी है।

२७:३:१:४

इन सभी कहानियों में प्राय: ये बातें मिलती हैं।

१. एक स्त्री के साँप भाई कैसे बने ?
२. वह स्त्री अपने नाग-लोक के मायके में कैसे पहुँची ?
३, वहाँ साँप कैसे क्रुद्ध हुए ?
४. मायके से लौटने पर नागों ने उसके लिए क्या किया ग्रौर
५. क्यों किया ?

दूसरे शब्दों में इन सभी कहानियों में ये पाँच बातें कही गई हैं :—१ साँप भाई बने, २. स्त्री मायके सर्पलोक को गयी, ३. वहाँ सर्प क्रुद्ध हो गए, ४. वे बाद में उस स्त्री से प्रसन्न हो गए, ग्रौर ५. उसे बहुत कुछ दिया।

२७:३:१:५

इन पाँचों बातों के सम्बन्ध में इन विविध प्रदेशों की कहानियों में क्या ग्रन्तर है यह यहाँ देना समीचीन होगा :—

पहला सूत्र

ब्रज	राजस्थान	बंगाल
१. (ए० बी०) एक स्त्री के पीहर में कोई नहीं।	१. वही	१. वही
२. (ए) उसने एक साँप की रक्षा की (अ) घूरे पर भाग कर वह साँप आया, (आ) पीछे उसे मारने को डंडा लिए मनुष्य। (इ) स्त्री ने कतना से ढककर उसे छिपा लिया। (बी) दौरानी जिठानी वाँवी पर कहानी सुनने लिवा गयीं। उसके आँसू गिरे वामी में साँप के ऊपर।	२. वह अपनी जिठानियों के साथ खदान से मिट्टी खोदने गयी।	२. उसकी छः जिठानियाँ। सासु उनसे प्रसन्न क्योंकि उनके पीहर से सामान आता। यह दुखी।
३. (ए) साँप ने उसे बहिन मान लिया। (बी) साँप बिल से निकला और उसे बहिन बनाया।	३. पीहर की बात चली तो उसने रोकर कहा वहाँ कोई नहीं। वाँवी का साँप भी नहीं।	३. सती ताल पर पानी लेने गयीं। इसने मछली समझ कर नागों को घड़े में भर लिया।
	४. वहाँ वाँवीको साँप, को उस पर दया आयी। निकल कर उसने उसे बहिन बनाया।	४. घर पर देखा तो नाग, उनको दूध केले दिये।
		५. उन्होंने उसे बहिन स्वीकार किया। क्योंकि वे साँप जंगल की आग से डर कर पानी में छिपे थे। इस स्त्री के घड़े में और भी सुरक्षित थे।

विशेष—साप्ताहिक हिन्दुस्तान की कहानी में वह नाग स्वयं 'शेषनाग' थे, जिन्हें उस लड़की पर दया आयी कि जिसे लिवाने कोई भाई नहीं आया था। इसमें न लड़की वावी पर गयी है, न रोयी है, न खदान पर गयी है।

दूसरा सूत्र

ब्रज	राजस्थान	बंगाल
१. (ए) श्रावण में साँप धर्म बहिन को लिवाने पहुँचा।	१. वही	१. (अ) उन नागों ने देवी मनसा से उस स्त्री को अपने महलों में बुलाने का आग्रह किया। (आ) मनसा उस स्त्री की ससुराल उसकी माँई बन कर पहुँची।
२. बहिन डलिया कोथरी करके भाई के साथ चली।	२. बहिन भाई के साथ चली।	२. मनसा उसे लेकर चली, उससे कहा कि वह आँखें बंद कर ले।
३. जंगल में करील के नीचे उसकी बाँवी, वहीं उसे ठहराया।	३. बाँवी पर पहुँचे।	३. जब आँख खोलने को कहा गया तो वह महलों, में नागों के बीच थी।
४. (ए) जब सो गयी तो उसे भीतर ले गया, वहाँ महल थ। (बी) उससे कहा कि पूँछ पकड़ कर पीछे चली आना।	४. वह भाई सर्पाकार हो गया, बहिन से कहा मेरी पूँछ पकड़ कर पीछे-पीछे आओ। इस प्रकार सर्प नगर में पहुँची।	४. मनसा ने उसे वे नाग दिखाये जिनकी खातिर उसने की थी, और कहा कि इन्हें अपना भाई मानना।

तीसरा सूत्र

ब्रज	राजस्थान	बंगाल
१. (ए) बूढ़ी माँ ने उसे दूध ठंडा करके साँपों को पिलाने का काम सौंपा। (बी) बहिन ने आग्रह किया कि आज मैं दूध पिलाऊँगी।	१. सर्पिणी माँ कुए पर पानी भरने गयी और दूध पिलाने का काम इसे सौंप गयी।	१. (अ) मनसा ने उसे प्रति दिन दूध गर्म करके पिलाने का काम सौंपा। (आ) उसे यह भी मना कर दिया गया था कि वह दक्षिण दिशा में न देखे। (इ) एक दिन वह दक्षिण दिशा में देखने लगी। वह मनसा नृत्य कर रही थी।

ब्रज	राजस्थान	बंगाल
		(ई) इसमें वह दूधका ध्यान भूल गयी, वह औटता रहा ।
२. खटका करने पर साँप आते और दूध पी जाते ।	२. —	२. —
३. (ए) अभी दूध गरम ही था कि उसने भूल से खटका कर दिया । (बी) उसने ताली बजादी ।	३. दूध ठंडा नहीं हो पाया था कि उसने बुलाने की घंटी बजादी	३. वह औटता रहा, तभी कलेवे के लिए आठों साँप आ गये ।
४. साँप आये, और दूध में मुँह डालते ही उनका मुँह जल गया ।	४. वही	४. उन्हें गर्म दूध ही परोसा गया, जिससे उनके मुँह जल गये ।
५. इस पर साँप बड़े क्रुद्ध हुए उसे खाने दौड़े । पर बूढ़ों ने उन्हें समझा दिया ।	५. वही	५. वही । मनसा ने प्रकट होकर साँपों का क्रोध शांत किया ।
	६. साँपों के ७ कोठे थे । ६ खुले रहते थे, एक बंद । बहिन ने ७वाँ कोठा देखने का हठ किया । खोला तो उसमें एक बूढ़ा साँप— उसे देख स्त्री ने कहा— **जीवो नाग नगूलणा,** **जीवो बढ़लो बाप ।** **वो मेरा लाड़ लड़ाइया,** **नेंवर घालो पाँव ।** वह सर्प प्रसन्न हुआ और उसे एक नेवर दे दी ।	

विशेष—ब्रज की ही एक अन्य कहानी में उल्लेख है कि (१) सर्पिणी माँ के बच्चे होने का समय आया । तब (२) उसे दीपक दिखाने का काम दिया गया । (३) बच्चों

के पैदा होते समय भय से उसके हाथ काँपे। (४) दीपक उसके हाथ से गिरा। (५) उससे संपेलों की पूँछ कट गयी। (६) उनका नाम ग्रंडिया-बंडिया रखा गया।

साप्ताहिक हिन्दुस्तान में प्रकाशित नागपंचमी की कहानी में भी दीपक के गिरने से साँपों की पूँछ कटने का उल्लेख है। वहाँ दीपक क्यों गिरा इसका कारण नहीं बताया गया।

ब्रज की (ए) कहानी में बहिन दुबारा साँपों के घर गयी है। तब साँप की पूँछ गरम दूध में पड़ गयी, और वह लँडूरा हो गया है। बहिन 'लँडूरे भाई' की सच्ची सौगंध खाती है।

चौथा सूत्र

१. (ए) बहिन साँपों से विदा होकर घर गयी।[1]	१. वही	१. वही। बँगला कहानी यहीं समाप्त हो जाती है। मनसा ने उस लड़की के ससुराल में प्रकट होकर नागपंचमी पूजा की विधि बतायी।
२. विदा में साँपों ने उसे एक हार दिया[2]।	२. विदा में साँपों ने बहुत धन दिया।	२. स्त्री अपने सर्प भाइयों की प्रशंसा करती है जिससे वे बहुत सा धन और दे जाते हैं।
३. सोने की सींकें साँप घर में डाल गये।	३. सोने-चाँदी की सींकें घर में डाल गये।	
४. सोने के जौ घर में साँप बखेर गया।	४. साँप हीरे-मोतियों के बोरे घर में पटक गया।	
५. नहीं।	५. बिटोरे से उपले ले गयी तो काला नाग—	

---

१. ब्रज की इस कहानी में विदा कराने उस स्त्री का पति आया है। जब वह जाने लगा तो अपनी धोती भूल गया। दूर जाकर जब धोती की याद आयी तो लौटा। पर वहाँ महल नहीं दीखे। करील पर धोती टँगी हुई थी।

२. यह हार रानी ने देखा। राजा ने हार मँगवाया। जब रानी को पहनाया तो वह साँप बन गया। उस स्त्री ने लिया तो फिर हार हो गया। पूछने पर स्त्री ने समस्त हाल बता दिया।

उसने कहा—

जीवो नाग-नगूलणा
जीवो बूढ़ो बाप
वो मेरा लाड़-लड़ाइया,
घाले चन्दर हार

नाग ने खुश होकर उसे चन्द्रहार दे दिया।

६. उस हार की और रानी की घटना वही है जिसका उल्लेख ब्रज में हुआ है।

७. रानी ने सब हाल जान कर साँपों की पूजा करने का आदेश जारी कराया।

पाँचवाँ सूत्र

१. हार तो विदा में ही दिया है। विदा-समय देने का रिवाज है।	१. यह हार राजस्थानी कहानी में अंत में मिला है। देखिये ऊपर चौथे सूत्र का ५वाँ अभिप्राय।
२. स्त्री के बच्चे ने सींकें बखेर दीं तो सास ने ताहिना दिया कि तेरे मामा सोने की सींकें नहीं दे जायगा। साँप वहीं छिपा था। उसने सुना और दूसरे दिन सींकें दे गया।	२. दौरानी-जिठानियों ने जब लड़के को सींकें बखेरते देखा तो ताना दिया। शेष वही।
३. बच्चा जो बखेर रहा था तो सासु ने फिर ताना दिया। तो साँप सोने के जौ बखेर गया।	३. बच्चा जो बखेर रहा था। दौरानी-जिठानियों ने ताना दिया। साँप हीरा-मोती डाल गया।

२७:३:२

ब्रज में इस प्रकार हम देखते हैं कि नाग-पंचमी और भैयापाँचें एक ही कहानी से जुड़ी हुई हैं। किन्तु राजस्थान में भैयापाँचें को जो कहानी कही जाती है, वह नाग

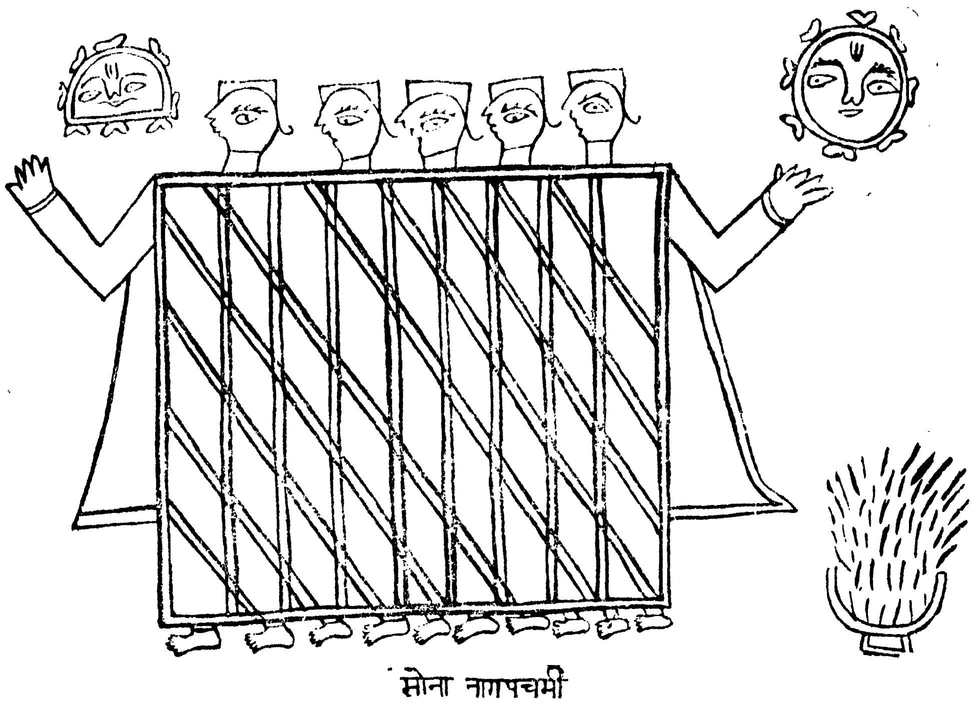
पंचमी की कहानी से भिन्न है। राजस्थान की भैयापाँचें की कहानी 'ब्रज' की 'भैयादूज' की एक कहानी से मिलती है। उसे यथास्थान प्रस्तुत किया जायगा।

२७:४

ब्रज में नागपंचमी को नागपूजा के लिए चित्र भी बनाते हैं, भैयापाँचें को तो साँपों की बाँबी ही पूजी जाती है, वहाँ दूध रखा जाता है किन्तु नाग-पंचमी को भित्ति-चित्र बना कर पूजे जाते हैं।

२७:४:१

नाग-पंचमी पर प्रायः सफेद भूमि पर काले नाग बनाये जाते हैं—वे चित्र प्रायः इस रूप के होते हैं:—



मोना नागपचमी

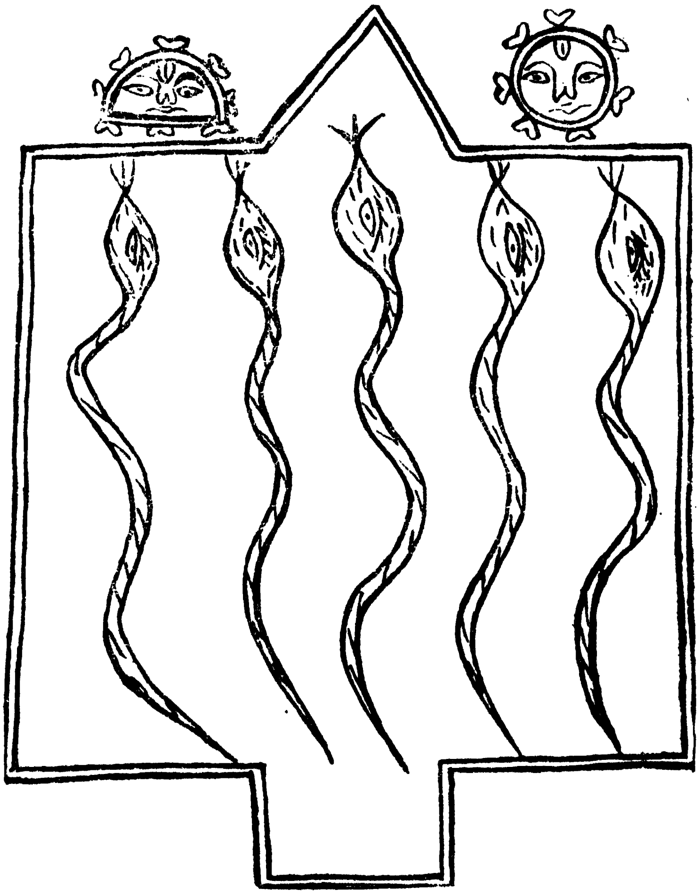
२७:४:२

कहीं-कहीं इस से कुछ भिन्न रूप चित्रित किया जाता है। उक्त चित्र में एक-दूसरे को काटने वाली रेखाओं से जो जाली प्रस्तुत की गयी है, वह सर्प-कुंडली का संकेत करती है। साथ ही पाँच मानव-मुख उस कहानी के भाव को प्रकट करते हैं कि सर्प ने मनुष्य का रूप धारण किया था। अतः इस चित्र में सर्प को मानव मुख युक्त दिखाया है। पाँच मुख पंचमी तिथि के कारण रखे गये प्रतीत होते हैं। 'चन्द्र' और 'सूर्य' तो इस चित्र-कला के एक प्रकार से अनिवार्य अभिप्राय: (Motifs) हैं। एक ओर अंगीठी या यज्ञ-कुंड है। यह या तो सूर्य-चन्द्र की भाँति अग्नि देवता का प्रतीक है, जो

देवताओं और पृथ्वी का मध्यस्थ दूत है। अथवा यह उस कथा की घटना को बताने के लिए है जिसमे कहा गया है कि गरम दूध से साँप जल गये थे।

२७:४:३

दूसरे प्रकार का चित्र इस प्रकार का होता है।



इस चित्र में सीधे सर्प दिखाये गये हैं। गिनती पाँच है। ये गृह में पाताल लोक के रूप में दिखाये गये हैं। यह संकेत गृह के घेरे के बाहर चन्द्र और सूर्य के होने से मिलता है।

२७:४:४

ये सर्प सामान्यतः सफेद पृष्ठभूमि पर काले रंग से बनाये जाते हैं। पर किसी-किसी कहानी में गोबर के साँप बनाने का भी उल्लेख है। नागपंचमी पर सामान्यतः ये नाग-चित्र दीवाल पर बनाये जाते हैं। पर कहीं-कहीं दरवाजे के दोनों ओर भी बनाये जा सकते हैं।

२७:४:५

प्रत्येक लोक-कला में तंत्र का मूल भाव अवश्य विद्यमान रहता है। वे निरर्थक नहीं बनाये जाते। न वे केवल उनकी प्रतिच्छवि प्रस्तुत करके सामान्यतः उन्हें पूजने के लिए ही बनाये जाते हैं। आदिम मनुष्य ने गुफाओं में चित्र अंकित किये थे, वे भी टोटके थे। संतुल्य टोने (Sympathutic magic) के रूप में वे थे। वही भाव इनमें हैं। इन चित्रों से नाग घर में नहीं आयेंगे। उनके लिए यह वर्जन है। आयेंगे तो काटेंगे नहीं, और समृद्धि लायेंगे।

२७:५ नाग-पूजा

व्रज में नाग-पूजा का प्रचार कम नहीं। व्रतानुष्ठानों में भैयापाँचें तथा नागपाँचें के अतिरिक्त, भैयादूज की कहानियों में भी नाग की ही कहानी है। जाहरपीर की पूजा भी एक प्रकार से नागपूजा ही है। सर्प किसी को काट ले तो ढांक रखने और जागरण में नाग-पूजा का तत्व ही है। उस जागरण में 'नवल देवी' का जो गीत गाया जाता है वह नागों से ही संबंधित है।

२७:५:१ नाग-पूजा का विकास

प्लूटार्क ने लिखा है कि "पुराने जमाने के मनुष्य वीरों से साँप का संबंध विशेष दिखाते थे। अन्य पशुओं से उतना नहीं"।[1] वीरों का साँपों से किसी न किसी प्रकार का संबंध प्राचीन काल से ही चला आया है। इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका ने आगे लिखा है कि—

"सालमिस के युद्ध में जहाजों में एक सर्प प्रकट हुआ था, उसे वीर साइक्रीअस माना गया था। ये वीर किसी पाखंड (Cult) की वस्तु हो जाते हैं या रोग-निवारक स्थानीय दई देवता बन जाते हैं। इनकी समाधि के पास से जब लोग निकलते हैं तब आतंकित रहते हैं अथवा इनकी समाधि पर लोग भविष्य जानने या मानताएँ करने जाते हैं"। (इन्साइक्लोपीडिया ब्रिटानिका)

इस विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि नाग या सर्प का वीर-पूजा से घनिष्ठ संबंध है। किन्तु नागपूजा का इतिहास बहुत लम्बा और बहुत पुराना है।

नाग-पूजा में साम्प्रदायिक पापंड की स्थापना होने तक हमें निम्न विकास-क्रम विदित होता है :—

अ (ऐनिमिस्टिक अवस्था[१]) १. किसी जाति का 'नाग' टोटम से संबंध होना।
२. जाति और टोटेम का एक नामकरण।
३. वह जाति 'टोटम' की पूजा करने लगी।

---

1. 'The men of old time' as Plutarch observe, 'associated the snake most of all beasts with heroes'. (Enc. Brit.)

१. ओ' मल्ले (O' Malley) ने 'पापुलर हिन्दुइज्म' में एक स्थान पर लिखा है :— "इस प्रकार उदय होती है ऐनिमिज्म (Animism) अर्थात् यह विश्वास कि सभी (पृष्ठ ८० पर)

(अ) माइथालाजिकल (पौराणिक अवस्था)	४. उस जाति में पूज्य टोटेम विषयक गाथाओं का निर्माण।
(इ) सिद्ध अवस्था	५. 'टोटम' को पूजा के लिए प्राप्त करने के प्रयत्न, तत्संबंधी सिद्धियाँ।
(ई) सांप्रदायिक स्थिति	६. विशेष संप्रदाय अथवा पाषंड के रूप में स्थिति।
	७. संप्रदाय का ह्रास, अन्य पाषंडों से संबंध।
	८. और सर्प से रक्षा की चिकित्सा का प्राधान्य, पाषंड के संप्रदाय रूप का अभाव। तथा
	९. लोकवार्तानुष्ठान में अन्य पूजाओं के समान स्थान।

(पृष्ठ ७६ का)

वस्तुओं में आत्मा है, अथवा और विस्तृत अर्थ में, ऐसी प्रत्येक वस्तु जो किसी न किसी रूप में मनुष्य को प्रभावित करने की कुछ भी कार्यक्षमता रखती है, रूह (Sprit) से तथा मनुष्य जैसी इच्छा-शक्ति (Will) से युक्त होती है। फलत: विश्व को उन आत्माओं से परिपूर्ण माना जाता है जो मानव को प्रभावित करने की शक्ति रखती हैं। इसका अनिवार्य परिणाम ह ता है कर्त्तव्यों का असाधारण वैविध्य, जिनका अच्छा सार मोनियर विलियम्स ने दिया है कि चट्टानें, लाट तथा पाषाण-खंड, पेड़, पुष्कर तथा नदियाँ, उसके व्यवसाय के औजार, उपयोगी पशु, भयावह सरीसृप, मनुष्य जो अपने असाधारण गुणों के लिए विख्यात हो चुके हैं, महान शौर्य, पवित्रता, गुण या दुर्गुण के लिए भी, अच्छे या बुरे दैत्य (demon), भूत और पिशाच, मृतपूर्वजों की आत्माएँ, अर्द्ध देव, प्रत्येक ही, नहीं सभी के सभी, दैवी समादर या पूजा में अपना-अपना भाग रखते हैं।" ए० सी० टरनर ने कुमायूं की जातियों का विवरण देते हुए डामों के धर्म पर प्रकाश डाला है। डोमों का धर्म ऐनिमिस्टिक और दैत्य पूजापरक (demonistic) है: "अब भी डोमों के अपने देवता और मंदिर हैं और अल्मोड़ा में इनके देवता हैं भोलानाथ, गंगाराम, हरु, श्याम, ग्वाल, निरंकार, आदि। इनमें से कुछ तो ऐसे मनुष्य थे जिन्होंने घोर पाप कृत्य किये थे, इनके भूत की पूजा करनी पड़ती है, ऐसे भी हैं जिन्हें भयानक आघात मिला, या जो मार डाले गये, ये लोगों के सिर आ जाते हैं। डोमों में जगारिया (स्याने) यह बताते हैं कि कौन सा देवता सिर आया है। गाना और नाचना होता है, भेंट चढ़ती है, देवता या देवताओं की आत्मा जगारिया के सिर आती है, और वह तब निदान और प्रतिकार बताता है।"

२७:५:२ विविध मत

जे० पी० ऐच० वोगल, पी-ऐच० डी० ने अपनी पुस्तक "इंडियन सर्पेंट लोर" में नाग-पूजा के मूल और महत्व पर संक्षेप में विचार करते हुए कई मतों का उल्लेख किया है, जिन्हें हम अत्यन्त संक्षेप में यहाँ देते हैं :—

१—मत	२—मानने वाले	३—साहित्य
१. नाग मूलतः सर्प नहीं थे। ये सर्प-पूजक थे। ये उत्तरी भारत में बसे हुए थे और तूरानी शाखा की आदिम जाति के थे। इन्हें आर्यों ने आकर अपने आधीन किया। आर्य या द्रविड़ सर्पों की पूजा करने वाले नहीं थे।	जेम्स फरगुसन	ट्री एंड सर्पेंट वरशिप (१८६८)
२. नागों का संबंध उन दैत्य-सत्ताओं (demoniacal beings) से है जिनका सबसे अच्छा स्वरूप (were wolvc) में प्रगट होता है। ये मनुष्य के रूप में भी दिखायी पड़ते हैं। इनका मूल वह भावना है जो पशुओं और मानवों में अधिकांशतः अभेद मानती है, इसी भावना के परिणाम स्वरूप 'नाग' देखने में आदमी लगते हैं जब कि हैं वे वस्तुतः सर्प। एक बौद्ध ग्रंथ के अनुसार उनका सर्प-स्वभाव दो अवसरों पर उद्घाटित होता है : यौन समागम तथा शयन में।	प्रो० ओल्डनवर्ग	Die Religion des Veda.
३. नाग सारतः जल-आत्माएँ (Water spirit) हैं। वे प्राकृतिक शक्तियों के मानवीकरण हैं। साँपों की तरह गुंजलकें मारे बिजली उगलते हुए, वर्षा के बादल, आकाश के नाग हुए, ये ही झीलों और	हेन्द्रिक कर्न	Over den Vermoldelijkan oorsprong der Naga Verceringe Bijdr, etc.

१—मत	२—मानने वाले	३—साहित्य
तालाबों में पृथ्वी पर उतार लिये गये, और अन्त में विषधर सर्पों से इनका एकीकरण हो गया ।		
४. नाग सूर्यवंशी एक जाति थी, फनधारी नाग इसका टोटेम था । उत्तरी भारत में तक्ष-शिला इनका प्रधान नगर था । तक्षक उनका नायक था ।	१. डा० सी० ऐफ० ओलधम । २. ई० डवल्यू हापकिन्स	1. The Sun and the Serpent (London 1905 १. ऐपिक माइथालोजी)
५. यह मान्यता कि मृत राजा प्राचीन काल में सर्प-योनि में जन्म लेते थे, इसी कारण उनकी पूजा प्रचलित हुई ।		
६. नागपूजा का मूल जटिल है । किसी एक बात को उसका कारण नहीं माना जा सकता:—(१) सर्प की पशु रूप में पूजा है । (२) सर्प के लहरने के साम्य से जल-स्रोत तथा नदी के देवी-देवताओं का प्रतीक भी यह हो गया है । (३) इसमें वैदिक 'अहि' की जैसी भावना का भी आरोप हुआ है—जिससे तूफान और प्रकाश के अंधकार से होने वाले संघर्ष विषयक महान गाथा का संबंध भी दिखायी पड़ता है ।		
७. नागपूजा के आरंभ का पहला बीज वस्तुत: सर्प के भय से ही उगा । तब उनके विशिष्ट स्वभाव के कारण विविध कल्पित तत्व जुड़े । (१) साँपों को पृथ्वी, अंतरिक्ष और स्वर्ग में व्याप्त माना गया । (२) उनमें विलक्षण शक्तियों की उद्‌भावना की गयी ।		

(अ) वर्षा में बिलों में पानी भरने से इनके बाहर निकलने से उद्भावना कि सर्पों में वर्षा लाने की चमत्कारिक शक्ति है।

(आ) उसके चलने में आवाज न होने से उद्भावना—नाम लेते ही प्रकट होते हैं। अतः इनका नाम लेना ही वर्जित हो गया।

(इ) सर्प दो जीभें निकालता है इससे उद्भावना कि सर्प हवा पीकर जीता है। हवा खाकर रहना तपस्वी का चरम उत्कर्ष, अतः सर्प तपस्वी का आदर्श।

(ई) केंचुली उतारना देखकर उद्भावना कि इस केंचुली में आँख से लगा लेने पर आदमी अदृश्य हो सकता है[१]। केंचुली में चमत्कारक गुण माना गया है।[२] इसी से सर्पों को अमर माना गया कि वे केंचुली उतार कर नया शरीर धारण करते हैं और अमर हो जाते हैं[३]।

(उ) सर्प काटने से तुरंत मृत्यु होने के कारण उद्भावना कि सर्पों में वह जादुई शक्ति होती है जिसे तेजस कहते हैं। उनके नथुनों से आग की लपटें निकलती हैं। साँप अपनी साँस से ही प्राण ले सकता है।

(ऊ) झील आदि के निकट मिलने से और बिलों में प्रवेश करने और निकलने से उद्भावना कि ये पाताल निवासी हैं।

(ए) जंगलों तथा घास-पातों में घूमने के कारण उद्भावना कि ये औषधियों के ज्ञाता हैं।

(ऐ) सर्प का प्रादुर्भाव वर्षा में, अतः उद्भावना कि ये उर्वरत्व के देव हैं।

(ओ) हवा खाकर रहने से तपस्वी भाव का फल।

(औ) देवताओं से मिल कर ये संतान प्रदान कर सकते हैं।

(अं) घरों में दिखलायी पड़ते हैं। उद्भावना, कि ये घर के देवता हैं। इसी का विस्तार के ये पुरखे हैं जो इस योनि में आये हैं।

(अः) घरों में जमीन में प्राचीन लोग धन गाड़ते थे। बिलों में सर्प निकलता देख उद्भावना कि पुरखे धन की रक्षा के लिए सर्प बने हैं।

(क) ऐसे ही अद्भुत कर्मों के कारण नागों को देवता माना गया। उन्हें रूप बदलने वाला भी माना गया। रूप बदलने में मनुष्य रूप को प्रधानता मिली।

इस समस्त ऊहा-पोह के उपरांत भी यह प्रश्न उठता है कि नाग और नाग-जाति में अभेद कैसे हुआ। 'नाग' पशु का नाम है या जाति का नाम है, या दोनों की अलग-अलग उद्भावना है। किन्तु इससे भी अधिक महत्व की समस्या यह है कि नाग-और नाग-जाति का संबंध कब और कैसे हुआ? यह संबंध आरंभ में संयोग से हुआ होगा। जहाँ

---

१. सर्प में (आ) गुण के कारण और केंचुली पड़ी मिलने के कारण यह धारणा बनी होगी।

२. अथर्ववेद।

३. तांड्य महाब्राह्मण (२५,१५)।

नाग लोग रहते होंगे वहीं सर्प भी विशेष होंगे। इनके प्रति उनका आकर्षण हुआ होगा, उनका ज्ञान प्राप्त किया होगा, उन पर अधिकार किया होगा और उनसे अपना धार्मिक संबंध जोड़ा होगा। तब नाग और नाग-जाति का संबंध टोटेमधारी जाति के जैसा ही बनेगा। इस संबंध के स्थिर हो जाने के उपरांत और नाम पड़ जाने पर उक्त कारणों से 'नाग' लोग उसकी पूजा में प्रवृत्त हुए होंगे, और उसके आधार पर उन्होंने अपनी जाति का पाषंड स्थापित किया होगा। बौद्ध-पूर्व युग में भारत के सामान्य क्षेत्र में नाग पाषंड का बहुत प्रचार था जैसा ऊपर बताया जा चुका है। डबल्यू०. डबल्यू०. हण्टर, सी० आई० ई०, ऐल० ऐल०, डी ने 'दि इण्डियन एम्पायर' (लंदन, १८८२) में (पृ० १७१-१७२:) बताया है कि "बौद्धधर्म ने आर्य-पूर्व की इन जातियों को भारतीय तंत्र (Indian Polity) में घुला-मिला लेने में बहुत प्रयत्न किया था। यूनानी-वाख्त्रिक तथा सिदियन आक्रमणों (३२७ ई० पू० से ५४४ ई० पू०) के दीर्घ संघर्ष-युग में भारतीय आदिम जातियों ने पूर्वापर अधिक महत्व प्राप्त किया होगा, चाहे शत्रु के रूप में, चाहे मित्र के रूप में। ई० के बाद ये जातियाँ पूर्व में उत्तरी भारत के अच्छे क्षेत्रों में बिखरी मिलती हैं। अब भी ऐसे ध्वस्त नगरों और किलों को हम अवध और उत्तरी भारत में विद्यमान पाते हैं, जिनका संबंध इन आदिम जाति के लोगों से स्थानीय वार्त्ता में बताया जाता है, ये जातियाँ इस क्षेत्र का भी शासन करती थीं। जनगणना के फलस्वरूप इनके अस्तित्व की और पुष्टि हुई है। इसी में तक्षकों का उल्लेख हंटर महोदय ने किया है—इसी संबंध में वे कहते हैं:) 'ये सिदियन तक्षक ही वस्तुतः) महान् नागजाति का स्रोत माने जाते हैं—ये तक्षक या नाग संस्कृत-साहित्य में और कला में बहुत प्रमुख स्थान रखते हैं। आज भी इन्हीं के नाम की नाग जाति विद्यमान है। संस्कृत में तक्षक और नाग दोनों का अर्थ साँप होता है अथवा सपुच्छ दानव (Monster)। तक्षकों को सिदियन टक्कों से संबंधित माना जाता है, अतः प्रमाणाभाव में अनुमान से एलखान के दूसरे पुत्र 'नगस' से इन नागों की उत्पत्ति बतायी जाती है, जो संदिग्ध है। ये दोनों नाम संस्कृत के लेखकों के द्वारा विविध अनार्य जातियों के लिए उपयोग में लाये गये हैं। महाभारत में पांडवों ने खांडव वन के तक्षक को जलाया था। तक्षक तथा नाग वृक्षों और साँपों के पूजक थे। इन जातियों के रिवाजों और देवताओं ने भारतीय वस्तु तथा चित्र-कला को बहुत अधिक प्रभावित किया है। चीनी भाषा में प्राचीन भारत की नाग-भूगोल का पूरा विवरण दिया हुआ है। नाग-राज्य बहुत से थे और शक्तिशाली थे। बौद्धधर्म ने अनेक नाग राजाओं को अनुयायी बनाया था। इस नाग-संप्रदाय को च्युत करके बौद्ध धर्म ने बुद्ध के समय में ही नाग-संप्रदाय के अनुयायी नागों को अपने वश में किया, और अपना अनुयायी बनाया। भगवान बुद्ध का नागों से घनिष्ठ संबंध हो गया, और बौद्ध धर्म का जो रूप लोक-क्षेत्र से संबंधित रहा, उस रूप में आगे की ऐतिहासिक गति से बौद्ध सिद्धों में उसने परिणति पायी और तब नाथों से उसका गठबन्धन हुआ।

२७:५:३. नागपूजा का विश्व-व्यापी रूप

यूनान में माइसीनियन समय से क्रिश्चियन समय तक नाग-पूजा होती रही है।

१. एपिइरोस में अपोलो का एक पवित्र कान्तार था। इसमें कुछ सर्प रहते थे, जिन्हें डेलफी के अहि की संतान माना जाता था। इनकी देख-रेख एक पुजारिन करती

थी। केवल वही उस बाड़े में जा सकती थी जिसमें सर्प रहते थे। यह नाग-पूजा का ही अवशेष था, डेलफी से तो इसका संबंध आरोपित कर दिया गया है।

२. क्रोनोस की पहाड़ी पर, ओलिम्पिया के कुंज के सामने एलीथ्यइया का मंदिर था। इसमें सोसिपोली नाम का नाग रहता था। यह राष्ट्र-रक्षक माना जाता था। लोकवार्ता यह है कि ऐलिस पर जब शत्रु ने आक्रमण किया तो एक स्त्री गोद के बच्चे को लेकर दोनों सेनाओं के बीच में बैठ गयी। उसका बच्चा तुरन्त सर्प बन गया। शत्रु उसके भय से भाग खड़े हुए। वह सर्प पास ही बिल में घुस गया। उसी स्थान पर यह मंदिर बनाया गया।

३. हैरोडोटस के एक अवतरण में ऐरेकथीअस के मंदिर में रहने वाले नाग का उल्लेख है। फारसवालों ने जब एथेन्स पर आक्रमण किया था तो ये नाग-देवता लुप्त हो गये थे। इस घटना से नगर निवासियों ने नगर छोड़ने का आदेश ग्रहण किया था। इस नाग-देवता की भी पूजा की जाती थी। इस नाग-देवता में एरिकथीनियोस की आत्मा मानी जाती थी।

४. एरिकथीनियोस भूदेवी का पुत्र था, कुछ के मत से एथेना का पुत्र था। यह सर्प के रूप में पैदा हुआ था। यह भी कहा जाता है कि जन्म पर इसे एक सर्प-युग्म ने पाला-पोसा था।

५. नीलस्सन (Nilsson) नाम के विद्वान ने सिद्ध किया है कि वीर-पाषंडों (Hero-cults) का जन्म मृतक-पूजा से हुआ है—और ये वीर सर्प के रूप में प्रकट होते थे।

६. प्लूतार्क ने बताया है कि प्राचीनों की दृष्टि में वीरों का अन्य जीवों से अधिक सर्प से घनिष्ठ संबध रहा है। गिद्धों से क्लियोमीनीज़ की लाश की रक्षा एक साँप ने की थी जो उसकी लाश पर गुंजलक मार कर बैठ गया था।

७. सलामिस के युद्ध से क्यक्रियस, भाग खड़ा हुआ तो उसे ऐलियूसिस में डिमेटर ने शरण दी। यहाँ वह सर्प के रूप में डिमेटर का परिपार्श्वक रहा। डिमेटर भी माँइनोअन सर्प-देवी है।

८. यूनान में आज भी वे बालक, जिनका बप्तिस्मा नहीं हुआ होता, "ड्रकोई" (Drokoi) कहलाते हैं – जिसका अर्थ है 'साँप'—क्योंकि यह माना जाता है कि ये कभी भी साँप बन कर लुप्त हो सकते हैं। इसमें आलिम्पिया के बालक की घटना की स्मृति आज तक सुरक्षित है। (दे० ऊपर सं० २)

९. प्राचीन मिस्र में भी सर्पों की ऐसी ही मानता थी। सर्पों को मृतात्माओं का अवतार सर्वत्र माना जाता है।

१०. पश्चिमी अफ्रीका में इस्सापू (Issapoo) के नीम्नो कपेल्लो अहि (Cobra-Capello) को अपना संरक्षक देवता मानते हैं। इस साँप का चर्म लेकर वे एक बड़े वृक्ष से लटका देते हैं। उसकी पूंछ नीचे की ओर रहती है। ऐसा वर्ष में एक बार उत्सव के साथ होता है। इस लटकते चर्म के नीचे होकर उस वर्ष में हुए बच्चे निकाले जाते हैं। उनके हाथ पूंछ से लगाये जाते हैं।

११. सेनेगम्बिया में यह विश्वास है कि बच्चा पैदा होने के बाद आठ दिन के अन्दर एक सर्प बच्चे को देखने आता है।

१२. प्राचीन अफ्रीका में एक सर्प-जाति के लोग अपने बच्चों को साँप के सामने रख देते थे, उनका विश्वास था कि उनके अभिजात बालक को साँप हानि नहीं पहुँचायेगा।

१३. ब्रिटिश पूर्वी अफ्रीका के 'आकिकयू' एक नदी के सर्प की पूजा करते हैं। और इनके यहाँ यह प्रथा है कि कुछ वर्षों के अन्तर से वे इस सर्प-देवता का अपनी कुमारियों से विवाह कर देते थे।

१४. तातार देश की एक कविता में एक ऐसी जादूगरनी का उल्लेख है जिसके प्राण उसके जूते के तले में रहने वाले एक सात फनवाले साँप में रहते थे।

१५. मिस्र में सृष्टि-कर्त्ता रे (Re) से पूर्व आदिकाल में चार मेंढकों और चार सर्पों का अस्तित्व माना जाता है। इनसे 'रे' की उद्भावना हुई। 'रे' सूर्य का शत्रु है, यही अपौफिस नामक सर्प माना गया है, जो अंधकार का प्रतीक है। सूर्य को नाव में बैठकर यात्रा करने वाला माना गया है। इसके मार्ग में एक सर्प इस पर आक्रमण करने और निगल जाने के लिए बैठा रहता है। उसे मार कर ही मार्ग प्रशस्त हो सकता है।

१६. बेबीलोनिया में पृथ्वी की प्राकृतिक उत्पादिका शक्ति को सर्प के रूप में पूजा जाता था।

बेबीलोन के गिलगमिश पुराण में उल्लेख है कि जब गिलगेमिश उत्तरपश्चिम से विदाई की भेंट में अमरौती का पादप लेकर लौट रहा था, तो मार्ग में एक तालाब के पास स्नान करने लग गया। उस अमरौती को उसने किनारे पर छोड़ दिया। इसी बीच में यह साँप आकर उस अमरौती को खा गया, तभी से साँप अमर हो गया।

१७. अत्यन्त प्राचीन काल की मृतक पुरुषों को समाधियों से जो कुछ शिल्प के अवशेष मिले हैं, उन में सर्प को मनुष्य का ही दूसरा रूप माना गया है। मनुष्य का एक रूप तो मानवी रहा, दूसरा सर्प का। इस पर जेन हैरिसन ने भली प्रकार विचार किया है।

२७:५:४ वैदिक सर्प तथा सर्प और आर्य

वेदों में वृत्र का उल्लेख है। वृत्र अहि है। यह वृत्र शब्द ऋग्वेद में कई स्थलों पर बहुवचन में आया है; जैसे, ऋ० ६-२९-६; ६-३३-३; ७-१९-४; ७-८३-९; ९-८८-४; १०-८३-७। यहाँ पर वृत्र शब्द के दो अर्थ हो सकते हैं। १. बादल-समूह। २. वृत्र नाम की जाति के लोग। इन वृत्रों का उल्लेख कहीं दस्युप्रमुखों के साथ हुआ है, कहीं दासों और अन्य आर्यों के साथ हुआ है। दस्युओं के साथ कहीं-कहीं इन वृत्रों को अहि भी कहा गया है। इन प्रमाणों के आधार पर डा० अबिनाश चन्द्र दास एम० ए०, पी-एच० डी० इन्हें सर्पपूजक जाति मानते हैं।

ऋग्वेद में अर्बुद काद्रवेय सर्प का उल्लेख है। पंचविंश ब्राह्मण में एक सर्पोत्सव का उल्लेख है, उसमें एक अर्बुद ऋषि ग्रावस्तुत पुरोहित थे। इन अर्बुद काद्रवेय को

ऐतरेय ब्रा० (६-१) तथा कौशीतकी ब्राह्मण (२९-१) में मंत्र-दृष्टा माना गया है।

ऋग्वेद और तद्विषयक ब्राह्मणों के अध्ययन से विदित होता है कि ऋग्वेद काल में दो वर्ग थे—एक वृत्र के अनुयायियों का। ये सर्पपूजक थे। वृत्र को ये 'देव' कहते थे। दूसरे इन्द्र के अनुयायियों का। इन दोनों में संघर्ष था। वृत्र जाति पूर्व पक्ष में थी, इन्द्रानुयायी उत्तर पक्ष में। इन्द्र ने वृत्र का संहार किया। वैदिक काल में वृत्र, सर्प और अहि संभवतः एक ही जाति के नाम थे, यही महाभारत काल में 'नाग' कहलाये। गरुड़ भी एक जाति थी। गरुड़ और सर्पों में परस्पर युद्ध छिड़ा रहता था। महाभारत में उल्लेख है कि गरुड़ ने नाग या सर्प जाति को खदेड़ कर एक अत्यन्त ही सुन्दर द्वीप में पहुँचा दिया था, और ये सर्प वहीं बस गये थे।

ऋग्वेद में सर्पराज्ञी नाम की सर्पजाति की ऋषिमहिला का उल्लेख है। इसने सूर्य पर पूरा सूक्त (ऋ० १०,१८९) ही रचा था। शतपथ ब्राह्मण में पृथ्वी को ही सर्पराज्ञी बताया है। यही ऐतरेय ब्राह्मण ने बताया है।

महाभारत से विदित होता है कि यायावर जाति के ऋषि जरत्कारु ने वासुकि नाग की बहिन से विवाह किया था। इनका पुत्र आस्तीक था।

पणिस अथवा वणिक जाति के लोग भी वृत्र पूजक और वृत्रानुयायी थे। इन्हें भी आर्यों ने खदेड़ दिया था[1]।

हरिवंश में उल्लेख है कि ऋषि वशिष्ठ के परामर्श से राजा सगर ने शक, यवन, काम्बोज, परद, पल्लव, कोली, सर्प, महिषक, दर्व, चोल, कोल, आदि जातियों से वेदाध्ययन का अधिकार छीन कर देश से वहिष्कृत कर दिया था।

इन सब प्रमाणों से विदित होता है कि वैदिक काल में सर्प-पूजा प्रचलित थी। सर्प-पूजकों से आर्य घृणा करते थे। आर्यों और सर्पों में ब्राह्मण-काल में संधि हो गयी। सर्प-जाति के लोगों ने भी वेदों की ऋचाओं के निर्माण में भाग लिया। किन्तु ऐसा विदित होता है कि संधि अधिक नहीं ठहर सकी। आर्य लोगों की सर्पों के प्रति घृणा अन्तर्निष्ठ थी। संभवतः सोमरस के लिए ही इन्हें सर्पों से संधि करनी पड़ी। यह बात ध्यान देने की है अर्बुद काद्रवेय सर्प के मंत्र 'सोम' संबंधी हैं। सर्पराज्ञी के सूक्त 'सूर्य' विषयक हैं। क्योंकि सोम को सर्पों द्वारा रक्षित कहा गया है। बाद में आर्थिक कारणों से इसी सोम के लिए सर्पों का गरुणों से संघर्ष हुआ। आर्यों ने गरुड़ों का साथ दिया। सर्प खदेड़ दिये गये। गरुण ने सोम पर अधिकार किया। ये सर्प नाग जाति से मिल गये। इन सर्प-नागों से आर्यों का भयंकर युद्ध नित्य होता रहा। जैसे नागयज्ञ का जन्मेजय ने आयोजन किया था, वैसे कई यज्ञ भारतीय इतिहास में हुए हैं।

यहाँ पर यह सिद्ध करने के लिए कि इतिहास की पुनरावृत्ति होती है—ऋग्वेद से एक मंत्र का भाव दिया जाता है—यह मंत्र ऋ० ७-२१ का ३-७ है। इस मंत्र के एक

---

१. यही कारण है कि वणिक जाति में आज भी गुरु गुग्गा या जाहरपीर की विशेष मान्यता है। दे० 'अग्रवाल जाति का इतिहास' विद्यालंकार।

अंश का भाव यह है—

"तूने अपनी शक्ति से वृत्र का संहार किया है। युद्ध में कोई शत्रु तेरा घात नहीं कर सका। पहले देवता तेरी दिव्य शक्ति के सामने झुक गये हैं; उनकी शक्ति तेरी दिव्य शक्ति से हार गयी है; उनकी शक्तियाँ तेरे महत्तम बल के सामने धूल चाटने लगी हैं।" आदि।

इससे विदित होता है कि वैदिक काल में इन्द्र ने वृत्र अथवा सर्प जाति को परास्त किया, सर्प जाति के लोगों ने इन्द्र के समक्ष हार मानी। सर्प के शक्ति-केन्द्रों में इन्द्र के शक्ति-केन्द्र स्थापित हुए।

वैदिक इतिहास का यह पूर्व युग हुआ। बाद में कृष्ण ने इन्द्र को इसी प्रकार परास्त किया जिस प्रकार इन्द्र ने सर्प-जाति को किया था। यों कृष्ण ने नाग-जाति को भी ब्रज से निष्कासित कर दिया था।

किन्तु सर्पया-नाग-जाति समाप्त नहीं हो सकी। जन्मेजय के भयंकर नाग-यज्ञ के उपरांत भी यहाँ नागों और सर्पों की बहुलता रही। नागों और सर्पों को सम्पूर्ण विनाश से आस्तीक ने बचाया।

और इतिहास का एक और पृष्ठ कहता है कि भगवान बुद्ध के समय में नाग फिर उतने ही प्रबल हो गये थे, क्योंकि लोक-स्तर पर भगवान बुद्ध ने नागों को उसी प्रकार परास्त किया है, अपनी शक्ति के तेज से जैसे इन्द्र ने वृत्र को किया था। और बुद्ध ने समस्त नाग-केन्द्रों पर अधिकार स्थापित कर लिया। यों परास्त होकर नाग बुद्ध के अनुयायी हो गये। नागों और बौद्धों का घनिष्ठ संबंध हो गया।

और ये नाग गुरू गुग्गा के समय तक भी किन्हीं-किन्हीं क्षेत्रों में अपना अस्तित्व बनाये रहे। लोकवार्त्ता में नाग-पूजा गुरु गुग्गा अथवा जाहरपीर के साथ ही जीवित नहीं, वह स्वतंत्र रूप से जीवित है और फल-फूल रही है। ब्रज में 'नागपंचमी' सर्वत्र मनायी जाती है। पूर्व में मनसा-पूजा इसी नाग अथवा सर्प पूजा का ही एक रूप है। गुरु गुग्गा अथवा जाहरपीर का संबंध भी नाग पूजा से है।

डा० अविनाशचन्द्रदास ने यह सिद्ध किया है कि सर्प या नाग सप्तसिंधु की घुमन्तू आर्य जाति ही थी। डा० अविनाश ने कहीं-कहीं इन्हें जंगली जाति माना है जो सोम बेचने पहाड़ों से आती थीं, जिसे इन्द्रानुयायियों ने गरुड़ों की सहायता से निकाल बाहर किया था। उन्होंने इनको अवैदिक आर्य बताया है। प्रमाण में ये तर्क हैं:—

१. कई सर्प जाति के ऋषि मंत्र दृष्टा हैं। अर्बुद काद्रवेय, सर्पराज्ञी, जरत्कारु आदि।

२. हरिवंश में सर्प जाति को क्षत्रिय माना गया है (हरिवंश अध्याय २)।

जहाँ तक पहले प्रमाण का संबंध है, यह ऊपर स्पष्ट किया जा चुका है कि वह यहाँ की सोमाधिकारी जाति से समझौते का परिणाम था। यह बात भी दृष्टव्य है कि अर्बुद ऋषि को सर्पयज्ञ का ही पुरोहित बनाया गया है। उन्होंने 'सोम' पर ही सूक्त रचना की। इससे केवल यही सिद्ध होता है कि वैदिक आर्यों ने सर्पों का सम्मान किया,

हरिवंश का प्रमाण बहुत शिथिल है। उसमें जिनको क्षत्रिय गिनाया गया है, वे सभी नृविज्ञान से आर्य नहीं हो सकते।

हमने आरंभ में बताया है कि नाग या सर्प 'टाटेम' या 'तत्वम' होना चाहिये। वैदिक आर्य तत्वमीय नहीं थे; अत: जो विद्वान सर्पों को आर्य जाति का मानते हैं; वे 'सर्प' को तत्वमीय नहीं मान सकते।

डा० आर० शाम शास्त्री आर्य नागों में तत्वम के अवशेष मानते हैं। और मैकडानल कश्यप (कछुआ), मत्स्य (मछली), अज (बकरी), शुनक (कुत्ते) कौशिक (उल्लू) आदि जातीय नामों में तत्वम मानते हैं। हापकिन्स तथा ब्लूमफील्ड नहीं मानते।

ब्लूमफील्ड ने लिखा है।

"Totemism is founded on the belief that the human race, or, more frequently, that given clans or families drive their descent from animals: totemic names like 'Bear' and 'Wolf' carry traces of this sort of belief into our time.. ......
but I have never been able to discover that it has any considerable bearing upon the ancient religion of India. The many hints at its possible inportance should be substantiated by a larger and clearer body of facts than seems at present available"

(as quoted by Dr. Abinas Chandra Das in Reguedic Culture P. 103.)

ऐसे ही कुछ तर्कों से विद्वानों ने यह सिद्ध करने की चेष्टा की थी कि यूनान में 'तत्वम' का अस्तित्व कभी नहीं था। किन्तु टामसन ने अपनी हाल की एक पुस्तक में 'सर्प', को ही मुख्य आधार बनाकर यह दिखाया है कि वहाँ 'तत्वम' का तत्व था। वह तर्क भारत के इतिहास पर भी लागू होता है। 'सर्प' की जैसी मान्यता और सर्प जाति का साँपों से संबंध, सर्प-पूजा की स्थिति, ये सभी बातें निर्विवाद सिद्ध करती हैं कि 'सर्प जाति और सर्प' का परस्पर 'तात्वमीय' (totemic) संबंध था। अतः डा० अबिनासचन्द्रदास की भी मान्यता इन्हीं के तर्कों से ठीक नहीं ठहरती। सर्प जाति को सर्प के स्वभाव की तुलना से नाम दिया गया होता तो वह जाति सर्प-पूजक न होती। सर्प-पूजा तत्वमीय स्थिति का एक प्रमाण है।

यह सर्प पूजक नाग जाति पंजाब में किसी न किसी रूप में अपना अस्तित्व बनाये हुए थी, यह गोल्डनबाउ में फ्रेजर महोदय ने बताया है। राजस्थान में इस जाति का अस्तित्व भी होना चाहिये, और पश्चिमी उत्तर प्रदेश तथा बंगाल-आसाम में इसके पर्याप्त प्रमाण हैं।

२७:५:६ ब्रज की पूजा में नाग या सर्प का रूप—१

ब्रज में नागपूजा के अनेकों स्थल हैं। स्वभावतः यह विचार उत्पन्न होता है कि यह 'नागपूजा' भय की चिकित्सा के लिए प्रचलित की गयी होगी। किन्तु ब्रज की नागपूजा की कहानियों में सर्प या नाग को जिस रूप में चित्रित किया है, वह भय-त्रस्त मनोवृत्ति का परिणाम नहीं माना जा सकता है।

२७:५:६:१

नागपंचमी की ऊपर दी गयी कहानियों में हमें सर्प दयार्द्र प्राणी के रूप म मिलता है। वह भ्रातृहीना बहिन का भाई बन जाता है और फिर आजीवन भाई बना रहता है।

२७:५:६:२ नाग-भाई

भैयापाँचें तथा नागपंचमी की इन कहानियों में नाग के भाई बनने की भावना की दो प्रकार से व्याख्या की जा सकती है। एक तो यह कि इसमें किसी ऐतिहासिक घटना का अवशेष हो। महाभारत तथा पुराण में इस बात का संकेत है कि नाग-कन्या से किसी क्षत्रिय का या ऋषि का विवाह हुआ था[1]। तब से नाग-जाति का संबंध विरोधपूर्ण नहीं रहा। दूसरी संभावना तांत्रिक कीलन से संबंधित हो सकता है। सहानुभूतिक टोने (Sympathetic Magic) में मन की भावना का तांत्रिक प्रभाव मंत्र की भाँति ही पड़ता है। 'स्त्रियाँ सर्प को मानसिक दृष्टि से कथा-रूप में भाई स्वीकार कर लेती हैं, जिससे सर्प में भी टोने से वही भाव जागृत हो सके।

२७:५:६:३ नाग-चित्र

नागपंचमी पर नागों के चित्र भी इसी अभिप्राय से बनाये जाते हैं। भविष्य पुराण में नाग की चाँदी-सोने की मूर्तियाँ बनाकर ब्राह्मणां को दान करने का भी विधान है। नाग-पूजा में नाग-मूर्ति या नाग-तावीज बनाने का विधान मिस्र में भी था। यह रिवाज ईसवी पूर्व २-४ हजार वर्ष पूर्व उनमें प्रचलित था।

२७:५:६:४ मिस्र में नाग-पूजा

डोनाल्ड-ए-मेकेन्जी ने लिखा है कि नाग गृहस्थी के रक्षकों के रूप में पूजे जाते थे। उनकी प्रतिकृतियां (immitation) 'अच्छे भाग्य' अथवा रक्षा के लिए टाँगी जाती थीं, जैसे हमारे देश में घोड़े की नालें आज तक टाँगी जाती हैं। 'साँप का ताबीज' भी रक्षा-यंत्र माना जाता था[1]। पर मिस्र में नाग या सर्प को घातक शत्रु के रूप में भी माना गया है। यह माना गया है कि अपेप नाम का भयंकर नाग सूर्य को ग्रसता है। उसके ग्रसने से ही सूर्य-ग्रहण पड़ता है। उसमें सूर्य बड़े संकट में होता है। उससे मुक्ति दिलाने के लिए सर्प की मोम की प्रतिकृतियाँ बनाकर आग में डाली जाती थीं। मोम के सर्प को आग में पिघलता देखकर सहानुभूतिक टोने से वे यह समझते थे कि अब सूर्य को ग्रसने वाले अपेप सर्प का बल क्षीण हो रहा है। वह मर रहा है[2]।

---

१. ब्रज में कई जातियों में यह विश्वास है कि सर्प या नाग उनके 'मामा' लगते हैं, जिसका अर्थ है कि सर्प या नाग की बहिन इनके किसी पूर्वज को व्याही थी।

१. देखिये—'ईजिप्शियन मिथ एण्ड लीजेण्ड' लेखक—डोनाल्ड, ए० मैकेंजी, पृष्ठ ६४।

२. वही, पृष्ठ १६।

२७:५:६:५ सर्प का रूप—२

एक और प्रकार से भी सर्प इन कहानियों में आया है; वह भी उसकी दया का ही रूप है। एक लोक-कहानी है कि एक निःसंतान दुखिया रानी थी, उसने घरवालों के अत्याचार से बचने के लिए यह प्रसिद्ध करा दिया कि उसके लड़का हुआ है। पर लड़के को उसने किसी को दिखाया नहीं। विवाह के योग्य जब वह लड़का माना गया तो उसकी बरात भी चली, रानी भी बंद पालकी में चली। एक तालाब के किनारे बारात रुकी। वहाँ वह स्त्री बहुत दुखी होकर रोने लगी। तालाब में रहने वाले सर्प को दया आयी और वह उसी उम्र का सुंदर राजकुमार बनकर पालकी में आया, और उस स्त्री को सब बात समझा कर उसका पुत्र बन गया। इस प्रकार यहाँ भी सर्प ने एक दुःखी स्त्री का दुःख ही नहीं दूर किया, उसकी प्रतिष्ठा भी रखली। पर यह कहानी यहाँ से आगे भी बढ़ती है। और वह आगे वाली कहानी ही दूबरी सातें की कहानी के रूप में हमें प्राप्त हुई है।

२७:५:६:६ सिन्धु सभ्यता में नाग देवता

मोहनजोदड़ो तथा हड़प्पा आदि की खुदाई से प्राप्त सामग्री से विदित होता है कि सिन्धु सभ्यता में भी सर्प पूजा होती थी।

२८. दूबरी सातें

यह भी श्रावण शुक्ल सप्तमी को पड़ती है। यह वस्तुतः 'दूर्बा सप्तमी' होनी चाहिये, जो 'दूर्बा' से दूबरी हो गयी है। इस पर और क्या अनुष्ठान होता है इसका विशेष पता नहीं चला। पर इस दिन जो कहानी कही-सुनी जाती है, वह लोहबन से प्राप्त हुई है।

२८:१

जैसा ऊपर बताया जा चुका है, यह कहानी भी सर्प-पूजा से संबंध रखती है। यह सर्प कहानी ही है। पर इस कहानी में उसका आरंभ का अंश नहीं, क्यों कि हमें कहानी के कहने वाला बताता है कि वह लड़का सर्प था। कैसे सर्प था, क्यों उसने पुरुष-रूप धारण किया था इसका कुछ पता नहीं बताया। इसी प्रकार दूती का आना भी रहस्यमय है। वह क्यों आती है, और क्यों वैसी बातें वह उसकी स्त्री से करती है, इसका पता नहीं लगता। स्पष्ट है कि कहानी बीच से आरंभ हुई है। इस कहानी का वास्तविक आरंभ वह है, जो हम २७:५:६:५ में दे चुके हैं। उसके स्थान पर इस कहानीकार ने एक अन्य आरंभ की कल्पना करली है।

२८:१:१

२७:५:६:५ में जिस आरंभ की कल्पना है, उससे यह तो विदित हो जाता है, वह कुमार सर्प था। वह सर्प कुमार के रूप में क्यों आया यह भी मालूम हो जाता है। पर वह 'दूती' फिर भी रहस्यावृत रहती है। इसके लिए इस कहानी में एक और 'कथांश' जोड़ना होगा। वह 'कथांश' भी इसमें नहीं दिया गया। कुमारा रूपी सर्प या नाग

पहले से विवाहित था। उसकी नागिन तालाब में ही थी। अपने पति के इस प्रकार चले जाने से वह बहुत दुखी हुई। उसे अंत में पता चल गया। उसके सामने प्रश्न यह था कि वह उसे पुन: किस प्रकार प्राप्त करे। इसके लिए ही वह दूती बन कर पहुँची, रानी से मित्रता बढ़ायी और अंत में उसे जाति पूछने के लिए विवश किया।

२८:१:२

अब यहाँ यह 'दूबरी सातें' की कहानी दी जाती है:—

(सामन सुदी ७)

(१)

दूबरी सातें के दिनां सबु बैयरबार्नी जुरिमिलिकें दूब लैबे जाग्रौ करतीं। माँ जाइकें सबु 'घरुआपाती' बनामतीं। और तौ सबु आमती पोत ब्वाइ बिगारि आमतीं परि एक गरीब की छोरी अपने घरुआपाती ऐं बन्यौ बन्यायौई छोड़ि आमती।

एक दिनां बु तौ अपनी घरुआपाती ऐं छोड़ि कें गई कै इतने में एक राजा कौ कुमर ग्वां सिकार खेल्तु-खेल्तु आइ निकरयौ। बु पहले जनम कौ स्यांपु ओ। ब्वानें कही कि मैं जा घरुआ बनामन हारी ते ई ब्याहु करूँगो।

घर जाइकें राजा कौ कुमरु खटपाटी लैकें परि रह्यौ। राजा नें पूछी: 'कहा बात ऐ बेटा।' ब्वानें सबरी बात बताइ दई। और कही कि ब्याहु करूँगो तौ करूँगो ब्वा घरुआवारी ते ई, नईं तौ अन्नु-जल ही ग्रहन न करूँगो। राजा नें नाहीं-नूंकर करी परि बु कहूँ मान्तु ऐं।

राजा नें बु छोरी बुलवाई और ब्वाके माई-बापै बहुत धनु दैकें ब्वाकौ ब्याहु अपने छोरा के संग करि दीयौ। जि छोरी पहले जनम की स्यांपिन ई।

(२)

एक दिनां एक दूती आई। बु काजरु और बेंदी बेच्यौ करति ई। दूती नें कही: 'तेरौ खसमु तो पै प्यारु नाऐं कर्तु।' ब्वानें कही। मेरौ खसमु तौ-मौपै सबते जादा प्यारु कर्तु ऐ। दूती नें कही कि जब तौ हम जानें जब आजु तुम दोऊ मर्द-बय्यर एक थारी में भोजन करि लेउ। रानी नें कही कि अच्छी बात ऐ।

दूसरे दिनां रानी खटपाटी लैकें परि रही। राजकुमर नें आइकें पूछी कि कहा बात ऐ। ब्वानें कही कि आजु तुमें मेरी थारी में बैठिकें भोजन करनों परैगो। ब्वानें कही जामें कहा बातै, ला थारी परोसि कें ले आ। अब ब्वानें एक थारी में खीरि परोसि लई। बे दोऊ खाइबे कूं बैठे। रानी बूरौ लैबे गई। राजकुमर नें थारी में एक लकीर खेंचि लई, न्यारी-न्यारी खीरि दोऊन नें खाइ लई।

दूती फिरि आई और ब्वानें रानी ते कही कि तोहे धोकौ हैगो। अबकें तू उनके मुंह में दैंथ्यौ भयौ पानु मांगियो।

(३)

जब ब्वानें दूसरे दिनाँ अपने खसम ते कही कैं मोइ अपने मुँह को चब्यौ पानु देउ। राजा नें कही कि ला मोइ पानु दै में रौंथि कैं तोइ दुंगगौ। जबु बु इल्याची लैबे गई, सोई राजा ने अपनी हतेरी ते पानु रौंथि कें दै दियौ। दूती नें फिर आइकें कही कै तोते छलु हैगौ।

अबकें दूती आई और ब्वानें कही कि तू ब्वाते ब्वाकी जाति पूछियो। सोई ब्वानें दूसरे दिनाँ जाति पूछी। राजा ने कही कै तोइ ञ्याँ परतीति न आवैगी। चलि गंगाजी में ठाड़ौ हैकें बतांगो।

गंगाजी में जाइकें बु नारि-नारि तक पानी में घुसि गौ। ब्वानें म्वाँई ते अपनौ फनु दिखाइ दीयौ। और डूबि गौ। अब तौ बु रोइबे लगी। म्वाँ एक डोकरी आई। ब्वानें कही। 'दूध की नाँद भरवैयो। आजुई के दिनां बूढ़ौ स्यांपु आवैगौ। म्वांई तू घरआपाती बनाइ राखियो। ब्वापै ते सुहागु माँगियो। बुही तोइ देगौ।

(४)

'घरआपाती' बनाई। दूध की नाँद भरी। बूढ़ौ स्यांपु आयौ। ब्वानें ब्वाइ सुहागु दियौ।

२८:२ दूबरी सातें का सर्प से क्या संबंध है यह कुछ स्पष्ट विदित नहीं हो रहा। कहानी में जिस प्रकार की मंगल भावना का समावेश है, वह 'सौभाग्य-प्राप्ति' विषय है। सर्प मृत को जिला सकते हैं, क्योंकि उन्हीं के पास अमृत माना गया है। महाभारत में भीम पाताल में पहुँचे, और वहाँ उन्हें पीने को अमृत दिया गया था। सर्पराज या नागराज वैसे भी वरदान देने में समर्थ हैं। अतः उसी भाव से श्रावण में सर्पों की प्रधानता के कारण उनसे आशीर्वाद रूप सौभाग्य भी माँगा गया है।

२८:२:१ भविष्य पुराण के उल्लेख से विदित होता है कि सप्तमी तिथि 'सूर्यनारायण' को प्रिय है। उल्लेख है कि "सप्तमी के दिन सूर्य भगवान् ने जन्म लिया है[1]"—सप्तमी के ही दिन दिव्यरूप और भार्या सूर्य भगवान ने पाये इससे सप्तमी तिथि उनकी अति प्रिया भई।[2]

२८:२:२ यों तो सूर्य का और सर्प का कोई संबंध प्रतीत नहीं होता। 'सूर्य वार्त्ता' पर एक विद्वान ने एक पुस्तक लिखी है[3]। उसमें उन्होंने सूर्य के अनेकों प्रतीकों का उल्लेख किया है। उसमें कहीं भी सर्प का नाम नहीं आया। भेकी अथवा मेढ़क को सूर्य का प्रतीक माना गया है। इसके लिए एक व्याख्या यह दी गयी है कि भेकी जल

१. भविष्य पुराण भाषा, पृष्ठ १३२।
२. वही , पृष्ठ १३५।
३. Sunlore of All Ages.

में रहता है, इस की क्रिया-साम्यता में है, सूर्य भी रात होने पर समुद्र में प्रवेश कर जाता है। यह प्रचलित लोक विश्वास है। यदि इस व्याख्या को कुछ भी महत्व दिया जाय तो सर्प या नाग भी लोक-विश्वास में सूर्य का प्रतीक हो सकते हैं, क्योंकि सर्प को भी लोक विश्वास में जल से संबंधित माना गया है।

२८:२:३ मिस्र में एक द्वैध मिलता है। वहाँ एक ही व्यक्तित्व को सूर्य भी माना गया है और सर्प भी।

२८:२:४ 'दूबरी' नाम भी कुछ अड़चन प्रस्तुत करता है। हमने विपर्यय से इसे 'दूर्वा' से व्युत्पन्न माना है। दूर्वा घास होती है। भविष्य-पुराण में एक दूर्वाष्टमी का विधान है। इस पुराण के अनुसार यह भाद्र शुक्ल अष्टमी को होता है। दूर्वा को इस पुराण ने भगवान के रोमों से उत्पन्न बताया है। "जब देवताओं ने क्षीरसागर मथन किया उस समय विष्णुभगवान ने अपनी पीठ पर मंदराचल को धारण किया उसकी रगड़ से भगवान के जो रोम उखड़ कर जल में गिरे उनसे दूर्वा उत्पन्न भई। उस दूर्वा पर देवताओं ने अमृत के कुम्भ रखे उनसे जो अमृत बिन्दु गिरे उनके स्पर्श से यह अजर अमर भई।"[1]

इसका माहात्म्य बताते हुए कहा गया है कि—

"जो नारी श्रद्धा से इस व्रत को करे वह पुत्र पौत्र सौभाग्य धन आदि सब पदार्थ पाय बहुतक संसार सुख भोग अन्त में अपने पति सहित स्वर्ग को जाती है और प्रलय पर्यंत वहाँ ही निवास करती है।"[2]

दूर्वा का धार्मिक अनुष्ठानों में बहुत महत्व है, इसमें कोई सन्देह नहीं। श्री गुप्ते महोदय ने बताया है कि दूर्वा गणेश जी को प्रिय है। उन्होंने 'चातुर्मास माहात्म्य' के उल्लेख से यह भी लिखा है कि यह घास 'राहु' का रूपान्तरण है। यह भाद्रपद की अष्टमी को पूजी जाती है। इसे उर्वरा शक्ति की देवी माना गया है।[3]

२८:२:५ दूब की सर्पाकार आकृति ने भी इसका संबंध सर्प से कर दिया होगा।

२८:२:६ किन्तु एक और प्रकार से सूर्य और सर्प तथा दूर्वा का संबंध कुछ-कुछ बैठता है। भारत की पुराण-कथा में भगवान विष्णु को शेषशायी माना गया। यह शेष शय्या क्षीर सागर में है। इसमें—

शेष	=	सर्प
विष्णु	=	सूर्य

---

१. भविष्य पुराण, पृष्ठ ४३६ ब्रज की एक लोककहानी में कहा गया है कौआ अमरौती ले आया था, उसने जिस घास पर रखकर अमरौती खाई थी, वही घास दूर्वा है।

२. वही　　वही।

३. दी हिन्दू होली डेज एण्ड सेरीमोनियल्स, इन्ट्रोडक्शन पृष्ठ ३३।

क्षीरसागर में होने से सर्प-सूर्य का जल से भी संबंध बैठता ही है। अब समुद्र मंथन के के समय अथवा अमृत के आविर्भाव के समय ये तीनों ही विद्यमान थे। वह अमृतघट दूर्बा पर रखा गया। इस प्रकार दूर्बा के साथ अमृत के द्वारा शेष-विष्णु अर्थात सर्प-सूर्य का भी संबंध हुआ।

२८:२:७. कुछ भी हो एक बात यह तो अत्यन्त स्पष्ट है कि दूर्बा को धार्मिक दृष्टि से आनुष्ठानिक महत्व प्राप्त है। प्रत्येक बड़े अनुष्ठान में इसकी आवश्यकता किसी न किसी रूप में पड़ ही सकती है। अनुष्ठानों में काम आने वाले पदार्थ भी स्वयं पूजनीय हो जाते हैं। दूर्बा की पूजा में यह भाव भी है। इसे अजर-अमर भी माना गया है। उसे इसी अमरता की कामना के लिए भी पूजा जा सकता है।

२९. **सती पूजा**

जिसे दूबरी सातें कहा गया है, वही 'सती पूजा' का भी त्यौहार है। श्रावण शुक्ला सप्तमी को ही सती देवी तथा दुर्गा की पूजा भी की जाती है।

३०. **हरियाली मावस और हरियाली तीज**

स्त्रियों के त्यौहार हैं, इनमें कोई विशेष व्रत या अनुष्ठान संभवतः नहीं होता। इनके संबंध में हमें कोई विशेष विवरण उपलब्ध नहीं हुआ। जो कुछ विवरण मिला है, वह पृ० १८ पर पहले दिया जा चुका है, हरियाली मावस का संबंध स्पष्टतः कृषि-अनुष्ठान से है। पर नाग-पूजा इसमें भी होती है। भीत पर हल्दी के नाग रखे जाते हैं, और उन्हें पूजा जाता है। वस्तुतः ये दोनों ही त्यौहार श्रावण में बहिन-बेटियों के उत्साह-उमंग के है।

३१. **घूंघा चतुर्दशी**

घूंघा, भुजरिया, एक ही चीज हैं। श्रावण शुक्ल चतुर्दशी से पूर्व संभवतः नागपंचमी के दिन कुछ पात्रों में जौ बोये जाते हैं। वे चतुर्दशी तक उग आते हैं। जौ के ये पादप ही घूंघा या भुजरियाँ कहे जाते हैं। चतुर्दशी को इन्हें झूले पर झुलाया जाता है। दूसरे दिन रक्षाबंधन अथवा सलूने के दिन इन्हें-सेंमई-चावल से पूज कर रक्षा बंधन करके, राखी बाँध कर इन्हें सिराया जाता है। सिराने के लिए नदी या तालाब पर जाते हैं। ऐसे स्थानों पर बड़े मेले लग जाते हैं। इन घूघों को स्त्रियाँ अपने पिता-भाई-भतीजों के कान में पहनाती हैं। इसके उपलक्ष्य में उन्हें भाई-भतीजे यथासामर्थ्य भेंट या दक्षिणा देते हैं।

३१. प॰ सर्पों की उत्पत्ति व शरीर दाढ़ और अवस्था तथा काटने के कारण व काटे हुये दंश के लक्षण। (भविष्यपुराण भाषा से इकत्तीसवां अध्याय।)

राजा शतानीक पूछते हैं कि हे सुमन्तु मुनि सर्प्पों के कितने रूप हैं, क्या लक्षण, हैं के रंग हैं और क्या जाति है। यह आप वर्णन करें, यह सुन सुमन्तु मुनि बोले कि हे राजा हिमालय पर्वत में कश्यप औ गोतम का सम्बाद जो भयाथा वह हम वर्णन करते। हैं एक समय कश्यप मुनि अग्निहोत्रकर स्वस्थ चित्त हो हिमालय पर्वत में अपने आश्रम के बीच बैठे थे उस समय

गौतम ने प्रणाम कर विनय से पूछा कि महाराज सर्पों के लक्षण जाति वर्ण औ स्वभाव आप वर्णन करें औ सर्प्प किस प्रकार उत्पन्न होता है, विष कैसे छोड़ता है, विष के वेग कितने हैं, बिष नाड़ी कितनी हैं, सर्प की दंष्ट्रा कै प्रकार की हैं, सर्प्पिणी को गर्भ कब होता है औ प्रसव कितने दिन के अनन्तर होता है? स्त्री पुरुष नपुंसक सर्पका क्या लक्षण है औ ये क्योंकर काटते हैं यह सब भेद आप कृपाकर मुझे बतावैं, यह गौतम का वचन सुन कश्यप ने कहा कि चित्त लगाय श्रवण करो। हम सर्पों का सब भेद कहते, हैं ज्येष्ठ औ आषाढ़ में नागों को मद होता है तबही मैथुन करते हैं औ वर्षाऋतु के चार महीने सर्प्पिणी गर्भ धारती है औ कार्त्तिक में दोसौचालीस अण्डे देती है औ उनको नित्य आपही खाने लगती है अन्त में दया से थोड़े से छोड़ती है। उनमें से जो अण्डे सुवर्ण की भाँति चमकते हों उनमें पुरुष, ककोड़ा के फल के तुल्य हरे औ लम्बी रेखाओं करके युक्त अण्डों में स्त्री और शिरीष पुष्प के समान रंगवाले अण्डों के बीच नपुसक सर्प होते हैं उन अण्डों को सर्प्पिणी छः महीने तक सेती है पीछे अण्डे फूटकर उनसे सर्प निकलते हैं औ वे बच्चे अपनी माता से स्नेह करते, हैं अण्डे के बाहर निकलने से सात दिन में उन बच्चों का कृष्ण वर्ण हो जाता है सर्प्प का आयुष् एकसौबीस वर्ष का है औ मृत्यु आठ प्रकार का है, मयूर से, मनुष्य से, चकोरपक्षी से, बिल्ली से, नकुल से, शूकर से, वृश्चिक से, औ गौआदि पशु के खुर से। इनसे बचै तो एकसौबीस वर्ष जीवै। सात दिन के अनन्तर दंष्ट्रा ऊगती हैं और इक्कीस दिन में विष हो जाता है। परन्तु सर्प्पदंश करने के समय बिषत्याग देता है फिर और विष इकट्ठा हो जाता है सर्प्पिणी के साथ जो फिरे वह बाल सर्प होता है। पच्चीस दिन में वह बच्चा प्राण हरने में समर्थ हो जाता है। छः महीने में कंचुक त्यागता है। दोसौबीस पैर सर्प्प के होते हैं परन्तु गौकेरोम के तुल्य अति सूक्ष्म होते हैं, इसी से देख नहीं पड़ते। चलने के समय निकल आते हैं नहीं तो भीतर प्रविष्ट रहते हैं। इनके शरीर में दोसौ बीस पसली औ दोसौबीस ही सन्धि होती हैं। अकाल में अर्त्थात् अपने समय बिना जो सर्प उत्पन्न होते हैं उन में बिषन्यून होता है औ सत्तर वर्ष से अधिक जीते भी नहीं। जिन के दांत लाल पीले नीले हों औ विषका वेग भी मन्द हो वे अल्पायुष् होते हैं औ बहुतभीरु अर्थात् डरपोकने होते हैं। सर्प्पों के एक मुख दो जीभ बत्तीस दाँत औ विष से भरी हुई चारदाढ़ होती हैं उनके नाम मकरी कराली कालरात्रि औ यमदूती ये हैं औ क्रम से ब्रह्मा बिष्णु रुद्र औ यम इन चारों के देवता हैं। यमदूती नाम दाढ़ सबसे छोटी है इससे जिस को सर्प काटे वह तत्क्षण मरजाय मंत्र यंत्र औषधी आदि इस पर कुछ भी नहीं चलता। मकरीदाढ़ का चिन्ह शस्त्रकासा होता है। कराली काक पद के तुल्य, कालरात्रि टकार अक्षर के सदृश औ यमदूती के कूप के समान होती है। ये चारों क्रम से एक दो तीन औ चार महीने में उत्पन्न होती हैं औ क्रम से बात पित्त कफ औ सन्निपात इनमें होता है। गुड़ युक्त भात कषायरस युक्त अम्लकटु पदार्थ औ सन्निपात में हित वस्तु क्रम से इनके भोजन हैं। श्वेतरक्तपीत और कृष्ण इन चारदाढ़ों के रंग हैं औ क्रम से ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य औ शूद्र ये चार इनके वर्ण हैं सर्प्पों की दाढ़ों में सदा बिष नहीं रहता, बिष के रहने का स्थान सर्प्प के दाहिने नेत्र के समीप है। सर्प्प जब क्रोध करता है तब बिष नाड़ियों के द्वारा दाढ़ में पहुंच जाता। है आठ कारणों से सर्प्प काटता है, दबने से, पूर्व्व बैर से, भय से, मद से क्षुधा, से बिष का वेग होने से, सन्तान की रक्षा के लिये, औ कालकी प्रेरणा से, जो सर्प्प काटते ही पेट की ओर उलटा

हो जाय और उसकी दाढ़ टेढ़ी हो जाय उसको दबा हुआ जानो, जिसके काटे से बहुत गहराघाव हो जाय उसको बैर से काटा जानो, एक दाड़ का चिह्न होय वह भी भली-भाँति न देख पड़े तो भय से, रेखा की भाँति दाढ़ लगे तो मद से, दो दाढ़ लगें और बड़ा घाव होय ती क्षुधा से, दोदाढ़ लगें ओ घाव में रुधिर भरजाय तो बिष के वेग से, दो दाढ़ लगें और गहरा घाव न होय तो सन्तान की रक्षा के लिये औ काकपद की भाँति तीन दाढ़ गहरी लगें अथवा चार दाढ़ लगें वह कालकी प्रेरणा से काटता है उसका कुछ उपाय नहीं असाध्य होता है। दष्ट दष्टानुपीत औ दंष्ट्रोद्यत्त ये तीन काटने के भेद हैं। सर्प्प काटै औ ग्रीवा झुकै उसको दष्ट कहते हैं, काट कर पान करै उसको दष्टानुपीत कहते हैं, इस में तिहाई बिषचढ़ता है और काट कर सब बिष उगिल देवै औ आप निर्विष हो उलट जाय अर्थात् पीठ केवल उलटा होय औ उसका पेट देख पड़े उस दंश को दंष्ट्रोवृत्त कहते है।

काल सर्प से डसे हुये पुरुष व दूत के लक्षण नागों का उदय सर्प्प काटने की तिथि व नक्षत्र का विचार (बत्तीसवाँ अध्याय)

कश्यपमुनि कहते हैं कि हे गौतम अब हम काल सर्प्प करके काटे हुये पुरुष का लक्षण कहते हैं जिसको काल सर्प्प काटै उसकी जिह्वा भंग हो जाय हृदय में शूल होय नेत्रों से देख न पड़े दाँत औ शरीर कृष्णबर्ण हो जायँ बिष्ठा औ मूत्र निकल जाय कन्धे कमर औ ग्रीवा टूटे पड़ें नीचे को मुख हो जाय आँखें ऊपर को चढ़ जाँय शरीर में दाह औ कम्प होय शस्त्र से काटने पर भी शरीर में रुधिर न निकले बेत मारने से भी देह में रेखा न पड़ै औ काटने का स्थान पके जम्बूफल की भाँति नीलबर्ण सूजाहुआ रुधिर से भरा औ काकपद के तुल्य हो हिचकी चलै कंठ रुक जाय श्वास बढ़ै शरीर की त्वचा पाण्डुवर्ण हो जाय उसको काल सर्प का काटा जानो घाव सूज जाय नीलबर्णहोय पसीना बहुत आवै अनुनासिक अर्थात् नाक से बोलै ओष्ठ लटक पड़ै हड़फूटन होय हृदय काँपै तो काल सर्प का डसा जानो दाँत पीसै नेत्र फिर जायँ लंबे श्वास लेवै ग्रीवा लटक पड़ै नाभि फरकै तो काल का काटा जानो दर्पण अथवा जल में अपनी छाया न देखै सूर्य्य तेज से हीन देख पड़ै नेत्र लाल होयँ पीड़ा से सब शरीर काँपै उसको कालदष्ट जानो वह शीघ्र ही मृत्युवश होय अष्टमी नवमी कृष्णतुर्दशी औ नागपंचमी के दिन जिनको सर्प काटै उनके जीने में संदेह है आर्द्रा, श्लेषा, मघा, भरणी, कृत्तिका, बिशाषा तीनों पूर्व्वा मूल, स्वाती और शतभिषा नक्षत्र में सर्प का काटा नहीं जीता औ इन नक्षत्रों में जो बिष खाय वह भी तत्काल मरै पूर्व्वोक्त तिथि औ नक्षत्र दोनों मिल जायँ औ अग्निहोत्र शाला में श्मशान में औ सूखे वृक्ष के नीचे जिसको सर्प काटै वह जीवे मनुष्यों के शरीर में एक सौ आठ मर्म हैं उनमें भी शंख अर्थात् ललाट की अस्थि नेत्र भ्रू मध्य बस्ति अण्ड कोशों का मध्य कक्ष कन्धे हृदय तालुठोड़ी औ गुदा ये मर्म स्थान मुख्य हैं इनमें सर्प काटे अथवा चोट लगै तो मनुष्य कभी न जीवै सर्प काटने के अनन्तर वैद्य को जो बुलाने जाय उस दूत के लक्षण कहते हैं उत्तम वर्ण का हीन वर्ण दूत औ हीन वर्ण का उत्तम वर्ण दूत अच्छा नहीं वह दूतदण्ड हाथ में लिये हो दो दूत हों कृष्ण अथवा रक्त बस्त्र पहिने हों शिर

पर ही एक वस्त्र लपेटे हो शरीर में तेल लगाये हो केश खोले हो घोर शब्द करता हुआ आवैं औ हाथ पैर पीटे ऐसा दूत बहुत बुरा होता है जिस रोगी का दूत इन लक्षणों करके युक्त वैद्य के समीप आवै वह रोगी अवश्य मरै। अब नागों का उदय कहते हैं जो शिवजी ने कहा है अनन्त नाग सूर्य्य हैं बासुकि चन्द्रमा तक्षक भौम कर्कोटक बुध पद्म वृहस्पति महापद्म शुक्र कुलिक और शंखपाल ये दोनों शनैश्चर का रूप हैं रविबार के दिन दशवाँ औ चौदहवाँ यामार्द्ध सोमबार को आठवाँ बारहवाँ भौमबार को छठा दशवाँ बुध को चौथा आठवाँ वृहस्पति को दूसरा छठाँ शुक्र को चौथा आठवाँ और दशवाँ और शनिवार को पहिला सोलहवाँ दूसरा और बारहाँ प्रहरार्द्ध निंद्य है इनमें सर्प काटै तो जीवे नहीं।

विष फैलने व सातबेग व सात धातुओं में प्राप्त भये विष के अलग-सलग लक्षण व चिकित्सा (तेंतीसवाँ अध्याय)

कश्यपजी कहते हैं कि हे गौतम जो जानै कि यमदूती नाम दाढ़ लगी है तो उसकी चिकित्सा न करै दिन में औ रात्रि में दूसरा औ सोहवाँ प्रहरार्द्ध सर्प का है उसमें काटै तो चिकित्सा न करै बाल के अग्र से जितना जल उठ सकता है उतना विष सर्प डालता है वह सब देह में फैल जाता है जितनी देर में भुजा को पसारै अथवा समेटै इतने काल में काटने के अनन्तर विष मस्तक में पहुँच जाता है रुधिर में पहुँचने से विष की बहुत वृद्धि होती है जैसे जल में तैल की बूंद फैल लाय त्वचा में पहुँच विष दूना होता है रक्त में चौ गुणा पित्त में आठ गुणा कफ में सोलह गुणा बात में तीस गुणा मज्जा में साठ गुणा औ प्राणों में पहुँच वही विष अनन्त गुणा होय सब शरीर के स्रोत रोक लेता है तब वह जीव श्वास नहीं लेता और मृत्यु वश हो जाता है शरीर पृथ्वी आदि पाँच भूतों से बना है मृत्यु के अनन्तर ये भूत अलग-अलग हो जाते हैं औ अपने-अपने में लीन हो जाते हैं विष की चिकित्सा बहुत शीघ्र करनी चाहिये बिलम्ब होने से रोगी असाध्य हो जाता है जैसा जंगम विष अर्थात् सर्पादि जीवों का विष प्राण हरने हारा है ऐसा ही स्थावर विष संखिया आदि भी है विष के पहिले बेग में रोमांच होता है दूसरे वेग में पसीना आता है तीसरे में शरीर काँपता है चौथे में भीतर से शरीर के स्रोत रुकने लगते हैं पाँचवें में हिचकी चलती हैं छठे में ग्रीवा लटक जाती है औ सातवें बेग में प्राण चले जाते हैं इन सात वेगों में शरीर की सातों धातुओं में विष व्याप्त हो जाता है अब इन धातुओं में पहुँचे हुये विष के अलग-अलग लक्षण कहते हैं आँखों के आगे अंधेरा होय औ खड़ा न रह सके तो जाने कि विष त्वचा में है तब आक की जड़ अपामार्ग तगर औ प्रियंगु इन को जल में घोटकर पिला देवे तो विष की बाधा शान्त हो जाय त्वचा से रुधिर में विष पहुँचता है तब शरीर में दाह औ मूर्च्छा होती है शीतल पदार्थ अच्छे लगते हैं उशीर अर्थात् खस चन्दन कूठ तगर नीलोफर सिंदुबार की जड़ धतूरे की जड़ हींग औ मिरच इनको पीस कर देवैं इससे शान्त न होय तो कटेली इन्द्रायण की जड़ सर्पगन्धा औ वृश्चिकाली इनको घृत में पीस देवैं इससे भी शान्ति न होय तो सिंदुबार औ हींग की नास देवैं औ यही पिलावैं इसी का अंजन औ लेपन करै तो रक्त में प्राप्त

विष की बाधा निवृत्त होय रक्त से पित्त में विष पहुँचता है तब पुरुष उठ-उठ कर गिरता है शरीर पीला हो जाता है सब दिशा पीत वर्ण देख पड़ती हैं मूर्छा औ दाह होता है तब पीपल शहत महुआ घी तूंबे को जड़ इन्द्रायण की जड़ इन सबको पीस नस्य लेपन औ अंजन करै तो विष का वेग निवृत्त होय पित्त से विष कफ में प्रवेश करता है तब शरीर जकड़ जाता है श्वास भली भाँति नहीं आता कण्ठ में घर्घर शब्द होता है मुख से लार गिरती है यह लक्षण देख पीपल मिरच शुंठी लोध को शहतकी अर्थात् तुरई औ मधुसार इनको गोमूत्र में पीस नस्य लेपन अंजन करै औ यही पिलावै तो विष का वेग शान्त होय कफ से बात में विष प्रवेश करता है तब पेट अफर जाता है कोई पदार्थ देख नहीं पड़ता है औ दृष्टि भंग हो जाती है यह लक्षण होय तो अरलू की जड़ खिरनी गजपीपल भारंगी पीपल देवदारु मधुसार सिंदुबार औ हींग इन सबको पीस गोली बनावै वह गोली खिलावै औ नस्य लेपन अंजन आदि भी इसी से करै यह गोली सब विषों को हरती है औ ब्रह्माजी ने कही है बात से मज्जा में विष पहुँचता है तब दृष्टि नष्ट हो जाती है औ सब अंग बेसुध हो गिर जाते हैं यह लक्षण होय तो घी शहत खाँड़ नख चन्दन औ खस इन सबको घोट कर पिलावै औ नस्य आदि भी देवै तो विष का वेग निवृत्तहोय मज्जा से विष मर्मस्थानों में पहुँचता है तब सब इन्द्रिय नष्ट हो जायँ काटने से रुधिर न निकले केश उखाड़ने से भी पीड़ा न होय उस को मृत्यु के बश हुआ जानै ऐसे लक्षणों कर के युक्त मनुष्य की साधारण वैद्य चिकित्सा नहीं कर सकते हैं जिनके पास सिद्ध मन्त्र औ औषधी होयं वे वैद्य ऐसे रोगी का उपाय करने में समर्थ होते हैं इसके लिये साक्षात् रुद्र ने एक औषध कहा है मयूर नकुल औ मार्जार इन तीनों का पित्ता धनाली की जड़ केसर भार्गवी कूठ काशमर्द की छाल उत्पल कुमुद औ कमल इन तीनों के केसर इन सबके समान भाग लेकर गोमूत्र में पीस नस्य आदि देवे औ खाने को भी देवै तो काल सर्प करके डसा हुआ भी अति शीघ्र निर्विष होय यह औषध मृतसंजीवनी है अर्थात् मरे को भी जिला देती है इसलिये अवश्य देनी चाहिये ।

सर्पों की भिन्न भिन्न जातियों व उनके काटे हुये के लक्षण व नाग पंचमी पूजनफल व विधान । (चौंतीसवाँ अध्याय)

गौतम पूछते हैं कि हे कश्यपजी सर्प सर्पिणी बाल सर्प सूतिका नपुंसक औ व्यन्तर-नाम सर्प के काटे में क्या भेद होता है इनके अलग अलग लक्षण कहो यह सुन कश्यपमुनि कहने लगे कि हे गौतम यह सब हम संक्षेप से कहते हैं औ नागों के रूप का लक्षण भी वर्णन करते हैं सर्प काटै तो ऊपर को दृष्टि हो जाय सर्पिणी के काटने से नीचे को बालक सर्प के काटे से दाहिनी ओर को औ बाल सर्पिणी के डसने से बांई ओर दृष्टि झुक जाती है गर्भिणी के काटे से पसीना आता है प्रसूति काटै तो रोमाँच औ कंप होता है नपुंसक के काटने से शरीर टूटता है सर्प दिन में सर्पिणी रात्रि में औ नपुंसक संध्यासमय अधिक विष के युक्त होता है अंधकार में जल में बन में सर्प काटै तथा सोते हुये मत्त हुये को काटै तो सर्प नहीं देख पड़ै औ देख भी पड़ै तो उसकी जाति न पहिचानी जाय औ पूर्वोक्ति लक्षण भी न जानता होय तो वैद्य क्योंकर चिकित्सा कर सकता है चार प्रकार के सर्प होते हैं दर्वीकर मंडली राजिल औ व्यंतर, इनमें दर्वीकर, बात स्वभाव है मंडली पित्तस्वभाव

राजिल कफ स्वभाव औ व्यंतर सन्निपात स्वभाव है अर्थात् उसमें बात पित्त औ कफ तीनों अधिक हैं दर्वीकर में रुधिर कृष्णवर्ण औ स्वल्प होता है मंडली में गाढ़ा बहुत औ रक्तवर्ण रुधिर निकलता है औ राजिल तथा व्यंतर में बहुत गाढ़ा थोड़ासा रुधिर होता है इन चार जातियों बिना पांचवीं कोई जाति सर्पों की नहीं मिलती है ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य औ शूद्र इन चार वर्णों के सर्प होते हैं ब्राह्मण सर्प काटै तो शरीर में दाह होय मूर्च्छा होय मुख काला पड़ जाय ग्रीवा स्तंभ हो जाय औ संज्ञा जाती रहै ये लक्षण होयं तो अश्वगंधा अपामार्ग सिंदुवार औ हींग को घृत में पीस नस्य देवैं औ पिलावैं तो बिष निवृत्त होय क्षत्रिय सर्प काटै तो शरीर काँपै मूर्च्छा होय ऊपर को दृष्टि हो जाय पीड़ा होय यह लक्षण देख आककी जड़ अपामार्ग इन्द्रायण औ प्रियगूं को घी में पीस पिलावैं औ इसीका नस्य देवैं तो बिष की बाधा मिटै वैश्य सर्प्प डसै तो कफ बहुत आवै मुख से लार बहै मूर्च्छा होय संज्ञा जाती रहै ये लक्षण होयं तो अश्वगन्धा गृहधूम गूगूल शिरीष अर्क पलाश औ श्वेत फूलवाली गिरिकर्णिका इन सबको गोमूत्र में पीस नस्यदेवैं औ यही पिलावैं तौ वैश्य सर्प के बिष की बाधा तत्क्षण दूर होय शूद्र सर्प जिसको काटै उसको शीत लगै काँपै ज्वर होय सब अंग चुलचुलावै यह लक्षण जान कमल के केसर लोध शहद मधुसार औ श्वेत गिरिकर्णी इनको सामान भाग लेकर शीतल जल से पीस नस्य आदि देवैं औ पान करावैं तौ बिष का बेग शान्त होय ब्राह्मण सर्प्प मध्याह्न के पहिले क्षत्रिय मध्याह्न में वैश्य मध्याह्न के पीछे और शूद्र जाति का सर्प्प संध्या में विचरता है ब्राह्मण सर्प्प पुष्प भोजन कर्त्ता है क्षत्रिय मूषक वैश्य मेंडक और शूद्र सर्प्प सब पदार्त्थ भक्षणकर्त्ता है ब्राह्मण सर्प्प आगे डसता है क्षत्रिय दहिने वैश्य बायें औ शूद्र पीछे काटता है मद के समय मैथुन की इच्छा करके पीड़ित सर्प्प बिष के बढ़ने से व्याकुल हो बिना समय भी काटता है ब्राह्मण सर्प्प में पुष्प के समान गन्ध होता है क्षत्रिय में चन्दन का वैश्य में घृत का और शूद्र में मत्स्य का गन्ध आता है नदी कूप तालाब झरने बाग औ पवित्र स्थानों में ब्राह्मण सर्प्प रहते हैं ग्राम नगर आदि के द्वार चतुष्पथ तोरण आदि स्थानों में क्षत्रिय गोशाला ऊषर भस्म घास आदि के ढेर औ वृक्षों में वैश्य औ अपवित्र स्थान बन शून्य घर श्मशान आदि बुरे स्थानों में शूद्र सर्प निवास करते हैं श्वेत कतिल अग्नि के समान तेजस्वी औ सात्विक ब्राह्मण सर्प्प होते हैं मूंगें के समान रक्तबर्ण अथवा सुवर्ण के तुल्य बर्ण सूर्य्य के समान तेज वाले क्षत्रिय सर्प्प जानो अलसी अथवा बाण पुष्प के समान वर्ण अनेक रेखाओं करके युक्त वैश्य होते हैं औ अंजन अथवा काक के समान कृष्णवर्ण औ धूम्रवर्ण शूद्र सर्प्प होते हैं एक अंगुल अन्तर में दंशहोय तो बालक सर्प्प का काटा जानो दो अंगुल अन्तर होय तो तरुण का औ ढाई अंगुल अन्तर होय तो वृद्ध सर्प्प का दंश पहिचानो अनन्त सम्मुख देखता है बासुकि बांई और तक्षक दहिनी ओर औ कर्कोटक की दृष्टि पिछली तरफ होती है अनन्त बासुकि तक्षक कर्कोटक पद्म महापद्म शंखपाल औ कुलिक ये आठोनाग पूर्व आदि आठ दिशाओं के स्वामी हैं पद्म उत्पल स्वस्तिक त्रिशूल पद्म शूल छत्र औ अर्द्ध चन्द्र ये आठों इनके आयुध हैं अनन्त औ कुलिक ये दो ब्राह्मण हैं शंख औ बासुकि क्षत्रिय हैं महापद्म औ तक्षक वैश्य हैं पद्म औ कर्कोटक शूद्र हैं अनन्त औ कुलिक शुक्लबर्ण औ ब्रह्मा से उत्पन्न हैं वासुकि औ शंखपाल रक्तवर्ण औ अग्नि से उत्पन्न हैं तक्षक औ महापद्म पीतवर्ण औ इन्द्र से उत्पन्न हैं पद्म औ कर्कोटक कृष्णवर्ण

भ्रौ यमसे उत्पन्न भये हैं दर्वीकरों के सोलह भेद हैं सात भेद मंडली सर्पों के हैं दश भेद राजिल सर्पों के हैं भ्रौ व्यंतर चौंसठ भेद के हैं बराहकर्णी गजपीपल गांधारिका पीपल देवदारु मधूकसार सिंदुवार भ्रौ हींग इनको समभाग ले गोमूत्र में पीस गोली बनाय सदा समीप रक्खे इतनी कथा सुनाय सुमंतुमुनि बोले कि हे राजा यह सब सर्पों के लक्षण भ्रौ चिकित्सा कश्यप मुनि ने गौतम को उपदेश करे हैं सदा भक्ति से नागों की पूजा करैं भ्रौ पंचमी को विशेष कर दुग्ध खीर भ्रादि से पूजै श्रावण शुक्ल पंचमी को द्वार के दोनों भ्रोर गोबर से नाग बनाय दही दूध दूर्वा पुष्प कुशा गन्ध भ्रक्षत भ्रौ भ्रनेक प्रकार के नैवेद्यों से पूजन कर ब्राह्मण भोजन करावैं उस पुरुष के कुल में कभी सर्पभय नहीं होता इसी प्रकार भाद्रपद की पंचमी को भ्रनेक रंग के नाग लिखकर घी पायस दूध पुष्प भ्रादि से पूजन कर गूगुलका धूप देवै तो तक्षक भ्रादि नाग प्रसन्न होते हैं भ्रौ उसके सात पीढ़ी तक सर्प भय नहीं होता भ्राश्विन की पंचमी को कुशा के नाग बनाय इन्द्राणी सहित उनका पूजन करै दुग्ध घृत भ्रौ जल से स्नान कराय दूध में रंधे हुये गेहूं भ्रौ भांति भाँति के भक्ष्य भोज्य चढ़ावै इस पंचमी को जो नाग पूजा करै उस पर वासुकि भ्रादि नाग सन्तुष्ट होते हैं भ्रौर वह पुरुष नागलोक में बहुत काल सुख भोगता है हे राजा यह पंचमी तिथि का कल्प हमने वर्णन किया है जहाँ यह पढ़ा जाय वहाँ सर्प भय नहीं होता है : भ्रों कुरुकुल्ये हुंफट्स्वाहा : यह मंत्र भी सर्पभय निवृत्त करता है।

३२. सलूनों-रक्षाबंधन-सोना-श्रावणी

श्रावण की पूर्णिमा को यह व्रत-त्यौहार भ्रत्यन्त ही उल्लास भ्रौर समारोह से मनाया जाता है। इस त्यौहार के दो पक्ष तो भ्रत्यन्त स्पष्ट हैं।

३२:१. एक का संबंध रक्षा-बंधन या राखी वाँधने बँधवाने से है। भविष्य पुराण में बताया गया है कि जब इन्द्र दानवों से हार रहे थे, भ्रौर कोई उपाय विजय का नहीं दिखायी पड़ रहा था, तब शची इन्द्राणी ने इन्द्र के हाथ में रक्षा-सूत्र बांधा। इससे पलड़ा पलट गया। इन्द्र बिजयी हुए।

३२:१:१. भविष्य पुराण[1] के भ्रनुसार ही यह रक्षा-सूत्र पुरोहित के हाथों से मंत्रोच्चारण के साथ बँधवाना चाहिये।

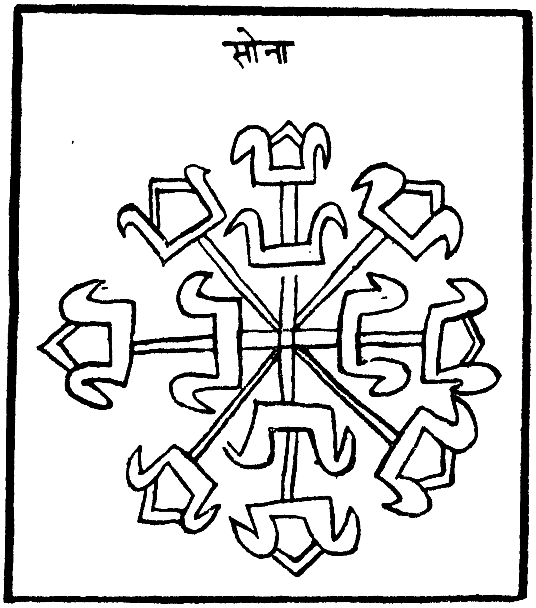
३२:१:२. भ्राजकल भी विशेष रूप से ब्राह्मण ही राखी बाँधते हैं, भ्रौर यत्किंचित दक्षिणा यथा सामर्थ्य पाते हैं।

३२:२. सलूनों या सोना-पूजन घर में स्त्रियों के द्वारा होता है। घर में सेंमई-चावल पकते हैं। दरवाजे पर 'सोना' या 'सरमन' रखे जाते हैं।

---

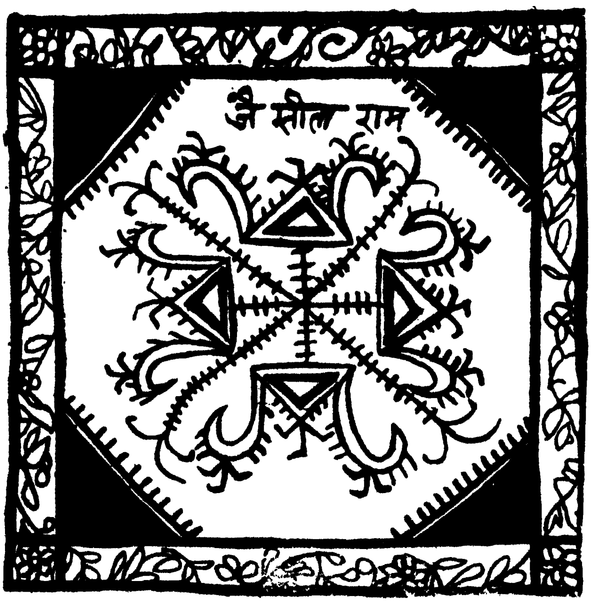
१. भविष्य पुराण, पृष्ठ ६१६-६१७।

३२:२:१. ये 'सोना' भी कई प्रकार के मिलते हैं। यहाँ दो सोना दिये जा रहे

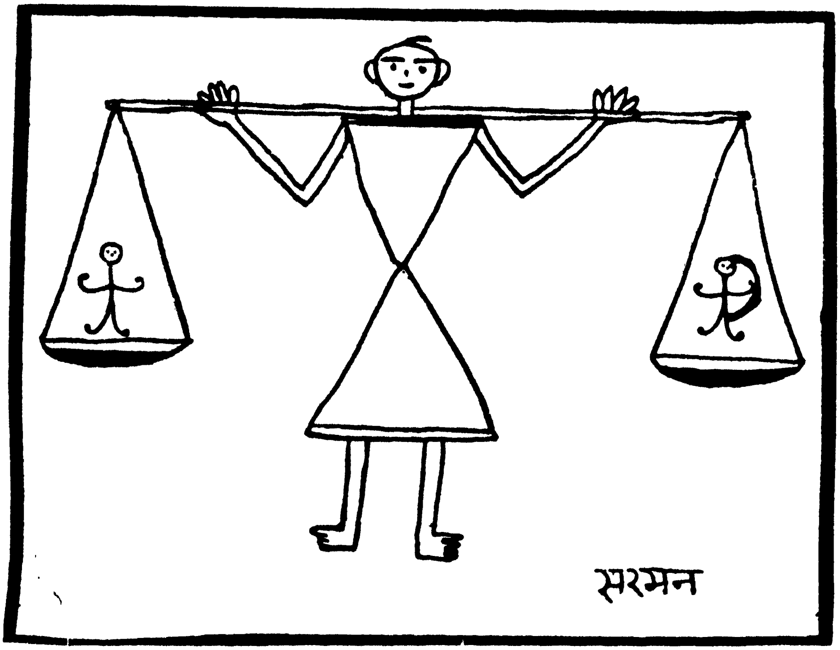


हैं। ये एक ही रूप के हैं, केवल अलंकरण में ही भेद है।

वैश्यों के सोना : रक्षाबंधन
संकलनकर्त्ता - धीरेन्द्रनाथ चतुर्वेदी



३२:२:२. किन्तु एक अन्य प्रकार के सोना होते हैं जिन्हे सरमन भी कहा जाता है। कहीं कहीं ये सरमन ही द्वार के दोनों ओर रखे जाते हैं।



३२:२:३. इनका 'सरमन' नाम और यह चित्र श्रवणकुमार विषयक पुराण-कथा से सम्बन्ध बताते हैं।

श्रवणकुमार और अंधा-अंधी को इस चित्र में रेखाओं से स्त्रियों ने सभक्ति अंकित किया है। इसके उपरांत 'सेंमई चावल' से इन्हें पूजा जाता है और राखी भी चिपका दी जाती है। घर में इस पूजा के बाद ही राखी बाँधी जाती है' और इसके बाद ही भोजन किये जाते हैं।

३२:२:४. इस दिन पहले बहिन-बेटियों, भाँजियों को पहले भोजन कराया जाता है। भोजन में सेंमई-चावल-दाल-घी-बूरा ही उपयोग प्रायः लाया जाता है

३२:३. श्री गुप्ते महोदय ने बताया है कि इसे 'नारेली पौर्णिमा भी कहा जाता है। बम्बई में कोंकण के तट पर सर्वत्र इस दिन समुद्र की पूजा की जाती है तथा नारियल समुद्र मे फेंके जाते हैं। इसी नारियल पजा के कारण इसे 'नारेली पूर्णिमा' भी कहा जाता है।[1]

३२:४.

कहीं कहीं जो त्यौहार चतुर्दशी को मनाया जाता है, वह प्रतिपदा को सलूनों के दूसरे दिन या रक्षा-बंधन को ही संध्या के समय मनाया जाता है।

१. हिन्दू होलीडेज एण्ड सेरीमोनियल्स, पृष्ठ १७८।

३२:५. श्रावण के महीने में 'श्रवणकुमार' के गीत भी 'सरमन' के नाम से गाकर कुछ विशिष्ट गायक भिक्षार्थी भिक्षा-याचना करते हैं। श्रावणी पूर्णिमा का संभवतः सरमन या श्रवणकुमार के जन्म से भी संबंध है। इसी गीत में एक स्थान पर ये पंक्तियां आती हैं:–

ज्या दिन सरमंनि बेटा भए,
भैंनि-भान्जी मंगल कहे।
कौरेसींक-साँतिए धरे,

ऊपर जो सोनें दियें गये हैं वे साँतिये हैं ऐसे साँतियों का संबंध पुत्र-जन्म से भी हो सकता है।

३२:५:१. सरमन गानें वालों का यह गीत ऐसे ही 'सरमनियों' से इस लेखक ने प्राप्त किया था वह यहाँ दिया जाता है:—

गीत-सरमन

कास बास दोऊ अंधा बसें, अमर-लोक नारांइन बसें।
अंधी कहति अंध ते बात, हमं-तुम चलें राँम के पास॥
कहा राँम हरि तेरौ लयौ, रूकुं न बालक हमकूँ दयौ।
बालक देउ भलौ-सो जांन, मात-पितंन की राखै कांन॥
नांइ मेरी कंधा नांइ मेरी गोग, पूत सरकनों कहाँ तै होइ।
पहले माँचे मंचे नीर, दूजें कला पलटि गए खीर॥
तीन माँस तिरबैनीं रची, चौथे माँस गरब में परी।
पाँच माँस पंच अँगुरी रची, छठए माँस मुकलाँने केस॥
सात माँस संतोसी होइ, और आठ माँस कौ जीवै न कोइ।
जीवै तो बलधारी होइ, और बढ़ नछत्तरधारी होइ॥
नौए माँस दुनिया संसार, दसए माँस सरमंनि औतार।
ज्या दिन सरमंनि बेटा भए, भैंनि-भाँनजी मंगल कहे॥
कौरें सींक-साँतिए धरे, भैंनि-भाँनजी तीअरि दई, ब्राह्मन कूं गायंन के दांन॥
दिन-दिन बालक बढ़बे लगे, मात-पिता-कुल प्यारे भए।
बसु दिनां के सरमंनि भए, धरती माता जाँनि गई॥
दोई बर्स के सरमंनि भए, जब चंदा-सूरज माँनि गए।
तीन बर्स के सरमनि भए, जब तीन्यौं लोकनु माँने गए॥
चारि बर्स के सरमंनि भए, पाँचौ पंडनि जाँनि गए।
छई बर्स के सरमंनि भए, जब छटे नरांइन माँनि गए॥
सात बर्स के सरमंनि भए, जब सातों समंदुर न्हाबे गए।
आठ बर्स के सरमंनि भए, जब अष्ट कुली नागंन नें लिखे॥
नौई बर्स के सरमंनि भए, जब नौऊ नाथंन जाँनि गए।
दसई बर्स के सरमंनि भए, लै पोथी ब्रह्मा-धर गए॥

ब्रह्मा बचन कही दोइ-चार, विद्या देऊ अरथ-बल धार ।
खेती करें न बंजी जांइ, विद्या के बल बैठे खांइ ।।
ग्यारह बर्स के सरमंनि भए, जब विद्या में भरपूरनं भए ।
बारेह बर्स के सरमंनि भए, गज-घोड़ंनि पै पाखर परे ।।
खेलंन पूत कुंजन बन गए, कुँज-सरवा उठी धराइ ।
कुलंग राजा पूछै बात, कौंन तेरी माता कौंन तेरी पिता ।।
कौंन राज में है नंनसार, मात-पितंन के नाम बता ।
तुम कूं बर दें साँमिल नारि, अंनसुख माता धंनसुख पिता, रघबंसीन में है ननसार ।।
आक-कि के संमद मँगाई, हरे-हरे पातंनु मंडप छाई ।।
कुलंग राजा टीकौ करै, सरमंनि के मुख बीरा भरै ।
आक-ढाक के समंद मँगाइ, हरे-हरे पातंनु मंडप छाइ ।।
केरन के दए खं लगाइ, सुरै गऊन के घीअ मँगवाई ।
हवनकुण्ड दीए भरबाइ, घरई के ब्रह्मा लए बुलबाइ ।।
बिरमा वी बारक पढ़ै, भैमाता ग्वा मंगल करै ।
कुलंग राजा टीकौ करै, सरमनिसुत की भाँमरि परै ।।
ब्याह बरनि बुड निच्चू भए, भाँटनु कूँ ज्याँनें गौंडा दए ।
डोंमन कूँ हाती द्वै दए, बिरमन कूँ गाइन के दाँन ।।
औरु डोला में में बैठारी नारि, ब्याह-बरनि गल[1] लाए नारि ।
जब लग तिरिया आनें लही, सासु-सुसर के कहनें रही ।।
ज्यों-ज्यों तिरिया स्याँनी भई, त्यों-त्यों सीख बिराँनी लई ।
जब तिरिया है गई बर-जोग, झुकि बोले सरमंनि ते बोल ।।
सुन लै पीया, सुनि भरतार, ज्याइ कहूँ ज्याइ मानें आज ।

कहदे तिरिया जो मन होंइ, सोंने को हार गढ़ाइ दउं तोइ ।
कहा माँगू कहा देइगे धँनी कौंन बात मेहलँन में कमी ।।
अन्न-धन्न तै सब दिन सुखी, दोइ पुरिखँन नें कल्लाई दुखी ।
समिया-राते खौं-खौं करें, भरि अँगना में थूकें भरें ।।
सौतेलो बुढ़िया ज्ये मरिजाइ, सौतेला बुढ़रा ज्यें मरि जाइ,
जिते सेहेज फंदु कटि जाइ ।
मोइ लै चलौ मेरे प्योसार, मेरे पीअर खार-बखार,
बैठे पीया खेलौ सार ।।
कंमरि कौंदनी दऊँ गढ़बाइ, नारि ढोलनां दऊं बनबाइ ।।
कोठों-ऊपर अट्टा करूं, मुंआई बलम में न्यारी रहूं ।
चुपरी फुलकियां पै-पै धरूं, धोबा दारि उबं की करूं ।।
जेंओं करूं जिमायौ करूं, औरु भरि भरि हुक्का प्याओ करूं ।
भरि-भरि बेला दूध के देंऊ, कुठिला तै मोंटो करि लेंउं ।।

---

१. घर ।

ना पीवं दोइ गुल्ला वंउं, मुमरिहा[1] तोइ बस में करूं ।
जब सरमंनि नें दयौ जुबाव, चुप्प रे तिरिया लच्छिगंमार ।।
मा-बापंन को कौन हवाल, अंधी मैया धुरबल[2] पिता ।
जौ गारूं में अंधी माइ, पीयौ दूध बाद है जाय ।।
जौ त्यागूं में धुरबल पिता, तीनि लोक में ठौरु जु नांइ ।
नांइ मारी नांइ गारी दई, फूलि नारि कुप्पा है गई,
रूठि नारि अट्टा चढ़ि गई ।।
मूंगा बांदी लई बुलाइ, रंग-मैहल में दीपक बारि,
गौधन पुरजा लिखै बनाइ ।
पहलें लिखे श्री भगवान, जा पीछें कुँम्हरा कौ नाँम ।।
कुँम्हरा कहूं कै देबर-जेठ,[3] एकु करि हंडिया द्वै करु पेट,
पाँच टका कोरचा के लेउ ।
लिख पुरजा बाँदी कूँ दयौ, बाँदी नें घालि जेब में लयौ ।।
कुँम्हरा के घर पौंहची जाइ, कुँम्हरा ऐ परचा दीऔ गहाइ,
कुँम्हरा बाँच खुसी है जाइ ।
कुँम्हरा कौ बुह चतुर सुजाँन, लै बैठ्यौ हँड़िया कौ ग्यांन ।।
गोंदा ग्वानें लयौ बनाइ, पीट-पाट कीयौ तंय्यार ।
पाँनी कौ पौचारौ दयौ, बीच में आड़ौ पर्दा दयौ ।।
ठोकि-ठाकि म्होंड़ौ कर्यौ एक, नेंक फरैरी हँड़िया भई,
दम्मक-दंमां बीतन लगी ।
दाबि कुँम्हरिया मैहलंन गई, कैसें धसूं महल के बीच,
राजंन की पर्दन की रीति ।।
मूंगा बांदी लई बुलाइ, रंगमैहल में हँड़िया जाइ ।
जब चातुरि के आगें धरी, चातुरि देख मँगन है गई ।।
कर्तबहारी नें करतबु करे, छौंकत चौका बर्तन धरे,
छौंक सौति मेरौ कहा करि लेइ ।
कै सांमल कौ जियरा नाइ, डुकरी-डुकरँनु लेउ लुढ़काइ ।।
एक में रांधी निरमलि खीरि, एक में घोरि महेरि धरी,
निरमलि खीरि ग्वाकौ बलमां खाइ ।
खट्टी महेरी ढुंआं कौ तेलु, जे बाँध्यौ पुरिखंन कौ नेगु ।।
खाइ लेउ बुढ़रा रेलम-पेल, कबऊ न चले तुम्हारे पेट ।
खात-पीत दिन भौतक भए, मरिबे के दिन सातक रहे ।।

---

१. म्वां—वहां ।

२. दुर्बल ।

३. पाठां—कुंम्हरा के मेरे देबर-जेठ ।

सरमनि फूलि कुठीला भए, तिरिया फूलि गोंनि है जाइ।
एक दिन सरमंनि पूछै बात, कैसें पिता घुरबले गात ।।
जब अंधा ने दीग्रौ जुबाब, कुछ दुख मति पूछै मेरे लाल।
जा दिन बिहा तुम्हारे भए, आदर-भाव मैहल तें गए ।।
जा दिन आइ गई साँमलि नारि, कबऊँ न खाई खीरि अघाइ।
सरमनि नें तब दयौ जुवाब, एकई तिरिया एकई नारि,
एकई नारि परोसंन हार ।।
एकई नारि मैहलंन में रही, तोकूं दूजी को करि गई।
अब अंधे नें दयौ जुबाब, सांचौ ऐ तू सरमंनि लाल,
हँम दोंनों झूंठे सिरदार ।।
इक दिन बेटा करनी करै, जब लाला तोइ मालूम परै।
इक दिन सरमंनि परचौ लेइ, काढ़ि दूध मैहलँन में देइ ।।
खिरक दुहाइ लईं तीसों गाइ, माँट भरे मटुका भरबाइ।
टेब न छूटे बाँनि न जाइ, कुत्ता मूंतै टाँग-उठाइ।
दुहरे चटुआ दए जमाइ, सरमनि पोंहचि पिता पै जाइ ।।
एक कंधा पै अँधी माइ, एक कँधा पै घुरबिल पिता।
मैंहलंन में जब दए उतारि, चंदन-चौकी दई जमाइ ।।
जब भोजंन है गए तैयार अपनों थारु मातु कूं दयौ,
दूजौ थारु आप लै लयौ।
चूल्हे ते घुन्नांनी नारि, अरे बलम तेरौ कहा सुभाउ ।।
अपनौ थारु आप लै लेउ, जिनें के थारु जिनें दै देउ।
जों अंधनु कौ झूंटौ खाउ, तुमऊं बलम अँधे है जाउ,
त्याई अँध लकड़ियाए को लै जाइ ।।
इतनी बात डुकरिया सुनी, लेहा-लेहु खीरि की करी।
जुग-जुग जीग्रौ सरमँनि पूत, बारैह बर्स में खाई ऐ खीरि ।।
मारि गुस्सा के सरमँनि ज्वांन, खूंटी खैंचि दुधारा लयौ।
तिरिया मारन कूं चलदयौ, जब बुड्ढे ने पकर्यौ हात ।।
मति मारै मति गारी देउ, तिरिग्रा मारें लगै अपराधु।
ज्याके पीहर रच्यौ ऐ बिभाउ, ज्याइ करि आओ ज्याके प्यौसार ।।
पीहर की उदमांदी नारि, पति ते पहलें है गई त्यार ।।
कारे डोला कारे कहार, कारे बानें दए पैहराइ,
लील के कांटे दए लगाइ।
डोला में बैठारी नारि, आपु भए घोड़ा असबार ।।
इक बन नांखि दूसरे नाँखि, तीजे बन में बिकट उजार।
उतरौ तिरिया राज-कुँमारि, ह्या आइ गयौ तिहारौ प्यौसार ।।

डोला में तैं देखै नारि, जानति ऊं बलमा भरतार,
ज्या कैसौ मेरौ प्यौसार ।
अबकें लै चलौ संग लिवाइ, मात-पितन की सेवा करूं,
दानों-दरिया दरिबौ करूं ।
इतनी बात सरमैंनि नें सुनी, म्वां लातन की मारें दई ।
नाँक काटि नकटी करि दई, कंध कुड़ारी सरमंनि धरी,
जाइ काटी चंदन की भिरी ।
चंदन बिरबा लियौ झुकाइ, खैंचि-खाँचि खाती कें द्वार ।
खाती के मेरे चतुर सुजाँन, काँबरि गढ़ि दै जुग परमाँन ।।
काँबरि गढ़ि दै चितम-चित, मात-पिता बैठें निहचित ।
बढ़ई कौ बो चतुर सुजाँन, लै बैठयौ काँबरि कौ ग्याँन ।।
गढ़ि-गढ़ाइ कें सूधि करी, लै सरमनि के आगें धरी ।।
गंगा जंमना लिखीं बनाइ, कालिँदी बामें धार बनाइ ।।
अड़सठि तीरथ दए लिखबाइ, लै काँवरि मैहलँन में जाइ ।
हरे-हरे गोबर अँगन लिपाइ, मोतीन चौक दीए पुरबाइ ।।
मात-पिता दोऊ दए अन्हवाइ, चंदन-खौरि दई लगबाइ ।
अगले पल्ला धुरबल पिता, पिछले पल्ला अंधी माइ ।।
कंठी बाँधी तूमी लई, सब नंगर परिकम्मा दई, कंधा पै काँवरि धरि लई ।
म्वाँ ते सरमैंनि सूधें जाइ, बिंदराबन में पौंहचे आइ, जमुनाँ-जल ते दए न्हबाइ ।।
बिंदराबन ते सूधें जाइ, भाँड़ीलबन में पौंहचे जाइ, परिकम्मा मुआँ दई लगबाइ ।
कुंड-कुंड चिन्नामित लाइ, मांनसी गंगा दए न्हबाइ ।।
दाऊजी में पौंहँचे जाइ, दरसंन गुन कूं दए करबाइ ।
कासी-गैया पौंहँचे जाइ, गैया पिंड भरबाइ, बद्रीनाथ में भटके जाइ ।।
इक बन नाँखि दोसरे में जाई, तीजे बन में बिकट उज्यारि ।
म्वाँ कौं हौकी ऐ अंधी माइ, पूत सरमनां पाँनी प्याइ, प्यास के मारें जिअरा जाइ ।।
न्याँ पाँनी कहाँ ऐं मेरी माँइ, ज्ञाँ तौ बनी ऐं बिकट उज्यारि ।
कै पाँनी गंगा की धार, कै पाँनी माँमा के ताल ।।
माँमाँ पाँनी भरन न देइ. माँमाँ ताल कौ पहरौ देइ ।
सूनी काँबरि कैसे धरूं, मैं तो सिंघ की म्हैंमा डरूं ।।
कदम ते काँमरि दई लटकाइ, पत्तन में बानें दई दुबकाइ ।
लै लोटा जब सरमैंनि जाइ, माँमाँ के जब ताल में आईं ।।
पैंहलौ लोटा सरमनि भर्यौ, हात-धोइ म्हौं-कुल्ला कर्यौ ।
दूजौ लोटा सरमनि भर्यौ, खैंचि बाँन जसरत नें दयौ ।
जब हाली जसरत की डोरि, सग्यौ भाँनजौ डार्यौ कोरि ।
अबकें जीऔ भाँनजे लाल, सौ लखि गऊएँ करौं निहाल ।।
जब सरमनि नें दयौ जुबाब, मेरे मरे कूं मति पछिताइ, मात-पितँन कूं पाँनी प्याइ ।
लै लोटा जब जसरत जाइ, पौंहँचि गयौ काँवरि के पास ।।

पी लै री मेरी अंधी माइ, पूत सरमनां पाँनी लाइ।
जब अंधी नें दियौ जुबाब, नाँइ मेरौ सरमनि, नाँइ मेरौ लाल ।।
तू तौ रे परदेसी लाल, तू आयौ मेरे सरमनि मारि ।
जाई हाल ते सरमनि मर्‌यौ, जाई सोग में हम मरि जाइँ, और ज्याई हाल ते तू मरि जाइ ।
म्वाँ जसरत कूं दयौ सरापु, रांमु-रांमु कही अंधी मरी, कृष्ण-कृष्ण करि अंधौ मरय्‌यौ ।।
सरमनि लीला पूरी भई, लटी धोवती बिरफंनु दई ।
सुन बैइया जे सुनिबौ करें, औरू गबैया जे गायौ करें ।।
सरमनि-कथा अंत के द्वार, गए दिलिद्दर पल्ली पार ।
गुरू नवलकिसोर कथा गांमें, औरु जे सरमंनि लीला सबै सुनांमें ।।

३२:६.श्रावण के महीने में सामान्यतः समस्त महीने भर गीत गाये जाते हैं। भाई-बहिन के संबंधों के और पति-पत्नी के संबंध के मधुर भावों से ये गीत परिपूर्ण हैं। इनका एक परिचय 'ब्रज लोक-साहित्य का अध्ययन' नाम की पुस्तक में दिया गया है।

३३. भाद्रपद में ब्रज में निम्नलिखित त्यौहार या व्रत मनाये जाते हैं:—

१—बूढ़ी तीज या कजली तीज
२—नागपाँचे
३—जन्माठें
४—चट्टा चौथ
५—बल्देव छठ
६—राधाष्टमी
७—ओध द्वादशी
८—अनन्त चौदस
९—कनागत (श्राद्ध)
१०—गाज

३३:१. बूढ़ो तीज या कजली तीज

यह भादों के कृष्णपक्ष की तृतीया को होती है। इस संबंध में श्री भारद्वाज ने लिखा है कि—"भाद्रपद कृष्णा तृतीया को सौभाग्यवती स्त्रियाँ, केवल वधुएँ, इसे मनाती हैं। पितृगृह पर हों तो वे श्वशुरालय चली जाती हैं। वधुओं को शृंगार (सिन्दारा) दिया जाता है और वे चौदह पूरी और पूओं का वायन (बायना) दान करती हैं तथा झूला-झूलती और गीत-गाती हैं। पंचागों से विदित होता है कि यह उत्सव दिन-रात मनाया जाना चाहिये—'दिवा नक्तं विधीयते।' इसका नाम 'कज्जलीव्रत' भी है। इसमें रात को स्त्रियाँ कजली भी गाती हैं, दिन में भी गाती और झूलती हैं। मिर्जापुर और बनारस में तो कजली का उत्सव महीनों चलता है। इस दिन अधिक धूमधाम रहती है।"

३३:१:२. इस तीज के साथ 'कजली' का होना, यह बात स्पष्ट कर देता है कि ब्रज में इसका विशेष प्रचलन नहीं हो सकता । ब्रज में कजलियों का प्रचार नहीं। किन्तु कहीं-कहीं बूढ़ी तीज के नाम से इसे मनाया जाता है ।

३३:१:३. राजस्थान में इसका विशेष महत्व है । वहाँ इसकी 'कहानी' भी सुनी जाती है, और एक 'नीमड़ी' नामका विशिष्ट गीत भी गाया जाता है । इसका वहाँ अनुष्ठान भी विशेष आयोजन के साथ होता है ।

३३:१:३:१. 'वरदा'[1] में इसके अनुष्ठान की विधि निम्नलिखित रूप में दी गयी है—

'इसको स्त्रियाँ अपने बाल्यकाल से ही रखना प्रारम्भ कर देती हैं तथा अपनी वृद्धावस्था तक रखती रहती हैं । यह व्रत पीहर वालों के लिए होता है । अतः व्रत सम्बन्धी सभी आवश्यक उपकरण पीहर वाले ही देते हैं ।

इस व्रत की कहानी सूर्यास्त के पश्चात् सुनी जाती है । कहानी सुनने के लिए एक पाटे पर मिट्टी की दीवारों से एक दूसरे से सटकर दो तालाब बनाये जाते हैं । उनमें दूध तथा जल मिलाकर भरा जाता है । उनकी एक मेढ़ पर नीम की टहनी, एक पर आक की ढोडी तथा बीच की मेढ़ पर दीपक रखा जाता है । चावल रोली आदि से उस तालाब का पूजन किया जाता है । कहानी सुनने वाली स्त्री तालाब के जल में नीम, आक, दीपक, अपने आभूषण तथा खाद्य सामग्री की परछाँई देखती है । वह अपना पूरा शृंगार करके कहानी सुनने बैठती है । कहानी सुनने के लिए चने, गेहूँ या चावल के सत्तू में घी और चीनी मिला कर उसके लड्डू बनाये जाते हैं । उनको धागे से बाँधा जाता है । इस व्रत के लिए सवा-सवा सेर के दो लड्डू (एक व्रत वाली का, एक अछूते का) बनाये जाते हैं । विवाह के उपरान्त अपने पति के लिए भी लड्डू बनाया जाता है । कहानी सुनने के पश्चात् 'नीमड़ी' नामक लोकगीत गाया जाता है, कहानी सुनने बैठने के पश्चात चन्द्र दर्शन करके ही उठने का विधान है । चन्द्रमा को कहानी का जल चढ़ाकर उस सत्तू के लड्डू को तुरही (तोरूँ) के पत्ते पर रखकर बाँयें पैर के नीचे से बाँयें हाथ से सात ग्रास लेकर व्रत खोला जाता है । इसका उद्यापन भी किया जाता है ।

३३:१:३:१:२. इसकी कहानी 'वरदा' में ही इस प्रकार दी गयी है:—

एक साहूकार था । उसके सात पुत्र थे । सातों विवाहित थे । उसकी सातों पुत्र-बधुएँ हर साल भाद्रपद कृष्णा ३ को कजली तीज का व्रत रखा करती थीं । उनमें से छः के पीहर में भाई-भौजाई थे परन्तु एक के पीहर में कोई भी नहीं था । उस बिचारी के लिए व्रत के समय उसके पीहर से उपकरण नहीं आते थे । अतः वह बड़ी उदास रहती थी ।

एक दिन उसके पति को उसके उदास रहने का कारण समझ में आ गया । उसने कजली तीज वाले दिन बहुत प्रातःकाल ही एक दुकान में घुसकर सवा सेर चने, एक चूंदड़ी, एक कब्जा एवं चार टके निकाले । वह घर रवाना होना चाहता था कि दुकान में ही उसे एक चक्की दिखाई दी । वह भोले स्वभाव का था । अतः वहीं चनों को

१. वरदा :१:४, पृ० ८२ ।

पीसने बैठ गया। दुकान में घड़घड़ाहट की आवाज सुनकर एक पड़ौसी ने दुकानदार को जाकर खबर की। दुकानदार ने आकर देखा कि एक आदमी निडर होकर चक्की में चने पीस रहा है। दुकानदार ने उसे पकड़ लिया।

उधर उसकी स्त्री के कहानी सुनने का समय निकट आ रहा था। तब साहूकार के पुत्र ने अपने होठों की गुनगुनाहट में कहा—

अठै अय्याँ बठै बय्याँ।
सातूड़ी तीज मन्ने कय्याँ॥[1]

दुकानदार ने इस गुनगुनाहट को सुन लिया। उसने इसका अर्थ पूछा। उसने बताया कि उसकी स्त्री को कजली तीज का व्रत रखने का नियम है किन्तु उसके पीहर में कोई नहीं है। अतः उसका व्रत पूर्ण नहीं हो पाता। इसलिए उसने ऐसा किया है। यह सुनकर दुकानदार दयार्द्र हो गया और उसने उसकी स्त्री को अपनी धर्म बहिन बना लिया तथा उसके व्रत को पूर्ण करने के लिए सवा सेर चने का सत्तु, एक चूंदड़ी, एक कब्जा (पहिनने का वस्त्र और चार टके) दो आने सदैव भेजने का वादा किया और उसी समय सभी आवश्यक उपकरण देकर उसको जल्दी पहुँचने की सलाह दी। वह उनको लेकर विदा हुआ। उसकी स्त्री ने उन उपकरणों से अपना व्रत विधिवत् पूर्ण किया।

साहूकार का वह पुत्र वेश्यागामी था। वह कुष्ठरोग पीड़ित भी था। फिर भी वह अपने कुकृत्यों से विमुख नहीं होता था। उसकी स्त्री पतिव्रता एवं साध्वी थी। वह रोज अपने पति को अपने कंधों पर बिठाकर वेश्या के घर पहुँचाती और वहाँ से फिर इसी प्रकार वापिस लाती।

कजली तीज के दिन जब उसकी स्त्री कहानी सुन रही थी, उसने वेश्या के घर जाने की इच्छा प्रकट की। अतः तुरन्त वहाँ जाने को तैयार होगई और अपने कन्धों पर उसको बिठा कर रात्रि के समय वेश्या के घर पहुँचा दिया। अचानक ही वर्षा प्रारम्भ होगई। वह उस मकान के नीचे खड़ी रही। वर्षा के वेग से नदी नाले बहने लगे। वह बेचारी वहाँ वर्षा में भीगती रही। इतने में ही पानी की धारा में तोरूँ के सात पत्तों पर सात लड्डू बहते हुए उसे नजर आए। उस जल प्रवाह में से इस प्रकार आवाज भी आरही थी—'आते जावो, जाते जावो, सत्तु के सात ग्रास बांये हाथ से लेते जावो।' उस स्त्री ने यह आवाज सुनली। उसने पत्तों पर रखे हुए लड्डूओं के सात ग्रास बाँए हाथ से बाँए पैर के नीचे से ले लिये। उन ग्रासों के प्रभाव से तत्काल ही उसके पति का कुष्ठ रोग दूर हो गया तथा वह सुचरित्रवान भी बन गया। वे दोनों आनन्द से अपने घर लौटे।

---

१. इस दिन सत्तु का लड्डू खाये जाने के कारण इसको सातूड़ी तीज भी कहते हैं—सम्पादक।

घर आकर उस स्त्री ने सारा वृत्तान्त अपने पति से कहा। साहूकार ने नगर में ढिंढोरा पिटवा दिया कि कजली तीज का व्रत भाई की बहिन, पति की पत्नी सभी कहानी सुनकर किया करें।[1]

३३:१:४. पुराण में इस तृतीया का इस नाम से उल्लेख नहीं पर भविष्य पुराण (बीसवां अध्याय) में 'भाद्रकृष्ण तृतीया' को कुछ मान्यता अवश्य दी है—इसका उद्धरण यों है:—

तृतीयाकल्पारम्भ, गौरी तृतीया व्रत विधान औ फल

सुमंतुमुनि कहते हैं कि हे राजा जो स्त्री सब प्रकार का सुख चाहै वह तृतीया का व्रत करै औ लवण न खाय तो उसको गौरी भगवती रूप सौभाग्य औ लावण्य देती हैं इस व्रत का विधान गौरी ने अपने मुख से धर्मराज प्रति कहा है वही हम वर्णन करते हैं। गौरीदेवी ने कहा है कि जो स्त्री इस व्रत को करै वह सदा अपने पति के साथ आनन्द भोगे जैसा शिवजी के साथ मैं भोगती हूँ विवाह के प्रथम कन्या यह व्रत करै सुवर्ण की गौरी की मूर्त्ति स्थापन करै औ भक्ति से चित्त लगाय पूजाकर भाँति-भाँति की नैवैद्य लगावै औ रात्रि का लवण रहित भोजन कर स्थापन की हुई मूर्त्ति के आगे शयन करै औ दूसरे दिन ब्राह्मणों को भोजन कराय दक्षिणा देवै इस प्रकार जो व्रत करै वह उत्तम पति पावै औ चिरकाल तक भूमि पर उत्तम भोग-भोगकर संतान को स्थापन कर पति सहित सूर्य लोक को जाय वहाँ बहुत काल सुख भोगकर ब्रह्मलोक को वहाँ से सप्त ऋषियों के लोक को औ वहाँ से शिवलोक में प्राप्त होय विधवा स्त्री इस व्रत को करै तो वह भी अपने पति से जाय मिलै औ बहुत-काल स्वर्ग के सुख अपने पति के सहित भोग करै औ पहिले कहा हुआ सब फल पावै इन्द्राणी ने यह व्रत पुत्र के अर्थ किया तब जयन्त नाम पुत्र पाया अरुन्धती ने उत्तम स्थान के लिये किया जिसके प्रभाव से पति सहित सब के ऊपर स्थान पाया औ आजतक आकाश में देख पड़ती है रोहिणी ने सब पत्नियों के जीतने के लिये यह व्रत किया औ लवण न खाया तब सब सपत्नियों में प्रधान औ अपने पति चन्द्रमा की अतिप्रिया भई इस प्रकार यह व्रत उत्तम फल देनें हारा है बैशाख भाद्रपद औ माघ की तृतीया सब तृतीयाओं में उत्तम हैं जिसमें भाद्र औ माघ की तृतीया स्त्रियों के लिये विशेष फल देने हारी हैं और बैशाख की तृतीया सब के लिये साधारण है माघ की तृतीया को गुड़ औ लवण का दान करै गुड़ के दान से इन्द्र औ लवण के दान से शची प्रसन्न होती हैं। गुड़ के अपूर्व भाद्र की तृतीया को दान करै औ पायस दान करै तो शिव पार्वती प्रसन्न होयँ औ बैशाख की तृतीय को मोदक औ शीतल जल का दान करै तो सब देवता प्रसन्न होयँ बैशाख की तृतीय अक्षय तृतीया कहाती है इस दिन अन्न वस्त्र भोजन सुवर्ण जल आदि जो दान करै वह अक्षय हो जाता है इसीसे इस तृतीया का नाम अक्षय तृतीया है इस तृतीया को शीतल-जल से भरे हुये पात्र का जो दान करै वह सूर्य्यलोक को जाय हे राजा शतानीक इस तिथि को उपवास

१. भाद्रपद कृष्णा ४ को जो कहानी राजस्थान में कही जाती है वह वरदा के तीसरे अंक में प्रकाशित हो चुकी है।

करै तो ऋद्धि वृद्धि औ लक्ष्मी यह तृतीया का कल्प जो सुनै वह भी उत्तम फल का भागी होता है।

३३:२. **गणेश चतुर्थी**

भाद्रपद कृष्ण चतुर्थी को 'गणेश चौथ' मनायी जाती है। इस दिन 'गणेश पूजन' होता है और गणेश-जन्म की कथा भी कही जाती है। 'गणेश-चतुर्थी' की यह कहानी कुल के पंडित ही आकर सुनाते हैं। चतुर्थी के चन्द्र दर्शन पर चन्द्रमा को अर्घ्य देकर इसका व्रत खोला जाता है।

३३:२:१. 'गणेश चतुर्थी' की यह कथा बहुत प्रसिद्ध है।

इसका सरांश यह है—नारद जी ने पार्वती जी से कहा कि क्या आप जानती हैं कि शिवजी मुंडमाला क्यों पहनते हैं। शिवजी से पार्वतीजी ने पूंछा। बड़ी जिद पकड़ने पर शिवजी ने कहा कि बिल्कुल एकांत हो जाने पर बताऊँगा। सब प्राणी दूर भगा दिये गये। शिवजी नें बताया कि ये आपके ही जन्म जन्मातरों के शिर हैं। पार्वती जी ने पूछा कि वह विधि मुझे भी बताइये जिससे मुझे भी बार बार न मरना पड़े। पार्वती जी को सुनते सुनते नींद आगयी, पर शिवजी कहते गये, और उन्हें लगता रहा कि पार्वतीजी हुंकारा देती जारही हैं। वह हुंकार एक तोता दे रहा था, जो कुछ पूर्व ही अंडे में से निकला था। तोता भय से उड़ा, शिवजी ने उसको मारने त्रिशूल भेजा। तोता उड़ता उड़ता कृष्ण द्वैपायन व्यास जी के घर पहुँचा, उनकी स्त्री ने जंभाई ली और तोता उनके उदर में चला गया। शिवजी को त्रिशूल लौटाना पड़ा। पर शिवजी पार्वतीजी से बहुत रुष्ट हुए पार्वतीजी रूठ कर कहीं एकान्त में चली गयीं। वहाँ अपने शरीर के मैल से एक पुतला बनाकर, उसमें प्राण फूँक दिये। वह गणेश हुए। उन्हें द्वार पर नियुक्त कर दिया। शिवजी ढूँढते हुए आये। गणेश ने बाधा दी, उनका सिर काट डाला। पार्वतीजी ने गणेश को जीवित करने की हठ की। शिवजी के गण एक हथिनी के बच्चे का सिर काट लाये। उसे लगाकर गणेश जी को जीवित कर दिया गया। शिवजी उन्हें और स्वामी कार्तिक को लेकर विष्णु के पास गये। विष्णु ने बुद्धि की परीक्षा के लिए कहा कि तुम दोनों में से जो सबसे पहले पृथ्वी की परिक्रमा करके लौट आयेगा, उसे पुरस्कार मिलेगा। स्वामी कार्तिक मोर पर चढ़कर भागे। गणेशजी उठे और उन्होंने विष्णु की परिक्रमा करके कहा कि मैं आगया, पुरस्कार दीजिये। पुरस्कार में उन्हें लड्डू मिला। इस प्रकार गणेश सबसे बुद्धिमान माने गये।

३३:३. **नागपांचे**

कहीं कहीं 'नागपांचे' भादों में भी मनाई जाती है, जैसे लोहवन के रावत ब्राह्मणों में। किन्तु इसका विधान प्राय: वही होता है, जो पहले श्रावण की नागपाँचे को बताया जा चुका है।

३३:४. **छठ**

भाद्र कृष्ण पक्ष की छठ ब्रज में नहीं मनायी जाती। किन्तु पूर्व में इसका बहुत महत्व है। यहाँ हम इस छठ के अनुष्ठान का विवरण डा० गंगाचरण त्रिपाठी के शोध-प्रबंध से देते हैं :—

३३:४:१. ललही छठ

छट्ठी माता—भाद्र कृष्ण पक्ष की षष्ठी को पुत्रवती स्त्रियाँ व्रत रहतीं और देवी की पूजा करती हैं। इस व्रत को 'ललही छट्ठ' कहा जाता है। ललही छट्ठी को कभी कभी 'हल षष्ठी' भी कहा जाता है। इस दिन जो स्त्री व्रत रहती हैं वह किसी ऐसे स्थान पर नहीं जातीं जहाँ पर कभी हल चलने की संभावना रहती है। इस व्रत में कोई ऐसी वस्तु खाई भी नहीं जाती जिसको हल की सहायता से जुताई अथवा बोआई करके उत्पन्न किया जाता है। अतः इस दिन जो स्त्री व्रत रहती है वह देवी को चढ़ाने के अतिरिक्त अपने लिए किसी अनाज का उपयोग नहीं करती।

दोपहर के समय व्रत रहने वाली स्त्री अपने आस-पास के घरों की स्त्रियों के साथ किसी निश्चित स्थान पर एकत्रित होती और एक छोटा सा कुण्ड (सगरा) बनाकर उसमें कुश और पलाश की पत्ती डालकर पूजा करती हैं। पूजा करते समय सभी स्त्रियाँ अपने-अपने पुत्रों का मुख उस कुण्ड के जल में धोतीं और उनकी आँखों में काजल लगाती हैं। पूजा के लिए सात प्रकार का भूना अनाज, भैंस का दूध, करेमुआ का साग, महुआ और फसड़ी का चावल आदि वस्तुओं की आवश्यकता पड़ती है। पूजा कर लेने के पश्चात् छट्ठी माता की कहानी कही जाती है और अन्त में गीत गाये जाते हैं, वे प्रायः जन्म के अवसर पर गाये जाने वाले सोहर ही होते हैं। कुछ देर गाना बजाना कर लेने के पश्चात् सभी स्त्रियाँ अपने अपने घर जातीं और करेमुआ का साग, भैंस का दूध तथा फसड़ी के चावल का आहार करती हैं। नोट—फसड़ी उस धान को कहा जाता है जो बरसाती पानी के साथ बहकर आता और तालाब में बिना बोये अथवा जोते उत्पन्न हो जाता है। यह एक प्रकार की घास है। खाने में इसका चावल बहुत फीका लगता है।

३३:४:१:२. इस अवसर पर जो कहानी कही जाती है वह यों है :—

छट्ठी माता की कहानी

अइसे अइसे एक देवरानि अउ जेठानि रहयं। देवरनियाँ बेचारी बड़ी गरीब रही अउ जेठनियाँ बहुत धनी रही। भुलाऊ अपनी देवरानी कय कुछु खयाल वोआल नाहीं करत रही। देवरनियाँ बेचरिया दिन भरि उनके इहाँ मिहनत मजदूरी करइ अउ पीसइ कूटइ तउ वह संझा कइ ओहका एक अढ़इया (एक सेर) जौ देति रहीं। उः बेचारी मेहनत मजदूरी से जौन कुछु पावत रही उही से आपन अउ अपने लरिकन कय पेट चलावत रहय। एक दिन उनकय जेठनिअऊं वोकरे ऊपर नराज होइ गयीं। वह दिन छट्ठी माई क बरत रहा। वो कहेनि कि तू अब काम वाम नाहीं करतू। खाय खाय मोटाय गइउ। एहसे आजु हम तोहका कुछु न देब तउ तोहारि मोटाई झरि जाये। बेचारी देवरनिया बहुत कहेसि कि बहिनि आज छट्ठी माई क पूजा करइ के बा कुछु दइ देअ। मुला उनके गटई के तरे न गवा वह सोझइ कहि देहिनि कि हम अपनेनि बरे मरत हई तउ तोहक कहाँ से पाई। ऊ बेचारी बहुत कहेसि मुला वह नाहीं पसीजीं। वह हियाँ ताईं

कहीं कि वहि दिन कय वहकय मंजूरिउ न दिहीं । बेचारी बहुत दुखी भइ । दिन भरि भूखी रही, पूजा की जूनी कवनेउ जतन से थोर के करेमुआ कय साग लइके उही से देवी की पूजा कह देहसि अउ उहइ साग खाइ लिहिसि । राति मा जउ ऊ सोवति रही तउ एक बुढ़वा आइके वहिकय दुआर खोलाय के वोहसे कहेसि कि हमका कुछु खाइ के देआ । ई सुनि के ऊ बेचारी कहेसि कि हमरे हियाँ त आज कुछु रहबइ न भवा। हम कवनेउं जतन से थोर क करेमुआ कय साग पाये हई वही से पूजा कीन हय अउ उहइ खावउ भये ह । तुहूं उहइ खावा चाहत हये तउ अब हम थोर के बचाइके घरे अही तुहका दइ देई । अउर तउ हमरे हियाँ कुछु नाहीं यां । ई सुनिके बुढ़िया कहेसि कि जउ तोहरे कुछु नाहीं रहा तउ अपनी जेठानी से काहेके न मांगि लिहिउ । उ कहेसि कि हम उनसे मांगे तउ रहे मुला वय कहीं की कि हम अपनेनि बरे झंखत हई तोहका कहां से पाई । ई सुनिके बुढ़िया कहेसि कि अच्छा लइ आवा हम ऊ साग खाब । ऊ साग लइ आइके वोके दइ देहेसि, साग खाइ लेहे के बाद कहेसि के हमरे तउ बहिरे (पाखाना) लागि बा हम कहां जाई । ऊ कहेसि कि घर भर लीपा पोता बा जहां चाहा उहां बैठि जा, सबेरे हम बहाइ देब । ई सुनि के बुढ़िया वोकरे घरे भरे में बहिरे करइ के बहाना से बइठि गइ, बहिरे कइके ऊ उहां से चली गइ ऊ मेहरारू सोइ गइ । सबेरे उठि के सोचेसि कि चली जहां बुढ़िया बइठी रही है वौके साफ कह देई । ई सोचि के जउ ऊ उहां गइ तउ उहां पर सोना देखेसि उहां से जाइके दुसरी जगह देखेसि उत उंहऊं सोना रहा, अइसे अइसे ऊ कुल गय अउ कुल सोनइ पाइसि, सोना देखिके ऊ बहुत सुखी भइ । दुसरे दिन सबेरे जउ ऊ काम पर न गइ तऊ तउ उनकरि जेठनियऊं अपन मनई से कहिनि कि जा देखि आव कि ऊ आजु काम पर काही नाहीं आयसि । जऊ ऊ मनई आइ के पूछेसि तउ ऊ कहेसि कि हमारा पेट पिरात बा । चला अबहीं अउबइ । ईमनई तउ चला गवा मुला थोड़ी बेर में उनकरि जेठनियऊं आयीं अउ ऊ घर भरे सोनइ सोना देखेसि । ऊ सोना देखिके वोकरे मन में खलबली मचि गइ । ऊ पूछेसि । कि तोहके ई सोना कइसे मिला । ऊ राति क बात बताइ देहेसि । ई सुनिके वय बेचारेउ कइमेउं मइसेउं करिके साल बिताइनि । दुसरे साल जउ छट्ठी भूखी रहीं तउ बइसेनि वइसेनि सब किहिनि । राति मां उहइ बुढ़िया आई, ओनकर घर खोलवायसि, उनसे खाब मांगेसि, ऊ कहेनि कि हमरे इहां त खाली करेमुआ क सागइ बा । बुढ़िया कहेसि कि साग तउ गरीबे कय आ, तूं तउ धनी हये, तोहरे हिंया साग न खाब । मुला जउ ऊ कहीं कि हमरे कुछ नाहींना तउ ऊ खाइ लेहेसि, खाइ पीक बहिरे क बात केहेसि अउ उहइ उत्तर पाइके घर भरे मां बहिरे कइ देहेसि । सबेरे जउ ऊ अपने घर भरे मां मइला देखीं तउ बुढ़िया के गरियावइ लगीं । उनकर सब धनवां गायब हाइगवा । उनके लालच कय फल मिलि गवा । राज पाट उलटा होयगय ।

३३ : ४ : २. पूर्व के एक गाँव कुढ़वा नूनारी से हमारे एक अनुसंधित्सु ने इसका बिशेष विस्तार से विवरण भेजा है, जो यहाँ दिया जाता है। उसने जो कहानी दी है, वह भी त्रिपाठी जी की कहानी से भिन्न है । इस अनुसंधित्सु ने लिखा है कि इस अवसर पर और भी कई कहानियाँ होती हैं । यहाँ एक ही कहानी तुलनार्थ दी जा रही है ।

---

१. देखिये डा० गंगाचरण त्रिपाठी का शोध प्रबंध, प्रयाग विश्वविद्यालय ।

३३:४:२:१.

ललही छठ का व्रत (कुढ़वा-नुनारी से)

तिथि	देवता	पूजन सामग्री	पूजन विधि	अनुष्ठान	फल	विशेष
भादव कृष्ण ६	१. ललही गोसाँई २. गौरि ३. सियामाई देवता का स्थान—ढाक की टहनी और कुश को जमीन में गड्ढा बनाकर गाढ़ दिया जाता है। उसमें अर्घा बनाकर पानी भर दिया जाता है। अर्घा के बगल गौरि रखी जाती है। पूजा इसी ढाक और कुश की होती है। गौरि को सिन्दूर और हर्दी ही चढ़ाई जाती है।	१. महुआ २. भैंस की दही ३. तिन्नी या बोरउ का चावल। ४. १२ मिट्टी का कोसा ५. नया कपड़ा ६. सिन्दूर ७. आग ८. हर्दी ९. मिट्टी का दीपक। १०. सेमल की रुई और कम्बल के ऊन की मिली बत्ती। ११. भैंस के घी या महुये के तेल का दीपक १२. जल	१. ६वार किस्सा २. हवन ६ बार ३. जल ६ बार ४. अंगूठा और कनिष्ठा के योग से कुश में गाँठ दी जाती है।	१. जोते बोये खेत में न जाना। २. जोते बोये खेत का अन्न न ग्रहण करना ३. भैंस के अलावा किसी अन्य जानवर का दूध दही न खाना। ४. बोरउ या तिन्नी के चावल को ही खाना या भैंस के दूध दही को ही खाना। ५. महुये की ही दातौन करना	१. पुत्र प्राप्ति २. धन प्राप्ति	केवल वही औरतें माँग लेती हैं जिनको पुत्र पैदा हुआ रहता है।

३३:४:२:२ अनुष्ठान

"ललही छट्ठें" का व्रत हमारे यहाँ भादव के कृष्ण पक्ष के ६ को मनाया जाता है। इस में व्रत केवल वही औरतें करती हैं जिनको पुत्र पैदा हुआ रहता है। क्वारियाँ या वे औरतें जिन्हें पुत्री पैदा होती हैं, इस व्रत में भाग नहीं लेतीं। व्रत के दिन औरतें महुआ, भैंस की दही या दूध तथा बोरउ का चावल या फसही का चावल ही खाती हैं। इस दिन दातौन भी महुये की ही की जाती है। व्रत के दिन औरतें, जोते और बोये हुए खेत में नहीं जातीं। इसको देखकर लगता है, कि जुते हुए और बोये हुए खेत या उसमें पैदा हुए अन्न का वर्जन है। क्योंकि बोरऊ और फसही नामक जिस चावल का उल्लेख ऊपर किया गया है, उसमें से बोरऊ गंगा के किनारे दलदल में पैदा होता है और फसही (तिन्नी) तालों में अपने आप पैदा होता है।

पूजन विधि—ललही का समय दिन में कब तक है इसकी सूचना पुरोहित पत्रा देखकर देता है। उसी समय औरतें वहाँ जाती हैं। पूजन के लिये १२ मिट्टी का कोसा काम में आता है, इसको हल्दी से रंग भी दिया जाता है। इसको महुये से भर दिया जाता है, उसके ऊपर से भैंस की दही और बोरउ या तिन्नी का चावल रखा-जाता है। इनके साथ नया कपड़ा (पहले प्रथा जनानी धोती की थी, अब कोई भी नया कपड़ा) भी चढ़ाया जाता है। इसे बाद में या तो ब्राह्मण को दे दिया जाता है या घर के ही उपयोग में लाया जाता है। इसी महुये से भरे कोसे तथा कपड़ा और भैंस की दही तथा चावल की पूजा की जाती है। पूजा के स्थान पर ढाक की टहनियों को तथा कुश को गाड़ दिया जाता है। उसके चारों ओर अर्घ बना कर उसमें जल भर दिया जाता है। कुश में ६ गाँठ दे दी जाती हैं। पूजा करते समय ६ बार हवन किया जाता है, ६ बार जल दिया जाता है तथा सिन्दूर भी चढ़ाया जाता है। एक बार किस्सा कह कर कुश में एक एक गाँठ दी जाती है। इस प्रकार ६ गाँठ दी जाती हैं। हर बार औरतें कहती हैं कि यह सीयामाई का व्रत है। गौर की भी पूजा की जाती है। इसके साथ-साथ हर बार एक किस्सा कहा जाता है इस प्रकार ६ किस्से कहे जाते हैं। घर लौटते समय औरतें महुआ आदि सामग्री साथ लाती हैं और इसे भैंस को खिलाती हैं। लड़के भी खाते हैं। इस प्रकार व्रत समाप्त होता है।

ललही के बारे में कोई औरत यह कहती है कि यह जाति की गोसांइन थी तो कोई कहती हैं कि अहिरिन। भैंस का बार-बार उल्लेख होने से मुझे लगता है कि यह आभीर जाति की ही रही होगी। मुझे मूल कथा का पता अभी नहीं लग सका है, कि कैसे ललही को इस प्रकार देवी की मान्यता मिली है। एक किस्सा लिखा जा रहा है जो पूजन के समय कहा जाता है। यों इस तरह के अनगिनत किस्से प्रचलित हैं।

३३:४:२:३. किस्सा ललही छठ के दुलदुलआ का किस्सा

एक था राजा, उसके खानदान में किसी को बाल बच्चे नहीं थे सभी बांझ थे, मय हाथी, घोड़ा, गाय, भैंस, चेरी, वगैरह सभी की यही हालत थी। ललही छठ का

दिन आया सभी गाँव की औरतें तालाब के किनारे जुट कर पूजन कर रही थीं। रानी की चेरी एकाएक वहां पर पहुँच गई। उसके मन में यह बात आई कि हमारे रानी की भी यही दशा है, आज मैं यहाँ का किस्सा सुनकर ही तथा प्रसाद लेकर ही घर लौटूंगी जब किस्सा समाप्त हो गया और औरतें प्रसाद बांटने लगीं तो उस चेरी ने हाथ जोड़ कर सबसे प्रसाद माँगा। और लौटते समय ललही गोसाईं से यही प्रार्थना करके लौटी कि हे गोसाईं हमारी रानी को भी यदि आप ऐसा दिन दिखावें तो परसाल रानी बड़े धूमधाम से आपकी पूजा करने आयेंगी ऐसा कह कर घर गई और रानी को प्रसाद दिया। साथ ही हाथी, घोड़ी, चेरिया तथा भैंस आदि सबको भी। भैंस जो तालाब के किनारे बैठी थी उसके कान में अच्छत पड़ गया, वहाँ के पात-पत्रों को उसने खाया भी। यानी सबके पेट में प्रसाद चला गया। एक वर्ष बाद रानी को लड़का (पुत्र) पैदा हुआ। ललही छठ के दिन रानी ने बड़े धूमधाम के साथ पूजन किया। धीरे धीरे लड़का ४-५ वर्ष का हो गया। लड़का भगवान के यहाँ से बचन बंधवा कर आया था, वह आ नहीं रहा था, भगवान ने जबरदस्ती उसे भेजा था और कहा था कि जब तुम्हें कोई चीज की जरूरत हो माँगना अगर न मिले तो चले आना। एक संकरी कुतिया थी वह भगवान के यहाँ से भी खबर ले आया करती थी और रानी के यहाँ रहती थी। जब यह समाचार कुतिया ने सुना तो रानी से आकर बोली हे रानी तुम बहुत सावधान रहना यह लड़का बिना मौसम की चीज मांगेगा और उसे देना पड़ेगा नहीं तो यह चला जायगा। रानी सारा सामान इकट्ठा करके रखे हुई थी। सावन महीना में गंगनधूर खेलने के लिये मांगा, सामन भादव में बिना मौसम के ऊख मांगा, मामा के हाथ की बनायी खीर गंगाजी में उनके हाथ से खाया। जो कुछ मांगता गया रानी सब कुछ देती गयी। आगे साल की छठ आयी रानी पूजा (ललही) करने चली गयी लड़का भी साथ में गया। रानी ने सबसे हाथ जोड़कर प्रार्थना किया कि जो भी किसी का नुकसान होगा हम उसको दूना देंगी मगर कोई हमारे लड़के को कुछ न कहे। दूसरे के लड़के का दूसरे को दर्द कहाँ। रानी का लड़का तालाब से हाथ पाँव में कीचड़ पोते रोते चला आया और अपनी मां के पास जा रहा था। उनके पास जो औरत बैठी थी उसने बड़े जोर से चिल्ला कर कहा कि तुम्हारे ही दुलऊआ हैं और किसी के नहीं, हमारा सारा कपड़ा खराब कर दिया। लड़के को औसर मिला गया वह रोते रोते पीछे को लौट पड़ा। माँ भी पूजन छोड़ कर रोते पीटते चल पड़ी। परन्तु लड़के ने न पीछे मुड़ कर देखा न बोला। रानी बेहोश हो कर गिर पड़ी। जाते जाते वह भगवान के यहाँ पहुँच गया। देखते ही भगवान ने सोचा क्या गलती हुई है कि तुम चले आये। पहुँचते ही भगवान पूछने लगे। लड़के ने कहा हमारा बन्धन पूरा हो गया मैं चला आया। भगवान ने कहा अच्छा किया, मगर हमारे कहने से जाओ और उसके जिन्दगी भर रहना उसकी मिट्टी का पार लगाकर फिर चले आना। लड़का इतनी बात सुनकर लौट पड़ा। रास्ते में देखा की माँ नंगी पड़ी है। पहुँचकर उसे उठाया, वह होश में आई। लड़के को लेकर घर आई और ललही का पूजन किया। जैसे ललही माँ ने रानी को दिया वैसे सब को दें।

इस प्रकार एक किस्सा समाप्त हुआ फिर दूसरा कहा जाता है। दूसरा किस्सा भी इसी प्रकार कहा जाता है। किन्तु सभी भिन्न-भिन्न हैं।

नोट—मैंने सुना है कि पुरोहितों के लिये इस व्रत की कोई छपी पुस्तक संस्कृत में भी मिलती है।

३३:५ जन्माठें

कृष्ण जन्माष्ठमी भाद्र कृष्ण पक्ष की अष्टमी को होती है। व्रत रखा जाता है, और मध्य रात्रि को चन्द्रोदय पर कृष्ण जन्म का उत्सव मना कर पूरी-पकवान पंजीरी-चरणामृत लेकर समाप्त किया जाता है। जगह-जगह पर हिंडोले डाले जाते हैं, जिनमें कृष्ण की मूर्ति स्थापित की जाती है। बड़े-बड़े मंदिरों में यह आयोजन बड़े विशाल रूप में होता है।

इस त्यौहार पर कोई विशेष लोकाचार नहीं होते। तरह-तरह के भजन-गीत गाये जाते हैं।

जन्माठें के बाद नवमी को मथुरा (व्रज) में हल्दी मिला दही फेंकने का उत्सव होता है। यह दधिकांदों कहलाता है।

३३:६ चट्टा चौथ **डंडा चौथ** **पथर चौथ** यह भी गणेश चतुर्थी का ही एक रूप है। इसके दो नाम और हैं। डंडा चौथ तथा पथर चौथ 'चट्टा' विद्यार्थियों को कहते हैं, जैसा 'चटशाला' शब्द से प्रकट है। व्रज में 'गणेश-पूजन' के माध्यम से यह चौथ 'गुरु पूजन' की चौथ हो गयी है। सम्भवतः इसकी प्रधानता ने 'गुरु पूर्णिमा' का महत्व व्रज में कम कर दिया है। यह भाद्र शुक्ल चतुर्थी को मनायी जाती है।

३३:६:१ इस दिन विद्यार्थी गण सजधज कर चटशाला में गुरुजी की सेवा में उपस्थित होते हैं। गुरु जी के लिए कुछ दक्षिणा और भेंट भी ले जाते हैं। कहीं-कहीं सुलेख की प्रदर्शनी भी की जाती है। पट्टी पर विद्यार्थी सुलेख लिखते हैं। पट्टियाँ सजायी जाती हैं। प्रत्येक विद्यार्थी के पास एक डेढ़ वालिश्त लम्बे दो रंग-विरंगे डंडे होते हैं। ये भी विद्यार्थियों के संबंध से 'चट्टा' ही कहलाते हैं। सामान्यतः लोग 'चट्टा' से इन्हीं डंडों का अर्थ ग्रहण करते हैं। इन्हीं 'डंडों' के कारण इसे डंडा चौथ भी कहा जाता है।

३३:६:१:१ समस्त विद्यार्थियों के एकत्र हो जाने पर गुरू जी महाराज भी सुन्दर वेश-भूषा में उनके साथ चटशाला से निकल पड़ते हैं—डंडे या चट्टे बजाते हुए, और प्रायः विनोद के गीत गाते हुए ये चट्टे विद्यार्थियों के घरों पर तथा नगर या गाँव के विशिष्ट व्यक्तियों के घरों पर जाते हैं। वहाँ उनको कुछ न कुछ प्रसाद के रूप में बँटता है, या गुरुजी को भेंट मिलती है।

३३:३:१:२ इस अवसर पर मथुरा में जैसे गीत गाये जाते हैं उनके कुछ नमूने ये हैं :—

(१)

बड़-भागिनि जो होवै नारि, चट्टा आमें ताके द्वार।
हंसि मुसिकाइ सबंन ते बोलै, रहसी फूली आँगन डोलै।।

हमरे धन्य भाग त्रिपुरारी पूरन आसा भई हमारी।
ऐसे चट्टा नित-नित आमें, मन हमरे की कली खिलामें ।।
सेवा सब की करूं बनाइ, चिरजीवौ सबके लरकाइ ।
मन-बिचारि हिय सें अस बोलें, पुत्र-खुसी में सब तिय डोलें ।।
पुत्र-दु:ख जा तिय कूं होइ, ताकी गति प्रभु जानें सोइ ।
सो तिय गनपति पूजा करैं, ताके सब दुख गनपति हरैं ।।

(२)

उठ, उठ री मोंहन की मा, भीतर से तू बाहर आ ।
गढ़े-गढ़ाए रुपिया ला, पंडित जी कूं बागौ ला ।।
मिसरांनी कूं तीहर ला, चट्टन कूं मिठाई ला ।
चट्टा दिंग्गे बड़ी असीस, बेटा हुंग्गे नौ सौ तीस ।।
आठौ बसंतक सुन चकपैया, अब का देखा लाऔ रुपैया ।

(३)

गुरु गोबिंद का धरकर ध्यांन, सेठ-चूही का करूं बयांन ।
एक चूही नां मन में डरी, उछरि सेठ की धोती परी ।।
चूं, चूं, चूं धोती में करैं, बनियां धोती पकरें फिरैं ।
जब बनिए नें दई दुहाई, घर ते दौड़ बनेंनी आई ।
हुआ सोर कोलाहल भारी, भीर हुई बनियों की भारी ।
कोई लेवें सेर-दुसेरी, कोई ले पक्की पसेरी ।।
कोई देवता सुमिरैंन लागे, सब नें मिलि पंचायत कींनीं,
　　　　बार-फेर चूही कूं दींनीं ।।

आ चूही तू बाहर आ, घी सक्कर का भोग लगा।
जब चूही नें दांत दिखाए, सात-पांच बनियां लुढ़काए ।।
जब चूही नें दियौ झटोका, खुलि गई धोती चलें पिटोका ।
होस भयौ बिल में गई चूही, कहन लगे अब हारी तू ही ।।
आयौ बसंतक सुनि लेउ सही, बीर सेठ की चौपई कही ।

३३:६:२. इसी चौथ को 'पथर चौथ' कहा जाता है । इस दिन यदि चन्द्रमा दिखायी पड़ जाता है तो लोग उस पर पत्थर फेंकते हैं । कहीं कहीं ये इतने जोर से फेंके जाते हैं कि चन्द्रोदय के समय बाजार-हाट के मार्ग बंद हो जाते हैं, और छतें तथा गलियाँ पत्थरों से पट जाती हैं ।

३३:६:२:१. इस रिवाज के संबंध में एक मत तो गुप्ते महोदय ने बताया है कि 'गणेश-दिवस पर हिन्दू चन्द्रमा को नहीं देखते ।' यदि अनायास वह कभी दिखायी पड़ गया तो वह इस पाप का प्राक्षालन संकष्ठी चतुर्थी पर व्रत रख के करता है अथवा इसी महिने की दूसरी चतुर्थी पर व्रत रखता है--'कुछ क्षेत्रों में यह विश्वास इतना प्रबल है कि यदि स्त्री या पुरुष चन्द्रमा को इस दिन देख लेता है तो वह यह सोचता है कि

यदि उसे दूसरे दिन कोई बुरा भला नहीं कहेगा, या गाली नहीं देगा तो उसका अहित होगा। इसीलिये ये लोग रात को पड़ौसियों की छतों पर पत्थर फेंकते हैं। जिससे वे चिढ़ें और गाली दें। इसके लिए विचारी पुलिस को इस भारत भर में बहुत सावधान रहना पड़ता है।'

३३:६:२:१:१. इसके लिए उन्होंने स्कंद पुराण का हवाला दिया है। गणेश जी एक बार चंद्रलोक के मार्ग से जा रहे थे कि चूहे पर से गिर पड़े। इस पर चन्द्र उन पर हँस पड़ा। तब क्रुद्ध गणेश जी ने शाप दिया कि जो आज के बाद तेरा मुख देखेगा, वह धर्म के विरुद्ध आचरण करने के अपराधी के रूप में बदनाम होगा। इससे विश्व में हाय तोबा हो गयी। चन्द्रमा कमल में छिप कर बैठ गया। देवताओं ने जैसे तैसे गणेश जी को प्रसन्न किया। तब उन्होंने कहा कि यह शाप केवल चौथ के चन्द्रमा देखने से ही लगेगा। किन्तु जो मुझे दूज के दिन देख लेंगे उन्हें नहीं लगेगा। आकस्मिक रूप से जो चौथ का चन्द्रमा देख लेंगे, वे यदि दूसरे पक्ष की चतुर्थी को व्रत रखें, ब्राह्मण भोजन करायें, और मेरी स्वर्ण मूर्ति दान में दें तो शाप-मुक्त हो जायेंगे। उसी समय से यह पत्थर फेंके जाने लगे।

३३:६:२:२ इसी संबंध में एक कथा भगवान कृष्ण पर लगाये गये झूठे अपवाद की कही जाती है। कृष्ण को स्यमंतक मणि की चोरी का अपवाद लगा था। इस अपवाद का कारण यही बताया गया था कि--

"चांद चौथ कौ देखियौ मोहन भादौं मास"

इसी कारण उन्हें यह अपवाद लगा। गणेश पूजन से अथवा उक्त कथा को सुनने से शाप से मुक्ति हो जाती है। यह कथा स्कंद पुराण की ही है। भगवान कृष्ण ने गणेश-पूजा की थी।

ब्रज में कहीं-कहीं यह माना जाता है कि चन्द्रमा को देखने से जो पाप लगता है। वह चन्द्रमा पर पत्थर फैंकने से दूर हो जाता है। इसीलिये ये पत्थर बरसाये जाते हैं।

३३:६:३ विशिष्ट पौराणिक कथाओं का उल्लेख ऊपर हो चुका, पर गणेश चतुर्थी के अवसर पर कुछ लोक-कथाएँ भी कही जाती हैं। यहाँ ऐसी दो कथाएँ दी जाती हैं। एक भारद्वाज जी के संग्रह से है, दूसरी हमें संग्रह में प्राप्त हुई है।

३३:६:३:१

(१)

गणेशजी की कहानी

मां बेटा दो जने थे सो मां तीज को गणेशजी का वर्त रहती सो पार परोसिन कहा करती थी कि तू तो मांग जांच के लावे और तेरी मां चकल मलीदा खातियें। एक दिन छोरा बोला कि मां तू कौन के ऊपर बर्त रहो करत है। तेरे ऊपर रही हूँ तू कहूँ देश परदेश जाय तो तोपै कोई ओखा परे तो इन जौं कू अपने पास बे दीजियो। बेटा बोला कि मां मैं तौ देश परदेश जाऊंगो बेटा गया मां ने जौ दे दिये और उसने कही कि तोपै कहीं

ओखा पर जाये तो इन जौन कूं बो दीजियो बेटा चलदिया चलते चलते एक नगर में पहुंचा तो वहां एक कुम्हारी बैठी रोय रही थी। वह लड़का बोला कि माता तू खड़ी खड़ी क्यों रो रही है। भइया रोय का रही हूं राजा की लड़की का स्वयम्बर है सो मेरे नाती बेटा को राजा तोप के मुंह उड़वा देगो । मेरे एक भी वर्तन अवा में साबित नहीं उतरता है। लड़का ने कहा कि इसका कोई उपाइ है। कुम्हारी ने कहा कि एक ब्राह्मण का लड़का होय तो जामें दे दूं सो हाल पक जाय। लड़का ने कहा कि माता मोय दै दै। कुम्हारी अपने मन में तो बहुत प्रसन्न हुई लेकिन बोली कि बेटा तोय कैसे दे दूं तू तो काऊ एकलौती का पूत है। मइया मोय तो तू देई दै तो तू कुछ खाइ लै। बेटा ने कही कि मुझ को भूख नहीं है, झट कुम्हारी ने अवा में दे दिया चारों ओर जौ बोइ लिए और बैठ गया। गणेश जी महाराज का भजन करता रहा। तीसरे दिन अवा पक गया। कुम्हारी खोलने लगी। उसके अन्दर तो लड़का बैठा हुआ था तो वह लड़का कहने लगा कि मइया धीरे धीरे मेरी आँख धूरन गिरे। कुम्हारी ने कहा आर्य जितो जिन्दोरे नाती बेटा बोले कि जामें कोऐ वाने कही कि भइया मैंने तो यामें एक लड़का दे दियों कितो अच्छौ करो। कुम्हारी राजा के यहाँ बर्तन लै के गई। राजा ने कहा कि पहिले तो अवा पकता नहीं था अब कैसे अवा पक गया। कुम्हारी ने कहा कि चांय महाराज मारौ चांय छोड़ौ मैंने तो एक ब्राह्मण का लड़का अवा में दै दिया था। राजा ने वह लड़का बुलाया और पूछा कि कि तू अवा में क्यों नहीं जला लड़का ने कहा कि मेरी मां ने जौ दिये थे और कहा था कि जब तो पे ओखा परे तो इन जौन कूं बैलीयो सो मैंने बोय लिए। राजा ने कहा अपनी मां को बुलाओ। लड़के ने अपनी मां बुलाई। बुढ़िया से राजा ने कहा कि तोपे ऐसा कहा गुन है। बुढ़िया ने कही कि मोमें तो कछू गुन नहीं है। गणेश जी का व्रत जरूर रहती थी। सो वाके जौ इसको दै दिये। राजा बहुत प्रसन्न हुआ और अपने देश में ड्यौढ़ी पिटवादी कि गणेश चौथ का व्रत रहा करें। अपनी पुत्री की शादी उस लड़के के साथ करदी। बुढ़िया और बहू बेटा समेत अपने घर आई और बहुत सा धन लाई।

३३:६:३:२

(२)

एक बामनी बाहर जा रही थी रास्ते में उसे गणेशजी मिले। बोले—बुढ़िया, मेरी खीर बना देगी। कहा—बना दूंगी। उन्होंने एक दोवला दूध और डेढ़ चावल दिया। बुढ़िया दूध चावल लेकर घर आई, अपनी बहू को देकर बोली कि इसकी खीर बना ले, गणेशजी लेने को आवेंगे। दूध और चावल देख कर बहू को झुंझलाहट आई, और उसने एक बड़े से बर्तन में उसे रांधने को रखा। गणेशजी की माया से बर्तन ऊपर तक भर गया। जब खीर हो चुकी तो बहू ने एक बड़ा सा थाल भर के और किवाड़ की ओटक में बैठ सास से दुबका के बोली कि गणेशजी महाराज रिजु हो जाओ और खा गई। इतने में बुढ़िया आई, बोली जिसकी खीर है उसे बुला लाओ, ले जाय अपनी खीर। बुढ़िया बाहर आवाज देती फिरी 'गणेशजी, गणेशजी' इतने में वे आये और बोले —मैंने तो अभी खीर खाली जब तेरी बहू ने किवाड़ के पीछे थाल परोस कर कहा गणेश जी महाराज रिजु हो जाओ। बुढ़िया ने आकर बहू से ऐसे ही कह दिया। अब उन्होंने खूब तो खाई और खूब ही पड़ौसिनों में मेल मुलाकात में बाँटी तो भी खीर न निबटी। बहू को गुस्सा आया, सास

से बोली जिसने यह खीर रंधवायी है उसी से कहो कि यह निपटती ही नहीं। फिर उसने बाहर जाकर आवाज लगाई। बड़ी मुश्किल से गणेश जी आये; बोले अपनी बहू से यह कह दीजो कि उलटा चमचा फेर देवे तो सारी निबट जायगी। बहू ने जो उलटा चमचा जो फेरा तो सारी खीर निबट गई।

(भारद्वाज जी के संग्रह से)

३३:६:१. गणेश जी संबंधी और भी कहानियाँ हैं जो कार्तिक स्नान में कही जाती हैं। सकट चौथ की कहानी भी गणेश जी की ही कहानी है। इनका उल्लेख यथास्थान किया जायगा।

३३:७. बल्देव छठ

जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है, यह बल्देव जी या बलराम जी से संबंधित है। इस दिन व्रज में 'बल्देव' नाम के गाँव में दाऊजी या बल्देव जी के मन्दिर में बड़ा मेला लगता है। हाथरस का भी दाऊजी का मेला बहुत प्रसिद्ध है। अन्य स्थानों पर भी यह मेला या उत्सव मनाया जाता है।

३३:७:१ बल्देव या बलराम कृष्ण के बड़े भाई थे। ये शेषावतार माने जाते हैं। मथुरा में नाग के फणों से युक्त कितनी ही मूर्तियाँ प्राप्त होती हैं। इन्हें बल्देव जी की माना जाता है। बल्देव जी के रूप में प्रच्छन्न रूप से किसी काल नाग-पूजा या सर्प-पूजा ही विद्यमान माननी पड़ेगी।

३३:७:२. भविष्य पुराण ने षष्ठी को स्वामिकार्तिक की तिथि बताया है। क्योंकि "इसी तिथि को स्वामि कार्तिक देव सेना के स्वामी भये हैं।[1] इस पुराण के पूर्वार्द्ध में भाद्र षष्ठी को भी स्कंद अथवा स्वामिकार्तिक का व्रत बताया है। किन्तु इसी के उत्तरार्द्ध में[2] इसे **'ललिता षष्ठी'** भी कहा गया है—श्री कृष्ण भगवान कहते हैं कि हे महाराज भाद्र महिने की शुक्ल षष्ठी को रूप, सौभाग्य औ सन्तान कामना वाली स्त्री नदी पर जाय स्नान कर वहाँ से बाँस के पात्र में बालू रेत लेकर घर में आय भगवती का पूजन करे उसी पात्र में तपोवन निवासिनी ललिता गौरी का ध्यान कर सब उपचारों से पूजन करें।" इस प्रकार यही छठ शक्ति पूजन से भी संबंधित हो जाती है।

३३:७:३. बंगाल में इसी दिन चोपरा या चप्र षष्ठी मनायी जाती है। इसकी कहानी का उल्लेख आगे ओघ द्वादसी में किया गया है।

३३:८. राधाष्टमी

भाद्र शुक्ल अष्टमी को राधाष्टमी मनायी जाती है। यह भी विशेष अनुष्ठानों से संबंधित नहीं। राधा-दिवस के रूप में इसे मनाया जाता है। ब्रज में बरसाने में इसका महोत्सव भी होता है। अन्यत्र भी कुछ मंदिरों में इसका समारोह होता है।

३३:९ ओघ द्वादसी

ओघ, ओग या ओख द्वादसी भाद्रपद शुक्ल द्वादशी को मनायी जाती है। इसका अनुष्ठान इस प्रकार है।

३३:९:१. इसके अनुष्ठान के दो रूप हमें प्राप्त हुए हैं, एक मथुरा के लोहवन के रावत ब्राह्मण परिवार से। दूसरा आगरे के एक अग्रवाल परिवार से।

३३:९:२. मथुरा का अनुष्ठान इस प्रकार है :—

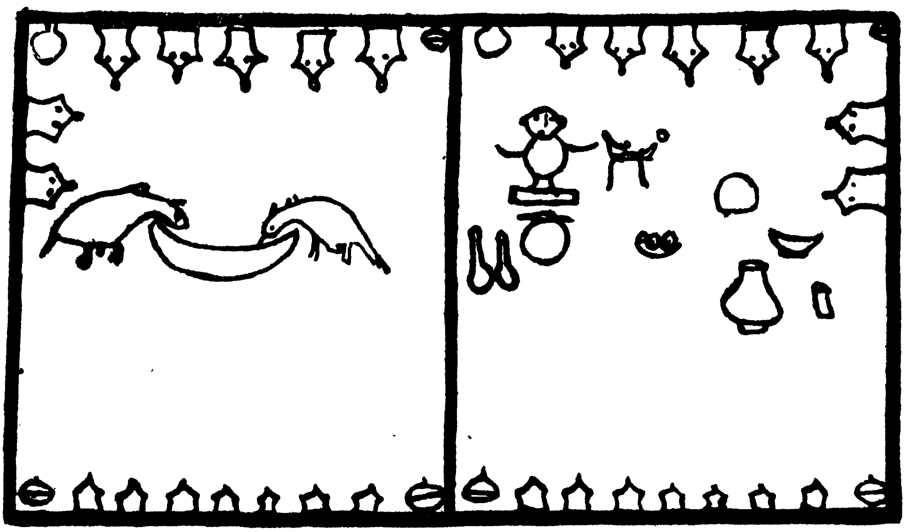
गौरी की और बछड़े वाली गाय की पूजा की जाती है। गौरी की एक मिट्टी की प्रतिमा बनाते हैं। उसको एक पट्टे पर स्थापित किया जाता है। पूजा रोरी और चावल से होती है। गाय को पाँच आटे के लोए खिलाये जाते हैं। विवाह के पहले वर्ष में गाय को फरिया उढ़ाई जाती है और चाँदी की खुरी बनवाई जाती हैं।

पाँच-सात स्त्रियाँ एक साथ भी पूजा करती हैं। दो से कम पूजा नहीं करतीं। उस समय बेरिया का डेढ़ पत्ता, दही की एक फिटक और चावल एक दूसरी के हाथ पर रखती हैं। इसको ओघ लेना कहते हैं। फिर इस सामग्री को बिना दाँत लगाये निगला जाता है। इस दिन बिना 'तीकुर' का अन्न खाया जाता है। इस अवसर पर स्त्रियाँ ओघ द्वादशी की कहानी भी कहती-सुनती हैं।

जो पुत्रवती स्त्री होती है, वह गाय का गरम दूध नहीं पी सकती। उसको बासी दूध ही पीना होता है।

३३:९:३. आगरे के अनुष्ठान का विवरण डा० श्रीमती विन्दु ने इस प्रकार दिया है :—

(१) पटे या पट्टे पर निम्नलिखित चित्र बनाया जाता है—



(२) पूजा—इस पट्टे के पास बैठकर बहू-सास या माँ-बेटे दूब को दोनों हाथों में लेकर अपने पल्ले का छोर पकड़ कर साथ में सोने या चाँदी का टुकड़ा लेकर रोली और दही में दूब को डुबा डुबा कर गाय और बछड़े की नाँद में डालते हैं, इसे ही ओख चढ़ाना कहते हैं। भीगे चने और भीगी साजी मूंग से पूजा आवश्यक मानी गई है। साथ में ओख द्वास्स की कहानी कहते हैं। फिर सबके टीके होते हैं और अन्त में बहू बाँयना काढ़ कर सास को देती है। बाँयने में कच्चे बाजरे के आटे और कच्चे चावल के आटे को लेकर उसमें शक्कर डाल कर लड्डू बनाये जाते हैं। इस चीज का बाँयना होता है। इसी अवसर पर स्त्रियाँ ओघद्वादस की कहानी भी कहती-सुनती हैं।

३३:६:४. इस अवसर पर जो कहानी कही जाती हैं, ब्रज से हमने उसके दो रूप प्राप्त किये हैं। १. लोहवन से, २. आगरे से।

गांव की स्त्रियाँ गाँव से बाहर ओघ लेने जाती थीं। उनके साथ रानी भी जाया करती थी। स्त्रियों ने रानी से कहा कि उसे तो स्वयं अपना ही तालाब ओघ लेने के लिए बनवा लेना चाहिये। रानी को बात जँच गयी। उसने राजा से ताल बनवा देने के लिए कहा, तदनुसार एक ताल खोदा गया। कुछ दिनों में जब ताल खुदकर तैयार हो गया तो उसमें पानी नहीं निकला। इससे राजा को बड़ी चिन्ता हुई। राजा ने एक साधू से पूछा कि महाराज! मेरे ताल में पानी क्यों नहीं निकला? साधू ने गिन गिनाकर बताया कि ताल किसी पहलौठी लड़के की उसकी पत्नी के साथ बलि चाहता है। इन दोनों की बलि चढ़ते ही निश्चय ही तालाब में जल भर आयेगा। रानी ने अपने निजी पुत्र और उसकी पत्नी को बलि देने का निश्चय किया। वह दोनों को साथ ले गयी और उन्हें ताल को सौंप दिया। जब वह जोड़ा तालाब के ठीक बीच में पहुँचा तो तालाब में से पानी फूट पड़ा और वे दोनों उसमें समा गये।

गाय और उसके बछड़े को साथ-साथ खड़ा करके ओघ लिये जाते हैं। एक सास अपनी बहू के साथ उसी तालाब के पड़ोस में रहती थी उसके पास एक गाय थी जिसका नाम धानूरा था और एक बछड़ा था जिसका नाम पानूरा था। सास उस तालाब को देखने के लिए गयी और अपनी बहू से कह गयी कि वह धानूरा-पानूरा रांध रखे। उसका अभिप्राय चावल और अन्न की खिचड़ी से था। किन्तु बहू उसे ठीक न समझ सकी। उसे इस घर में पहली द्वादसी पड़ी थी। उसने सोचा, यह द्वादसी पर कोई रिवाज होता होगा। अतः उसने गाय और बछड़े को, जिनके नाम धानूरा पानूरा थे, रांध लिया। जब सास लौटी और उसे विदित हुआ कि उसकी बहू ने गाय और बछड़ों को रांध डाला है तो वह स्तम्भित रह गयी। वह तब जल्दी से उस पके सामान को लेकर घूरे पर गयी और वहाँ उसे गाड़ दिया और यह प्रार्थना की कि हम लोग कोई भी अन्न का दाना आज नहीं छुआ करेंगे और न बासा खाना खायेंगे, न हम दूध और दही लेंगे। हम गाय और बछड़े की पूजा किया करेंगे। हे भगवान। यह गाय बछड़े जीवित हो जायँ। उसकी प्रार्थना सुन ली गयी और गाय और बछड़े दोनों जीवित होकर उछलते कूदते घर चले आये।

३३ : ६ : ४ : २. आगरे से जो कहानी प्राप्त हुई है, उसका रूप यह है :—

एक राजा था उसके सात लड़के और सात बहुएँ थीं। वह एक दिन शिकार खेलने गया। वहाँ जंगल में उसे एक सूखा हुआ तालाब मिला। तालाब के हजार कोस तक पानी का नाम न था। वहाँ की जनता और जानवर प्यास के कारण मर रहे थे। राजा ने वहाँ का यह हाल देखा तो उसे बड़ा दुःख हुआ। उसने एक ज्योतिषी को बुला कर पूछा कि क्या उपाय किया जाय जिससे इस तालाब में पानी आ जाय। ज्योतिषी बोला यदि कोई आदमी एक गऊ, बछड़ा और अपने बेटे के पहल पलौठी के बहू बेटे की बलि दे तो इस तालाब में पानी आ सकता है। बलि देने का निश्चय करके राजा अपने घर गया और उसने अपने सातों बहू-बेटों से पहलपलौठी का बहू-बेटा बलि के लिए मांगा। छै बड़े

बहू-बेटों ने तो मना कर दिया। किन्तु सबसे छोटी बहू राजी हो गई और बोली ससुर हम सब तुम्हारे ही हैं, मेरे बहू-बेटा भी तुम्हारे ही हैं जैसे तुम चाहो करो। राजा यह सुनकर बड़ा प्रसन्न हुआ। वह गऊ बछड़े और बहू-बेटे को लेकर ठीक तालाब के बीच बैठ गया और बोला, हे पानी देवता यदि तुम इन चारों की बलि देने से प्रसन्न होते हो तो मैं इनकी बलि चढ़ाता हूँ। राजा की यह बात कहते ही तालाब में पानी चारों ओर से घुमड़ घुमड़ कर आ गया और उसमें बहू-बेटा, गऊ-बछड़ा चारों डूब गये। राजा तैर कर बाहर निकल आया।

थोड़े दिनों बाद द्वासती का दिन आया। सबसे छोटी बहू राजा से बोली, ससुर जी जो तुमने कहा था, वह मैंने किया, अब आज जो मैं कह रही हूँ उसको तुम कर दो। 'ससुर ने उत्तर दिया, 'बहू तुम मुझे काम बताओ, मैं जरूर करूंगा।' बहू बोली, जिस तालाब में जिस जगह तुमने मेरे बेटा-बहू की बलि दी है उसी तालाब की उस खास जगह से ही तुम मेरे लिए दूब ला दो आज मेरे मन में दूब से पूजा करने की है। राजा ने हामी भर ली और वह लेने चला गया।

राजा ने उस तालाब के ठीक बीच में जाकर जैसे दूब उखाड़ी वैसे ही गऊ-बछड़ा और बहू के बेटा-बहू खिचे चले आये। राजा उन चारों को जीवित देखकर बड़ा प्रसन्न हुआ। वह इन चारों को घर ले आया। बहू अपने बेटा-बहू को देख कर फूली नहीं समाई। बहू बोली, 'ससुर तुम्हारे भाग्य'। ससुर बोला, 'बहू तुम्हारे भाग्य'।

उस दिन सारे गाँव में यह ड्योढ़ी पिटवा दी कि ओख द्वास्स के दिन बच्चे वाली औरत अपने बहू-बेटा को लेकर गाय-बछड़े की पूजा करे। गऊ का दूध नहीं पिये। दूध से बनने वाली चीजें भी न खाये। गऊ के नाम के ऊपर पड़ने वाली चीजें जैसे गेहूँ, गुड़ आदि चीजें भी न खायें। चना आदि मिस्सा खाकर दिन बिताये। ओख द्वास्स परमेश्वरी जैसा उसके किया वैसा हर किसी के करियौ।

३३:९:५. इस व्रत की इन कहानियों में कुछ ऐसे तत्व हैं जो बरवस ध्यान आकर्षित करते हैं। अत: इन पर यहाँ विचार करना समीचीन प्रतीत होता है।

३३:९:५:१. ब्रज की इस कहानी में दो बलियों का उल्लेख है। एक मनुष्य बलि है। और दूसरी गाय और बछड़े की। यह कहानी ऊपर से ही दो भिन्न-भिन्न कहानियों से मिली प्रतीत होती है। एक कहानी राजा और रानी की मनुष्य बलि सम्बन्धी और दूसरी पड़ोसिन सास की गाय बछड़े की बलि की। आगरे से मिली हुई कहानी और इस कहानी में थोड़ा-सा ही अन्तर है और वह अन्तर केवल कथन का अन्तर है। उसमें भी पुरुष-स्त्री और गाय-बछड़े चारों की ही बलि ताल के लिए करायी गयी है। स्पष्ट है कि कहानी का पहला मिला जुला रूप वह है जो लोहवन वाली कहानी में सुरक्षित है। उससे आगे विकृत होकर जो रूप बना वह आगरे वाली कहानी में है। अतः स्पष्ट है कि ब्रज की यह कहानी दो के मेल से बनी हुई है।

३३:९:५:२. मनुष्य-बलि विषयक पहली कहानी महत्वपूर्ण है क्योंकि इसका यह रूप अन्यत्र भी मिलता है। मालवा में विशेष रूप से शाजापुर गाँव में, देवास में और

उज्जैन के जिले में एक गीत गाया जाता है। इसका नाम है 'बालाबऊ'। यह गीत इस प्रकार है :—

राजा, काँय से आया वोई ओड़ओड़नी
गड़ ओ मथरा से आया ओड़नी
राजा, मालवा से आया जी ओड़
काँय उतरा राजा ओड़ने
मैलाँ उतरा राजा ओड़ने
राजा, काँय उतरा रानी ओड़नी
मैला उतरा राजा ओड़नी
काँय जिमाड़ों राजा ओड़ने
राजा, काँय जिमाड़ा रानी ओड़नी
खिचड़ी जिमाड़ा राजा ओड़ने
राजा लापसी जिमाड़ा रानी ओड़नी
जीसा खोदाड्या कूआ-बावड़ी
राजा, ससरा खणाया समन्द तलाब
कूआ ने बाबड़ी राजा उगली र्‌या
राजा, सूकू्न पड्यो समन्द तलाब
तेड़ो-तेड़ो ने बामण को डाबड़ो
ग्रणाँ सरवर को मोरत देखाड़ों
पोथी बाचे हो बामण माथो फेरे
राजा, कहूं तो कह्‌यो नी जाय
राजा नेणाँ में आया ढलमल नीर
को तो साँची रे कई दो बामण
कहूं ता साँची राजा, कह्यो नी जाय
राजा, बड़ा बेटा-बऊ को माँगे सरवर भोग
हूं तने पूछूं म्हारा हंसकुमार बेटा
सरवर मागे तमारो भोग रे
हूं या नी जाणू म्हारा जी सा
जैसा, तमारा बालाबऊ ने जईकर पूछो
घोला घोड़ा ओ ससराजी जीण कस्या
राजा, वन तो उगे बालाबऊ का देस
ताता रे पाणी बालाबऊ मेलियो
ससराजी, होई तमारी न्हावारी बेल
ऊना ने भोजन ससराजी ठंडा हुया
ससराजी, होई तमारी जीमवारी बेल
हूं तो नी न्हाऊं ह्मारी बालाबऊ
बालाबऊ, कहूं तो क्यो नी जाय

हूं नी जीमूं म्हारी बालाबऊ
बालाबऊ, कहूं तो कह्यो नी जाय
के तो सारी ओ राजा कई दीजो
ससराजी कोगा सोई कह्यो मनांगा
कांगा तो सारी ओ बालाबऊ
बालाबऊ सरवर माँगे तमारो भोग
हूं या नी जाणूं म्हारा ससराजी
ससराजी तमारा बेटा से जाय पूछो
आगे ससराजी पीछे बालाबऊ
राजा, दन तो उगे सासरे देस

× × ×

ससराजी तेड़ो-तेड़ो नावी रो पूत
राजा, नगरी में तेड़ो देवाड़ो
ससराजी, चरवा ऊमापाणी मेला जी
ससराजी, बालाबऊ हंसकुंवर न्हवाड़िया जी
ससराजी, हेड़ो बगच्या कापड़ा
ससराजी, बालाबऊ हंसकुंवर पेरावजोजी
ससराजी, डावा रो गेणो मंगाड़ जो
ससराजी, बालाबऊ हंसकुंवर पेरावजोजी
ससराजी, कुंवारी केड़ी को गोबर मंगाड़ जो
ससराजी, ढक दई आंगणो लिपाड़ जो
ससराजी, गज-मोत्या को चोक पुरावो
ससराजी, ऊपर बाजोट्यों बिछाड़ जो
ससराजी, बालाबऊ हंसकुंवर बैठाड़ जो

× × ×

आगे आगे हंसकुंवर पाछे बालाबऊ
राजा, जेके पाछे नगरी का लोग
राजा, जई ऊबा सरवर पाल
पेली पेड़ी हो हंसकुंवर बालाबऊ पगधरया
राजा अंगूठा पे आयो यो नीर
तीसरी पेड़ी ओ बालाबऊ हंसकुंवर पर धर्‌या
राजा, गोड़ा पे आयो यो नीर
बारमी पेड़ी ओ बालाबऊ हंसकुंवर पगधर्‌या
राजा, कम्मर पै आयो नीर
पांचमी पेड़ी ओ बालाबऊ हंसकुवर पगधर्‌या
राजा, छाती पै आओ नीर
छठमी पेड़ी ओ बालाबऊ हंसकुंवर पगधर्‌या

राजा, खांबा पे आयो यो नीर
सातमी पेड़ी ओ बालाबऊ हंसकुँवर पगधर्‌या
राजा चोटी पे आयो यो नीर
पीठ फेरी ने ससराजी, कंई हात जोड़ो
पाछी फरी जो ससराजी देखजो
ससराजी सरवर तमारो हिलोला यो खाय
हात सकेलो म्हारी बालाबऊ
बालाबऊ, चुड़ला से लागो यो नीर
खाजो पीजो ओ ससराजी, राज करजो
ससराजी जीवजो लाख करोड़[1]

३३:६:५:२:१. ब्रज की कहानी की ओघ द्वादशी वर्षा ऋतु में भादों के महीने का त्यौहार है, अतः निश्चय रूप से इसका सम्बन्ध वर्षा और कृषि विषयक अनुष्ठानों से है। ऊपर का 'बालाबऊ' का गीत भी वर्षा से सम्बन्धित है। अषाढ़ के महीने में जब वर्षा नहीं होती तब स्त्रियाँ एकत्र होकर अर्धरात्रि से पहले एक स्थान पर करुण स्वर में यह गीत गाती हैं। यह माना जाता है कि इस अनुष्ठान के उपरान्त मेह अवश्य आता है। इस मालवा के गीत में ब्रज की कहानी की घटनाएँ आयीं हैं। मालवा की कहानी में ओड़ राजा ने ताल खुदाया और रानी ने खुदाया कुआ-बावड़ी। कुआ-बावड़ी तो पानी से परिपूर्ण हो गये। ताल में पानी नहीं आया। एक ब्राह्मण ज्योतिषी ने बतलाया कि ताल तुम्हारे सबसे बड़े लड़के और उसकी पत्नी की बलि चाहता है। राजा ने अपने बड़े पुत्र हंसकुमार से कहा। वह बलि के लिए तैयार हो गया। उसने पिता से कहा कि वह बहू के पास और जाय। वह बालाबऊ के गाँव गया। बालाबऊ तुरन्त ही ससुर के साथ चल दी। आवश्यक संस्कार के साथ हंसकुमार और बालाबऊ तालाब के पास गये। जैसे ही वह पहली सीढ़ी उतरे तालाब में से पानी उछला और उनके चारों तरफ आ गया। वे सीढ़ियाँ उतरते गये और पानी चढ़ता गया। यहाँ तक कि पानी सिर तक आ गया। तब बालाबऊ ने हाथ जोड़कर अपने ससुर से कहा—हे ससुर, अब आपका तालाब जल से लहरा रहा है, आप समृद्धिशाली हों और लाखों और करोड़ों वर्ष जीवित रहें और तब वे तालाब में समा गये।

३३:६:५:२:२. यह कहा जाता है कि यह एक सच्ची कहानी है और वह ताल बालोण गाँव में है और बालामाता अथवा बालोण का ताल कहलाता है। यह तालाब शाजापुर जिले के सुन्दरसी गाँव के पास है। ऐसी ही एक कहानी निवाड़ जिले के सैगाँव तहसील में खरगुनविरला नामक गाँव के तालाब के सम्बन्ध में कही जाती है। इस गाँव के पटेल ने स्वप्न में देवी को देखा जिसने पटेल से कहा कि वह अपने पुत्र और पुत्रवधू की बावड़ी में बलि दे तो उसके गाँव का जल कष्ट दूर हो जायगा। जब उसका पुत्र और पुत्रवधू उस सूखे कुएँ में उतर गये तब वह कुआं ऊपर पानी से लबालब हो गया।[1]

१. भारतीय लोक-साहित्य : श्याम परमार।

३३:६:५:२:३. गुजरात में भी ऐसी ही एक कहानी प्रचलित है। यह कहानी सिद्धराज महाराज जयसिंह की है। माँ के कहने से सिद्धराज ने सहस्रलिंग नामक विशाल ताल खुदवाया। ताल खुदते समय एक दुर्घटना हो गयी। ओढ़ लोग तालाब खोद रहे थे उसमें जसमा नाम की सुन्दरी पर सिद्धराज रीझ गये। राजा से रुष्ट होकर जसमा और उसकी जाति के लोग उस स्थान को छोड़कर अपने देश को लौट गये। चलते चलते जसमा यह शाप दे गयी कि इस ताल में पानी नहीं आयेगा। इस शाप के कारण जब ताल सूखा रहा तो राजा और राजमाता बहुत चिन्तित हुए। पंडितों ने गणना करके बताया कि यदि ताल को किसी मनुष्य की बलि चढ़ा दी जाय तो पानी आ सकता है। यह कहा जाता है कि ढेढ़ जाति के एक आदमी ने अपनी बलि देने की स्वीकृति दी और शर्त यह रखी कि उसके बदले में राजा उसकी अत्यन्त नीच जाति को कुछ सुविधाएँ प्रदान करेंगे। राजा ने वे शर्तें स्वीकर कर लीं और वह ढेढ़ तालाब में घुसा। जब वह बीच में पहुँचा तो पानी फूट पड़ा और तालाब जल से भर गया।[1]

३३:६:५:२:४. गढ़वाल में भी इसी के जैसा गीत मिलता है। उसे हम (गढ़-वाली भाषा और उसका लोक साहित्य) जनार्दन प्रसाद काला–(१९५८) के पी-एच० डी० के प्रबन्ध से यहाँ उद्धृत करते हैं—

"बात प्रथा के लोक विश्वास को सुरक्षित रखने वाले" सेरा कूल नी औंदी (खेत में गूल नहीं आ सकती) नामक गीत में गढ़वाल की पुरातन संस्कृति का महत्वपूर्ण चित्र अंकित किया गया है। बडियारी सेरा (स्थान विशेष) जो कि गूल से पानी लाकर सींचा जाता है, तब गूल का पानी नहीं पहुँच रहा है। लोक विश्वास से यह किसी देव या दानव का प्रकोप है। पूछताँछ करने पर ज्योतिषी ने बताया कि मनुष्य बलि देने पर ही खेत में पानी पहुँच सकेगा। अब प्रश्न यह उठा कि बलि किसकी दी जाय। क्योंकि पिता की बलि देने से सभा सूनी हो जायगी। भाई की बलि से 'राज्य' सूना और माँ की बलि के घर-द्वार (चूल्हा) सूना और छोटी बहिन की बलि देने से दिशापथ सूना हो जायगा। इसलिये बलि देने के लिये छोटे भाई की बहू को चुना जाता है। अतः अपने पुर-परिजनों के अन्तिम दर्शनों के लिए छोटी बहू को ससुराल से मायके भेजा जाता है। मायके से विदा होते समय वह अपने पिता से अन्तिम वस्त्र; माँ से आखिरी खीर (भोजन) और भाई से अन्तिम बार का 'कल्यो' (कलेवा) ससुराल लये जाने के विविध पकवान बनाने और भावी से अन्तिम बार का साज-शृंगार करवाने का आग्रह करती है। उसने अपने बलि देने की बात मायके के लोगों को नहीं बताई। अतएव अन्तिम विदा के समय पुर परिजन उसे इस प्रकार के अपशब्दों को कहने से रोकते हैं, और अन्त में जब वह लौटकर अपनी ससुराल में पहुँचती है तो निर्दयी-सास भी उसे दूसरे दिन बलि देने की सूचना देती है। गीत इस प्रकार है :—

तिन मेरि बुबारी जीरी झमको भोल मरेण जीरी झको।
सेर कूलनी औंदी जीरी झमको,
जीरी झमको तैं बडयारी का सैण जीरी झमको,

लोखरी की सेरी जोरी झमको, साणी ह्हैगे वाणी जोरी झमको।
हमारी या सेरी भैं जोरी झमको, जांजी रगे बांजी, जोरी झमको।
कै, कौ होये दोस जोरी झमको, के कु यो असगुन जोरी झमको।
जावौं मेरा हीत जोरी झमको, पूछारो पूछदी जोरी झमको।
क्या बोलण मैन जोरी झमको, मनावी बलि चैंद जोरी झमको।
नौना का बाबाजी जोरी झमको, कुछ सुद्द करा बुछ जोरी झमको।
के बलि चढ़ौला जोरी झमको, को चनिरभागी मनखी जोरी झमको।
बड़ा भेजी दे धौला जोरी झमको, सैरा राज पाट हो लो
सूनो जोरी झमको।

बाबाजी छै धौंला जोरी झमको, कछड़ी टोलि सूनी जोरी झमको।
त्वं दं छौलां मांजी जोरी झमको, होलि सूनी रस्वैई जोरी झमको।
छौटि भुलि दे छूंला जोरी झमको, चौ दिशा होलि
सूनी जोरी झमको।

ब्वं बाबू देख्यौ दौ जोरी झमको, मैं वैण भेंट्यो दौ जोरी झमको।
मैंतु पैटी वा छोरी जोरी झमको, रौंदि तड़फांदी जोरी झमको।
ल्हा मेरा बाबाजी जोरी झमको, निमणौंद कापड़ी जोरी झमको।
मैं खलाऊ मेरि मांजि जोरी झमको, निमणोंद खीर जोरी झमको।
बणगू मेरा दाह जोरी झमको, निमणोद को कलेऊ जोरी झमको।
बांधा मेरि बौजि जोरी झमको, निमणोंद को मुंड जोरी झमको।
तनु केकु बोलदी जोरी झमको, कुबाक्ना बौल जोरी झमको।
सैसुर ऐंगे वा ब्बारी जोरी झमको, भोल मरेई जाण जोरी झमको।
सेरा कूलनी ओदी जोरी झमको.....................

अर्थात् हे बहू, कल तुम मारी जाओगी, तुम्हारी बलि दी जायेगी, क्योंकि खेत में 'कूल' नहीं आती है। उस बड़पार गढ़ के खेत में बिना तुम्हारी बलि के गूल नहीं आ सकती। लोगों के खेत जुतकर बीज बोने के लिए तैयार हो गए, परन्तु हमारा खेत, बंजर ही रह गया है। यह किस देव-दानव का दोष है, क्यों, ऐसा अपशकुन हो रहा है। हे मेरे हीत (रक्षक) जाओ। ज्योतिषी से कारण और उपाय पूछ लाओ। (हीत) मैं क्या करूँ, मनुष्य की बलि चाहिए।

हे नन्हे पुत्र के पिता, कुछ आप ही उपाय करो, किस की बलि दी जाए। बड़े भाई की बलि से तो राजपाट सूना और पिता की बलि से कचहरी सूनी हो जाएगी। माँ की बलि से रसोई और छोटी लड़की की बलि से दिशाएँ सूनी हो जायेगी। हे छोटी बहू, तुम मायके जाओ, माता पिता, बन्धु बांधवों के दर्शन कर लो। रोती तड़पती छोटी बहू माइके पहुँची। हे मेरे पिता, मुझे अन्तिम बार के कपड़े दो। हे माँ मुझे आखिरी समय की खीर (भोजन) खिलाओ। हे मेरे भाई, मेरे लिए अन्तिम 'कलेवा' बनाओ। हे भावज अन्तिम बार मेरा सर गूंथ कर शृंगार कर दो। ऐसे बुरे वचन न बोलो।

बेटी बहू ससुराल आई बलि की सी बकरी, सास ने आते ही कहा, 'मेरी बहू कल तुम मारी जाओगी, खेत में तुम्हारी बलि के बिना पानी नहीं आ सकता।

३३:९:५:२:५ मिथिला में ताल में पानी के बलि के गीत का प्रचलन है। यह जलेछी का कथा-गीत है। जिसका सार यह है:—

एक राजा ने पोखर खुदवाया। उसमें पानी नहीं निकला। पुरोहित ने कहा कि अपनी पुत्री की बलि से पोखर में पानी आएगा। जलेछ कुमारी अपने पति के घर से आयी। जैसे उसने पोखरे में प्रवेश किया कि पानी भीतर से ऊपर बलबला आया। वह तो उसमें डूबती गयी और पानी बढ़ता गया। (देखियें—मैथिली लोक गीत पर थीसिस, डा० तेजनारायणलाल)।

३३:९:५:३ श्री गुप्ते महोदय ने अपनी पुस्तक 'हिन्दू होलीडेज एण्ड सेरीमोनियल' में बताया है कि बंगाल में भादों शुक्ल छठ को चहरपोता या चोपड़ा षष्ठी मनायी जाती है और उसकी भी कुछ ऐंसी ही कहानी है। इस कहानी में अपनी पत्नी के कहने से एक व्यक्ति ने तालाब खुदवाया जिससे उसकी पत्नी को चप्रषष्ठी की पूजा करने में सुविधा हो, किन्तु उसमें पानी नहीं आया। स्वप्न में षष्ठी देवी प्रकट हुई और उन्होंने कहा कि वह अपने किसी नाती की बलि चढ़ाये। उसने अपने नाती का गला काटकर उसका रक्त तालाब में छिड़क दिया। वह पानी से भर गया और तब षष्ठी की पूजा की गयी। अब बलि दिये गये बच्चे की माँ ताल पर षष्ठी की पूजा के लिए पहुँची तो उसे अपना बच्चा एक पालने में तालाब के ऊपर तैरता हुआ मिला। तब से पंडितों ने यह शिक्षा दी कि सभी औरतें अपने आँचल में केले रखकर और उन्हें गोद में लेकर चोपड़ा षष्ठी की कहानी सुना करें।

३३:९:६ यह स्पष्ट है कि ब्रज की कहानी उसी कहानी का एक दूसरा कुछ परिवर्तित संस्करण है। बंगाली कहानी में बच्चा पुनरुज्जीवित होता है। यह पुनरुज्जीवन अनुष्ठान का ही एक अंग है। यह अंश ब्रज की लोहबन वाली कहानी में नहीं है। इसी से यह कहानी अधूरी है। आगरे वाली कहानी में दूब उखाड़ने से गाय-बछड़े और बेटे-बहू के जीवित निकल आने की बात है। किम्बहुना बंगाली कहानी में निर्मम मनुष्य बलि प्रस्तुत की गयी है।

३३:९ ७ इन कहानियों में एक शब्द विशेषरूप से ध्यान आकर्षित करता है—यह शब्द है ब्रज का ओघ, ओग अथवा ओख, मालवे का ओड़, गुजराती का ओढ़। ओड़ और ओढ़ निश्चय ही एक शब्द हैं, उसी प्रकार ओघ और ओख भी। किन्तु यह ओघ है क्या? ओघ शब्द संस्कृत में भी है जिसका अर्थ होता है "राशि या समूह" तथा जल-प्लावन या भयंकर बाढ़। हिन्दी की लोकवाणी में ओघ शब्द नहीं है। उसे उसमें एक शब्द ओग है। इस ओग के अर्थ होते हैं—वे चिन्ह जो पानी की बड़ी बूंद के गिरने पर और कुछ दूर तक बहकर सूख जाने पर बन जाते हैं। निश्चय ही ओग द्वादसी का सम्बन्ध उस ग्रामीण कृषि सम्बन्धी अनुष्ठान से होगा जो प्रथम मेघ के स्वागत में जब कि बड़ी बड़ी बूंदों में कुछ मेघ पड़ कर और भूमि पर कुछ चिन्ह छोड़ता होगा, उस समय किया जाता होगा। सम्भव है इस ओघ अनुष्ठान में ओघ नाम के साम्य से ओढ़ बलि की

कहानी इससे जुड़ गयी हो। दोनों ही वर्षा से सम्बन्धित हैं। अतः दोनों एक हो गयीं और लोक की व्युत्पत्ति के अनुसार ओढ़ ओघ में बदल गया। गुजराती, मालवी और ब्रज के शब्दों ने मालवा और ब्रज के वर्षा विषयक अनुष्ठान को एक दूसरे से घुला-मिला दिया।

३३:६:७:१ अभी दूसरा प्रश्न सामने आता है कि यदि ओघ, ओग या ओढ़ दोनों एक हैं तो यह द्वादसी क्यों? क्या यह आकस्मिक है कि इस अनुष्ठान के लिए द्वादसी निश्चित की गयी या इसका सम्बन्ध किसी ज्योतिष की भूमिका से है या यह इसी तिथि को घटने वाली तिथि-घटना का स्मरण दिलाने के लिए है। जब हम विविध त्यौहारों पर दृष्टि डालते हैं तो विदित होता है कि उनकी एक तिथि निश्चित है और उनके साथ कोई नाम जोड़ा गया है। हरियाली तीज, भैया दौज, देव छठ, नागपंचमी, रंगभरनी एकादशी, अहोइ आठें, करवा चौथ आदि। अतः यह सिद्ध है कि तिथियों का ही महत्व है और त्यौहार के सम्बन्ध में उनके साथ कोई विशेषता है और उसी विशेषता के आधार पर उनका नाम रखा गया। अतः द्वादसी का नाम ज्योतिष गणना से ही निश्चित किया गया है और तब उसे ओघ अथवा वर्षा का स्वागत करने के लिए माना गया है।

३३:६:८ यह कहानी ताल में जल-प्लावन के लिए मनुष्य बलि का उल्लेख करती है; अतः टोने के रूप में वर्षा कराने के लिए भी इसका उपयोग हो सकता है। लोक-कथाओं में और पुराण कथाओं में मनुष्य बलि का ऐसे प्रसंगों में बहुधा उल्लेख हुआ है। मधुर कण्ठ प्राप्त करने के लिए सरस्वती देवी को मनुष्य बलि दी गयी है। किसी स्थानीय देवी के क्रोध को शान्त करने के लिए मनुष्य बलि दी गयी है। यूनानी पुराण-कथा में उल्लेख है कि जब यूनानी सेनाएँ ट्रोजन युद्ध के लिए जा रही थीं तब ओलम्पिया के पास विपरीत हवाओं के कारण वे आगे बढ़ने से रुक गयीं। तब भविष्यवक्ताओं ने राजा और रानी को बताया कि उन्हें डायना देवी पर अपनी पुत्री की बलि चढ़ानी चाहिये क्योंकि राजा ने इस देवी के एक प्रिय बारहसिंगे को मार डाला था। इस बलि के हो जाने पर ये हवाएँ रुक जायंगी। जब बलि देने के लिए उस लड़की पर वार किया गया तब रहस्यपूर्ण ढंग से वह लड़की तो लुप्त हो गयी और उसकी जगह पर एक असाधारण आकार का पक्षी पड़ा हुआ मिला।

३३:६:८:१. ओल्ड टेस्टामेण्ट के अनुसार जेहोआ देवता ने अब्राहम से उसके इकलौते लड़के आइज़क की बलि माँगी थी। यह बलि अब्राहम की भक्ति की परीक्षा के लिए माँगी गयी थी। जब अब्राहम स्वयं अपने पुत्र को बलि देने के लिए आघात करने वाला था तभी उस पुत्र के स्थान पर एक भेंड़ दिखायी पड़ी। भारतीय साहित्य में और पुराण-कथाओं में मनुष्य बलि के कितने ही दृष्टान्त मिलते हैं जिनमें से कुछ का उल्लेख ऊपर हो चुका है। राजा मोरध्वज की कहानी भी इसी शृंखला की कहानी है। राजा मोरध्वज की भक्ति की परीक्षा करने के लिए कृष्ण वेश बदल कर राजा के पास गये थे और उन्होंने मोरध्वज से उसके लड़के की बलि अपने सिंह के भोजन के लिए माँगी थी। इस बलि में यह शर्त रखी गयी थी कि राजा और रानी प्रसन्नतापूर्वक अपने बच्चे को स्वयं आरा चला कर चीरेंगे और इस प्रकार टुकड़े करके उसे शेर को

खिलाया जायगा। यह भी शर्त थी कि चिरते समय बच्चे की आखों से आँसू की एक बूंद भी नहीं गिरनी चाहिये। इसी प्रकार यह बलिदान सम्पन्न हुआ और अन्त में कृष्ण ने उस लड़के को पुनरुज्जीवित कर दिया। यही कहानी १६वीं से १८वीं शताब्दी के बीच किन्हीं सन्तों से भी जुड़ गयी। गुरु नानक के साथ इसका विशेष संयोग मिलता है। गुरुजी ने सिंहल में राजा की भक्ति की इसी मोरध्वज की परीक्षा के अनुरूप परीक्षा ली है। उन्होंने स्वयं अपने लिए बालक के माँस का भोजन माँगा है। आरे से उसे नहीं चीरा गया, राजा ने कटार से टुकड़े-टुकड़े किये हैं। वह माँस कच्चा नहीं परोसा गया, राँध कर लाया गया। खाने बैठे तो वह १२ वर्ष का बालक जीवित वहाँ मिला, गुरुजी लुप्त हो गये। राम-कथा में भी उल्लेख है कि देवी पर बलि चढ़ाने के लिए अहिरावण राम और लक्ष्मण को चुरा ले गया था। कथासरित्सागर में देवी पर ऐसी बलि चढ़ाने की कितनी ही कहानियाँ हैं।[1] वीर विक्रमाजीत की कहानी में राजा प्रतिदिन देवी को अपनी बलि चढ़ाता था और बदले में दान करने के लिए बहुत सी स्वर्ण-राशि देवी से प्राप्त किया करता था। देवी उसे प्रतिदिन पुनरुज्जीवित भी कर देती थी। राजपूत इतिहास में यह उल्लेख है कि भयंकर युद्धों से पूर्व राजाओं को स्वप्न में देवी दर्शन देती थीं और मनुष्य रक्त माँगती थीं। किसी तांत्रिक विधि को सम्पन्न करने के लिए मनुष्य-बलि देने की बात भी मिलती है। ३१ जनवरी १९३२ की एक घटना है कि सोमवरप्पपि गाँव में कंडीयम्मन रथ-यात्रा उत्सव पर एक पुजारी ने अपने लड़के की बलि चढ़ा दी थी क्योंकि देवी ने स्वप्न में प्रकट होकर यह बलिदान माँगा था जिससे विगत दो वर्षों में रथयात्रा उत्सव न करने के पाप का प्रायश्चित हो सके।

जगदेव पँवार ने (सिद्धराज) जयसिंह की आयु बढ़ाने के लिए देवी को अपने समस्त कुटुम्ब की बलि चढ़ा दी थी।

---

१. कससा (कथा सरित्सागरः टानी-पेंजर) में एक श्रीदत्त की कहानी है, जिसमें एक बार शबर लोग देवी पर बलि चढ़ाने के लिए किसी को पकड़ लेते हैं, किन्तु शबर की लड़की से गंधर्व विवाह करके वह अपनी मुक्ति का मार्ग निकाल लेता है। कुछ दिन बाद उसे दस्यु फिर पकड़कर दुर्गा पर बलि देने को तैयार होते हैं। यहाँ भी वही शबर पुत्री सुन्दरी उसे बचा लेती है।

(टानी—पेंजर का कससा प्रथम भाग पृ० ११६१)

देवताओं ने दानव नमुचि से प्रार्थना की कि वह पुरुष वेध के लिए अपना शरीर दे दें।

(टा० पे० क० स० सा० IV पृ० ६४)

मोरध्वज की कथा से मिलती-जुलती कहानी कससा में है एक ब्रह्मपिशाच की, उसने राजा से रुष्ट होकर कहा कि अब राजा तभी बच सकता है जब वह किसी ब्राह्मण बालक की उसे बलि चढ़ाये। बालक छोटी उम्र का हो, प्रसन्नता से वह बलि के लिए प्रस्तुत हो, बलि के समय एक हाथ उसकी माता पकड़े, एक हाथ पिता पकड़े, और राजा स्वयं अपने हाथ से उसका बध करे।

३३ : ६ : ८ : २

औघ द्वादसी की कहानी में जिस प्रकार तालाब में जल के लिए मनुष्य-बलि करायी गयी है वैसे ही आदिम जातियों ने दलदल से कृषि योग्य भूमि को प्राप्त करने के लिए जो बलियाँ चढ़ायीं उन की कहानियाँ हैं कि मनुष्य का रक्त देने पर अथवा मनुष्य की बलि देने पर दलदल सूख गया और भूमि कृषि के लिए मिल गयी। अभी कुछ दिन पूर्व ही भारत की आदिम जंगली जातियों में पृथ्वी को मनुष्य-बलि इसीलिए दी जाती थी कि फसल खूब फूले फले और लोग स्वस्थ रहें और समृद्ध हों।

३३:६:८:३. नरबलि

'नरबलि' का विषय महत्वपूर्ण है। नरबलि का उल्लेख भारतीय साहित्य में मिलता है। वैदिक साहित्य में भी इसका उल्लेख है। वेदों में तो वरुण से शुनःशेप की प्रार्थना ही दी गयी है। पर उसके बाद के वैदिक साहित्य में शुनःशेप की बलि की पूरी कहानी है। इस कहानी में निम्नलिखित बातें ध्यान आकर्षित करती हैं।

१—वरुण आर्य देवता है। शत-प्रति-शत आर्य देवता। इसमें आज तक किसी विद्वान् को संदेह नहीं रहा।

२—यह वरुण हरिश्चन्द्र को वर देकर पुत्रवान बना देता है पर

३—यह शर्त हरिश्चन्द्र से करा लेता है कि उस पुत्र को वह वरुण को दे देगा।

४—पुत्र हुआ, रोहित उसका नाम रखा गया।

५—रोहित के हो जाने पर हरिश्चन्द्र का मन डिग गया वह अब यह चाहता है कि किसी प्रकार वरुण को रोहित न दिया जाय।

६—जब जब वरुण रोहित को मांगने आता है तब तब हरिश्चन्द्र कोई न कोई बहाना बनाकर टाल देता है।

७—रोहित के बड़े हो जाने पर उसे बनों में भ्रमणार्थ भेज दिया जाता है।

८—जब यह विदित होता है कि वरुण बिना रोहित को लिए मानने वाला नहीं तब वरुण से यह सौदा किया जाता है कि वह रोहित न ले, उसके बदले में किसी अन्य व्यक्ति को उसे दे दिया जाय।

९—वरुण रोहित के बदले में किसी अन्य को लेने को प्रस्तुत।

१०—रोहित के बदले में वरुण को देने के लिए दरिद्र अजीगर्त के सबसे छोटे पुत्र शेनःशेप को गायें मूल्य में देकर खरीदा जाता है।

११—शुनःशेप को वरुण को देने के लिए यज्ञ किया जाता है जिसमें विश्वामित्र आदि कितने ही ऋषि उपस्थित हैं।

१२—शुनःशेप को यूप से बांध दिया जाता है जैसे अन्य बलि-पशु को बांधा जाता है।

१३—बलि देने का यथार्थ कार्य कौन करे ? इसके लिए दरिद्र अजीगर्त को और गौएं मूल्यस्वरूप दी जाती हैं और वह पिता होकर भी स्वयं अपने पुत्र को बलि देने के लिए प्रस्तुत हो जाता है।

१४—यह समझकर कि अब उसे बलि के रूप चढ़ा दिया जायगा शुन:शेप सभी ऋषियों से प्रार्थना करता है कि वे उसे मुक्त करायें।

१५—विश्वामित्र तत्पर हो जाते हैं पर वे शर्त रखते हैं कि शुन : शेप उनका पुत्र हो जाय।

१६—शुन:शेप विश्वामित्र का पुत्र होना स्वीकार कर लेता है।

१७—तब विश्वामित्र द्वारा बतायी गयी विधि से वह वरुण से प्रार्थना करता है।

१८—वरुण प्रार्थना से प्रसन्न हो जाता है और उसे मुक्त कर देता है।

महत्वपूर्ण इस कहानी में यह है कि वरुण आर्य देवता होकर भी नर-बलि लेने के आग्रहशील है। आर्य ऋषियों के समक्ष पूरे अनुष्ठान के साथ बलि होने जा रही है। आर्य अजीगर्त स्वयं अपने पुत्र को बलि देने को प्रस्तुत है।

इस वैदिक नरबलि का समस्त अनुष्ठान १९वीं शताब्दी तक प्रचलित जंगली जातियों में मिलने वाली नर-बलि की प्रथा से बहुत मेल रखता है।

३३:९:८:४

जातक में भी नर बलि का उल्लेख है। उसमें ये तत्व हैं :—

१—एक राजा नया द्वार बनवा रहा था।

२—उसके मंत्री ने सलाह दी।

३—एक ब्राह्मण की बलि दी जावे।

४—उसका रक्त-मांस पूजा पर चढ़े।

५—उसका शरीर नये द्वार के नीचे दबाया जाय।

६—बलि-पात्र ब्राह्मण बच निकला।

७—स्वयं पुरोहित की बलि की बारी आयी पर बुद्ध ने उसे बचाया।

८—बुद्ध ने मरी बकरी द्वार के नीचे दबवायी।

एक अन्य कहानी में—

एक राजा अपने समस्त कुटुम्ब की बलि चढ़ाने को प्रस्तुत हुआ।

३३:९:८:५

संस्कृत साहित्य में हमें भवभूति के नाटकों में इसका संकेत मिलता है।

उसमें महाप्रसाद के रूप में ब्राह्मण अथवा मनुष्य की बलि का मांस बाजार में बिकता दिखाया है।

आधुनिक काल में प्रसाद जी ने स्कंदगुप्त नाटक में तांत्रिक बौद्ध के द्वारा 'देवसेना' की बलि की तैयारियां दिखायी हैं।

---

१. नरबलि पर वाजसनेयी संहिता में उल्लेख है कि पुरुषमेध में वैदिक काल में एक नपुंसक व्यक्ति (हिजड़ा) पाप्मन् पर बलि चढ़ाया जाता था। प्रजापति को दी जाने वाली बलि के लिए ब्राह्मण या शूद्र जाति का मनुष्य निषिद्ध था। श्री राजेन्द्रलाल मित्र ने १८७६ ई० के जर्नल आव एशियाटिक में भारत में नरबलि शीर्षक निबंध लिखा था। जिसमें निम्नलिखित स्थापनाएं की थीं :—

लोकवार्ता में तो मनुष्य-बलि या नर-बलि की बहुत व्याप्ति है । बैताल-पच्चीसी में तथा कथा-सरित्-सागर[१] में इसका उल्लेख है। इस सम्बन्ध में रिसालू की लोकवार्ता में नरबलि का उल्लेख है ।

३३:६:६. ओघ द्वादसी की कहानी अनुष्ठान से सम्बन्धित है । अतः यह स्पष्ट है कि यह कहानी केवल कहने और सुनने के आनन्द के लिए नहीं कही जाती । यह माहात्म्य-कहानी है जिसे यदि धार्मिक निष्ठा से सुना जाय तो समृद्धि प्राप्त होगी और मेह बरसेगा । अतः इस कहानी में टोने का भाव छिपा हुआ है । अतः यह कहा जा सकता है कि यह कहानी उस काल का प्रतिनिधित्व करती है जब कि यह माना जाने लगा था कि यदि बलिदान की कहानी दुहरा दी जायगी तो मानसिक रूपेण वास्तविक बलिदान माना जायगा । मेरे विचार में इस अवस्था तक हम इस क्रम से पहुँचे:—

१—वास्तविक बलिदान

२—क्षुब्ध बलिदान—जैसे वैदिक काल में शुनःशेप को बलिदान होने से अंतिम घड़ी में ऋषि विश्वामित्र ने बचा लिया ।

३—प्रतिनिधानी बलिदान—आदमी के स्थान पर किसी पशु या पक्षी का प्रतिनिधान के रूप में बलिदान जैसे ओल्ड टेस्टामेण्ट की कहानी में ।

४—प्रतीकी बलिदान—मनुष्य अथवा किसी जीवित प्राणी को बलि न देकर उसके स्थान पर उसकी मूर्त्ति या चित्र की बलि जैसे ब्रज में शकट चौथ के अवसर पर कुछ कुटुम्बों में तिलकुटे से एक मनुष्य की सी आकृति बनायी जाती है और घर के

पिछले पृष्ठ की टिप्पणी का शेष

१—यह मानने के लिए कोई कारण नहीं कि प्राचीन काल में हिन्दू अपने देवताओं को नरबलि देने में अक्षम थे ।

२—ऋग्वेद का शुनःशेप का मंत्र नरबलि अथवा पुरुषमेध यज्ञ से ही संबंधित है ।

३—ऐतरेय ब्राह्मण में वास्तविक पुरुषमेध का उल्लेख है, किसी मानक रूप (Typical) का नहीं ।

४—पुरुषमेध के लिए पहले सचमुच मनुष्य के बलिदान की ही आवश्यकता होती थी ।

५—शतपथ ब्राह्मण में मनुष्य-बलि का तो विधान है, पर पुरुषमेध को प्रतीकात्मक (Emblmatic) ही बताया है ।

६—तैत्तरीय ब्राह्मण अश्वमेध यज्ञ में नरबलि का विधान करता है ।

७—पुराणों में चंडिका के लिए नरबलि मानी गयी है, पर पुरुषमेध यज्ञ का निषेध है ।

८—तंत्र में भी चंडिका के लिए मनुष्य बलि का विधान है । मनुष्य न मिलने पर उसके पुतले को ही बलि देने का आदेश है ।

(दे० टानी-पैंजर कससा (IV P. 64)

एक लड़के से चाकू द्वारा उसे गर्दन से काट देने का विधान होता है। इस प्रकार से जो बालक सिर काटता है उसे पुरस्कार में वह सिर ही मिल जाता है और शेष कुटुम्ब शेष भाग को प्रसाद के रूप में ग्रहण करता है। तंत्र में मनुष्य के पुतले की बलि का विधान है।

५—वाणी प्रतीकी बलिदान—चित्र अथवा मूर्त्ति न बनाकर कहानी कहकर ही बलिदान को पूर्ण हुआ मान लिया जाता है। आज ऐसी कहानियों के साथ बलिदान विषयक विश्वास नहीं रह गया। कहानी कहने वाला अथवा सुनने वाला आज एक क्षण के लिए भी यह नहीं सोचता कि इस कहानी के द्वारा वे मनसा बलिदान कर रहे हैं। यह भाव अब लुप्त हो गया है।

६—अंतिम अवस्था में यह अनुष्ठानिक कहानी केवल माहात्म्य कथा का रूप ग्रहण कर लेती है जिसके कहने सुनने से और विधि का पालन करने से लाभ प्राप्त होता है। लोक धर्म के विकास की यह अंतिम सीढ़ी है।

३३:९:१०. जैसा ऊपर बताया जा चुका है, ब्रज की कहानी दो कहानियों से मिलकर बनी है। पहले भाग में स्वेच्छा से मनुष्य बलि का विधान है और वह कहानी अपने रूप में पूर्ण है। यह बंगाली लोकवार्ता की चप्र षष्ठी की वार्ता से सिद्ध हो जाता है। श्री गुप्ते महोदय ने बंगाल की वसुवारस अथवा वत्स द्वादसी की भी एक बंगाली कहानी दी है जो ब्रज की कहानी के दूसरे भाग से मिलती जुलती है। गुप्ते महोदय की बंगाली वसुवारस की कहानी का सार इस प्रकार है:—

३३:९:१०:१. एक नगर में एक वृद्धा रहती थी। उसके बहुत सी गायें और बछड़े थे। आश्विन महीने की बारस के दिन वह अपने खेत पर गयी और अपनी पुत्र-वधू को कह गयी कि वह कोई सागभाजी बना ले किन्तु बहू उसे ठीक-ठीक नहीं समझ सकी और उसने एक बछड़ा मार कर पका लिया। जब वह भोजन कुटुम्बियों को परसा गया तो वे बड़े भयभीत हुए। वृद्धा अपने घर के देवालय में गयी और देवताओं से जाकर प्रार्थना की कि उस लड़की को क्षमा किया जाय, उससे यह पाप अनजाने में हुआ है। उसने यह भी कहा कि यदि मरा हुआ बछड़ा पुनः जीवित नहीं होगा तो वह आत्मघात कर लेगी। ईश्वर ने प्रार्थना सुन ली। शाम को जब गायें लौटकर घर आयीं तो वह बछड़ा जीवित हो उठा और उछल कर अपनी माँ के पास पहुँच गया। वृद्धा बहुत प्रसन्न हुई और पुत्रवधू ने अपनी सास के प्रति कृतज्ञता प्रकट की। दोनों ने गाय और बछड़े की पूजा की और उन्हें अच्छा भोजन खिलाया। हिन्दू होलीडेज़ पृ० २४१। बंगाल में ही नहीं यह वत्स द्वादसी अथवा बछवारस की कहानी अन्य क्षेत्रों में भी मिलती है। यहाँ डा० श्याम परमार द्वारा भेजी गयी मालवा में प्रचलित बछवारस की कथा दी जाती है:—

३३:९:१०:२. **बछवारस की कहानी : गोंगलो-मोंगलो**

एक सास-बहू थी। सास जब माल (खेत वन) में जाने लगी तो बहू ने पूछा-सास जी आज क्या रांद लूं ?

सास ने कहा—"गोंगलो-मोंगलो (गेहूँ मूंग का खिचड़ा) रांव लेना।"

उस घर में दो बछड़े थे। दोनों के नाम थे 'गोंगलों और मोंगलो।' बहू ने उन्हें रांव लिया।

सास जब बन से लौटी तो बहू ने कहा कि आओ अपने भोजन कर लें।

भोजन करने बैठे। सास ने देखा कि आज दोनों बछड़े नहीं हैं। बहू से पूछा तो उसने तुरन्त कहा कि आपके कहने से उन्हें तो मैंने रांव लिया है।

सास को बड़ा दुःख हुआ। वह बोली तैंने यह क्या किया बहू ? इनकी गाय आयेगी तो क्या होगा ?

सन्ध्या को गाय लौटी तो द्वार पर से उसने मां मां करना आरम्भ किया।

सास ने मनौती की कि हे बछवारस माता यदि इन केड़ों को जीवित कर दे तो मैं तेरी पूजा करूंगी और सातों लोक में तेरी पूजा होगी।

भगवान की कृपा हुई, गाय की मां मां सुनते ही दोनों बछड़े हंडे में से कूद कर गाय के पास आगये।

तभी से सातों लोक में बछवारस के दिन गोंगलो मोंगलो की पूजा होती है। बछवारस का व्रत किया जाता है। श्री दीनदयाल ओझा साहित्यरत्न द्वारा संग्रहीत जैसलमेर की बछवारस की कहानी में भी यही तथ्य है। वह कहानी इस प्रकार है :—

सास बऊ बे जणियो हंतियां। सस कयो के हूं टोघड़ा चारन नो जावोई, तूं लागे गउलो (गेहूं का दलिया) रंघ[1] रखे। सस तो कयन[2] बुई गई। बऊ रे पीरे में गउलो गायरे बछड़े नो कवता ता। ऊवे गउले नो मारेर रंघ रख दीयो। संज्या पड़ी। ऊवेरी सस आई। ऊवे कयो, बीनणी बछड़े नों तो छोड़-गाय दूआं। ओ हमे, हथ मोड़े, पग मोड़े के हमें की छोड़ो। जद ऊवे सूरज नो हथ जोड़ेर कयो के हे सूरज बाप, हमे तो तूं म्याली[3] लाज्ज रख। म्याले पीरे में तो गउलो बछड़े नो कवता, मैं तो ऊवे भरोसे बछड़े ना रंघ दियो। ओ सूरज भगवान री पूजा करसी। नित नेम सू उवेनो घंटो नोखतीरे ढालती। सूरज भगवाम ऊवेरी अरदास सुण। हंडी रो घोंघों गले में घछियोड़ों[4] ओ बछड़ो जाय गाय रे हंचले में पड़ीयो। सस बोली—अे की, बछड़े ने गले में घोघोरे बाझो रो मारियोड़ो कोंकर[5]। जाणो बऊ कयो—हूं कल जाणो नी, कांमण जांणो नी, मा बाप रे जाइतीरे सासू सुसरे आइयो। थे मनो कय गया ता गउलो रंघ रखे। मांजे पीर में गउलो बछड़े नो कवता ता। मैं तो बछड़े नो रंघ रखीयो तो रो पण सूरज बाबे म्याली लज्ज रखी। जिकेसूं[1] अे बाझारो मारोड़ो अर गले, में घोंघों घतियोड़ो ई।

जाणो[2] सस कयो—भादरे रे लगती बारसनों जि को मथो घोय, गोरी गाय, गोरे बछड़े री दिकरे री मा पूजा करे, गाय रो घी नी खावे, गेहूं रो अट्टो नी खावे। बाजरी रो अट्टो खावे, भैंस रो दूध दई घी खावे। उवेरो बछवारस भलो करसे।

३३:६:१०:३. मालवा में प्रचलित इस कहानी से तथा जैसलमेरी कहानी से भी इस बात की पुष्टि होती है कि गाय-बछड़ों को रांदने वाली कहानी एक अलग कहानी है और वह बछवारस की कहानी है। दोनों कहानियों में कई मौलिक अन्तर है : जैसे

---

१. पका रखना। २. कह कर। ३. मेरी। ४. डाला हुआ। ५. किस तरह।

एक कहानी बलिदान की कहानी है। स्वेच्छा से किसी लाभ की आशा में नर बलि दी गयी। जबकि दूसरी कहानी में न तो बलिदान की भावना है और न उस बलिदान के पीछे किसी लाभ की आशा।

एक कहानी सामान्यत: बलिदान हो जाने और लाभ की प्राप्ति पर समाप्त हो जाती है। यद्यपि इस कहानी के किसी-किसी संस्करण में बलि किये हुए व्यक्ति पुनः प्राप्त हो जाते हैं किन्तु उन्हें पाने के लिए इस कहानी में कोई अनुष्ठान अथवा उद्योग नहीं किया गया जबकि दूसरी कहानी में बलिदान अथवा बछड़ों की हत्या उद्देश्य से नहीं, भूल से हो गई है और कहानी का बल उस मनौती पर विशेष है जिसमें बछड़ों के जीवित करने की प्रार्थना है।

एक कहानी में क्योंकि बलिदान का भाव है इसलिए इसी प्रकार के दुःख, शोक, पश्चात्ताप अथवा प्रायश्चित का भाव नहीं है जबकि दूसरी कहानी में समस्त कहानी का शोक, पाश्चात्ताप और प्रायश्चित ही मूल आधार है। इस अभिप्राय भेद से भी यही सिद्ध होता है कि दोनों कहानियों का उद्गम भिन्न-भिन्न स्रोतों से हुआ है और वे व्रज में किसी आनुष्ठानिक भ्रम के कारण एक से दूसरे में मिल गयीं हैं।

३३:९:१०:४ इस मिलावट की इतनी व्याख्या से ही काम नहीं चल सकता। ओघ द्वादशी के अनुष्ठान के विधान को भी देखना होगा। बंगाल और मालवा की कहानियों से तथा व्रज के दो स्थानों के पूजा-विधानों से स्पष्ट हो जाता है कि 'ओघ द्वादशी' की कहानी का मूल 'गौ-वत्स' पूजा में ही है। पूजा-चित्र भी यही दिखाते हैं। अत: 'ओघ द्वादशी' वस्तुत: 'बछवारस' का ही रूपान्तर है।

३३:९:१०:५. भविष्य पुराण में 'गोवत्स द्वादशी' को कार्तिक में बताया है। उसमें दिये वृत्त से यह बात प्रतिभासित होती है कि 'गो-हत्या' तथा बाल-हत्या' का इस व्रत से कुछ संबंध इस पुराण के लेखन के समय तक हो गया था। यद्यपि भविष्य पुराण की कथाओं का संबंध पौराणिक पात्रों से जोड़ दिया गया है, फिर भी उसमें एक भिन्न रूप से गौ-संकट और बाल-संकट का उल्लेख हुआ है। यहाँ पुराण का तद्विषयक उद्धरण दिया जाता है :—

३३:९:१०:१. राजा युधिष्ठिर कहते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र अठारह अक्षोहिणी सेना मेरे निमित्त मारी गई उस पाप से मेरे चित्त में बड़ी ग्लानि रहती है उनके बीच ब्राह्मण क्षत्रिय आदि सब थे भीष्म द्रोण कर्ण शल्य दुर्योधन आदि सब मार दिये उनके बध का पाप दिन रात मेरे मर्मों को छेदन करता है अब आप कोई ऐसा उपाय कहे कि इस पाप का क्षालन होय तब श्रीकृष्ण भगवान् ने कहा कि हे महाराज आप गोवत्सद्वादशी का व्रत करें उससे सब पातक कट जाते हैं। राजा ने पूछा कि उस व्रत का क्या विधान है औ कब किया जाता है तब श्रीकृष्ण भगवान् फिर कहने लगे कि पारियात्र पर्वत पर लड्डुलिकाश्रम के बीच जिसका नाम ठंढागिरि है वहाँ एक बड़ा बन है जिसमें अनेक मुनियों के आश्रम हैं चारों ओर सिंह, हाथी, हरिण, बानर, शश, वराह आदि जीव विहार करते हैं औ वृक्षों करके वह बन अति ही रमणीय है वहाँ सत्य युग में बहुत से मुनि लड्डुलिकाश्रम के बीच तप करने लगे बहुत काल उनको तप करता हुआ तब शिवजी वृद्ध

ब्राह्मण का रूप धार लाठी हाथ में लिये कांपते हुये यहां आये औ पार्वती जी ने भी जैसा रूप बनाया वह सुनो समुद्र मंथन के समय पाँच गौ उत्पन्न भई हैं नन्दा, सुभद्रा, सुरभी, सुशीला औ नन्दिनी ये पाँचों शुक्ल वर्ण हैं औ देवताओं की तृप्ति तथा लोकोपकार के लिये उत्पन्न भई हैं इन पाँचों धेनुओं को जमदग्नि भरद्वाज वशिष्ठ गौतम औ शिवजी ने ग्रहण किया गोमय गोमूत्र गोरोचन दुग्ध दही औ घृत: ये छ: पवित्र पदार्थ गौओं के शरीर से उत्पन्न होते हैं गोबर से विल्व वृक्ष उत्पन्न भया जो शिवजी को अति प्रिय है पद्महस्तालक्ष्मी बिल्व बृक्ष में निवास करती है इससे उसको श्रीवृक्ष कहते हैं उत्पल औ कमलों के बीज भी गोबर से ही उत्पन्न भये हैं गोरोचन मंगल्य पवित्र औ सर्व कार्य साधक होता है गोमूत्र से अति सुगन्ध गुग्गुल उत्पन्न हुआ जिसका धूप सब देवताओं को औ विशेष कर के शिवजी को प्रिय है दुग्ध से अनेक उत्तम पदार्थों की उत्पत्ति है दही मंगल प्रद है और घृत से सब देवताओं को तृप्त करनेहारा अमृत उत्पन्न हुआ एक कुल के ही ब्राह्मण रूप औ गो रूप दो भाग हो गये हैं ब्राह्मणों में मन्त्र रहते हैं औ गौओं में हवि गौओं से यज्ञ प्रवृत्त होते हैं सब देवता गौओं में निवास करते हैं षडंग सहित वेद गौओं से उत्पन्न भये हैं गौओं के शृंग मूल में ब्रह्मा औ विष्णु स्थित हैं शृंगाग्र में स्थावर जंगम सब तीर्थों का निवास है शिर में महादेव ललाट में पार्वती नासावंस में कार्तिकेय नासिका के दोनों पुटों में कंबल अश्वतर नाग कानों में अश्विनीकुमार नेत्रों में सूर्य्य चन्द्र दन्तों में सब वायु जिह्वा में वरुण हुंकार में सरस्वती दोनों पार्श्व में यम औ कुवेर दोनों सन्ध्या गलकंबल में ग्रीवा में इन्द्र आठ वसु पार्ष्णि में जंघाओं में चतुष्पाद धर्म खुरों के मध्य में गन्धर्व खुराग्रों के नागखुरों के पृष्ठ भाग में सम्पूर्ण राक्षस पुच्छ में आदित्य गोमूत्र में साक्षात् गंगा गोबर में यमुना रोमकूपों में तेंतीस कोटि देवता उदर में पर्वत समुद्र आदि सहित भूमि चारों स्तनों में चार सागर दुग्ध धारा विद्युत सहित मेघ स्वेत रक्त पीत कृष्ण गौओं के इन चार वर्णो में ऋग्वेद यजुर्वेद सामवेद औ अथर्व वेद स्थित हैं इस भाँति सर्व देवमयी औ सर्वतीर्थमयी धेनु हैं यह मन में विचार पार्वती जी ने नंदिनी धेनुका रूप धारा जिसके सब अंग अति सुन्दर शुक्ल वर्ण औ चारों स्तनों से दुग्ध टपक रहा है कार्तिकेय बछड़ा बने महादेवजी भी बृद्ध ब्राह्मण का रूप धारे उन दोनों गौओं बछड़ा को लेकर जहाँ मुनि तप करते थे वहाँ पहुँचे औ कुलपति भृगुमुनि के पास जाय कहा कि दो दिन आप इस हमारी गौ को अपने पास रहने देवें इतने में हम समीपवर्ती तीर्थ की यात्रा कर आवें भृगुजी ने कहा बहुत अच्छा औ वह धेनु मुनियों के हवाले करदी महादेव जी ने वहाँ से अन्तर्द्धान होकर सिंह का रूप धारण किया कि जिसके बक्ष कठोर हो अतितीक्ष्ण नख जलते हुए पिंगल बर्ण नेत्र बड़ी बड़ी औ तीखी दाढ़ लम्बी पूंछ औ लटकती हुई लाल जिह्वा इस प्रकार अतिकराल रूप धार आश्रम के समीप आय गर्जने लगे वह घोर शब्द सुन गौ औ बछड़ा त्रास को प्राप्त भये सब मुनियों में हाहाकार मच गया गौ बछड़ा भय से भगे औ सिंह भी पीछे लगा उन सब के चरणों के चिन्ह आज तक भी शिला के ऊपर देख पड़ते हैं जिनको सब देवता पूजते हैं औ तीर्थ सहित शिवलिंग भी वहाँ है जिस लिंग के स्पर्श से गोहत्या निवृत्त होती है औ जंबू मार्ग में स्थित उस शिव तीर्थ में स्नान करने से ब्रह्म हत्या आदि महापातक कट जाते हैं वे मुनि भी यह वृत्तान्त देख प्राण त्याग करने को उद्यत भये तब देखा कि न

तो कहीं सिंह है औ न बछड़े समेत गौ है सब मुनि यह आश्चर्य देख विचार ही कर रहे थे कि पार्वती सहित वृष पर आरूढ़ त्रिशूल हाथ में लिये कार्तिकेय, गणपतिनन्दी महाकाल, भृंगी, वीरभद्र, घंटाकर्ण, चामुंडा, मातृका, भूत यक्ष, राक्षस गुह्यक देव, दानव गन्धर्व आदि सहित श्री महादेव जी, वहाँ प्रकट भये मुनि उनका दर्शन पाय कृतार्थ भये औ भक्ति से उनका पूजन किया औ गोरूपिणी श्री पार्वती का सपत्नी कामिनियों ने प्रीति से अर्जन किया उसी दिन से कार्तिक कृष्ण पक्ष में गोवत्स द्वादशी व्रत का प्रचार हुआ है उत्तानपाद इस व्रत को सदा किया करता था उसका हम वृत्तांत कहते हैं उत्तानपाद एक राजा था उसके रुची और श्रुघ्नी नाम दो रानी थीं श्रुघ्नी के ध्रुव नामक पुत्र उत्पन्न भया कुछ दिन के अनन्तर श्रुघ्नी ने रुची से कहा कि हे सखि तू इस बालक का पालन कर औ मैं पति की शुश्रूषा में रहूँगी रुची ने यह बात अंगीकार करली औ श्रुघ्नी पति की सेवा में तत्पर भई एक दिन ईर्षा से रुची ने उस बालक को मार खण्ड-खण्ड कर राँध लिया औ भोजन के समय राजा के आगे वही माँस परोसा राजा भोजन किया ही चाहता था कि वह बालक जीकर उठ खड़ा हुआ तब सब को आश्चर्य भया कि यह क्या माया है रुची ने श्रुघ्नी से पूछा हि यह तेरे किस पुण्य का प्रभाव है कि सात बार इस बालक को ईर्षा से मैं बध कर चुकी परन्तु यह फिर जी उठता है क्या तू मृत संजीवनी विद्या जानती है कि कोई मणिमन्त्र ओषधी आदि तेरे पास है जिससे यह बालक नहीं मरने-पाता मुझको सत्य बता दे तब श्रुघ्नी ने कहा कि हे रुचि मैंने गोवत्स द्वादशी व्रत किया है उसी का यह सब प्रभाव है इस व्रत के करने से कभी पुत्र से बियोग नहीं होता तू भी इस व्रत को करे तो बड़ी प्रतापी और दीर्घजीवी पुत्र पावे यह सपत्नी का बचन सुन रुची भी व्रत करने लगी औ पुत्र धन सुख आरोग्य आदि सब पाये औ अन्त में पति सहित ध्रुव स्थान में प्राप्त भई ब्रह्मा जी ने भी उनका सत्कार किया अद्यापि ध्नव उत्तानपाद औ रुचि का आकाश में दर्शन होता है जो उनके दर्शन करे वह सब पापों से मुक्त होय इतनी कथा सुन राजा युधिष्ठर ने गोवत्स द्वादशी व्रत का विधान पूछा तब श्रीकृष्णचन्द्र कहने लगे कि हे महाराज कार्तिक कृष्ण द्वादशी को स्त्री अथवा पुरुष संकल्प कर नदी में स्नान करैं औ एक भक्त व्रत रख कर मध्यान्ह के समय सुशीला औ सवत्सा कपिला गौ का गन्ध पुष्प जल अक्षत दीप अनेक प्रकार के नैबेद्य उड़द के बड़े और भी जो पदार्थ गौ को प्रिय हों उनसे गौ औ बछड़े का : **ओंमातारुद्राणांदुहिता वसूनांस्वसादित्यानाममृतस्यनाभिः प्रणवोचंचिकितुषेज नापनागामदितिवशिष्ठयानभोगोम्योनम स्वाहा :** इस मंत्र करके पूजन करे पीछे हाथ जोड़ **ओंमसर्वदेवमयेदेवि सु भद्रेभद्रवत्सले । मातर्ममाभिलषितं सफलंकुरुनन्दिनः** यह मन्त्र पढ़ क्षमापन कराय गौको तृप्ति पूर्वक भोजन करावै औ आप भी तवे औ स्थाली में सिद्ध हुआ भोजन न खाय औ ब्रह्मचर्य से भूमि पर शयन करै इस व्रत का करने हारा गौ के शरीर में जितने रोम हैं उतने दिव्य वर्ष गोलोक में निवास करता है। मेरु पृष्ठ के ऊपर अष्ट दिक्पालों की पुरी हैं औ इन सब के ऊपर गोलोक है जो कार्त्तिक कृष्ण द्वादशी को गन्ध पुष्प वटक आदि से सवत्सा गौ का भक्ति से पूजन करते हैं वे कभी सन्तान का कष्ट नहीं पाते औ संसार का सब सुख भोग गोलोक को जाते हैं ।

३३:६:११ निष्कर्ष

अब इन दोनों कहानियों को अलग-अलग मानकर चारों स्थानों की कहानियों के अभिप्रायों को तुलनापूर्वक देख सकते हैं:—

इस तुलना से यह स्पष्ट होता है कि

१. नरबलि की कहानी षष्ठी की कहानी है।

२. वत्स-बलि अथवा वत्स-हत्या की कहानी द्वादशी, ओघ द्वादशी अथवा बछवारस की कहानी है।

३. दूसरी स्थिति में ब्रज में ये कहानियाँ लोहबन वाले रूपान्तर को प्राप्त हुईं, जिसमें दोनों अलग-अलग रूप रखते हुए भी स्पष्टतः जुड़ी प्रतीत होती हैं।

४. तीसरी स्थिति में आने पर कहानी ने आगरे वाला रूप ग्रहण किया।

५. दूसरी स्थिति की कहानी का संबंध कृषि-क्षेत्र से विशेष है। उसमें गाय और बछड़े को महत्व प्राप्त है।

६. तीसरी स्थिति की कहानी का संबंध उस क्षेत्र से है जिसके निवासी अब कृषि को महत्व नहीं देते। वत्स अथवा बालक या लड़के को महत्व देते हैं। इसीलिए 'नरबलि' के रूप की प्रधानता है, पर उसी के साथ 'गाय और बछड़ा' भी जोड़ दिये गये हैं, और नरबलि के साथ यह गो-बलि भी एक ही विधि और रूप से दिखायी गयी है।

अब यहाँ यह प्रश्न प्रस्तुत होता है कि ये दोनों कहानियाँ इस प्रकार जुड़ कैसे गयीं? किस क्षेत्र में जुड़ी? लोहबन वाली कहानी कृषक-जमींदार ब्राह्मण घराने से मिली है। दूसरी कहानी व्यवसायी अग्रवाल बनिये परिवार से। इस तथ्य से यह विदित होता है कि ये कहानियाँ 'कृषि-क्षेत्र' में ही एक दूसरे से जुड़ीं। 'बछ-वारस अथवा ओघ द्वादशी' प्रधानतः कृषि-जल का व्रत है। इसकी कहानी में गाय और बछड़े की प्रधानता होनी चाहिये। इस क्षेत्र से यह कहानी नगर के व्यवसायी क्षेत्र में गयीं, जिसमें 'पुत्र-कामना' की प्रधानता है, पर बछ-वारस अथवा ओघ द्वादशी के पर्व के महत्व की दृष्टि से गाय और बछड़े को भी जोड़ लिया गया।

कैसे और क्यों जुड़ी, ये दोनों अलग-अलग कहानियाँ? इसका समाधान यही हो सकता है कि जिस क्षेत्र में ये कहानियाँ जुड़ीं वहाँ षष्ठी देवी का महत्व नहीं होगा। ब्रज में षष्ठी देवी का महत्व नहीं। षष्ठी तिथि की पूजा नहीं होती। इसका अवशेष जातकर्म संस्कारों में 'छठी' में तो मिलता है, पर यह छठी जन्म-दिन से छठे दिन होती है, छठ तिथि को नहीं। षष्ठी की एक दूसरी कहानी ब्रज में स्याहू की कहानी हो गयी है। यहाँ भी यह उस षष्ठी से संबंध छोड़ बैठी है। पर संतान की कल्याण-कामना के लिए षष्ठी की इस कहानी का माहात्म्य लोक में माना गया होगा, इसीलिए कहानी के फल के लिए इस कहानी को बारस की कहानी से जोड़ दिया गया होगा।

इन दोनों कहानियों में से बछवारस वाली कहानी में एक ऐसी घटना है जो विचार चाहती है। बछवारस वाली कहानी का मूलाधार 'भ्रम' है। 'भ्रम' भी शब्दों के कारण है। घातूरा-पातूरा या गोंमलो-मोगलों के दो अर्थ होते हैं। सास ने शब्दों का प्रयोग एक अर्थ में किया। बहू ने दूसरा अर्थ समझा और परिणाम हुआ 'बछड़ों की

हत्या'। अब प्रश्न यह है कि गाय के बछड़ों के संबंध में जो संस्कार सास के थे, वे बहू के क्यों नहीं थे? बहू किसी ऐसे समाज से आयी प्रतीत होती है जिसमें 'गाय और बछड़ों' के संबंध में वैसा पूजा-भाव नहीं। यह भी विदित होता है कि बहू के यहाँ गो माँस' भक्ष्य होगा? सास के यहाँ वह वर्जित है। क्या इस कहानी में किसी ऐसे युग का अवशेष है, जिसमें गोहत्या तो सामान्य धर्म था, और उससे गो-हत्या-निषेध की प्रवृत्ति का संघर्ष आरम्भ हुआ था। दूसरे शब्दों में यह कहानी क्या मांसाहारी युग की समाप्ति और कृषि-युग की संप्राप्ति की संक्रान्ति के अवशेष से संबंधित है।

३३:१० अनन्त चौदस

भाद्रपद शुक्ला चतुर्दशी को 'अनन्त चौदस' का व्रत रखा जाता है। चौदह गाँठों से युक्त सूत्र पट्टे पर रखे जाते हैं, और स्त्रियाँ अनन्त भगवान की कथा सुनती हैं। कथा सुनने के उपरांत घर के सभी छोटे-बड़े स्त्री-पुरुष चौदह गाँठों वाले सूत्र कुहनी से ऊपर बाँहों में बाँधते हैं। पुरुष दाहिने हाथ में, स्त्री बाँयें हाथ में बाँधती हैं। ये सूत्र अनन्त चौदस के नाम से केवल 'अनन्त' या 'अंत' ही कहे जाते हैं। ये अनन्त बाजारों में भी बिकते हैं, और तरह-तरह के आकर्षक रूप में बनाकर बेचे जाते हैं।

३३:१०:१ इस अवसर पर जो कहानी कही जाती है वह एक प्रकार से एक आध्यात्मिक यात्रा की कहानी सी प्रतीत होती है, पर उसे सांसारिक सुखोपलब्धि से संयुक्त कर दिया गया है। कहानी सुनते समय सामान्यतः श्रोता को ऐसा प्रतीत होने लगता है जैसे कि वह स्वयं ही अनन्त भववान की खोज में चल पड़ा है, और जैसे संसार के विविध पीड़ित तत्व उसे अपने-अपने दुःख की व्यथा सुनाकर कह रहे हों कि भाई, हमारी बात भी अनन्त भगवान से कहना, और हमारे दुःखों को दूर करने का उपाय ढूंढ कर लाना। अनन्त भगवान मिलते हैं, उसके कष्ट को दूर करने का उपाय बताते हैं, साथ ही अन्य दुखियों का दुख दूर करने का उपाय भी बताते हैं। उसी के द्वारा उन सबको दुखोन्मोचन होता जाता है। निश्चय ही यह कहानी मन में एक उज्ज्वलता भरती है और भविष्य जीवन में आस्था पैदा करती है। यह कहानी यों है—

३३.१०.१.१ 'अनंत चौदस की कहानी'

एक लड़की थी वह अनंत चौदस को अनंत बांधा करती थी बड़ी होने पर उसकी शादी हुई तथा गौना भी हो गया और अपनी सुसराल वह अनंत बाँधे ही चली गई एक दिन वह नहा रही थी तो उसकी सास ने देख लिया और उससे बुरा-भला कहा और जब उसकी बुढ़िया का लड़का आया तो उसने कहा कि तेरी बहू क्या गंड ताबीज बांधा करती है एक दिन जब वह लड़की रोटी कर रही थी तो उसके पति ने अनंत को उस लड़की के हाथ में से तोड़ कर चूल्हे में डाल दिया उस लड़की ने वह अनंत चूल्हे में से निकाल कर जल्दी से खा लिया और उसका पति उस दिन से कोढ़ी हो गया और उसने अपने पति का हर तरह इलाज करवाया पर उसे कोई फायदा नहीं हुआ तब उसने बड़े-बड़े पंडितों को दिखाया तो उन्होंने कहा कि तुमने कोई पराक्षित किया है तब उसने बताया कि एक बार उसने अपनी पत्नी के हाथ में से अनंत तोड़ कर आग पर डाल दिया और उसने उसको खा लिया तब पण्डितों ने कहा कि यह सब उसी का फल है तुम बियाबान जंगल में जाओ

वहां तुम्हें अन्तरयामी मिलेंगे। तब उन सब के कहने पर वह जंगल में अन्तरयामी अन्तरयामी चिल्लाता हुआ जाने लगा तो रास्ते में उसे बेरिया मिली उसने उससे कहा कि तू अन्तरयामी अन्तरयामी चिल्लाता कहां जा रहा है। तो उस आदमी ने कहा कि अन्तर-यामी के पास अपनी काया ठीक कराने जा रहा हूं तो बेरिया ने कहा कि मेरा दु:खड़ा भी कहियो कि मेरे ऊपर इतने बेर लदे हैं और वह सब सड़ जाते हैं कोई खाता ही नहीं। बेरिया के पश्चात् वह और आगे बढ़ा तो रास्ते में उसे ऊंटनी मिली उसकी पीठ पर दोनों ओर दो चक्की के पाट लदे हुए थे उसने भी उस आदमी से कहा कि तुम मेरा दु:खड़ा भी अन्तरयामी से कहना कि ये दोनों चक्की के पाट हर समय मेरी पीठ पर लदे रहते हैं इनकी वजह से बिल्कुल भी बैठ नहीं पाती इसके पश्चात वह अन्तरयामी अन्तरयामी चिल्लाता हुआ आगे बढ़ा तो एक घोड़ी मिली वह माया से लद रही थी उसमें से कोई माया लेता ही नहीं था उसने भी उस से कहा कि तुम अन्तरयामी से मेरी प्रार्थना कहना कि मेरे ऊपर इतनी माया लदी रहती है इसके बोझ से मैं दबी रहती हूँ पर कोई मेरे में से माया लेता ही नहीं फिर वह चिल्लाता हुआ आगे बढ़ा तो उसे दो नदी मिली उनके पानी में कीड़े पड़ रहे थे कोई उस पानी को पीता ही नहीं था उन नदियों ने उस आदमी से अपनी प्रार्थना कही कि अन्तरयामी से कहना कि हमारे पानी में तो कीड़े पड़ रहे हैं और कोई पीता भी नहीं तब वह अन्तरयामी चिल्लाता हुआ इधर उधर जंगल में भटकता रहा अन्त में एक कपिल बूढ़ा आदमी मिला और वह आदमी उसी बूढ़े से लिपट गया और कहने लगा कि तुम्हीं अन्तर-यामी हो उस बूढ़े ने कहा कि तुम मुझे क्यों तंग कर रहे हो मैं अन्तरयामी नहीं हूँ तब भी वह उसके पीछे पड़ा रहा कि आप ही अन्तरयामी हैं आपही मुझे कायादान दोगे उसने बहुत विनती करी तब बूढ़े को अपने असली रूप में आना पड़ा उसने उससे सब कहा तब अन्तर-यामी ने कहा तूने मेरा अपमान किया पर तेरी औरत बड़ी हुशियार थी उसीकी वजह से तू बचा रहा है नहीं तो तेरी काया बिल्कुल बिगड़ जाती और कहा कि तू अनंत चौदस का व्रत रहा करियो और अनंत बाँधा करियो और किसी भी देवता का अपमान मत किया करियो तब उसने कहा कि मुझे जो रस्ते में मिलें उनकी भी व्यथा सुनलें, मुझे रास्ते में दो नदी मिलीं उनका पानी बदबूदार तथा कीड़ों वाला था उन्होंने कही कि हमारी व्यथा अन्तर-यामी से कहियो। अन्तरयामी ने कही कि तू उन दोनों का पानी एक दूसरे में डाल दियो और थोड़ा सा तू पीलियो क्योंकि अगले जन्म में दौरानी जिठानी थी वह ढकन ढकन के एक दूसरे बायना नहीं देती थी इसलिये उनकी ये हालत होगयी। और घोड़ी जो थी वह बड़ी सूमनी थी वह दान पुण्य इत्यादि कुछ नहीं करती थी इसलिए जब वह मरी तो मैंने उसकी माया उसके ऊपर लाद दी तू उसमें से थोड़ी सी माया लेलियो और दीन दुखियों को बांट दियो, और जो ऊंटनी थी वह पहले एक ऐसी स्त्री थी जो जब कहीं भी जाती तो चक्की का हथेला अपने संग ले जाती थी इसलिए उसके मरने पर मैंने दोनों पाट उसकी पीठ पर लाद दिये तू एक पाट उसकी पीठ पर से उतार कर रख दियो और वह बेरिया जो थी वह बड़ी कुंटाद थी और अपनी कुछ भी चीज किसी को भी नहीं देती थी और सब को गाली देती थी कि मेरी जो चीज खाये वह कीड़े खाए इसलिए उसके मरने के पश्चात् मैंने उसको बेरिया बनाया और अपनी बुरी आदतों की वजह से उसके बेर में कीड़े होते हैं तू उसके बेरों में से कुछ बेर खालियो तो वह ठीक हो जाएगें। इसी प्रकार से उसने सब को ठीक

कर दिया और घर पहुँच कर उसने बड़ी धूमधाम से अनंत चौदस मनाई। जैसी उसको आई वैसी सबको आए।

३३:१०:१:२ अनन्त चतुर्दशी की कहानी श्री गुप्ते महोदय ने भी विस्तार पूर्वक दी है। वह अवश्य ही उन्होंने किसी पुराण से दी प्रतीत होती है। उसका सार हम यहाँ देते हैं।

"पांडवों में ज्येष्ठ धर्मराज ने कृष्ण से निवेदन किया कि कोई ऐसा व्रत बताइये जिससे उन्हें राज्य भी प्राप्त हो और समृद्धि भी। कृष्ण ने अनन्त व्रत बताया। अनन्त क्या है ? नागों के राजा भी अनन्त कहलाते हैं, और शाश्वत ईश्वर भी ? कृष्ण ने कहा—अनन्त मैं ही हूँ। न मेरा आदि है, न मध्य, न अवसान। यह अनन्त व्रत संसार में सबसे पहले शीला नाम की स्त्री ने किया था।

कृतयुग में सुमन्तु नाम के ब्राह्मण ने भृगु की सुन्दरी कन्या दीक्षा से विवाह किया। उनके शीला नाम की कन्या हुई। दीक्षा की मृत्यु हो गयी। सुमन्तु ने कर्कशा नाम की दूसरी स्त्री से विवाह कर लिया। शीला दिवालों पर विविध प्रकार के चित्र अंकित करती और उनमें देवताओं को पूजा करती। एक बार कौण्डिन्य ऋषि उनके यहाँ आये, उन्होंने शीला से विवाह कर लिया। कर्कशा ने अपने पति की इच्छा के विरुद्ध कौण्डिन्य और शीला को बिना कुछ लिये दिये बिदा कर दिया। मार्ग में उन्हें यमुना नदी पड़ी। वहाँ वे रुके। शीला ने अनेकों स्त्रियों को लाल वस्त्र धारण किये हुए अनन्त की पूजा करते देखा। उनसे शीला ने अनन्त पूजा की विधि जानी, और स्वयं अनन्त की पूजा की। इससे उनके बहुत धन-धान्य हुआ।

एक दिन कौण्डिन्य ने शीला को चौदह गाँठों वाला अनन्त पहने देख लिया। उसने उसे आग में फेंक दिया। शीला ने उसे आग से निकाल कर दूध में डाल कर पी लिया। इसका परिणाम यह हुआ कि वे दरिद्र हो गये। समस्त संपत्ति लुट गयी, नाते-रिश्तेदारों से झगड़ा होने लगा। उन्होंने उसे बहुत पीटा। शीला ने बताया कि यह दुर्दशा अनन्त के अपमान के कारण हुई है। वह अनन्त की खोज में निकल पड़ा। मार्ग में जंगल में उसे आम का फलों से लदा वृक्ष मिला, पर फल सभी कीड़ों से गिजगिजा रहे थे, एक गाय मिली जिसके पीछे बछड़ा घूम रहा था, उसे एक हरे भरे मैदान में खड़ा हुआ बैल मिला, और आगे चलने पर दो तालाब मिले, और आगे एक गदहा मिला, कुछ और आगे एक हाथी मिला। सबसे उसने मिलने पर यही पूछा कि क्या उन्होंने अनन्त भगवान देखे हैं। प्रत्येक ने यही उत्तर दिया कि नहीं। तब वह बहुत हताश हो गया और एक वृक्ष से रस्सी बाँध कर उसने फाँसी लगा लेने का विचार किया, तभी अनन्त भगवान ब्राह्मण का वेष धारण कर उसके पास आये। वे उसे अपने दिव्यलोक में ले गये—और कहा कि जाओ चौदह वर्ष तक निरंतर अनन्त-पूजा करो, सब पाप धुल जायेंगे। और जो भी अनन्त व्रत करेगा या शीला की अनन्त-पूजा की कहानी सुनेगा वह भी तर जायगा और सुखी रहेगा। तब अनन्त ने बताया कि वह आम का पेड़ एक वेदाभ्यासी ब्राह्मण था। वह अपने शिष्यों को ठीक तरह नहीं पढ़ाता था, इसलिए आम का वृक्ष हो गया।

गाय स्वयं पृथ्वी थी, उसने औषध के पदार्थों के बीज निगल लिये, इसलिए पशु हो गयी। बैल या वृषभ स्वयं धर्म है। दो लड़ाकू सपत्नियाँ तालाब बना दी गयीं। गदहा साक्षात क्रोध है। हाथी धृष्टता का रूप है। यह गुफा जिसमें तुम्हें मेरा दिव्यलोक दीखा है पृथ्वी पर नैतिक जीवन का प्रतीक है। ऐसा कह कर अनन्त अर्न्तध्यान हो गये। कौण्डिन्य ने अनन्त पूजा विधिवत् की और सुख पाया तथा मोक्ष पायी।

३३:१०:२ हमारे समक्ष भविष्य पुराण है। उसमें भाद्रशुक्ल चतुर्दशी के कई व्रतों का निधान है।

३३:१०:२:१ इकासीवें अध्याय में 'पाली व्रत का विधान और फल' बताया गया है। कृष्णचन्द्र ने बताया है कि 'हें महाराज भाद्रशुक्ल चतुर्दशी को.........दाड़िम सुपारी आदि करके वरुण का पूजन करे.........इस विधि से जो इस पाली व्रत को करै तत्क्षण सब पापों से मुक्त हो जाता है।.........

३३:१०:२:२ बयासीवें अध्याय में 'रंभा व्रत का विधान और फल' है। इसमें भाद्रपद शुक्ल चतुर्दशी को केले के वृक्ष के पूजन का विधान है। और बताया गया है कि स्वर्ग में इस व्रत को गायत्री ने किया, कैलाश पर गौरी ने किया, नन्दनवन में इन्द्राणी ने, श्वेत द्वीप में लक्ष्मी ने, भारतमण्डल में राज्ञी ने, दारुबन में अरुंधती ने, मेरु पर्वत पर स्वाहा ने, अयोध्या में सीता ने, रैवताचल पर देवकी ने, और नागपुर में भानुमती ने किया था।

३३:१०:२:३ तिरासीवें अध्याय में शिवचतुर्दशी के विषय में बताया गया है, और कुमार के जन्म की घटना का विस्तृत उल्लेख करते हुए पृ० ५०९ पर यह भी लिखा गया है कि 'अग्नि को अपना स्थान[1] चतुर्दशी तिथि को प्राप्त भया इसलिए यह तिथि अग्नि को अति प्रिय है।' इस शुक्ल चतुर्दशी का भाद्रपद से कोई विशेष संबंध नहीं।

३३:१०:२:४. श्रवणिका व्रत के लिए भी शुक्ल चतुर्दशी का निर्देश किया है। चौरासीवें अध्याय में इसका उल्लेख है।

३३:१०:२:५. इन उल्लेखों के अनन्तर पंचानवे अध्याय में 'रानी शीलधन' की कथा और अनन्त व्रत का विधान और फल दिया है जो इस प्रकार है :—

रानी शीलधना की कथा औ अनन्त व्रत का विधान औ फल।

---

१. कुमार का जन्म हो यह बात देवताओं के लिए आवश्यक हो गयी। उनके चक्र से शिव और पार्वती रति-क्रीड़ा में संलग्न हुए। इसी सुरति में दिव्य एक हजार वर्षों से अधिक लग गये। तब देवताओं ने अग्नि और वायु को भेजा। अग्नि रतिमग्न पार्वती जी को दिखायी पड़ गया। उन्हें लज्जा आयी और शिवजी से अग्नि के आगमन की बात कही। तो शिवजी ने कहा कि अब हमारे वीर्य को अग्नि धारण करेगा। यह सुन अग्नि लुप्त हो गया। उसको ढूंढ़ने चले देवगण, तब तक अंगिरा ने अग्नि रूप हो शिवजी के वीर्य का धारण किया। बड़ी खोज के बाद अग्नि मिला। तब उसने चतुर्दशी को अपना स्थान अंगिरा से प्राप्त किया।

राजा युधिष्ठिर कहते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र भक्ति से नारायण का आराधन करें तो सब मनोवांछित फल प्राप्त होते हैं परन्तु स्त्री पुरुषों को सन्तान ही न होना इससे अधिक कोई दुःख औ शोक नहीं सब सुखों का हेतु सन्तान है जगत् में वे धन्य हैं जो सर्वगुण सम्पन्न आरोग्य बलवान् धर्मज्ञ शास्त्र वेत्ता दीन अनाथों का आश्रय भाग्य-वान् हृदय को आनन्द देने हारा औ दीर्घायुष् पुत्र पाते हैं अब हम ऐसा व्रत सुनना चाहते हैं कि जिसके करने से ऐसे लक्षणों करके युक्त पुत्र उत्पन्न होयँ यह राजा का बचन सुन श्रीकृष्ण भगवान् कहने लगे कि हे महाराज इसमें एक प्राचीन इतिहास हम वर्णन करते हैं हैहय वंश में कृत्तवीर्य नाम राजा हुआ है उस की हज़ार रानियों में मुख्य सब लक्षणों करके युक्त शीलवना नाम रानी थीं उसने एक दिन पुत्र-प्राप्ति के लिये ब्रह्मवादिनी मैत्रेयी से पूछा तब मैत्रेयी ने उसको यह व्रत उपदेश किया कि मार्ग शीर्ष मास में जिस दिन मृगशिरा नक्षत्र होय उस दिन स्नान आदि कर अनन्त भगवान् के बामचरण का पूजन गन्ध पुष्प धूप दीप आदि से करैं औ

अनन्तं सर्वकाकानामनन्तं भगवत्फलम् । नमाम्यमन्तंचपुनस्तवेवापुत्रजन्मनि ।
अनन्तपुण्योपचयमनन्तंचमहाव्रतम् । यथाभिलषितावाप्तिं कुरुमेपुरुषोत्तम ।।

ये मन्त्र पढ़ प्रार्थना कर एकाग्रचित्त हो बारम्बार प्रणाम कर ब्राह्मण को दक्षिणा देवैं औ 'अनन्तःप्रीयताम्' यह वाक्य उच्चारण करैं औ गोमूत्र प्राशन करैं औ रात्रि के समय तैल क्षरवर्जित भोजन करैं इसी विधि से पौषमास पुष्य नक्षत्र में भगवान् की बाम कटिका पूजन कर गोमूत्र प्राशन करैं माघमास मघा नक्षत्र में भगवान् के भ्रू का पूजन करैं फाल्गुन में फाल्गुनी नक्षत्र में स्कन्ध का पूजन करैं इन चार महीनों में गोमूत्र प्राशन करैं औ सुवर्ण सहित तिल ब्राह्मण को देवैं चैत्र में चित्रा नक्षत्र में भगवान् के दक्षिण स्कन्ध पूजन करैं वैशाख में बिशाखा नक्षत्र में दक्षिण भुजा का पूजन करैं ज्येष्ठ में ज्येष्ठा नक्षत्र में दक्षिण कटिका पूजनकरे आषाढ़ में आषाढ़ा नक्षत्र में दक्षिण पाद का पूजन करैं इन चार महीनों में पंचगव्य प्राशन करैं ब्राह्मण को सुवर्ण देवैं औ रात्रि को भोजन करैं श्रावण मास में श्रवण नक्षत्र में भगवान् के दोनों चरणों का पूजन करैं भाद्र में भाद्रपदा गुह्या नक्षत्र में पूजन करैं आश्विन में अश्विनी नक्षत्र में हृदय का पूजन करैं औ कार्तिक मास में कृत्तिका नक्षत्र में अनन्त भगवान् के शिर का पूजन करैं इन चार महीनों में घृत प्राशन करैं औ घृत ही ब्राह्मण को देवैं प्रथम चार मास में घृत से हवन करैं द्वितीय चार मास में धान्य से औ तृतीय चार मास में अनन्त भगवान् की प्रति के लिये दुग्ध से हवन करैं इस प्रकार बारह महीनों में तीन पारण कर वर्ष के अन्त में स्वर्ण की अनन्त भगवान् की मूर्ति औ चाँदी के हल मूसल बनावैं पीछे मूर्ति को ताम्र पीठ पर स्थापन कर दोनों ओर हल मूसल पुष्प धूप दीप नैवेद्य आदि से पूजन कर

अनंतायनमः । सर्वात्मनेनमः । शेषायनमः । कामायनमः । वासुदेवायनमः ।
संकर्षणायनमः । सर्वार्थदायिनेनमः । श्रीकंठनाथायनमः । इन्दुमुखायनमः

इन मन्त्रों से शिर पाद जानु कटि पार्श्व उदर भुज कण्ठ औ मुख का पूजन करै हलायनमः । मुसलायनमः इन मन्त्रों से हल मूसल का पूजन करैं औ नील बस्त्र पुष्प माला आदि से अनन्त भगवान् का पूजन कर बारह घट अन्न औ जल युक्त स्थापन

करै उनमें बारह महीनों का पूजन करै नक्षत्र देवता संवत्सर श्रौ सब नक्षत्रों के राजा चन्द्रमा का विधि पूर्वक पूजन करै फिर पुराणवेत्ता धर्मज्ञ शांत प्रियदर्शन ब्राह्मण का वस्त्र भूषण आदि से पूजन कर यह सब सामग्री उसके अर्पण करै श्रौ 'अनंतः प्रीयताम्,' यह वाक्य कहे पीछे और ब्राह्मणों को भी भोजन दक्षिणा आदि देकर संतुष्ट करै इस विधि से जो इस अनन्त व्रत को समाप्त करै वह सब अभीष्ट फल पावै। हे ! शीलधने जो तू उत्तम पुत्र की इच्छा रखती है तो विधि पूर्वक श्रद्धा से इस व्रत को कर श्रीकृष्ण भगवान् कहते हैं कि हे महाराज इस प्रकार मैत्रेयी से उपदेश पाय शीलधना व्रत करने लगी व्रत के प्रभाव से अनन्त भगवान् संतुष्ट हुए श्रौ रानी शीलघना को पुत्र दिया शीलघना के पुत्र का जन्म होते ही आकाश निर्मल हो गया सुख देने हारा पवन चलने लगा देवदुन्दुभि बजाने लगे पुष्पवृष्टि भई सारे जगत् में मंगल हुआ पवनचलने लगा देवदुन्दुभि बजने लगे पुष्पवृष्टि भई सारे जगत्में आसक्त हुआ राजा कृतबीर्य ने अपन पुत्रका नाम अर्जुन रक्खा जो कृतवीर्य का पुत्र होने से कार्तबीर्य कहाया कार्त्तबीर्य ने बड़ा तप करके विष्णु भगवान् के अवतार श्री दत्तात्रेयजी का आराधन किया और वर पाये। हे अर्जुन तू चक्रबर्ती हो जो सायंकाल श्रौ प्रभात नमोस्तुकार्त्तबीर्याय यह वाक्य उच्चारण करेंगे उनको प्रस्थ भर तिलदान का पुण्य होगा श्रौ जो तुम्हारा स्मरण करते रहेंगे उन पुरुषों का द्रव्य नष्ट नहीं होगा इतना वर भगवान् से पाय राजा कार्तवीर्य धर्म से सप्तद्वीपवती पृथिवी का पालन करने लगा उसने बड़ी-बड़ी दक्षिणा वाले यज्ञ किये सब शत्रुओं को जीता इस भाँति रानी शीलधना ने अनन्त व्रत के प्रभाव से अति उत्तम पुत्र पाया जो पुरुष अथवा स्त्री इस कार्तवीर्य के जन्म को श्रवण करै वह सात जन्म पर्यंत संतान का दुःख न पावै जो इस अनन्त व्रत को भक्ति से करे वह उत्तम संतान और ऐश्वर्यपावै।

३३:११. गाज

यह व्रत सावन-भादों में बादलों की पहली गरज सुनने पर किया जाता है। जिस दिन गरज सुनायी पड़ती है, उस दिन किसी ब्राह्मणी से या स्वयं ही सात सूतों की या दस सूतों की गाज बाँधी जाती है। सातवें या दसवें दिन इस गाज को खोल देते हैं। ढाई पाव का गजरोट किया जाता है। एक चँदिया की जाती। पटे पर मुलतानी मिट्टी से—



सकट की आकृति

एक सकट की आकृति बनाकर उस पर गजरोट, चँदिया तथा तिनपतिया घास और गाज रखी जाती है। घी तथा गुड़ से पूजा की जाती है। थोड़ा सा नाज रखकर उस पर एक लुटिया पानी रखा जाता है। गाज-पूजा करके कहानी सुनी जाती है। तब पटे को बाहर ले जाकर उस पर लुटिया के पानी से सूर्य नारायण को अर्घ्य दिया जाता है।

३३:११:१. इस अवसर पर जो कहानियाँ कहीं जाती हैं उनके कई रूप मिलते हैं। इसका एक रूप भारद्वाज जी ने दिया है, वह इस प्रकार है:—

भादों गरजी। बामनी गाज लेके बाँटने निकली। सोचा, पहले रनवास में जाऊं; जाने रानी मुझे क्या दे। पहले रानी के गई, बोली—रानी गाज लोगी? राजा शिकार खेलने गया था। रानी बोली—कैसी गाज, क्या करते हैं? बामनी बोली—रानी, दस तार का डोरा बटकर गले में या चूड़ियों में बांध लेते हैं और दसवें दिन खोल देते हैं; खोलने वाले दिन ढाई-पा का मीठा गजरोटा करके खोलनेवाली खाती हैं और चार पूरी मंस के बामनी को दे देती हैं। रानी बोली—अरे कोई नौकर है जो इसे बाहर निकाले। ढाई पान का बीड़ा तो झिलता नहीं, ढाई पा का गजरोटा कैसे झिलेगा। बामनी चली गई। बाहर रानी की नौकरानी दाना पीस रही थी। बोली—एक गाज मुझे देती जाओ उसने दे दी। दसवें दिन राजा शिकार खेलकर आ रहा था; बिजली राजा पर गिरे तो पर आड़ी हो जाय, जैसे-तैसे घर आया। आकर रानी से कहा कि आज तैंने क्या दान पुन्य किया? उसने कहा—मैंने तो कुछ नहीं किया, नौकरानी तो आज तिलक-छापे लगा कर आई थी। नौकरनी बुलाई गई पूछा—आज तैंने क्या किया? बोली—आज मैंने गाज खोली थी, और चार पूरी और एक सीधा दान दिया। राजा ने कहा कि तैंने ही आज मुझे बचाया। राजा की धन-दौलत में कमी होती गई। इतनी कमी हुई कि एक रोटी को भी भटकने लगे। रानी ने कहा कि जिस नगर में राज किया है, उसमें हमसे भीख न माँगी जायगी। दोनों जने बहन के यहाँ चल दिए। चलते-चलते राजा ने रस्ता-गीर से कहा कि जाकर कह दे तेरा भैया आवे है। बोली—कैसे भेस से? कि बड़े बोदे हाल से। कहा कि कुम्हार के अवा पर ठहरे। राजा-रानी वहीं ठहर गए। बहन धन लेकर आई। राजा के छूते ही सब धन कोयला हो गया। उन्होंने कोयले वहीं गाड़ दिए। फिर चलते चलते यार के गए; कि, यार-यार, तेरा यार आवे है। कि कैसे हाल से? कि बड़े बोदे हाल से। कि कह दीजो मेरी चित्तरसारी पर ठहरे। वहीं ठहर गए। खूंटी पर यार की रानीका हार लटक रहा था, खूंटी हार निगलने लगी। रानी राजा से बोली—देखो, कैसी खराब गिरह हम पर हैं। वहां से भी चल दिए। चले-चले तालाब पर टिके और तीतर पकड़ राजा न रानी से कहा—मैं न्हा आऊं, तुम तीतर पकाओ। राजा न्हाने गए, तीतर उड़ गए। जब राजा न्हा कर आए, पूछा—तीतर कहाँ गए? रानी बोली कि आज हमने खा लिए। राजा बोला—अच्छा, आज हम पकावेंगे, तुम न्हा आओ। तीतर फिर उड़ गए। रानी आई, लाओ थोड़े से मैं भी निपटा लूं। राजा बोला आज मैंने खा लिए। रानी बोली—जैसे मैंने खाए वैसे तुम ने खाए। तालाब से चले, एक नगर में आए। एक रस्तागीर ने कहा—यहाँ क्यों बैठे हो? बोले—भैया मजबूर

हैं, कोई मजदूरी करवाएगा तो कर देंगे। बोला—तेली की पाट हाँक दोगे? हाँ। राजा तेली के नौकर हो गया और रानी काछन हो गई, साग बेचने लगी। एक बरस बाद वही भादों गरजी, बामनी गाज लेकर तेली के आई। रानी ने कहा कि एक मुझे भी देती जाओ। बामनी ने कहा—जा, निपूती, गाज के मारे तो तू यहाँ आई। गाज न दी। उसने अपने कंबल के दस धागे बाँधकर दसवें दिन खोल दिए। तेली के से घी गुड़ गेहूँ ले कर गजरोटा खाए। गाज मैया ने उनके दिन सीधे करे। तेली और उस नगर के बुध राजा को जुआ खेलने का सौक था। तेली की हार हो रही थी, उसने राजा नल से कहा कि, नलुआ, अपने फाँसे दीजो। तेली को नल राजा ने फाँसे दे दिए। वह फाँसे तेली बुध राजा के पास ले गया और डाले कि 'चल रे फाँसे नलुआ के'। तब राजा ने ब फाँसे पहचाने कि यह तेरे पास कहाँ से आये, ये तो नल राजा के हैं। फिर बुध राजा ने नलुआ को बुलवाया और पूछा—ये फाँसे तुम्हारे पास कहाँ से आए? राजा नल ने कहा कि मुझे गिरहों ने घेर रक्खा है, मैं फलाने देस का राजा हूं। राजा बुध ने उसकी हजामत बनवाई और अच्छे अच्छे कपड़े पहनवाए। अब राजा नल और राजा बुध जुआ खेलने लगे इन्होंने बाजी लगाई कि जो मेरे लड़का और तेरी लड़की हुई तो आपस में ब्याह देंगे। रानी गर्भ से थी और बुध राजा की रानी भी गर्भ से थी। राजा नल के लड़का और बुध राजा के लड़की हुई। दोनों का आपस में ब्याह हो गया। राजा बुध ने अपना आधा राजपाट दहेज में दे दिया। रानी ने कहा कि राजा अब अपने नगर को चलो। यहाँ हम तेली के नौकर रहे हैं तो इस नगर में राज नहीं किया जायगा। वे चल दिए और बड़ी धूम धाम से उसी तालाब पर पहुँचे, तो वे ही तीतर उनके पैरों में लिपटने लगे। रानी ने कहा—राजा, देखो हैं वे ही तीतर जो उड़ गए थे। राजा ने उनको छै-सात पैसे के चने डलवाए। आगे चलके खबर भेजी, यार-यार, तेरा यार आवे है। यार बोला—कैसे हाल से। कि अबके बड़े-जोर-सोर से। कह दीजो कि मेरी कचहरी पर आवे। राजा बोला—मैं कचहरी नहीं जाऊँगा, उसी चित्तरसारी पर आऊँगा। वहाँ देखा कि वही खूँटी दूध पीती जाय और हार उगलती जाय। रानी बोली कि अब वही खूँटी हार उगलती जाती है। राजा ने यार को बहुत सा धन देके बहन के पास खबर पहुँचाई कि, बहन-बहन तेरा भैया आवे है कि कैसे हाल से? कि बड़े जोर सोर से। कि हाँ-हाँ, वह जो रुपया ले गया था, सो उन्हें खा-पीकर आवे है। कह दीजो मेरे महलों में आवे। राजा ने कहा कि मैं उसी कुम्हार के अवा पर टिकूंगा। फिर राजा ने पहले गड़े कोयले खुदवाये, वे ही अब रतन हो गये, अपनी ओर से और रुपया बहन को देकर अपने नगर को आये।

नगर के आदमी भागने लगे कि कोई पलटन आ रही है। राजा ने हाथ उठा कर कहा कि कोई मत भागो। मैं तुम्हारे ही नगर का राजा हूँ। फिर सब जने अगौनी करने आये और बहुत दिनों तक राजा रानी ने राज किया। पहली आई किसी की मत अइयो। पिछली आई सो सब काहू को अइयो।

३३:११:१:१. हमें जो कहानियाँ मिली हैं उनमें से एक यों है

(१)

सावन भादों गरजों एक ब्राह्मणी गाज लिये फिर रही थी। एक रानी ने पूछा यह क्या है। उसने कहा—इसका ढाई पाव का गजरोटा और एक चंदिया होती है। उसने कहा—मुझे ढाई पान तो पचता नहीं है तो ढाई पाव का रोट क्या पचाऊंगी। रानी ने गाज नहीं बंधवायी। तो उसकी बांदी ने बंधवा ली। पूछा कब खुलेगी उसने कहा—नौवें या ग्यारहवें दिन खोल लेना। बांदी ने नौवें दिन खोल कर ढाई पाव का गजरोटा और चंदिया बनायी कहानी कह कर चंदिया ब्राह्मणी को देदी जब राजा सारपांसे खेलने गया तो बिजली खूब तड़क कर आये। जब वह आये तो चंदिया राजा के ऊपर आ जाये। जब राजा सारपांसे खेल के घर आया तो उसने अपनी रानी से पूछा—रानी तुमने आज बड़ा भारी पुण्य किया है। रानी ने कहा—मैंने तो कुछ नहीं किया। यह आपकी बांदी ही गट पट करती रहती है। बांदी को बुलाया, उससे पूछा तूने क्या पुण्य किया है। वह बोली मैंने तो कुछ पुण्य नहीं किया बस कहानी सुन कर ब्राह्मणी को चंदिया देदी। राजा ने सोचा इसने मेरी जान बचाई है। उसने बांदी को रानी और रानी को काग बिडारनी बना दिया। बेचारी काग उड़ाती रहती थी। सेर भर जौ रोज मिलते। पीस के रोटी करके खा लेती थी फिर ब्राह्मणी आई। बांदी रानी ने भी मना कर दिया कि ढाई पान तो मुझे पचता नहीं, ढाई पाव का रोट कैसे पचाऊंगी। उधर रानी काग बिडारनी ने सोचा कि मेरे कोई बाँधेगा नहीं अतः उसने स्वयं डोरे बाँध कर, नौवें दिन खोल कर गजरोटा और चंदिया बनाई और कहानी सुन कर चंदिया ब्राह्मणी को दे दी। राजा फिर सारपांसे खेलने गया। फिर उसके ऊपर बिजली तड़क-तड़क कर आये। तब चंदिया उसके ऊपर आ जाये। राजा ने बांदी-रानी से पूछा—तुमने क्या पुण्य किया है। उसने कहा—मैंने कुछ पुण्य नहीं किया, काग बिडारनी ने किया होगा। उसने काग बिडारनी से पूछा—तो उसने कह दिया कि बस ब्राह्मणी को चंदिया दी थी। रानी फिर से रानी बनादी गयी, बांदी फिर से बांदी बन गयी। जैसे उसको किया वैसे सबको हो।

३३.११.१.२. एक अन्य रूप इस कहानी का इस प्रकार है:—

सावन बरसी भादों गरजी बामनी गाज लिए घूम रही थी। रानी ने बुलाकर पूछा:—यह क्या है। यह गाज है इस का ढाई पाव का गजरोटा और चंदिया होती है, कहानी सुन कर चंदिया ब्राह्मणी को दी जाती है तो फिर रानी ने गाज लेली। नवें दिन खोली। जब वह पूजा कर रही थी राजा शिकार से आया रानी ने गजरोटे को नांद के नीचे छुपा दिया राजा ने कहा—क्या छुपाया इसमें ? उसने कहा कुछ नहीं महाराज। राजा ने जिद करी फिर उसने कहा कि हे गाज परमेश्वरी लज्जा रखो, उसने रोट को दिवट बना दिया। उसने पूछा कहां से आया रानी ने कहा मेरे मायके से आया है। उसने कहा—तुम्हारा मायका तो है नहीं। उसने कहा—कि मेरे मायका है। राजा ने पूछा—क्यों आया है। रानी ने कहा—कि मेरे भतीजा हुआ है। राजा ने कहा—हम भी तुम्हारा मायका देखेंगे। रानी ने कहा—अच्छा। हे गाज परमेश्वरी मुझे ढाई दिन के लिए मायाका दे दो। चलते-चलते उन्हें बियाबान जंगल में बहुत सुन्दर महल मिला। उसमें रानी के भइया भतीजे और माँ

बाप थे। नौकर चाकर दास दासियाँ थे । राजा का खूब आदर सत्कार हुआ। जब दो दिन हों गये तो रानी ने कहा—राजा चलो सुसराल में ज्यादा दिन रहना ठीक नहीं है। वह लोग चल दिए। रास्ते में राजा को याद आई हम अपना चाबुक भूल आये हैं ? रानी को भी याद आया मैं भी अपनी आरसी चूल्हे पर रखी भूल आयी हूँ। नौकर गया उसने देखा चूहे बिल पर आरसी पड़ी थी और जंगल में चाबुक पड़ा। नौकर ने सारा किस्सा सुनाया। तो राजा ने रानी से पूछा—क्या रहस्य है। तो रानी ने कहा—कि गाज खोली थी गजरोटा था आप कहते इतना भारी कैसे पचाओगी। इस डर से मैंने छुपा दिया था। आपने कहा—क्या है, मैंने कहा बिवट आपने माँगा फिर आपने कहा—कहाँ से आया। मैंने मायका बताया। आपने कहा हम चलेंगे तो मैंने ढाई दिन के लिये मायका माँगा । हे गाज परमेश्वरी जैसे रानी को किया वैसे सबको कर।

३३:११:२. इन कहानियों से स्पष्ट है कि एक ओर तो यह 'गाज' का व्रत बिजली के घात के लिए टोटका है, जिससे बिजली गिरने पर रक्षा की संभावना है। दूसरी ओर व्रत के अनुष्ठान से समृद्धि और व्रत का अनुष्ठान न करने से दुःख और दारिद्रय का प्रकोप होता है। प्रकोप की कहानी का संबंध राजा नल से भी है। उन पर जो विपत्तियाँ पड़ीं उनका मूल कारण रानी द्वारा गाज की अवज्ञा बताया गया है। यद्यपि साहित्यिक या पौराणिक कथा-सूत्रों में इसे कलि का प्रकोप माना गया है। सामान्य लोक-कथा भी इस पौराणिक परम्परा में मिलती है, जिसमें कलि के प्रकोप को 'परदुख भंजनहार विक्रमादित्य' ने अपने ऊपर ओढ़ लिया था।

३४. क्वार या आश्विन में निम्नलिखित व्रतानुष्ठान होते हैं :—

१—श्राद्ध अथवा कनागत

२—न्यौरताः नवरात्र

३—दशहरा

४—टेसू-झाँझी

५—साँझी

६—शरतपूर्णिमा।

३४:१. श्राद्ध, कनागत अथवा पितृपक्ष

भादों की पूर्णिमा से क्वार की अमावस्या तक यह पितृपक्ष चलता है। इन दिनों में प्रतिदिन देहरी लीपी जाती है, और मालिन प्रातः ही पुष्प देजाती है, वे देहरी पर डाल दिये जाते हैं। पितरों की पुण्य मृत्यु तिथि के दिन पुरुष के लिए पुरुष, सधवा स्त्री के लिए सधवा स्त्री, विधवा के लिए विधवा स्त्री ब्राह्मणवर्ण की निमंत्रित की जाती है। भोजन बन जाने पर गाय, कुत्ते और चील-कौओं के लिए पत्तल निकाली जाती है। आग की अग्यारी पर उन पत्तलों में से कुछ अंश डालकर वे मंसी जाती हैं, फिर ब्राह्मण या ब्राह्मणों को भोजन कराया जाता है। भोजनोपरांत दक्षिणा भी दी जाती है।

३४:२. न्यौरता अथवा नवरात्र। यह देवी-पूजा का एक मनोरमह अनुष्ठान है। प्रायः लड़कियों की ही इसमें प्रधानता रहती है।

३४:२:१. क्वार शुक्ल प्रतिपदा से न्यौरता आरंभ होता है। न्यौरता खेला जाता है। मकान में किसी दीवाल के सहारे एक मिट्टी का घर बनाया जाता है। जिसके बाहर दोनों ओर छोटी-छोटी सीढ़ियाँ बनायी जाती हैं। दिवाल के सहारे दोनों ओर मिट्टी के हाथ बनाकर लगा दिये जाते हैं। घर के सिरे पर बीचों बीच एक सिर बना दिया जाता है। बीच दीवाल पर गौरी की पूर्ण स्त्री-मूर्त्ति मिट्टी की थापी जाती है।



न्योरता

इसे न्यौरता कहा जाता है।

फिर प्रातः सूर्य निकलने से पूर्व घर की लड़कियाँ अथवा बहुऐं एक लोटा जल भर कर न्यौरता के पास आ बैठती हैं, और शुद्ध पीली मिट्टी की गौरें चढ़ाती हैं। ये छोटी गौरें माल सूच्याकार होती हैं। मुंह हाथ नहीं बताने जाते हैं। गौरें बना-बना कर बनी हुई सीढ़ियों पर सजा दी जाती हैं। साथ में गीत गाये जाते हैं। एक आरंभिक गीत कुछ इस प्रकार होता है :—

'गौरी रे गौरा खोलौ किवरिया,

गौरें चढ़ जाने पर लोटे में झाँई देखी जाती है।

अपनी गौर की झाँई देखूं
का-का पहनें देखूं ?
नाक में नथ पहनें देखूं।

इस गीत में विविध शृंगार की कल्पना की जाती है। एक गीत में गौरा पूछती है—

'खेल खिलंतर बेटी कहा कहा माँगे'

कहा जाता है—दूसरे दिन बासी गौरें उतार कर खोखले में भरदी जाती हैं, और ताजी बनाकर चढ़ायी जाती हैं।

३४:२:१:१ पहले ही दिन से न्यौरता के आगे एक छोटा सा गड्ढा खोद कर उसमें जौ बो दिये जाते हैं। न्यौरता खेलते समय इनमें पानी भी दे दिया जाता है। नवमी तक इसमें जौ के अंकुर अच्छे ऊँचे हो जाते हैं। उन्हे दशहरा-पूजन के काम में लिया जाता है।

३४:२:१:२ नवमी के दिन न्यौरते पर बासी गौरें चढ़ायी जाती हैं। इस दिन न्यौरते को तरह-तरह के रंगों की चित्रकारी से सजाया जाता है। ऊपर दिवाल पर थपो गौर को रंग-बिरंगी चित्र की साड़ी पहना दी जाती हैं, रंगों से ही घांघरा बनाया जाता है।

३४:२:१:३ दशमी के दिन ये गौरें एकत्र कर नदी या तालाब या पोखर में सिरा दी जाती हैं।

३४:३ सांझी का कोट

क्वार में देवी के पूजन का एक दूसरा मनोरम रूप है साँझी का कोट। इसमें भी प्रायः बालिकाओं की प्रधानता रहती है। कोट दीवाल पर काफी लंबा चौड़ा बनाया जाता है, गोबर से रखा जाता है, और प्रति दिन उसमें कुछ वृद्धि की जाती है। अन्तिम दिन तक वह बिल्कुल पूरा हो जाता है।

३४:३:१ इस साँझी के संबंध में श्री विश्वम्भर सहाय 'प्रेमी' जी ने यह विवरण दिया है:—

साँझी के सम्बन्ध में यह बता देना आवश्यक है कि साँझी के गीतों में छोटी-छोटी बालिकाएँ अपने भाइयों की मंगल कामना भी करती हैं।

कुमारी लड़कियाँ दीवार पर साँझी का रेखाचित्र बना कर उसे अनेक प्रकार के आभूषणों से सुसज्जित करती हैं। वे मिट्टी से तरह-तरह के आभूषण बनाती हैं और फिर उन को खड़िया मिट्टी से पोत देती हैं। कहीं-कहीं उन पर रंग भी कर देती हैं। वे साँझी के कानों में झूमके पहनाती हैं, नाक में नथ पहना कर उस में मोती डालती हैं, हाथों को कंगन से सजाती हैं और पैरों में अनेक आभूषण पहना कर अपनी साँझी को दर्शनीय बना देती हैं।

सायंकाल के समय मुहल्ले की लड़कियाँ मिल-जुल कर एक दूसरे के घर जा कर साँझी की आरती करती हैं। यहाँ हम साँझी की आरती का एक लोकगीत प्रस्तुत करते हैं। इस में बहन ने अपने भाई-भतीजों की मंगल कामना करते हुए उन को न्यौता जिमाने का भाव भी प्रकट किया है:—

आरती

आरता री आरता मेरी संझा माई आरता।
काहे का दिवला काहे की बाती।
काहे का तेल जले सारी राती।
सोने का दिवला नरमे की बाती।
सरसों का तेल जले सारी राती।
गोरा री गोरा मेरा बीजू भाई गोरा,
गोरे के बाल झबाझब हों।
पोई है पुरियाँ बिराजेगा भात,
नौंत जिमाऊँ अपने भाई-भतीजे सात।
सातों ऊपर सोलह सराई,
जहाँ पै बैठे मेरे सगले भाई।
चिरजीवो मैया के जाए,
जाए री जाए गोद खिलाए।

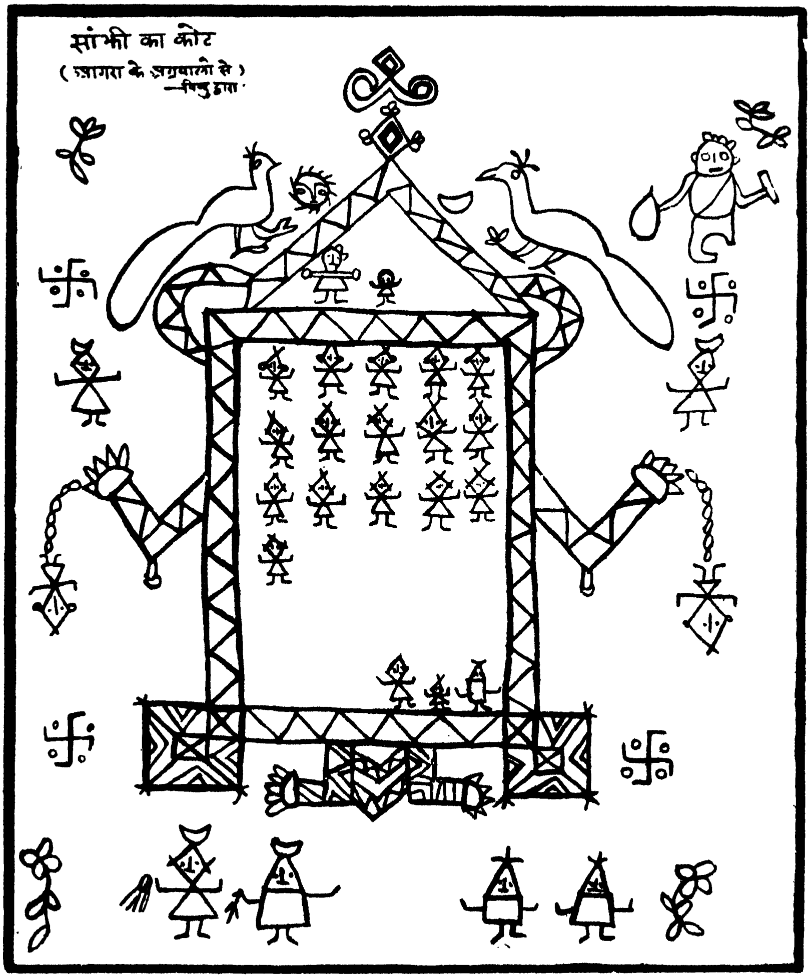
ऐसे ही और भाइयों के नाम ले कर बहनें अपने सभी भाइयों की मंगल कामना करती हैं। अब हम सांझी का एक दूसरा लोकगीत प्रस्तुत करते हैं। इस में एक लड़की अपनी साथिन से प्रश्न करती है कि तेरे कितने भाई हैं। वह बताती है कि मेरे चार भतीजे हैं और आठ भाई हैं। गीत इस प्रकार है :—

मेरी साँझी के ओरे धोरे,
बुई है चौलाई,
तू कह दे री शन्नो बीबी,
कै तेरे भाई ?
चार भतीजे मेरे आठक भाई।
चारों का उंडन मुंडन,
छओं की सगाई।
मेरी साँझी के ओरे धोरे
बुई है चौलाई,
तू कहदे री कुसम बीबी,
कै तेरे भाई ?

इस प्रश्न के उत्तर में फिर आगे का भाग दोहराया जाता है और उस के पश्चात् फिर किसी तीसरी बहन का नाम ले कर प्रश्न किया जाता है। इस प्रकार इस गाने में बहन अपने भाइयों का परिचय देती है।

एक और लोकगीत सुनिए। यह गीत ठेठ ग्रामीण गीत है, जिस में ग्राम्य भाषा का पूरा पुट पाया जाता है। इस में बहन कहती है कि भाई तेरे बाड़े में मुड़-तुड़ कर भैंस बैठी है; उस का दूध तुम्हारी बहू बिलोती है और उस दूध के बिलोते समय उस के हाथों की चूड़ियों की झंकार होती है। दूध बिलो चुकने पर उस में से घी तुम्हारी मा काढ़ती

है। घी निकालते समय वह पुत्रों को ललकारा भी देती है, क्यों कि उसे भय है कि कहीं वे कृष्ण के समान यशोदा के हाथ से मक्खन छीन कर न ले जायें। इस के आगे गीत में कहा गया है कि घर में अग्नि जलती है और चौबारे में रात्रि के समय दीपक जलता है, और बहनों के सुपुर्द गोबर पाथने का काम किया गया है। गीत इस प्रकार है :—



मुड़ तुड़ बैठे झोट्टरियां,
बीरो थारे बाड़े में।
दूध बिलोवें थारी बहुअड़ियां,
चुड़ले के झंकारे में।

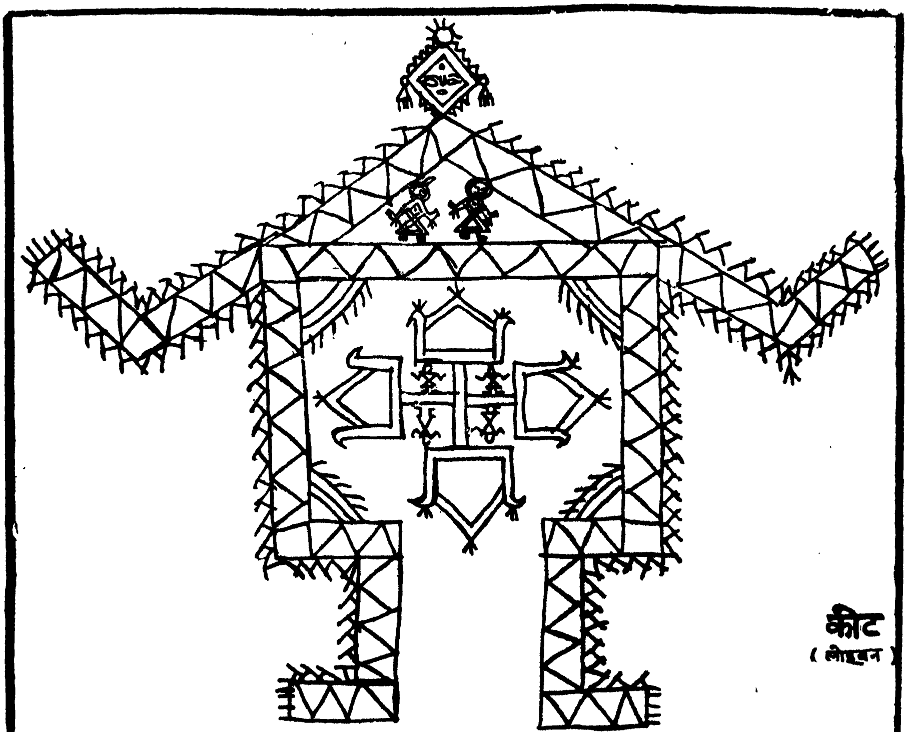
घी काढ़ें थारी भैंयड़ियाँ,
पुत्रों के ललकारे में।
गोबर पाथें थारी भैंनड़ियाँ,
भैया के ललकारे में।
आग जलै दो लक्कड़ियाँ,
दिया जलै चौवारे में,
मुड़-तुड़ बैठी झोट्टिड़ियाँ,
यशी तेरे बाड़े में।

इसके पश्चात् आगे का अंश दोहराया जाता है। इस क्रम से बहन अपने अन्य भाइयों के नाम भी लेती है।

३४:३:१:१. प्रेमीजी ने कोट का जो रूप दिया है, व्रज में उससे भिन्न कुछ अन्य रूप के कोट बनाये जाते हैं।

(अ) एक यहाँ आगरे के अग्रवालों का कोट दिया जाता है—

(आ) यह दूसरा चित्र लोहवन के ब्राह्मण परिवार के कोट का है:—



'सांझी' या 'कोट' पर डा० श्याम परमार ने एक अच्छा विस्तृत विवेचन दिया है, वह 'भारतीय साहित्य' के अक्तूबर १९५७ के अंक में 'सांझी-पूजा' नाम से प्रकाशित हुआ है।

३४:३:२. जैसा ऊपर बताया जा चुका है, नवरात्र का संबंध देवी-पूजन से है। इन्हें नौदेवी और नौदुर्गा भी कहते हैं। भविष्यपुराण में नवदुर्गा पूजन का विधान पौष शुक्ल नवमी को बताया गया है। भविष्यपुराण ने 'नवदुर्गाओं' के ये नाम बताये हैं :—

१—महालक्ष्मी, २—नंदा, ३—क्षोभकरी, ४—शिवदूती, ५—महारुण्डा, ६—भ्रामरी, ७—चंद्र मंगला, ८—रेवती तथा ९—हरसिद्धि। 'ये नवदुर्गाएं कटच्छत्रापुरी में थीं, इनके साथ चामुण्डा तथा भगवती भी थीं।

३४:३:२:१. इन देवियों की पूजा के कारण की कथा भ० पुराण में इस रूप में है :—

ध्वज नवमी का विधान औ फल नवदुर्गास्तोत्र।

श्री कृष्ण कहते हैं कि हे महाराज महिषासुरको भगवती ने मार दिया इस बैर से दैत्यों ने देवताओं के साथ बहुत संग्राम किये औ भगवती ने भी धर्म की रक्षा के लिये नाना रूप धार दैत्यों को मारा तब महिषासुर के पुत्र रक्तासुरने साठिहजार वर्ष पर्यन्त घोर तपकर ब्रह्माजी को प्रसन्न किया औ उनसे बर पाय दैत्यों को इकट्ठेकर इन्द्र के साथ युद्ध करने अमरावती में गया देवताओं ने भी देखा कि दैत्यों की सेना युद्ध के लिये आई है तब सब एकत्र हो इन्द्र को आगे कर युद्ध के लिये निकले औ युद्ध होने लगा रुधिर की नदी बहने लगी औ देवता दैत्य कट कट कर गिरने लगे तब रक्तासुर कोप करके देवताओं से युद्ध करने लगा और ऐसा युद्ध किया कि देवता रण को छोड़ भगे औ रक्तासुर ने अमरावती में अपना राज्य जमाया देवता भी कटच्छत्रापुरी में गये जहाँ चामुण्डा औ नवदुर्गासहित भगवती निवास करती हैं महालक्ष्मी नंदा क्षोभकरी शिवदूती महारुण्डा भ्रामरी चंद्रमंगला रेवती औ हरसिद्धि ये नवदुर्गाओं के नाम हैं वहाँ जाय हाथ जोड़ सब देवता इसकी भक्ति से स्तुति करने लगे। इस प्रकार नवदुर्गा स्तुतिकर बारम्बार प्रणामकर सब देवता प्रार्थना करते भये कि हे भगवती इस संकट में आपही हमारी रक्षा करो और कोई हमको अवलम्ब नहीं है यह देवताओं का बचन सुन सिंह पर आरूढ़ बीस भुजाओं में नाना प्रकार के आयुध धारे नवदुर्गा सहित कुमारी स्वरूप भगवती प्रकट भई औ बड़े पराक्रमी प्रचण्ड ब्रह्माजी के बरदान से गर्वित बड़े अधर्मी औ अब्रह्मण्य वे दैत्य भी वहाँ ही आये उनमे इन्द्रमारी गुरुकेशी प्रलम्ब नरकारिष्ट पुलोमा शरभ शम्बर दुन्दुभि इल्वल नमुचि भौम बातापि धेनुक कलि मायावृत बलबन्धु कैटभ कालजित् राहु पौंड् आदि दैत्य मुख्य थे ये सब प्रज्वलित अग्नि के समान तेजस्वी अनेक प्रकार के शस्त्र-अस्त्र और ध्वजा धारण किये अनेक भाँति के बाहनों पर चढ़े थे उनके आगे पणव भेरी गोमुख शंख डमरू डिंडिम आदि बाजे बजते थे वे सब दैत्य आयकर युद्ध के बीच शर शूल परिघ पट्टिश शक्ति तोमर कुन्त शतघ्नी गदा मुग्दर आदि नाना प्रकार के आयुधों की वृष्टि भगवती के ऊपर करने लगे तब भगवती क्रोध से प्रज्वलित हो दैत्यों का संहार करने लगी और उनके ध्वज आदि चिन्ह बलात्कार से हर कर देवताओं को दिये क्षण मात्र में ही अनन्त दैत्यों का क्षय किया औ रक्तासुर को कण्ठ से पकड़ भूमि पर गिराय त्रिशूल से उसका हृदय विदारण कर दिया शेष दैत्य भय से पलायन कर गये इस भाँति देवताओं ने जय पाया

पीछे छत्रपुर में आय भगवती का बड़ा उत्सव किया औ तोरण को बड़े-बड़े ध्वजों से अलंकृत किया देवताओं ने नवमी के दिन जय पाया और उत्सव किया इस लिये और भी जो राजा नवमी का उपवास कर भगवती का उत्सव करें औ ध्वज चढ़ावें वे अवश्य ही जय पावें।

३४:३:२:२. इस नवमी का नाम 'ध्वज-नवमी' बताया गया है। इस दिन ध्वज चढ़ाने का बहुत माहात्म्य है। यह स्पष्ट है कि ब्रज में नव-दुर्गा पूजन आश्विन में होता है। बंगाल में भी आश्विन में ही प्रधानतः दुर्गा-पूजा होती है।

३४:३:२:३ भविष्यपुराण ने आश्विन शुक्ल नवमी को 'उल्का नवमी' का नाम दिया है। उल्का नवमी को भविष्यपुराण ने चामुंडा-पूजन की व्यवस्था दी है। इसी पुराण में आगे पुनः इस नवमी को 'महानवमी' का नाम भी दिया है। इसका विवरण यों दिया है:—

महानवमी का विधान

श्री कृष्ण भगवान कहते हैं कि हे महाराज सब तिथियों में उत्तम महा नवमी तिथि है वर्ष भर के सुख के लिये भूत प्रेत पिशाचों की निवृत्ति के अर्थ सब प्रकार के मंगल मिलने के लिये और भगवती की प्रसन्नता के हेतु सब मनुष्यों को औ विशेष करके राजाओं को महानवमी का उत्सव करना चाहिये इतना सुन राजा युधिष्ठिर ने पूछा कि हे श्रीकृष्ण चन्द्र यह महानवमी कब से प्रवृत्त भई है यशोदा के गर्भ से भगवती उत्पन्न भई तब से ही इसकी प्रवृत्ति है कि पहले सत्य युग आदि में भी थी औ इस तिथि को जो बहुत जीव मारे जाते हैं उनकी क्या गति होती है और मारने वाला किस गति को प्राप्त होता है यह सब आप वर्णन करें यह राजा का बचन सुन श्री कृष्ण भगवान् कहने लगे कि हे महाराज वह परम शक्ति सर्व व्यापिनी भावगम्या अनंता औ लोक विश्रुता है कला काली सुषुम्णा सर्व मंगला माया कात्यायिनी दुर्गा चामुंडा शंकरप्रिया देवी परमेश्वरी भवानी शिवा इत्यादि नामों से औ अनेक रूपों से सर्वत्र पूजन करी जाती है देव दानव राक्षस गंधर्व नाग यक्ष किन्नर नर आदि सब प्रति नवमी को उसका पूजन करते हैं औ सृष्टि के आरम्भ से उसका पूजन चला आया है आश्विन के शुक्ल पक्ष में अष्टमी को मूल नक्षत्र होय उस दिन नवमी आ जाय उस का नाम महानवमी है कन्या के सूर्य्य में मूल नक्षत्र युक्त शुक्लाष्टमी को नवमी होय वह महानवमी त्रैलोक्य में दुर्लभ है आश्विन शुक्ल की अष्टमी और नवमी को जगन्म माता श्री भगवती का पूजन करने से सब शत्रुओं को जीतता है वह तिथि पुण्या पवित्रा धर्म और सुख को देने हारी है उसदिन मुण्डमालिनी चामुण्डा का अवश्य पूजन करना चाहिये उस दिन जो महिष मेष आदि जीव बलि दिये जाते हैं वे सब स्वर्ग को जाते हैं और बलि देनेहारे को पाप नहीं होता जैसी प्रसन्नता महिष मेष आदि की बलि से विंध्यवासिनी श्री भगवती की होती है ऐसी पुष्प धूप दीप विलेपन नैवेद्य आदि से नहीं होती भवानी के आंगन में जो महिष आदि मारे जाते हैं वे स्वर्ग में जाय अप्सराओं के प्रिय वीर होते हैं सब कल्प और मन्वन्तरों में इस नवमी के दिन सब देवता दैत्य आदि अनेक प्रकार के उपचार औ उपहारों करके भगवती का पूजन करते हैं औ तीनों लोकों में अवतार ले-ले कर मर्यादा का पालन भगवती करती है वही भगवती यशोदा

के गर्भ से उत्पन्न हो कंस के मस्तक पर पाँव रख आकाश को गई हमने उस भगवती को विंध्याचल में स्थापन कर फिर पूजा का प्रचार किया यह भगवती का उत्सव पहिले से ही प्रसिद्ध था परन्तु सब जीवों के उपकार के अर्थ औ सब उपद्रव शांत होने के लिये हमने अपनी भगिनी भगवती की महिमा विशेष करके प्रसिद्ध करी विंध्यबासिनी भगवती के स्थान में नवरात्र तीन रात्र एक रात्र उपबास अथवा नक्त व्रत कर अनेक प्रकार के उपयाचितों से भगवती का आराधन करे ग्राम-ग्राम में नगर-नगर में घर-घर में औ बन-बन में स्नान कर प्रसन्न हो भक्ति पूर्वक ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र स्त्री आदि सब भगवती का पूजन करें और विशेष करके राजाओं को यह उत्सव करना चाहिये अब हम इस का विधान कहते हैं जय की इच्छा वाला राजा प्रतिपदा से अष्टमी पर्यंत लोहाभिसार कर्म करे पहिले पूर्वोत्तर प्रणव भूमि में नौ अथवा सात हाथ लम्बा चौड़ा पताकाओं से अलंकृत मण्डप बनाय तीन मेखलाओं अश्वत्थपत्राकार योनि से भूषित अग्निकोणमें अतिसुन्दर एक हाथका कुण्ड बनावै पीछे राज्य के अंग छत्र चामर आदि औ सब शस्त्र अस्त्र मण्डपमें लाकर अधिवासनकरै शुचि ब्राह्मण स्नान कर शुक्लवस्त्र पहिन सबका पूजनकरै पूर्वकालमें बड़ा बलवान् लोह नाम दानव हुआ उसको देवताओंने मार खंड २ किया पृथिवीमें जितना लोह देख पड़ता है सब उसके अंगों से उत्पन्न हुआ है तबसेही यह लोहाभिसार कर्म राजाओं को विजय प्राप्त होने के अर्थ ऋषियोंने प्रवृत्त किया है घृत संयुक्त पायसका हवनकर हवनशेष हाथी औ घोड़ों को खिलाय सब को अलंकृतकर नगरमें घुमावै राजा भी स्नान कर राजचिन्हों का नित्य पूजनकरै हाथी घोड़ोंके आगे बाद्य बजते चलैं अब हम पुराणोक्तपूजा मन्त्रकहतेहैं जिन करके पूजन करनेसे कीर्ति आयु यश औ बलकी प्राप्तिहोती है (यथाम्बुदश्छा-दयतिशिवायेमांवसुधंराम् । तथाच्छा दयराजानंविजयारोग्यवृद्धये) छत्रमन्त्र: (शंशाककरसं काशक्षीरडिंडीरपांडुर । प्रोत्सारयाशुदुरितंचामरामरदुर्लभ) चामरमन्त्र: (असिर्विशसनः खड्ग स्तीक्ष्णधारोदुरा सदः । श्रीगर्भोविजयश्चैव धर्मधारस्तथैवच ।। इत्यष्टौतव नामानिस्वयमुक्तानिवेधसा । नक्षत्रंकृतिकान्तेतुगुरुर्देवोमहेश्वरः ।। हिरण्यचशरीरंतेधात देवाजनार्दन : । पितामहो महादेवस्त्वांपालयतुसर्वदा) खड्गमन्त्र: (शर्मप्रदस्त्वं समरेवर्म कामयशोर्थद: । रथिनामर्थनायोसि चर्मानघन मोस्तुते) चर्ममन्त्रः (सर्वायुधमहामात्र सर्वदेवारिसूदन । चापमांसर्वदारक्षसाकंशायकसत्तमै:) चापमन्त्र: (सर्वायुधानांप्रथमंनिर्मिता-सिपिनाकिना । शूलायुधाद्विनिष्कृष्य कृत्वामुष्टिग्रहंशुभम् ।। चंडिकायाः प्रदत्तासि सर्वदुष्टनिर्वर्हिणि । तयाविस्तारिताचासिदेवानांप्रतिपादिता ।। सर्वसत्वां गभूतासिसर्वासुर-निर्वर्हिणी । छुरिकेरक्षमांनित्यंशांतियच्छ नमोस्तुते) छुरिकामन्त्रः (हुतभुग्वसवावोरुद्रा वायु:सोमो महर्षय: । नागकिन्नरगन्धर्व यक्ष भूतगणाग्रहा: ।। प्रथमास्तुसहादित्यै भूतेशोमातृभि:सह । शक्र : सेनापति: स्कन्दो वरुणश्चाश्रितस्त्वयि ।। प्रदहन्तुरिपून्सर्वान् राजाविजय मृच्छतु । यानिप्रयुक्तान्यरिभिरायुधानिसमंततः । पतन्तू परिशत्रूणां हतानित-वतेजसा । हिरण्यकशिपोयुद्धे युद्धेदेवा सुरेतथा ।। कालनेमिबधेयुद्धे युद्धेत्रिपुरघातने । शोभितासि तथैवाद्य शोभयास्मांश्चसंस्मर ।। नीलांश्वेतामिमोंदृष्टवा नश्यंत्वाशुनृपारय: । व्याधिभिर्विधैर्घोरै: शस्त्रैश्चयुधिनिर्जिता: ।। सद्य: स्वस्था भवंतिस्म त्वद्धातेनायमार्जिता: । पूत नारेवतीनाम्नाकालरात्रीतिसास्मृता ।। दहत्वाशुरिपून्सर्वान पताके त्वंमयार्चिता) पताका-मंत्र: (प्रोत्सारणायदृष्टानांसा धुसंरक्षणायच । ब्रह्मणानिर्मितश्चसि व्यवहारप्रसिद्धये ।

यशोदेहिसुखंदेहि जयदोभवभूपते। ताडयस्वरिपून्सर्वान् हेमदण्डनमोस्तुते) कनकदण्डमन्त्रः (दुन्दूभेत्वंसपत्नानां घोरोहृदयकम्पनः। भवभूमिपसैन्यानांतथाविजयवर्द्धनः॥ यथाजीमूतघोषेण प्रहृष्यंतिचवर्हिणः। तथास्तुतवशब्देन हर्षोऽस्माकंमुदावहः॥ यथाजीमूतशब्देन स्त्रीणांत्रासोभि जायते। तथैवतवशब्देन त्रस्यंत्वस्मद्द्विषोरणे) दुन्दुभि मन्त्रः (विजयोजयदोजेता रिपुहंताशुभंकरः। दुःखहाधर्मदःशान्तः सर्वारिष्टविनाशनः॥ एतेष्टौसन्नियैस्गात्तव सिंहामहाबलाः। तेनसिंहासनेतित्वं वेदैर्मंत्रैश्चमीयसे॥ त्वयिस्थितः शिवः शान्तस्त्वयिशक्रः सुरेश्वरः। त्वयिस्थितोहरिर्देवस्त्वदर्थतप्यतेतपः॥ नमस्तेसर्वतोभद्र भद्रदो भवभूपतेः। त्रैलोक्यजयसर्वस्व सिंहासननमोऽस्तुते सिंहासनमन्त्रः कुलाभिजनजात्याच लक्षणौर्व्यंजनोत्तमैः। भर्त्तारमभिरक्षत्वं शिवंतवभवेदिति॥ कशाघातमधिष्ठानं क्षम स्वतुरगोत्तम। गन्धर्वकुलजातस्त्वं भामूयाः कुलदूषकः॥ ब्राह्मणः सत्यवाक्येन सोभस्यवरुणस्यच। प्रभावाच्चहुताशस्य वर्द्धस्वत्वंतुरंगम॥ तेजसा चैवसूर्यस्य मुनीनांतपसातथा। रुद्रस्यब्रह्मचर्येण पवनस्यबलेनच॥ स्मरत्वंराजपुत्रं त्व कौस्तुभंचमणिस्मर। सुरासुरैर्मथ्यमान क्षीरोदादमृता दिभिः॥ जातउच्चैःश्रवाः पूर्वं तेनजातोसितत्स्मर। यागतिब्रह्मागच्छेन्मातृहापितृहातथा॥ भूमिहानृतवादीचक्षत्रियश्चपराङ्मुखः। सूर्याचन्द्रमसौवायुर्यावत्पश्यन्तिदुष्कृतम्॥ व्रजत्वंतांगतिंक्षिप्रं तच्चपापंभवेत्तव। विकृतिंयदिगच्छेथा युद्धाध्वनितुरंगम। रिपुंविजित्यसमरे सहभर्त्रासुखीभव) अश्वमन्त्रः (शक्रकेतो महावीर्य सुपर्णस्त्वय्युपाश्रितः। पत त्रिराठ्वैनतेयो तथानारायणध्वजः॥ काश्यपेयोरुणभ्राता नागारिर्विष्णुवाहनः। अप्रमेयोदुराधर्षोरणेदेवारिसूदनः॥ गरुत्मान्मारुतगति स्त्वमिसन्निहितोयतः। सासिचर्मायु धान्योधान् रक्षत्वंचरिपून्दह) ध्वजमन्त्रः (कुमुदैरावणौ पद्मः पुष्पदन्तोथवामनः। सुप्रतीकोंजनोनील एतेष्टौदेव योनयः॥ तेषांपुत्राश्चपौत्राश्च वनान्येतेसमाश्रिताः। भद्रो मन्दोमृगश्चैव गजःसंकीर्णएवच॥ वनेवनेप्रसूतास्तेस्मर योनिमहागज। पांतुत्वावसावोरुद्रा आदित्याः समरुद्गणाः। भर्त्तारंरक्षनागेन्द्र समूहः प्रतिपाल्यताम्॥ अवाप्नुहिजयंयुद्धे गमनेस्त्वतितेव्रज। श्री स्तेसोमाद्बलंविष्णोस्तेजः सूर्याज्ज वोनिलात्॥ स्थैर्यंमेरोर्जयंरुद्राद्यशोदेवात्पुरंदरात्। युद्धे रक्षान्तुनागास्त्वादिशश्चसहदैवतैः॥ अश्विनौसहगन्धर्वैपांतुत्वांसर्वतः सदा) हस्तिमन्त्रः। इन मंत्रों से गन्ध पुष्पादि करके सब राचचिन्ह औ शस्त्रोंका पूजन करें अष्टमी के दिन पूर्वान्ह में स्नान कर नियम ग्रहण करै औ सुवर्ण चाँदी मृत्तिका पाषाण काष्ठ आदि किसी वस्तु की दुर्गा मूर्ति बनाकर उत्तम स्थान के बीच सिंहासन के ऊपर स्थापन करै कुंकुम चन्दन सिन्दूर आदि से उस मूर्त्ति को चर्चित कर कुमुद कमल आदि पुष्प चढ़ाय धूप दीप नैवेद्य माँस सुरा बलि आदि निवेदन करै उस समय सब प्रकार के बाजे बजैं बन्दीजन स्तुति पढ़ैं बहुत से मनुष्य छत्र चामर आदि राजचिन्ह लेकर चारों ओर खड़े होय दीक्षायुक्त राजा पुरोहित सहित (जयन्ती मंगलाकाली भद्रकालीकपालिनी। दुर्गाक्षमाशिवाधात्री स्वाहास्त्रधानमोस्तुते॥ अमृतोद्भवं श्रीवृक्षं महादेवप्रियंसदा। विल्वपत्रंप्रयच्छामि पवित्रंतेम्बिकेमुदा) इस मन्त्र से विल्वपत्रयुक्त अर्घ्य देवै औ भगवती को उस दिन द्रोण पुष्प भी चढ़ावै असुरों के साथ युद्ध करने से जो क्षत भगवती के अंग में भये थे वे सब द्रोण पुष्प से अच्छे हुये इसलिये द्रोण पुष्प भगवती को प्रिय है फिर शत्रुओं के बध के लिये खड्ग को प्रणाम कर सुभिक्ष राज्य औ अपना विजय माँगै औ हृदय में इस प्रकार भगवती का ध्यान करै बहुत भुजाओं करके युक्त

महिषासुर का बध करने हारी कुमारी स्वरूप सिंह पर चढ़ी खड्ग उठाये घण्टा ध्वनि करती युद्ध के मध्य में बिराजमान है पीछे जय-जय शब्द कर यह स्तुति पढ़ै (सर्वमंगलमांगल्येशिवेसवार्थसाधिके । उमेत्रियंबकेगौरिनारायणिनमोस्तुते ।। कुंकुमेनसमालब्धे चन्दनेनविलोपिते । विल्वपत्रकृतापीडे दुर्गेहंशरणंगत:) इस भाँति अष्टमी को सब पूजा आदि कर रात्रि को जागरण करै नट वेश्या आदि का बड़ा उत्सव करावै इस प्रकार रात्रि व्यतीत कर प्रभात होते ही सौ पचास अथवा पचीस महिष औ मेष की बलि देवै औ सुरा आसव के कुंभों से परमेश्वरी का तर्पण करै वह सब कापालिकों को देवै औ दासी दास बन्धु औ भगवती के भक्तों को सब बाँट कर नवमी के अपराह्न समय में रथ के बीच भगवती की प्रतिमा स्थापन कर सारे राज्य में भ्रमण करावै अपनी सेना सहित राजा साथ रहै दीपवृक्ष जलते चलैं नंगे खड्ग औ धनुष् धारे बड़े-बड़े बीर पुरुष रथ के ओरपास चलैं शंख पटह आदि बाजे बजैं वेश्या चारण आदि नृत्य करते चलैं औ एक बीर खड्गधारी उपवास कर मांस रक्त जल अन्न गंध पुष्प अक्षत आदि सहित बलिदिशा औ विदिशाओं में (बलिंगृहं्णंत्विमंदेवा आदित्यावसवस्तथा। मरुतश्चाश्विनो रुद्रा: सुपर्णा: पन्नगाग्रहा : । असुरायातुधानाश्चपिशाचोरगराक्षसा: । डाकिन्योयक्षवेताला:योगिन्य: पूतना: शिव: । जंभका: सिद्धगन्धर्वा मालाविद्याधरानगा: । दिक्पालालोकपालाश्चयेचविघ्नविनायका: । जगतांशांतिकर्तारोब्रह्माद्याश्चमहर्षय: । माविघ्नंमाचमेपापं मासंतुपरिपंथिन: । सौम्याभवंतुतृप्ताश्च भूतप्रेता: सुखावहा:) इस मन्त्र से देवै इस विधि से रथ में अथवा पालकी में भगवती की प्रतिमा स्थापन कर सब राज्य में घुमावैं और सब बिघ्न निवृत्ति के लिये भूत शाँति करै जिस से यात्रा निर्विघ्न होय इस विधि से जो राजा अथवा पुरुष भगवती की यात्रा करैं वे सब पापों से छुट भगवती लोक को जाते हैं औ कभी उनको शत्रु चोर ग्रह विघ्न आदि का भय नहीं होता भगवती के भक्त सदा आरोग्य सुखी भोगी औ निर्भय होते हैं जो यह भगवती के उत्सव का विधान पढ़ै अथवा सुनै उसके भी सब अमंगल निवृत्त हो जाते हैं महिषासुर के मस्तक पर चरण रक्खे सिंह पर चढ़ी नंगा खड्ग हाथ में लिये सब भूषणों से भूषित श्री दुर्गा का पूजन करने हारे मनुष्य बड़े-बड़े संकटों से भी उत्तीर्ण हो जाते हैं ।।

३४:३:२:४ गुप्ते महोदय ने नवरात्रों का संबंध देवी महामाया के नौ अवतारों से स्थापित किया है । उन्होंने क्रमश: देवी के ये अवतार बताये हैं :—

प्रथम—महाकाली, द्वितीय—महालक्ष्मी, तृतीय—महासरस्वती, चतुर्थ—नंदा, पंचम—रक्तदन्ति, षष्ठ—शाकम्भरी, सप्तम—दुर्गा, अष्टम—मातंगी, नवम—भ्रारी ।

किन्तु देवियों के नामों की यही अन्तिम सूची नहीं है—

३४:३:२:५ मातृ-पूजा के विकास में डा० शशिभूषण दासगुप्ता ने देवियों की पूजा का अच्छा इतिहास संक्षेप में दिया है, उसमें विविध पुराणों तथा अन्य ग्रन्थों में मिलने वाले देवी के नामों के वैविध्य पर अच्छा प्रकाश डाला है। उनका एक उद्धरण यहाँ दिया जाता है :—

"चंडी से संलग्न देवी कवच में देवी को नवदुर्गा के रूप में शैल पुत्री (पर्वत की पुत्री), ब्रह्मचारिणी, चंद्रघंटा, कूष्माण्डा, स्कन्दमाता (स्कंद की मा), कात्यायनी,

कालरात्री, महागौरी, और सिद्धिदात्री बताया है। मातृकाओं में चामुण्डा शवासीन है, वाराही महिष पर, ऐन्द्री हाथी पर, वैष्णवी गरुड़ पर, नारसिंही, शिवदूती, माहेश्वरी वृषभ पर आरूढ़ हैं, कुमारी मयूर पर, लक्ष्मी कमल पर, ईश्वरी, श्वेत देवी, वृषभ पर तथा ब्राह्मी हंस पेर आसीन हैं। और भी अनेकों नाम हैं, जिनके अलग-अलग विवरण हैं। इस संबंध में सर आर० जी० भंडारकर ने ठीक ही लिखा है कि "यहाँ दिये विवरण से यह प्रतीत होगा कि देवी एक ही है जिसके अगणित विविध नाम हैं। किन्तु आलोचक दृष्टि को प्रकट होगा कि ये केवल नाम मात्र ही नहीं हैं, किन्तु वे विभिन्न देवियों के ज्ञापक हैं, इन देवियों की उद्भावना विभिन्न ऐतिहासिक स्थितियों में हुई है, किन्तु बाद में इन्हें एक देवी में ही समन्वित कर दिया गया था, जैसा कि हिन्दुओं की मानसिक प्रवृत्ति से सामान्यत: होता रहता है।[1]"

३४:३:२:६. व्रज में और सामान्यत: अन्यत्र भी नवरात्र अथवा नवदुर्गा पूजन म यह पौराणिक नाम-वैविध्य नहीं रहता। एक दुर्गा या एक देवी की पूजा को ही नव दुर्गा या नवरात्र की पूजा माना जाता है। नाम का वैविध्य व्रज में भी मिलता है किन्तु वह स्थानों के नाम पर होता है, जैसे जालपा, करौली वाली, नगरकोट वाली, आदि।

३४:३:२:७. गुप्ते महोदय ने बताया है कि देवी के इस पूजन के सन्बन्ध में यह विश्वास किया जाता है कि जब राम ने रावण के सिर काटने आरम्भ किये तो एक के बाद एक नये सिर निकलते आये। इस स्थिति से देवता घबड़ाये। तब राम ने शक्ति-पूजा की और देवी ने प्रकट होकर आर्शीवाद दिया। तब अष्टमी के दिन रावण का संहार हो सका। नवमी को इस सफलता के उपलक्ष्य में देवी पूजन किया गया और देवी को बलि दी गयी। तभी से यह देवी-पूजन होता है। यह व्याख्या प्राय: व्रज में भी मान्य है।

३४:३:३: देवी पूजन विशेषत: अष्टमी और नवमी को होता है। कन्या-लाँगुरा न्यौते जाते हैं। ये छोटे-छोटे बालक-बालिका होते हैं। इन्हें भोजन कराया जाता है। तिलक लगाये जाते हैं, दक्षिणा दी जाती है। इनको भोजन कराने से पूर्व सिंदूर से दो त्रिशूल बनाये जाते हैं। दो आग्यारियों पर लौंग के जोड़ों से इनकी पूजा की जाती हैं। फिर 'अठयावरी' से पूजा जाता है। अठयावरी के साथ हलवा और उबले चने भी रहते हैं, इसके साथ ही आटे के 'छल्ले और लठिया' भी बनाकर घी में तलकर रखे जाते हैं। छल्ले-लाठी को 'योनि-लिंग' का प्रतीक ही मानना होगा। कुमारी कन्या तथा कुमार लांगुर का निमंत्रण भी उक्त प्रतीकों के साथ तांत्रिक शक्ति-पूजा के अवशेष की ओर संकेत करते हैं।

३४:३:४. देवी पूजन में कन्या-पूजन या कुमारी-पूजन की बात तो शक्ति-पूजा में अपना विशिष्ट महत्व रखती है। किन्तु व्रज में कन्या के साथ लाँगुर की पूजा कुछ पेचीली है। लाँगुर के संबंध में कुछ विचार यहाँ दिये जाते हैं।

---

१. देखिये—'एवोल्यूशन आव मदर वरशिप इन इंडिया'—लेखक—डा० शशिभूषण दास गुप्ता, 'द ग्रेट विमैन आव इंडिया" में प्रकाशित निबंध।

३४:३:४:१. **लाँगुर कौन ?**

देवी के गीतों के समय लँगुरिया अवश्य गाये जाते हैं। ये गीत देवी के लाँगुर से सम्बन्ध रखते हैं। देवी का यह लाँगुर या लँगुरिया विचित्र प्राणी है उससे जाति पूछी जाती है 'भैया लँगुरा रे अपनी जाति बताऊ' तो वह उत्तर देता है—

'बम्मन के हम बालक उपजे तुलसी के पेड़।' उसकी माँ समझती है कि लाँगुर कुछ नहीं खाता, पर वह 'बारा बाटी मदु पियै सौ रे बुकरा खाइ।' लाँगुर की माँ कहती है कि छै माह की रात्रि है, पर लाँगुर सोता ही नहीं, यह लाँगुर माता का बड़ा प्रिय है। उसका सहायक है, उसका आज्ञाकारी। देवी आज्ञा दे तो असुर के नौ कीलें ठोक दे, आज्ञा दे तो उन्हें निकालने में कोई कसर नहीं छोड़ता। वह भी देवी की ढूंढ़ खोज में व्यस्त रहता है। यदि कहीं भी माता चली जाती है तो वह उसे ढूंढ़ता फिरता है। भक्ति से उसका क्या सम्बन्ध है, देवी माँ का कृपापात्र होने के कारण वह भक्तों की सेवा का अधिकारी तो है ही। एक भक्त तो दिन भर उसे गाँजे की चिलम भर-भर कर पिलाता है—

"मेरी चिलम भरत दिनु जाइ, लँगुरिया बड़ौ पिवैय्या गाँजे को।"

उसके लिए दस बीघा गाँजा बोया गया है, नौ बीघा भाँग। गाँजा लंगुरिया पीता है, भाँग महादेव जी पीते हैं। भक्त स्त्रियाँ उसे किस रूप में ग्रहण करती हैं और किस भाव से देखती हैं यह कुछ गीतों की निम्न आरम्भिक पंक्तियों से प्रकट होता है।

१—कारी चूँदरिया में दागु न लगइयो लाँगुरिया।
२—ए लाँगुरिया तेरी धन खाइ लई कारे नाग नें।
३—अरे कछु खाई, कछु डसि लई और कुछ मारी फुसकारि, ए लाँगुरिया।
४—दहिअ विलोवै दारी गूजरिया बिलबावै लाँगुरिया।
५—बसन्ती रँग रँगवाय दुंगी, जा लाँगुरिया की टोपी।
६—मति खेंचै रे लँगुरिया तलबारि तेरौ ई घर जाइ, मैं हँसती कब देखी।
७—तेरौ करूँगी भमन में न्याव, लँगुरिया मति हँसै।
८—काऊ देश चोरी जइयौ लंगुरिया,
 काऊ जाटिनी के झुमका बारी लइयौ लँगुरिया।
९—दरद कौ मारौ लँगुरिया मरि मरि जाय।
 लाँगुर तुम लोटा हम डोर सरकि आओ जाई बन में॥
१०—करौली बारी नदिया बहाए लिये जाय।
 जब नदिया मेरे पाँयन आई,
 सम्हारि बारे लाँगुरिया, मेरे बिछुआ भीजे जाँय।
११—केला मैया ने बुलाई तब आई लाँगुरिया।
१२—ए लँगुरिया हँसि मति अइयौ काऊ और ते,
 मैं मरूँगी जहर बिस खाइ।
१३—करि लीजै दूसरौ ब्याहु लँगुरिया मेरे भरोसे मति रहिए।

मोय लीपि न आवै लीपनों और गाढ़ि न आवै खूँट,
मोय पीसि न आवै पीसनों और डारि न आवै कौरु
मोइ राँधि न आवै राँधनौं और मोइ परसि न आवे थारु ।

एक गीत और यहाँ उद्धत करना होगा—

लंगुरिया

अनौखी मालिनी भैंना करै तौ डरपै काए कूं ।

तेरे हाथ कौ मूंदरा, लाँगुर दियौ गढ़ाइ ।। अनौखी मालिनी० ।।
तेरे सिर की चूंदरी, भैंनाँ लांगुर दई रँगाइ ।। अनौखी मालिनी० ।।
तेरे गोद को ललुआ, लाँगुर की उनहारि ।। अनौखी मालिनी० ।।
ना काऊ के घर गई, नाँ मैंनें लियौ बुलाइ ।। अनौखी मालिनी० ।।
रस को बौंधौ लाँगुरा, आइ गयौ मेरी सेज ।। अनौखी मालिनी० ।।

लँगुरिया को बारा या छोटा बहुधा बताया गया है । उसी के अनुकूल कहीं कहीं वात्सल्य भाव से भी देखा गया है । रँगीली टोपी रँगवाने में वही अर्थ है, किन्तु यह बालापन भी पतित्व लिए हुए दीखता है, जैसे बहुधा गीतों में बारे नाह का उल्लेख होता है । यह पति के प्रति अत्यन्त लाड़ का द्योतक है । भारतीय घरों में स्त्री पति का ऐसे ही पोषण करती हैं, जैसे किसी बालक का । यह भी हो सकता है कि देवी की जाति के लिये जाने वाले पुत्र और पति दोनों में ही देवी के लाँगुर भाव का आरोपण कर दिया जाता हो, फिर भी यह यथार्थ ही प्रतीत होता है कि लाँगुर में पति भाव विशेष है । अन्त में जो गीत दिया गया है, उसमें वह पर पुरुष के रूप मे भी दिखायी पड़ता है । मालिन ने स्वीकार भी कर लिया है । लाँगुरिया के गीतों में व्यंग विनोद, हास्य सभी भरा हुआ है । देवी के गीतों के साथ देवी संबंधी कुछ अन्य विषयों पर भी गीत होना अनिवार्य माना जाता है । ये विषय हैं—लाँगुरिया, सुरही, काजर, महँदी, भोग, पौढ़ना (शयन) । लांगुरिया और सुरही ऊपर दिये जा चुके हैं, शेष गीतों में पहले तो यह वर्णन रहता है कि कहाँ से आया है वह पदार्थ, फिर देवी के प्रसिद्ध भक्त धानूं का नाम लिया जाता है, फिर जिस घर में गीत गाये जाते हैं, उसके समस्त स्त्री पुरुषों का नाम लिया जाता है ।

इस विवेचन से और 'लांगुर' का संबंध सदा कन्या से होने के कारण यह तो आभास मिलता है कि यह शब्द शिव का द्योतक है, क्योंकि 'कन्या' सती अथवा पार्वती की द्योतक है । आप्टे महोदय ने अपने कोष में कन्या का अर्थ दुर्गा दिया है । ब्रज में नवरात्रि पूजन अथवा देवी पूजन के उपरांत 'कन्या-लाँगुर' को भोजन कराया जाता है । कन्या दुर्गा है, तो लाँगुर शिव ही है ।

किन्तु 'लाँगुर' शब्द क्या है ? उसका अर्थ शिव कैसे होता है ? ब्रजभाषा में एक शब्द है 'लँगुर' । पराई स्त्री से अनुचित संबंध रखने वाला रसिक पुरुष लँगर कहलाता है । यह 'लँगर सम्भवतः 'लंगः' से बना हुआ है । लंगः का अर्थ प्रेमी अथवा उपपति होता है । लंगकः का भी यही अर्थ है । अतः लंगः अथवा लंगकः से लँगर बन सकता है, किन्तु क्या लंगर से लाँगुर संभव है ? ऊपर दिये हुए गीतों में लाँगुर की

लँगराई का तो कुछ रूप स्पष्ट होता है ; किन्तु इस लंगर या लाँगुर का पार्वती अथवा दुर्गा से संबंध कैसे बैठ सकता है ?

इसकी एक व्युत्पत्ति लकुट-लगुड़-लाठी से भी हो सकती है। लकुट धारण करने वाला लाकुट या लागुड़ या लाँगुड़ या लाँगुर। लकुट धारण करने वाले ये लाँगुड़ या लांगुर शिव हैं, यह सिद्ध किया जा सकता है। शिलालेखों, विष्णुपुराण तथा लिंग पुराण से एक 'लकुलीश' संप्रदाय का पता चलता है। यह पाशुपत संप्रदाय था। लकुलीश वास्तव में इस संप्रदाय के प्रवर्त्तक थे, उन्हीं के नाम से संप्रदाय प्रचलित हो गया। पं० बल्देव उपाध्याय लकुलीश संप्रदाय का जन्म अवान्तर उपनिषद् काल में मानते हैं। इनका जन्म-स्थान बड़ौदा में कारवण (कायावरोहण) नाम का स्थान माना जाता है। इन लकुलीश की मूर्तियों में माथे पर घने केश होते हैं। एक हाथ में बीजपूर का फूल और दूसरे में लागुड़ (लाठी)। इनका नाम ही लकुलीश लकुल अथवा लगुड़ धारण करने के कारण पड़ा।

रावल शब्द भी लाकुल का ही रूपान्तर है। वाप्पा रावल ने रावल उपाधि रावल संप्रदाय में अपनी भक्ति प्रकट करने के लिए ही धारण की।

सन् ६४३ से १२८५ तक प्रशस्तियों में तो प्रत्येक शिव ही लकुलीश कहलाता था। डा० डी० आर० भाँडारकर ने राजपूताने के अनेक मन्दिरों में ऐसी मूर्तियाँ देखीं जो लकुट धारण किये द्विभुजी शिव की थीं। उनका अनुमान था कि ये मूर्त्तियाँ किसी ऐसे सिद्ध की स्मारिका हैं जो बाद में शिव का अवतार मान लिये गये। ऐसे सिद्ध लकुलीश ही थे। ये लकुलीश ही शिव माने गये।

सन् १२८७ वि० के सोमनाथ के शिलालेख में गोरखनाथ और लकुलीश का नाम साथ-साथ आया है। नाथ-संप्रदाय के धर्मनाथ के संबंध में यह प्रचलित है कि ये पेशावर से छिनोधा आये थे और चारणदेवी नामक विधवा के हाथ में से मनवीर उत्पन्न हुये। इस पुनरुद्भूत सिद्ध का नाम 'रावल पीर' पड़ा था। रावल पीर के अर्थ 'लाकुल गुरु' होते हैं।[1]

यह लाकुल ही लाँगुर हैं जो व्रज के उच्चारण में लाँगुर हो गये हैं और लँगुरिया बन गये हैं।

३४:४ दशहरा-या विजया दशमी

दशहरा बहुत प्रसिद्ध त्यौहार है, और व्रतानुष्ठान का अपूर्व पर्व है। इसके मनाने के तीन स्तर मिलते हैं—१. घरेलू, २. सामूहिक, ३. राजकीय।

३४:४:१. घरेलू रूप में इस दिन अस्त्र-शस्त्र, हाथी-घोड़े, पुस्तक-कलम-दवात तथा अन्य उद्योग-धन्धे संबंधी साधनों की पूजा की जाती है। बोये हुए जौ के अंकुर परस्पर बाँटे जाते हैं और एक दूसरे के लिए शुभकामनाएँ की जाती हैं। न्यौरते की गौरें विसर्जित की जाती हैं।

---

१. देखिये नाथ-संप्रदाय लेखक, ह० प्र० द्विवेदी, पृ० १५६ से १६१।

३४:४:२. सामूहिक रूप में इस दिन रामलीला का सबसे प्रमुख दिवस होता है। इस दिन विस्तृत मैदान में रावण की प्रतिकृति को जलाया जाता है, लीला में भी राम रावण का बध करते हैं। सभी नगरों में रामलीला कई दिन पूर्व से बड़ी धूमधाम से होती रहती है। पास-पड़ौस के हजारों स्त्री-पुरुष मेला देखने एकत्र होते हैं।

३४.४:३. राजकीय रूप से व्रज क्षेत्र के विविध राजाओं की राजधानी में जलूस के साथ बड़ी शोभायात्रा सहित राजाओं की सवारी निकलती है। रामलीला की तरह इस सवारी को देखने के लिए भी हजारों की संख्या में प्रजा राजधानी में एकत्र होती है। राजाओं की सवारी का उत्सव राज्यों के समाप्त हो जाने से समाप्त हो गया है। किन्तु अन्य दोनों रूप ज्यों के त्यों प्रचलित हैं।

३४:४:४. यह माना जाता है कि रावण का संहार करके राम अयोध्या के लिए इसी दिन लंका से चले थे। सर्वत्र ही विजय का उल्लास था।

३४:५. टेसू-झाँझी

क्वार में लड़के-लड़कियों का एक और खेल चलता है। कहीं कहीं यह नवरात्रों में ही चलता है, और दशमी को समाप्त हो जाता है। कहीं कहीं दशहरे से चलता है और पूर्णिमा को समाप्त होता है।

३४:५:१. टेसू-झाँझी का सामान्य परिचय 'व्रजलोक साहित्य का अध्ययन' से यहाँ उद्धृत किया जाता है।

बालकों के गीतों में खेल के गीत प्रधान हैं। इन गीतों में गीतकार ने दो बातों का ध्यान रखा है। एक, गीतों में सामूहिक लय। बच्चों के खेल के गीत कितने ही बालकों द्वारा मिलकर गाये जाते हैं, फलतः इनमें सामूहिक लय का ध्यान रखना स्वभावतः ही अनिवार्य है। प्रत्येक चरण छोटी तौल का होता है। अधिक लम्बे चरण इनमें नहीं होते। साधारणतः इन गीतों का एक चरण इस गति का होता है:—

'इमिली की जड़ में ते निकसी पतंग'

इसमें बीस मात्राएँ हैं। १५ तथा २०-२२ मात्राओं के बीच के ये छन्द होते हैं। प्रत्येक चरण प्रायः संतुलित, बहुधा सतुक होता है, यद्यपि बीच-बीच में अतुकान्त स्थलों के आ जाने की भी सम्भावना रहती है। दूसरी बात है विलक्षणता। टेसू के गीतों में विलक्षणता हमें अद्भुत अकल्पित बातों की एक दूसरी पर आश्रित संयोजना के रूप में मिलती है। ऊपर जो चरण दिया है वह एक टेसू का गीत है। इसी पंक्ति में यह विलक्षणता स्पष्ट है। इमली का वृक्ष है, उसकी जड़ में से पतंग निकली। यह अकल्पित संयोग है। इन टेसू के गीतों में इस प्रकार की अकल्पित अद्भुत संयोजनाओं के साथ एक क्षीण और लघु, कथा-वस्तु भी मिलती है। एक गीत में वह वस्तु यह है:—

टेसूराय ने दस नगरी दस गाँव बसाये। उसमें तीतर मोर बस गये। वहाँ एक सरोड़ी डोकरी (अत्यन्त बृद्ध स्त्री) रहती थी, उसे चोर चुरा ले गये। चोरों के यहाँ खेती होती थी। बुढ़िया वहाँ खा-खा कर मोटी हो गयी।

एक दूसरे गीत में है––

कोई कहीं गिलौंदे खाने पहुँच गया। कुछ खये कुछ बाँध लिये। उसी समय उस पर रक्षकों ने हल्ला बोल दिया। उसने आशा ग्वाल को पुकारा। आशा ग्वाल की लीली घोड़ी है, उसने दाना खाते समय दाने का पात्र फोड़ दिया। पानी पिलाने वाला सक्का मारा। तब वह दिल्ली को फरियाद ले चला। पर दिल्ली तो बहुत दूर है। अन्ततः वह चूल्हे की ओट में छिप गया।

चूल्हा माँगे सौ सौ रोट
एक रोट घटि गयौ
चूल्हा बेटा लटि गयौ।

इस प्रकार के कथा-विन्यासों में भी अद्भुत का प्राधान्य रहता है। एक गीत में एक छोटी सी छटमासी या कचपैंदरिया गैया का अद्भुत वर्णन है। वह अस्सी डला भुस खाती है। तालाब का समस्त पानी पी जाती है। हगने बटेश्वर जाती है। समस्त नगर में दूध देती फिरती है। दूध से पोखरें भर देती है। पार[1] पर घी जम जाता है। इसी प्रकार के एकानेक अद्भुत प्रकरण इन गीतों में आते हैं। टेसूराय की सात बधुओं का बहुधा इन गीतों में उल्लेख हुआ है—

टेसूराय की सात बौहरियाँ
नाचें कूदें चढ़ें अटरिया।

ये स्त्रियाँ क्या हैं, मल्ल हैं। मन-मन पीसती हैं, मन-मन खा जाती हैं। बड़े मल्ल से युद्ध करने जाती हैं। किसी-किसी गीत में सातों बधुओं के अलग-अलग काम बताये गये हैं। सातवीं वधू टेसूराय को अत्यन्त प्रिय है। वह खाट पर बैठी-बैठी मोटी हो गयी है—

"एक लला जू की बहौतुई प्यारी तौ
पलिका ते पामु न देय सुगना।
फूलि बिटौरा है गई सुगना तौ
घर के द्वार न समाइ सुगना
ज्याई गाँम के बढ़ई ऐ बोलौ तो
घर कौ द्वार छिलाइ सुगना[2]।

'टसू' के अधिकांश गीतों में अद्भुत की परम्परा होती है। एक पद में एक बात का वर्णन होता है, तो उसके बाद के में उससे असम्बद्ध को सम्बद्ध करके यह परम्परा प्रस्तुत की जाती है। उदाहरण के लिए एक पद है—"इमली की जड़ में ते निकली पतंग, नौसै मोती, नौसै जंग"। इस पद में इमली की जड़ का और पतंग से कोई सम्बन्ध नहीं। इस सम्बन्ध द्वारा अद्भुत तत्व प्रस्तुत किया गया है। उस पतंग में हैं नौसै मोती, नौसै जंग।

१. किनारा।
२. यह गीत का अंश वास्तव में झाँझी के गीत में से है। उसमें टेसू का नाम नहीं है ललाजू नाम है।

अब इस अनायास ही आजाने वाले शब्द 'जंग' को और भी अद्भुत बनाने के लिए इसी के आधार पर गीत आगे बढ़ाया गया—"एक जंग मेरी टेढ़क-मेढ़ी' 'दाना देत कुल्हैंड़ी फोड़ी' पानी पिलाता सक्का मारा—'एक दूसरे से असम्बद्ध और असंगत बातें जोड़ी गई हैं। 'मारा' शब्द आते ही 'मारा है बे मारा है, जा दिल्ली पुकारा है—फिर दिल्ली की शरण ली गयी है।

'टेसूराय' के गीत तो बालक गाते हैं। इसी अवसर पर बालिकाएँ झाँझी (झेंझी) के गीत गाती हैं। झाँझी के गीतों में एक और पद्धति का उपयोग किया जाता है। वह यह है कि बहुधा ये गीत संवादात्मक हैं। माँ से प्रश्न है, फिर उसका उत्तर है। साथ ही एक पुच्छवत् टेक रहती है जैसे—

"माँ भैया कहाँ कहाँ ब्याहे, पारेवरिया"

इस गीत में 'पारेवरिया' पुच्छवत् टेक है। समस्त गीत में यह यथास्थान आती रहेगी। टेसू के गीतों की तरह इनमें भी वही अकल्पनीय असम्बद्धता-सम्बद्धता रहती है।

माँ भाभी कौ मुँहड़ौ कैसो ?
नाक चना सी, मुँह बटुआ सौ, घूँघट में मन लाई
थोरौ[1] खानी बहुत कमानी जे जगु जीती आई।
'माँ रोटी कितनी खावै, पारेवरिया ?'
बेटी चहीं की चहीं उड़ावै पारेवरिया

अकबरपुर के गीत में 'सोनौ' शब्द आया है।

"माँ सोनौ कितनों लाई, पारेवरिया ?'

(किसी किसी गीत में मन लाई के स्थान पर 'घुर्राई' पाठ है जो अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है।)

एक दूसरे प्रश्न में पूछा गया है कि 'दरबज्जे (द्वाराचार के समय) कहा-कहा दीयौ ?'

उत्तर है—'आठ बिलैयाँ, नौ चकचूँदरि सोल्है मूँसे दीये, पारेवरिया।'

एक अन्य झाँझी या झेंझी के गीत में ऐसी ही टेक है 'भली मेरी रावरिया'। टेसू के गीतों के से क्रम—असम्बद्ध से सम्बद्धता के तारतम्य का इन गीतों में भी अभाव नहीं है—एक गीत यों है—

बाबाजी के चेली चेला भिच्छया माँगन आए जी
भरि चुकटी मैंने भिच्छा डारी, चूँदरिया रँगि लाए जी

---

१. एक अकबरपुर के गीत में यह मिलता है—
१. 'चुंदरी रँगने' में प्रेम से रँग देने का अभिप्राय अवश्य निहित है। किन्तु यहाँ इसके द्वारा अद्भुत-भाव का भी उद्रेक हो रहा है।

भिक्षा की चुकटी का तो सम्बन्ध है, पर चूंदरी रंगने' से कोई सम्बन्ध नहीं, फिर चूंदरी का वर्णन—

चूंदरिया की उरकन मुरकन द्वै मोती मोइ पाए जी,
बे मोती मैंने सासु ऐ दिखाए जी
सासु निपूती ने धरि पत्थर पै फोरे जी

इसी प्रकार यह क्रम चलता है। इनमें एक ध्रुव सूत्र अवश्य रहता है। समस्त गीत में भिक्षा डालने वाली लुप्त नहीं होती। ऐसा ध्रुव-सूत्र टेसू के गीतों में नहीं मिलता।

झाँझी अथवा झँझी के गीतों में टेसू के गीतों से एक और विशेषता मिलती है। वह यह कि इनमें मात्र अद्भुत ही नहीं रहता। अद्भुत के भीतर हृदय का रस भी झाँकता दीखता है। ये गीत किसी न किसी नाते-रिश्ते का आश्रय लिये रहते हैं। ऊपर के गीत में सास और माँ के व्यवहार की एक झलक है। सास ने मोती फोड़ दिये, उसने फूटे मोती माँ के पास भेज दिये। माँ ने गंगा यमुना में प्रवाहित कर दिये। इसी प्रकार किसी गीत में भाई-भावज को देखने-समझने का ही स्नेह-सिक्त भाव है।

इस समस्त विवरण से विदित हो जाता है कि इन गीतों का मूल स्वभाव विनोदात्मक है। फिर भी 'टेसू' के गीतों के गाने वाले झमक के साथ और ठसक के साथ द्वार पर पहुँचते हैं—और पहुँचते ही यह गर्वोक्ति सुनाते हैं—

"टेसू आये धूम से
टका निकारें सूम से"

और यह सच ही है कि जिस द्वार पर टेसू पहुँच जाते हैं, उसे कुछ न कुछ देना ही पड़ता है। झाँझी इतने दर्प से नहीं पहुँचतीं।

टेसू-झाँझी के खेल क्वार के महिने में दशहरा अथवा पूर्णिमा को समाप्त होते हैं।

३४:५:१:२. झाँझी या झँझी की व्युत्पत्ति 'झंझरी' या 'झिझरी' से हो सकती है। 'झांझी' एक छोटे घट के समान होता है, जिसमें अनेकों छिद्र कर दिये जाते हैं। ऐसे छिद्रों वाला पात्र 'झँझरी' या 'झिझरी' कहा जा सकता है। इस झाँझी में भीतर नीचे के भाग में राख या रेत जमाकर उस पर तेल का दीपक जलाया जाता है। झाँझी को एक छोटी डलिया में रख कर बालिकाएँ घर-घर 'झाँझी' खेलने जाती हैं। प्रत्येक घर में जाकर गीत गाती हैं और कुछ भीख या भेंट प्राप्त करती हैं। यह झाँझी का खेल संध्या के उपरांत होता है। इन्हीं दिनों 'साँझी-पूजा' से यह संभावना लगती है कि 'झाँझी' पात्र के नाम के साथ ही 'साँझी' से भी व्युत्पत्ति की प्रेरणा पाये हुए है। संभवतः साँझी-पूजन की आरती के रूप में झाँझी का खेल चला होगा। ऐसा झाँझी खेल कितने ही प्रदेशों में होता है, पर विविध और भिन्न-भिन्न अवसरों पर होता है। किन्तु 'झाँझी' का 'साँझी' से ऐसा आरती-रूप का कोई संबंध है उसमें सबसे बड़ी बाधा ब्रज में झँझी की टेसू से संबंधित होने की है। ब्रज में 'टेसू-झाँझी' साथ-साथ खेले जाते हैं। टेसू लड़के खेलते हैं, झाँझी लड़कियाँ।

३४:५:१:३. टेसू-झाँझी के साथ कोई विशेष आनुष्ठानिक विधि नहीं। कुछ विश्वास अवश्य है। टेसू का मुख दिन में नहीं देखा जाता। अशुभ समझा जाता है। जिस दिन ये सिराये जाते हैं, उससे एक दिन पूर्व बिना दीपक जलाये ही खेला जाता है। झाँझी को सिराने के लिए उसे सिर पर रखा जाता है, और दो-चार चक्कर खाकर उसे पटक दिया जाता है और वह फूट जाती है। ये प्रायः किसी तालाब-पोखर के किनारे सिराये जाते हैं।

३४:५:१:४. टेसू-झाँझी का मूल अभी तक नहीं जाना जा सका है। टेसू के संबंध में विविध कल्पनाएँ की गयी हैं। किसी के अनुसार यह किसी राजा का, संभवतः पृथ्वीराज चौहान का भाट था। उसने राजा से यह वरदान प्राप्त किया कि उसकी मूर्ति के साथ लोग भीख माँगें। गीतों में 'टेसू राय' शब्द आता है। 'टेसू राय की सात बहुरियाँ। ऊपर नीचें चढ़े अटरिया।' आदि। 'राय' शब्द से संभवतः भाट या चारण होने की कल्पना की गयी है। कोई-कोई इसका मूल महाभारत तक ले जाते हैं और उस वीर से जोड़ते हैं कृष्णजी ने जिसका सिर धड़ से उतरवा लिया था, और उसे एक टिखटी के ऊपर वृक्ष पर रख दिया था कि वह महाभारत युद्ध को देख सके।

३४:६. पूर्णिमा के दिन कहीं-कहीं टेसू सिराये जाते है। रात्रि को कोई मीठा स्वादिष्ट पदार्थ खीर विशेषतः तय्यार किया जाता है, और रात को चाँदनी में रख दिया जाता है। यह विश्वास किया जाता है कि इस रात चन्द्रमा से अमृत स्रवित होता है, और उस खीर में आजाता है। इस खीर को खाने से अनेकों रोगों से रक्षा होती है।

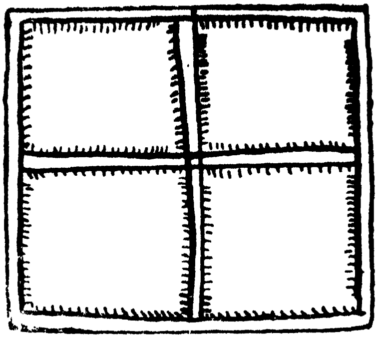
कार्तिक

३५. कार्तिक महिना आनुष्ठानिक लोक-साहित्य के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं। इस महिने में कई लघु और वृहद् आनुष्ठानिक आचार होते हैं। इस महिने के व्रतों को एक दृष्टि में यहाँ दिया जाता है:—

१. कार्तिक स्थान
२. करवा चौथ
३. अहोई आठें
४. धनतेरस
५. नरक चौदस
६. दिवाली
७. स्याहू पूजन
८. अन्नकूट
९. गोबर्द्धन पूजा
१०. भैयादूज या यमद्वितीया
११. डाल छठ (सूर्य षष्ठी)
१२. गोपाष्टमी
१३. अखैनौमी
१४. देवठान
१५. कार्तिक पूनों।

३५:१. कार्तिक स्नान

कार्तिक स्नान का बहुत महत्व है। सामान्यतः स्त्रियाँ ही इस व्रत को करती हैं। यों पुरुष भी करते हैं। स्त्रियाँ सूर्योदय से पूर्व ही नदी अथवा कुएँ पर या घर ही, स्नान करती हैं, और सविधि पूजा करती हैं। मुख्यतः 'राई दमोदर' की पूजा की जाती है। प्रतिदिन की एक कहानी होती है वह सुनी जाती है। इसके अतिरिक्त चार या पाँच कहानियाँ और कही-सुनी जाती हैं। गीत या भजन गाये जाते हैं। उसके उपरांत रेखाओं



से एक चार कक्षों का घेर जैसा बना कर उसकी भी पूजा की जाती है। इसके चारों खानों में भी कुछ अंकित किया जाता है।

३५:१. कार्तिक की कितनी ही कहानियाँ कही जाती हैं। जिनमें से कुछ यहाँ दी जाती हैं।

[जिन कहानियों पर* चिन्ह है वे कहानियाँ श्री अनारकली देवी कौम सुनार, खेराकलाँ, मज़रा सरेड़ा, तहसील खैरागढ़, आगरा से प्राप्त हुई हैं]

३५: १ (१) पूर्णमाशी कार्तिक शुरू कहानी १ दिन पूर्णा*

दोऊ शास बहु ही, बहू नहात धोवती, भजन पूजा करती और पूर्णमासी उपासी रहती, और चन्द्रमा में जल देती और खाने में से ब्राह्मण को पुन्न-धर्म करती; तब आप जलपान करती; शास कहती बहूते—बेटा परदेश में डरो है तेरे काजे कमाएगो, कि दुनिया कों, पुन्नदान करति ऐ तू कूं दुनापाये लुटावति है। आबन्दै बेटा ऐ, तू बहुत टुर मुर करवौं करति है, जाने कहा बुर बुरायौ करति है। बेटा तें कहिकें तेरे मायके भेज दुंगीं। तो नूं बेटा परदेशन ते आ गयें तो मैया बोली कि बेटा तू परदेश को अपनी बहू लैजा, क्यों कि घर में टुर बुर करती है बेटा नें अपनी बहू से कहा कि मेरी मइया को क्यों दुख देती है मैंने परदेश कमाई की मुकतों भेजतूं, तौऊ मेरी माता कूं दुख देती है। तो फिर औरत कहती है अपने पति से, न्हाती धोती हूं और पूर्णों को व्रत करती हूं, भगवान का भजन करती हूं, सो इनको अच्छा नहीं लगतु है सो यह टुर मुर समझती हैं इसलिये यह शिकायत करती हैं तुमसे। फिर औरत से पति बोले कि माता की बात पर ध्यान न देऊ भगवान को भजन करौ—भजन और व्रत पूर्णमाशी का करौ जिससे शरीर के कष्ट व दुख निवारण होकर शरीर को शान्ती प्रदान होय।[1]

३५. १ (२) सोम्वार १ शीतल कहानी० कार्तिक की ७ दि० की शरू

एक गूजर एक बनिया श्रो, बनिया रोज पूजा करकें महादेव की जातो, सो नदिया चढ़ी खूब ओर की चढ़ी तो जा पार बनियाँ, ठाड़ो तौ कहा बोलो हाय, भगवान ग्राज मेरी पूजा मारी गई वर्षन ते पूजा करतो, तौ गूजर बोलो तू पूजा करतो तौ मैं बँधीलें महादेव के मूड़ में पत्थर देतो रोज। मेरौऊ पत्थर दैबौ महादेव में रहौ का भइया, फिर गूजर मुठी बाँधकर बोला। दमम्दार बेड़ा पार धम्म से नदिया बहती में कूदि पड़ौ—पट्ट पार लग गयौ, बनियाँ देखत ही रहिगयौ। तो गूजर नें जायकें महादेव के मूँड़ में पत्थर जा दयौ, महादेव जी बहुत हँसे और उनकी आँख खुल गई, तब महादेव जी बोले तैनें मेरी बहुत सेवा करीयै सो तू माँगनों ऐ सो माँगले। खूब खुशी भये, तो गूजर बोलो और तो मोय कछू नाँ चहियतु, मोय तो दूध महेरी को कलेऊ मिलौ जाय। तो महादेव जी ने पूर्ण वरदान खूब खुश होकर दिया दूध महेरी खायें जाउ और दूध महेरी खायें जाउ और दूध में बड़ी बड़ी मूंछ डुबाएँ जाउ।[२]

३५. १ (२—१) सोमवार की एक अन्य कहानी जो ब्रज में प्रचलित है इस प्रकार हैं।

३५ : १. (२—१) सोमवार की (महादेव जी की)

एक सेठ जी और एक सेठानी ए वे महादेव जी की पूजा खूब कर्यौ करैए। पर उनके संतान नाँई। सेवा करते करते बहुत दिन है गए। पारवती जी नें महादेव जी ते कही महाराज इनकूं कोई सन्तान दैनी चाहिए। महादेवजी नें कही पारवती जी तुम तौ बावरी श्रौ या कें तौ सात जनम तक ऊ सनतान नहीं है। फिर पारवती जी नें कही महाराज चायें याकूं बारैई बरस कूं संतान दे श्रौ पर देश्रौ जरूर महादेव जी नें कही अच्छौ। दूसरे दिन महादेव जी ने सेठ कूं सपनों दियौ कि तेरें बेटा होयगौ पर बारहै बरस पीछें मर जायगो। कछूना। वा सेठानीयें गरभ रह्यौ तौ नौ महीना पीछें बेटा है गयौ। अब सेठानी नें तौ बड़ी खुशी मनाई पर सेठ कें कछूना वैसौ को वैसोई सेठानी नें सेठ ते कही सेठ जी दुनिया बेटा भए पैं कैसौ कैसौ उच्छव मनावें तुम कछूई नाय करौ। सेठ नें कही तुमें जो कछू करनों होय सो सब कछू करौ। मैं रोकूं थोरैंऊं। जो तुमनें कियौसो मैंने कियौ फिर खूब उच्छव भयौ फिर ऐसेंई ऐसें बेटा पाँच बरस कौ भयौ सेठानी नें कही सेठ जी या छोरा ए कहूं पढ़ाश्रौ। बानें कही पढ़बे बैंठार दैश्रौ कौन के संग पढ़वे भेजोगी जाकौ तोए खूब विश्वास होय वाके संग काशी जी पढ़वे भेज सेठानी ने कही मोए तौ मेरे भैया कौ बहुत बहुत साँचै। बाई के संग भेंजुंगी। झट्टी अपनौ भैया बुलवाय दियौ, मामा कें संग में छोरा काशी जी पढ़वें चल दियौ। काशी जी के पास पुहुँच कें एक कूश्रा पै ठहर कें पानी वानी पियौ। महाँई एक बारात ग्राई वा बरात में दूल्हा कानों श्रो उन मामा भानजेन्नें देखकें बराती बोले छोरा तौ बड़ौ मलूकै। फेरान ताँई याई ऐ कर लैश्रौ और एक सोंनें कौ टका देश्रौ सबनें कही ठीकै। फिर वा छोरा के मामाते कही साब या छोरा ते हमारे फेरा और खेत बारौठी कर बाय देश्रौ। हम तुमकूं एक सोंने कौ टका दिंगे। मामा नें तौ नाँई करी पर भानजेके मन में ग्राय गई। बानें कही मामा हमारौ बिगरेई कहा ऐ। सोने कूं टका मिलेगौ काम ग्राऐगौ

मामा नें ऊ कैंहै दई, अच्छौ, झट्ट बरातीन नें बु दूल्हा बनाय दियौ। बरात पहुँची, जनमासे में ठैर गई। सब कहन लगे दुनियाँ भूँठोई हल्ला मचावै कि कानों दुल्हा ऐ, देखौ दूल्हा तौ बड़ौ मलूक। खेत वारौठी है गई फेरा परि गए। फेरा परती बखत बा बनियाँ के छोरा नें सारी के पल्ले में लिख दियौ कि व्याहे के संग जाय तौ मैं बारै बरस पीछें काशी ते पढ़िकें आऊँगो मेरे संग चलियौ और जो घरे के संग जाय तौ काने दूल्हा के संग चली जयो। फेरान पीछें कांकन ऐ खोल कें सोंने के टकाऐ माँढए के नीचें गाढ़ि दियौ। अब सवेरौ होते ई बहू नें म्होंड़ौ धोयौ वा साड़ी कें पल्ले पै लिख्यौ बानें बाँच्यौ फिर अपने मैया-बापन कूं दिखायौ। कि तुमने मेरौ ब्यहा कर्यौ ऐ कि धरेजौ कर्यौ ऐ। बु लिख्यौ भयौ अपने बाप कूं दिखायौ। बाकी बात सच्ची निकसी। बापै ऊ गुस्सा आयौ। वा काने दूल्हा के संग छोरी नायँ भेजी। बरात विदा कर दई। चली गई। वे मामा भानजे काशी जी कूं चले गए। मजे में वहाँ पढ़े लिखें। जब वा भानजे की उमर बारै बरस की भई बाई दिनां उन्नें एक जज्ञ करी बहुत से ब्राह्मण जेंमें आए जेंमन लगे बाई समें बानें अपने मामा ते कही मामा मैं तौ सोऊंगो। भैया सो तौ सोवेगौ ही हमें सबै खबरै। झट्ट सोय गयौ। सोमतौ सोमतौ मर गयौ। अभई बामन जेंऐ तौ हे ना जब जैमें कूं शुरू करते बाते पहलें उननें बु लड़का बुलवायौ संकल्प छोड़बे कूं। बोलबे बारौ गयौ बु तौ मर्यौ पर्यौ। बुलउआ नें कही जी बु तौ मर गयौ। सब में बड़ौ हाहाकार मच्यौ। काशी जी में भारी हल्ला है गयौ। म्हां पारवती ने महादेव जी से पूछी च्यों जी इ काए कौ हल्लागुल्ला ऐ। महादेव जी ऐ तौ मालूम ही ई। उन्नें कही तुमें जाते कहा, कहूं रोवाभींकी ऐ कहूँ खैर खूबी; तुमें याते कहा। पारवती जी बहुत जिद्द परीं। नायें जी बताइ देग्रौ इ कायें कौ हल्ला ऐ। महादेव जी नें कही बु लड़का जो तुमने बा सेठ कूँ दिखायौ ओ बु आज मरिगयौ। पारवती जी नें पूछीं च्यों जी बु अभई क्वारौ ऐ कि ब्याहौ। महादेव जी नें कही ब्यहा तौ बाकौ है गयौ ऐ। पारवती जी बोली तौ ई देखौ बा लड़की की कितनी उमरै। उन्नें कही बीसा सौ एक सौ बीस बरस की। बु बोली तौ नाथ बाकी बहू की उमर में ते आधी उमर या लड़का की उमर में लगाइ देग्रौ और बाऐ जिन्दौ कर देग्रौ याको बाप तुम्हारौ बड़ौ भगत ऐ। महादेव जी नें ऐसौ ई कर्यौ। झट्ट साहूकार कौ लरिका हरे हरे कहकें उठि पर्यौ। बानें बु सब सामान तौ फिकवाय दियौ फिर बाई बखत दूसरौ सामान रसोई कौ बनवाय कें सब ब्राह्मण कूं कराए। जज्ञ पूरौ है गई। बाके गाम में बाके बापने बाकी माते कह दई कि बू छोरा तौ भगमान नें हमकूं आज तक कूं दियौ ओ सो काशी जी में मरि गयौ होगौ। दोनूं रोमते रोमते आँधरे है गए फिर बारहै बरस पढ़िकें मामा भानजें काशी जी ते घर माऊं चल दिए फिर आइकें बाई कुआ पै ठैरे म्हां की छिरीछोरीन ते हँसी मजाक करने लगे। अब एक बोली हमते हँसी करै ऐसौ तू नांय ञा ब्याहौ। बा छोरा नें कही क्यों नाँय ब्याहे। फलानें फलानें सेठ के जब कानौं दूल्हा आयो जब हमारे ई तौ फेरा परे। अब तौ सब में हलचल मचि गयी फलाने सेठ कौ जमाई आइ गयौ बा सेठ ऊ ते जाइ कें कही। झट्ट बू सेठ दोनूं मामा भानजेन नें घर लै आयौ, खुसी मनाई, थोड़े दिन राखिकें बेटी उनके संग बिदा कर दई। बुहौत सौ माल दियौ, फिर वे अपने घर कूं आइ गए। बाके माँ बाप रोमते रोमते अन्धे है गए। काऊ नें कही तेरौ बेटा काशी जी ते पढ़ कें और ब्याह करिकें आइ गयौ। बु कहन लगे क्यों ञा सबई ठट्टा करौ। हमारौ तौ बेटा मरि चुक्यौ और तुम्हारी बात सांची ऐ तौ हमारी

आँख खुल जायें। मा-बापन्नें झट्ट दीखन लग्यौ। बेटा बहू इतने में घर आय पौहोंचे, सेठ सेठानी नें बड़ी खुसी मनाई सुख ते रहन लगे।

ई सब फल उनें सोमवार कूं महादेव जी की पूजा कौ मिल्यौ।

३५:१ (३) मंगल देवता की कहानी*

वो मइया बेटाए तौ बेटा नें अपनी बहू की विदा माइकें कूं कर दई। तब मइया बोली बेटा ते, अपनी बहू लै आ माइके ते, रोटी पानी करेगी, घर आँगनें रखावगी और हमनि आराम देगी, तौ बेटा अपनी बहू लैवे अपनी ससुराल चल दयौ, सो अधपर ते मंगल देवता संग संग चल दये। तौ मंगल देवता से नाहीं करी कि मेरे गाँव को इतते मति चलियो क्यों कै माँ तेरी काऊ नें खातिर करी ना करी। तौ ससुराल पहुँचा और सास से बोलौ सबेरे तरकें बिदा करिवीयों, सो सास बोली ये बेटा मंगल कूँ बिदा नाँ होति। बुध गई बुध बावरी, मंगल गई नाँ बाहुरी। सो मंगल को हूं बिदा नां करति, बानें जबरई से ही बिदा करालई, अधपर ही आय पहुंचों बिदा करायकें। तैसें ही मंगल देवता बाई ठौर पै बैठौ पायो और बाई के पति कौ सौ भेस धर लयौ। तबई झगड़ो दौनोंनि में होने लगौ, बु यह कहै मेरी बहू है। बु कहै कि मेरी बहू है। उतने मे ग्वार बार इकट्ठे होकर कहने लगे कि बहू अपने आप पहिचाँनि लेगी, कौन सौ पति ऐ, तौ बहू बोली दोनों की एक सी सूरत है मोपे नाहिं पहिचनत तौ ग्वार बोले कि यहाँ के राजा के पास जाओ तौ बोई तुम्हारे न्याय करेंगे। राजा नें दोनों उठाकर बन्द कर दिये, ताको बहू होगी वु अपने आप निकल आवेंगो—तौ जू मंगल देवता सरंदेसी नें निकल आये कि बहू मेरी है। हूँ तो निकल आयौ दंदेउ, मेरी बहू ऐं, तो राजा बोलौ बहू बारौ तो बन्द है—सण्डा मंगल देवता निकरि आयौ ऐ, तो राजा बोलौ मंगल देवता से बहू तुम्हारी नहीं हमें मालूम है कि मंगल को बहू की बिदा कराई है सो तुमने इतना बण्ड दे दियौ, अब मंगल देवता तुम अपने घर जाओ—अब कोऊ मंगल को बिदा नहीं कराएगौ और बहू का पति बन्दी में से निकाल बहू के संग भेज दीनों ऐ और कही कै अब से मंगल के दिन बिदा नहीं करवानों। इस वजह से किसी को भी मंगल के दिन बिदा नहीं करानी चाहिये।

३५:१० (३–१) मंगलवार की कहानी

३५:१ (३-१) 'मंगल देवता' की यह कहानी ब्रज में शुक्र देवता की कहानी भी हैं। किन्तु ब्रज में मंगलवार महावीर हनुमान का दिवस भी माना जाता है। मंगलवार को कही जाने वाली ब्रज की दो कहानियाँ और दी जा रही हैं। ये महावीर संबंधी है। इनके रूप में भेद होते हुए भी टेकनीक दोनों की एक सी ही लगती है—एक कहानी यों है—

एक ब्राह्मण था। उसके एक कन्या थी। उसकी गरीबी हालत थी। बानें सोची कि कन्या शादी योग्य हो गई। एक सेठ के पास चलना चाहिए और उससे द्रव्य माँगना चाहिए फिर इस कन्या की शादी करनी चाहिए। ब्राह्मण सेठ जी के पास गए। सेठ जी ब्राह्मण को देखते ही चकित हो कर बोले कि ब्राह्मण कैसे आए। ब्राह्मण बोले। सेठ जी मेरी एक कन्या है सो मेरे लिए उसकी शादी करनी है सो मुझ को रुपये की आवश्यकता है। तुम्हें रुपये

की जरूरत है तो हमारे यहाँ पाँच महीना तक हनुमान जी का पाठ करदेगो तो तुझे ५०० रुपये मिल जांगे। ब्राह्मण घर आया, उसने अपनी स्त्री से कहा कि सेठ जी ने कहा है कि पाँच महिने तक हनुमान जी का पाठ करदे तो मिल जायँगे, कन्या की शादी तो करनी ही है। पाँच महीना और पाठ करदो। फिर पाठ उसने शुरू कर दिये। सेठ जी और सेठानी दोनों जने दरशन करने आया करते थे। एक महीने में सेठानी को हनुमान जी ने दरशन दिए और कहा कि या तो इस ब्राह्मण की इच्छा पूरी करो नहीं तो तुम्हारा धन और दौलत को नष्ट कर दूँगा। सेठ सेठानी मंदिर में भगे आये लेउ महाराज अपनी दक्षिणा ब्राह्मण ने कहा कि तुम्हारे हाथ से नहीं लूँगा। महावीर जी के सामने रख दो फिर हम को उठा के दो सेठ जी ने ५०० रुपया रखे सो ब्राह्मण नें कही कि अब हमें उठा के देउ सेठ जी ने उठाये सो सेठ जी का हाथ जमीन से चुपट गया सेठ जी बोले कि महाराज ये क्या हुआ ब्राह्मण ने कहा कि मेरौ कुछ दोस नहीं है। महावीर जी से पिराथना करौ। इतने में ही महावीर जी ब्राह्मण का रूप धर के आये उसने कही भाई ब्राह्मण ने इतने रुपया माँगे थे सो तू चार जगं रख दे तो हाथ छुटेगौ उस सेठ ने चार जगं रख दिए और हाथ छूट गया। ब्राह्मण ने सेठ जी से कहा कि आज से हनूमान जी की मानता किया करो। ब्राह्मण अपने घर चला गया और अपनी कन्या की शादी करदी। बाकी का धन बचा सो अपने घर का खर्च चलाया और अच्छी तरह से रहने लगे, महावीर जी की सेवा का फल पाया।

३५:१. (३–२) हनुमान संबंधी मंगलवार की दूसरी कहानी यह है—

एक बनिया औ और एक बामनों। तौ हनूमान जी के सामेंई नित्त नेंमते पाठ करैऔ। और बनिया रोज बा हनमान जी के मन्दिर के पीछें न्हिमिटइबे जायौ करैऔ याई तरें भौत दिना है गए बा बामन ते हनूमान जी प्रसन्न है गए। बोले भाई बामन देवता में तौ ते बहौत प्रसन्नूँ सो तोयँ जो कुछ चाहिए सो माँगि लै। बानें कही, महाराज मोये तौ कछू नाँय चाहिएं तुम्हारे दरशन होते रहैं। हनूमान जी नें कही तौऊ जा कल तेरे घर पै सवा पहर कंचन बरसैगौ। पीछें ते बनिया नें ई बात सुन लई। अब बनिया सोचे काऊ तरें या बामन कौ घर तुमै लै लेनौं चहिएं और अपनौं यायँ दै दैनौं चहिएँ। झट्ट सीनां वे दोनूं अपने अपने घरन कूं चले गए फिर बनिया बामन के घर गयौ। बानें कही महाराज मेरौ जो कछु घर बार और सम्पतै बाए तौ तुम लै लेऔ और अपने घर कूं मोएं दै देऔ। बामन नें कही भैया तू मेरी टूटी झोंपड़ी कौ कहा करैगौ। पर वु बनिया नांइ मान्यौ। हारि कें बामन नें कह दई अच्छौ भीया जैसी तेरी मरजी। बु अपनी बामनी ऐ लैकें बनियां के महलन में आय गयौ और बनियां बाकी झोंपड़ी में चल्यौ गयौ। सबेरौ होते ई बनिया बाट देखन लग्यौ। अब होय कंचन बरखा अब होय कंचन बरसा, अब होय कंचन बरसा। कंचन बरस्यौइ नां। बामन कूँ तौ हवेली और माल मिलि गयौ। बोई कंचन बरसबौऔ। अब तौ बनिया बहुत रिस्यायौ। बु बामन नित्त नेंमते अपनी पूजा करबे म्हाईं चल्यौ गयौ जब कंचन नायँ बरस्यौ तौ बनियाऊ हनूमान जी के पास पहुँच गयौ। बानें रिस्याइ कें हनूमान जी में लात मारी सो झट्ट बाकौ पाम ऊ चिपक गयौ छुटै नाँ। अब बनिया घबड़ायौ। महाराज मेरे पामें

छोड़ौ । मैं शरनूं । झट्ट हनूमान जी नें कही लातें जब छोड़ूंगो जब तू या नारि में पहरे भए तोर । ऐ या बामन कूं देंगो । बानें झट्ट सोने को तोरा बामन कूं दै दियौ । बनिया की लात छूट गई । बनियां रोवै महाराज मैं तौ बड़े खाने खराब करयौ । हनूमान जी नें कही ई सब तेरे बुरे कामन कौ फल और बामन के अच्छे करमन कौ । बामन सुखते रहन लग्यौ । ई सब हनूमान जी की किरपा ई ते फल मिल्यौ ।

३५·१ (४) बुद्धवार की कहानी*

एक मैया व बुद्धा, बुद्धी । तौ मईया बोली दोनों बहन भाईन की शादी एक पूरव एक पच्छिम में करूँगी क्योंकि दोनों नि बनति नाँ है । तो भईया चलौ बहन की शादी करबे तौ मईया बोली कि बेटा तेरे आगें गरीब या कोढ़ी या कलंकी या अमीर कोऊ मिलै ताही कें करि अइयो, तौ रस्ता में चलौ जारहो, तौ एक भाड़ पें तमाम आदमी बैठे पायें, तौ भाई वहीं चलौ गयौ तौ एक मले कुचैले कपड़ा (वस्त्र) पहनें एक आदमी (राजा) बैठौ ओ सो वह भाड़ पै से बीन-बीन, भुने चना चबा रहो । तौ भाई बोलौ, अपने मन में कि जाई की शादी करदऊं क्यों कि जाऊ ते गरीब को होगौ जो भार पैसे चना बीन बीन कर खा रहौ है । फिर बाकों टीका चढ़ाय दयौ बा गरीब नें बहुत-बहुत नाहीं करी । तौ भार पर बैठे आदमी बोले आई लक्ष्मी ऐ कायें को फेर रहौ है, करले भाई । सादी है जैसें बनें जैसें करले । फिर ब्याह बुद्धी का रचाय दयौ और वह अपने पति के संग कर दई तौ जंगल में पड़ाव डालकर रहने लगें, तो पति से बुद्धी (स्त्री) बोली कि काऊ से माँग जाँच कर दो फावड़े ले आओ जासे घर बनाने की नीम डाल दें तौ फिर बु दो फावड़े लायौ है और दोनों—मर्द-औरत नें जंगल में ही घर बनाने की ठानी और वहीं पर एक गहरी दीवार बनाने के लिये नींव खोदी । तो इतने में ही एक घड़ा हुआ खजाना मिला, थोड़ासा निकाल महनती लाकर काम पर लगा दिये और हवेली बनवाने का नम्बर लगा दिया—क्यों बुद्धी तो बुद्धिमान थी ही, इतने में गाँव शहर के दूतों ने राजा से चुगलई की कि कुछ दिन पहले तो भाड़ पर बीन-बीन कर चना चबाता था । आज वह हवेला बनवा रहा है, किसी का माल मारा है कि किसी का धन चुराया है । इतने में राजा अपनी फौज पलटन लेकर चलौ आयौ है । तौ बुद्धी के पति से राजा कहने लगौ तूनें कहाँ से धन चुरायौ है । जल्दी बतादो—तो बुद्धी का पति डर से हलतौ काँपतौ अपने घर भीतर गयौ और पत्नी से कही कि तैंने अच्छौ धन निकारौ यह तो तैंनें मेरी जेल कराई । तो बुद्धी स्त्री राजा से बोली कि हमनें काऊ की द्रिव्य चुरायकें नाँ लई जिय तो हमारे माँ बाप नें दयौ है । तो राजा बोले जि तौ इतना गरीब है चना चबाता था वो इतने भागवान थे सो तुम्हें इतनी द्रिव्य दे दी । सोच समझकर राजा लौट कर अपने मय फौज पलटन सहित घर चले आये तो पति और बुद्धी घर-हवेली बनाकर अच्छी तरह रहने लगे । तो काफी दिन बाद बहन का भाई मईया से बोलौ कि मईया बहन की खबर लै आऊं कि मरी है या जिन्दी है । जिस दिन से ब्याह किया है जब से कोई खबर नहीं मिली तो पूछते-पूछते उसका भाई उस जंगल में अपनी बहन के मकान यानी हवेली पर पहुँचे, तो बहन हवेली पर ठाड़ी थी तो दूर से ही अपने मन में कहने लगी कि लगत तौ हमारौ भाई बुद्धा ऐ । रस्ता में हवेली वाली लड़की (बहू) से बुद्धा पूछन लागौ कि हमने एक आदमी जो भाड़ पर से चना बीन-बीन कर खातौ सो उसकी शादी करदी सो ता दिनते हमको कोई पता नहीं कि

मरा कि जिन्दा रहा तो—वह लड़की (बहन) ऊपर से बोली कि मैं ही तुम्हारी बहन बुद्धी हूँ। झट उतर कर भाई से मिली और मूंड़ा डालकर बैठा लियो। माँ-बस्ती वगैरा की राजी-खुशी पूंछी। सग राजी खुशी भाई नें बतलाय दई। पीछे से बहन कहन लगी तुमने तो भूखे छूटे भिखाई कूं दये, परि हमारे तकदीर ते तो राजा ही मिले। भाई से बोली ऐसो सर्व आनन्द सब काऊ को मिले।

३५.१ (५) गुरुवार की कहानी*—२३

एक ठकुरानी ई सो खूब भाग्यवान ई। सो एक भिकारी आवतो सो भिक्षा माँगी सो यह कह दीनीं तमाम काम फटपरौ ऐ कहाकुल काम में आग लगाऊं। ऐसौ इन्तजाम बताय कि काम निबटैं और धन माया निबटैं। जाते नेंक चैन ते बैठ लऊँ, तोइ कैसें भीक डालूं, तौ फिर भिकारी बोले कि मैं बताऊँगो कि खरैरों, बरेरों, लगजाय और आराम से बैठी रहै—तू ऐसौ काम करियो कि—गुरुवार को मूड़ धोईयो, लीपियो और कपड़ा धोईयों, वार बनवइयो—२-४ वृहस्पति ऐसा करने से, घर में फूंकने चबाने कूं न रहो, तो पति से ठकुरानी कहने लगी कि हमतौ भूंकन मरने लगे। तौ पतिनें कही पहलें पूछी ताहियै अबकें पूछि खरैरो, वरैरो लगो है। बुही साधू भिखारी भिक्षा माँगने आयौ तो ठकुरानी कहने लगी कि हम तो भूंकन मर रहें हें तुम्हें कहाँ से डालें। तो भिखारी कहने लगें हाल तो भूंकन मरति है और हाल कहती है कि मो पै भीकऊ नाएें डरति। वावा तिहारे हाथ जोड़ति हूँ और पैरों पड़ती हूँ। वैसो ही हो जाय हमारें तौ, तुम्हें खूब भिक्षा डालूंगी भिक्षा—तो साधू भिकारी बोलो कि वृहस्पति को मूंड मत धोनों चहिये, कपड़ा मत धोना, बार नहीं बनवाना और गुरवार को हाथ पैर धोकर के कहानी सुन लेना और गुरवार को केरा को जल चढ़ा देना, और पीले भोजन करना, पीले भोजन अन दान करना चाहिये, जैसे पहले था वैसे ही फिर से वैभव हो जायेगा—ऐसो धन सब काऊ कें बढ़ें जैसे तुम्हारे भगवान नें दयो है।

३५.१ (५-१) वृहस्पति या गुरुवार विषयक एक दूसरी कहानी भी मिली है। वह इस प्रकार है :—

३५:१. (५-१)—२४

एक रहीस घर की बेटी गरीब घर में ब्याही। बहू ब्याहि कें आई, सास बोली कि बहू रोटी खाले। बहू ने कही कि मैं तो बर्ती रही हूँ। सास नें कही कि कैसी बहू है। सो ब्याह को बर्ती रहती है। वो बहू थीं उनको खाने पीने की बड़ी तंगी रहती थी। सास रोटी करती दौरानी और जिठानी को सास बड़ी तंग रखती। एक दिन बहू बोली कि सास हम रोटी करेंगे। बहू बर्ती रही, और दिन तौ सास रोटी करती थी। सास नें परोसीं सब देवर जेठ रोटी जेमने बैठे। और दिन तो भूखे रहते थे उस दिन भर पेट रोटी खाईं, दौरानी और जिठानी दोनों को दो दो रोटी मिलतीं आज तो जानें भूखे ही रहेंगे का। सास बहू ते बोली कि बहू रोटी जैलें। बहू बोली कि सास मैं तो बर्ती रही हूँ कैसें रोटी जैलूं। नाज की तो बड़ी तंगी घर में थी। बहू ने हाथ का ककनां सास को दिया और सास ते कहा कि अम्माजी जाकौ नाज मँगालो, ससुर बजार को चला गया। बजार उसको नहीं पाया, जब एक बनी सी में एक बजार सा पाया एक बनियां ते उसने कहा कि एक ककनां का नाज

दे दे उस बनियाँ ने गाड़ी भर दी, झारन झूरन बचा उसने वह भी भर दिया, लेकर घर को चला आया। बहू ने भरौ तौ झारन झूरन पीछे ते डारौ बामें बहू को ककनाँ मिल गया। सास ने बहू से कहा कि अब तौ तेरी बारैहू बृहस्पति पूरी हो गई अब तो रोटी खालें। बहू नें केला लगवायौ केला कौ बहू नें पूजन किया। उनके बड़ी भारी गरीबाई थी फिर उनके सब कुछ हो गया। सास सुसर ने खुशी मनाई, बहू बड़ी अच्छी आई।

३५.१ (६) शुक्रवार ५ *—२५—

दोऊ, शाश बहू ई शुक्रवार कूं नाहती धोबतीं और कहानी सुनतीं। सो आई परौसिन सो बोली ए भेंना तुम कहा टोटिका सौ कर रई हो। सो हमनि बताइदेउ। कछु नाँ कर रही भेंना भगवान ते हेतु लगा रहें हैं कि मुक्ति अच्छी हूं नी चाहियें हमनि धन सम्पति कछु नाँ चहियति, हम भगवान से प्रार्थना जि कर रहे हैं कि मुक्ती अच्छी होय। परौसिन नें कही कलतें हूं ऊँ सुनिबौ करूँगी। तेरौ सौ ही नेम धर्म में करौंगी जाते मेरी मुक्ती हो जाय। ऐसें ही दूसरे दिन परौसिन न्हाय धोय नेम धर्म से भगवान से ध्यान लगाये बैठ गई। इतने में वाकौ पति आयौ और बोलौ कि काये की पूजा कर रई है तो औरत बोली कि भगवान की पूजा कर रही हूं कि जाते मेरी मुक्ती है जाय। ऐसी तौ बहुत अच्छी बात ऐ जितें हमनि ऊ अच्छी बात लगी कि भगवान की पूजा करें। फिर बाई परौसिन के पास पहुंची कि कल तेरी सी पूजा हमनेऊँ आज करी भेंना। तौ दोनों की मृतकाला भई। भगवान के दरी खाने पुहुँचीं तौ भगवान धर्मराय बोले कि तुमने कहा पुनः धर्म करौऐ कहा द्रिव्य करी है जा से तुम्हें यहाँ खाने पीने को मिले। बानें कही ऐ हमने तो कछु पुन्न धर्म नां कर पायौ, हमतौ तुम्हारौ ही नाम रटत रहें हैं, हमनि पुन्न धर्म तो कछ नां कर पायौ है। भगवान हमारी मुक्ति अच्छी होनी चहिये – तो धर्मराय बोलौ तो भी अच्छा किया तुमनें, इससे तुम्हारी मुक्ति फिर भी अच्छी होगी। तो वे दोनों परौसिन धर्मराय से बोली कि हे भगवान एक प्रार्थना हमारी और है कि हमारे पति और सास रहि गई हैं बिनें बैकुण्ठपुरी और बुलाइलें तो चारों संग है जाँगे तो तुम भजेंगे तो धर्मराज बोले जि तो अपनी करनी के अनुसार है, तुमीनें करनी अच्छी करी तो तुम आय गयीं। जैसे करेंगो तैसौ भरेगौ जि करनी अनुसार है, वे तौ वा जनम के दोसी हैं। वे नाहिं आ सकत। हे भगवान हे धर्मराय वे नहीं जायेंगे तब तक हम नहीं आयेंगे। तो धर्मराय ने कहीं है दूत भाई जावो विमान लेजाना विनेंऊ ले आयौ तो चारों इकट्ठे है गये। अब तुम चारों बैकुण्ठीपुरी कूँ जाओं। ऐसें ही दोऊ दोऊन को तार लै गई। बैकुण्ठपुरी पहुंच गईं हे भगवान ऐसे ही सब काऊ बैकुन्ठपुरी पहुँचइयो।

३५·१ (६-१) उपरोक्त कहानी तो ठीक कार्तिक की भावना के अनुकूल है किन्तु ब्रज में शुक्र देवता की अन्य कहानी भी मिलती हैं, वह ऊपर दी हुई मंगल देवता की कहानी के समान है। उसके कई संस्करण मिले है—एक रूप उसका यहाँ दिया जा रहा है।

३५:१. (६—१) शुक्र देवता की कहानी।

शुक्र डूब रह्यौ सो एक जने नें अपनी मैया ते कही मैया में अपनी बहू ले आऊं। बाकी मैया ने कही बेटा हभी तौ शुक्र डूब रहयौ ये। शुक्र डूबे पै बहू बेटी नें नाँह लायौ

करें बु बेटा नाँय मानयौ । मैया में तो जाउंगौ ई । नाँय मान्यौ चलयौ गयौ कहा जब वाने सास सुसरन ते लैया को कही तौ उननेंऊ नाईं करी कि शुक्र डूबे पै नांइ भेजें। उनतेऊ अड़ परौ नाँय मान्यौ बहू ऐ लैके चल दियौ। बहलो में बहू बैठारि लई । आपऊ बैठि गयौ। गढ़वारे नें बहली हाँक दई । आगें चलकें रस्ता में बहू ऐ प्यास लगी । बहली डाट दई । आप उतरि कें पानी लैवे चल दियौ । वाये तौ पानी ढूंढवे में देर लग गई । इतने में ई शुक्र देवता बिल्कुल बाई कौ सौ रूप बनाइ कें पानी लै आये और गाढ़ी में बैठि कें गढ़वारे पै बहली हँकवाइ दई । अब बु पीछे ते पानी लै कें भग्यौ आवे ओ । गढ़वारे नें सुनी तौ वानें बहलो डाट दई । झट्ट बहलो के पास आयकें शुक्कर देवता ते कही तू कौनें रे । मेरी गाड़ी में क्यों बैठ गयौ ऐ उतरि नीचें । ये बहू तौ मेरी ऐ । मैं अपनी सुसराल ते लैके आयौ ऊं । देव नें कही चल भग बहू तौ मेरी ऐ । सरूप तौ दोनूंन कौ एक सौ है ही । गढ़वारौ ऊ कछु नाँय कह सक्यौ । अब बु तौ कहे बहू मेरी ऐ और बु कहै बहू मेरी ऐ । लड़न लगे । तब गढ़वारे नें समझाये, भोया तुम दोनूं बहली में बैठ चलौ आगें गाम में पंचन ते न्याय करवामिंगे जिनको बहू होगी वाये मिल जाइगी । आगें गाम में पहुँच के गढ़वारे नें पांच पंच जोरे, उनकौ झगड़ौ बताय कें नियाव करवे की कही । म्हाँ बु दोनूं कहन लगे बहू मेरी ऐ, बहू मेरी ऐ । अब बहू ते पूछी च्यौं री बहू तू कौन की बहू ऐ । वाके पास तौ पहलें शुक्र देवता ई पानी लै क आये, सरूप दोनूंन कौ एक सौ ई । सो वा बहू नें शुक्र देवता ते कही मैं तौ याकी बहू ऊं और ई तौ पीछेई किल्लामतौ आयौ यै । और दूसरी बात ई भई कि शुक्रदेवता नें कही भइया हो हम दोनूंन में ते जो कोई कच्चे करवे के टूंटी हैकें निकर जाइ वाई की बहू । उननें कही अच्छौ झट्ट शुक्कर देवता तौ निकरि गए बु कैसें निकरतौ । झट्ट गाम के पंचन ने शुक्कर देवता की बहू बताइ दई फिर शुक्र देवता नें परगट है कें कही भइयाओं में तो शुक्र देवता ऊं। बहू तौ याई की ऐ। मैंनें तौ याकूं इतनौ चमत्कार दिखायौ ऐ के में तौ डूब रह्यौ और ई धिंगरई ते बहू ऐ लै आयौ । उननें बताई : में जब डूब्यौ हुयौ करूं तब बहू बेटा कहूं नाँय आमे जायें । और कोई लैऊ आमें तौ जब मैं उछरूं तो एक राति कूं कहू दूसरी जगह रह आवें फिर अपने घर आ जाय ।

३५. १. (६-१. १) वस्तुतः यह कहानी शुक्र की ही होनी चाहिये । मंगल को भी विदा का निषेध है, इसलिए 'शुक्र' की कहानी ही मंगल की कहानी लोक मानस में बन गयी है । यह कहानी सामान्य शुक्र की कहानी नहीं, सूक (शुक्र) डूबने पर बिदा कराने के निषेध के लिए यह कहानी खड़ी की गयी है ।

३५. १. (६-२) शुक्र की इसी कहानी का एक और रूपान्तर प्राप्त होता है । उसे भी यहाँ दिया जाता है—

शुक्रवार की कहानी

दो माँ बेटा थे । बेटा की शादी हो गई थी । माँ ने कहा कि लाल बहू को ले आ। बेटा लेने के लिए गया । बिदा कराय के लाया । शुक्र देवता रासते में ब्राह्मण का भेस धर के आय बैठे । बहू को रथ से उतार कर अपने घर ले गये । लड़के ने कभी रथ की तरफ ध्यान नहीं दिया कि बहू है या नहीं । रथ लेकर घर आया । सब जनीं बोलीं कि बहू को

उतार लाओ। बुढ़िया ने कहा कि कुल की रीति रसम करके घर में लानी चाहिए। रथ का परदा उठा कर देखा सो रथ में बहू नहीं थी। बुढ़िया ने कहा कि भइया बहू कहाँ? बेटा ने कहा मइया में तो बिदा कराय के आय था। वाने कहा कि रस्ता में रथ तो खड़ा नहीं करा था। बेटा ने कहा, कि रस्ता में रथ तो खड़ा किया था पर बहू तौ उतरती नहीं देखी थी। बुढ़िया ने कहा कि जहाँ रथ खड़ा किया था वहाँ फिर जा। वहाँ लड़का फिर ब्राह्मण का भेष धर कर रास्ते में बैठे। शुक्र देवता ने कहा कि बच्चा तू कहाँ जा रहा है। लड़के ने कहा कि बाबा कल्लि बहू को सबेरे बिदा कराय के गया था सो बहू का पता नहीं है। घर पै जायकें देखी तो रथ में नहीं थी। शुक्र देवता ने कहा कि चल बहू को हम बतायें। तैनें शुक्र देवता का अपमान क्यों किया था। शुक्र डूबे पर बहू को बिदा नहीं कराते हैं। बहू को सुसराल में कर आया और अपने घर आया फिर शुक्र उछरे पर बहू को लाया।

३५. १ (७) शनिश्चर

शनीचर के दिन जोसिया आवतो, घर-घर ते तेल माँगतो—४-६ घर ते तौ तेल लै आयौ। एक घर पहुँचो सो बाको आदमी पत्थर लैकें परौ कि तेल नहीं फुलेल चहिए तोकूँ—काहे शनीचर हमनि बतायें—शनीचर देखें हमनि पै चढ़ि तौ बैठै। जोसिया ओ डिगरि गयौ अपने घर गयौ। घरवारौ पंडित के पास पहुंचौ और पूछी कि शनीचर आवतुऐ तौ कहा उपाय होतु है। पंडित बोले शनीचरा न्हाय आओ—सिर मुँड़ाय आओ, कपड़ा डाल आवतें, जूता डाल आवतें और लोह-तेल का दान शनीचर को करत हैं। यह उपाय पंडित नें बतलायौ। पंडित ते पूछ कें वो आदमी अपने घर आयौ और अपने मन में विचार करौ कि आजु शनीचर आवैगौ। फिर वो आदमी अपने घर से चल दयौ तो जल समुन्दर में जा धसौ, इतने में शनीचर देवता भैंसा-पड़ा पर चढ़कर तेल ते नभे, सिन्दूर का बेंदा, हाथ में सोटा लैकें आये और वा आदमी से जो जल में ठाडौ ओ सो वासे बोले कि हम अब तो पै आवेंगे। तो पानी में आदमी बोलौ कि आजावौ, मेरो तुम कहा करौगे—इतनी कह कें पट्ट पानी में गोता लगाइ गयौ। और एक मिनट डूबौ रहौ। तो फिर उछरौ तो बोले शनीचर देवता कि मैं तेरे ऊपर आगयौ—और आदमी बोलौ मेरौ कहा कर लयौ। तौ शनीचर बोले कि देखि अपने बदन (शरीर) माऊं-तौ देखें तौ शरीर कालौ है गयो है। भगवान मैं नहीं जानतो कि सच ही शनीचर आजातु है। अब मैंने जानी है कि शनीचर आइ जातु है। सो भाइयो जा काऊ पै शनीचर आवें तो सब कोऊ शनीचरा नाहिबें जइयौ। जा विध से शनीचर नहाते हैं उसी तरह से शनीचर नहाना चाहिए। शनीचर से भगवान सबको दूर बचावें।

३५. १ (७-१) शनिश्चर देवता की कहानी के दो और रूपान्तर ब्रज में मिलते हैं। वे यहाँ दिये जाते हैं :

३५ : १ (७-१) शनिवार की कहानी—२९

एक ब्राह्मण था। कहीं परदेश कमाने जा रहा था। रास्ते में शनिश्चर ब्राह्मण का भेष धर के आ रहे थे। ब्राह्मण ते कही तुम कहाँ जा रहे हो। ब्राह्मण ने कहा कि परदेश कमाने जा रहा हूँ। शनिश्चर ने कही मत जाओ। तुम्हारी पैदावार कहीं नहीं होगी। ब्राह्मण

ने कही कि शनिश्चर मेरो कहा करैगो । तुम को बहुत हानी होगी और शरीर से भी कष्ट रहेगा । ब्राह्मण ने कही कि शनीचर मेरा कुछ नहीं करेगा । हम जंगल में जायके बैठ जाँयगे । तो हमारे शनिश्चर कहा करैगो । ब्राह्मण लौटि आया और आइ कें घर अपनी स्त्री से कहा कि मैं तौ जंगल में भगवान कौ भजन करने जाऊँगो । ब्राह्मण चला गया हौर उसने धूनी रमाली । भजन करते करते कुछ दिन बीते । एक रोज उसी नगर के राजा पै ढाई घड़ी का शनिश्चर आया । शनिश्चर ने चोर बन के राजा के चारों लड़कों का सिर काट दिया जहाँ पर वह ब्राह्मण भजन करने बैठा था उसके चारों ओर कटे हुए शिर रख दिए । उसकी आँखें बंद थी क्यों कि भगवान के भजन में था। राजा ने कहा कि इस शहर में कौन है जिसने कि मेरे चारों राजकुमारों के शिर काट दिये हैं । मेरी सीमा के भीतर गैर आदमी नहीं आ सकता है । सिपाही देखने निकले, देखते देखते उसी जंगल में पहुंचे जहाँ कि ब्राह्मण भजन कर रहा था । सिपाही ने कही कि अरे दुष्ट तू कौन है जोकि चारों राजकुमारों के शिर काट कर झूटी समाधि लगाकर बैठा है । सिपाई ने कुर्रा लगाए । ब्राह्मण एकदम चौंक पड़ा और कहने लगा कि मैंने किसी का सिर नहीं काटा है, क्या झूटी चोरी लगाते हो । चारों सिपाहियों ने मसतक उठाये, ब्राह्मण पकड़ा और कहा कि चलो राजा के पास । सब तुम्हारा झूट और सच निकाला जाय । राजा के पास लाये । राजा से कहा कि महाराज एक जंगल में चारों शिरों को लेकर यह आदमी बैठा था हमको देख कर झूटी समाज लगा के बैठ गया । ब्राह्मण अपने मन में सोचने लगा कि देखो मैं हर भजन में था लेकिन मैं इस दिशा नें घेरा । घर में रहता तो न जाने क्या दिशा होती? राजा ने कहा कि तुम ने बच्चों के शिर क्यों काटे । तुम कहाँ पर रहते हो, ब्राह्मण ने कहा कि मैं आपकी बसती में रहता हूँ । मैंने बच्चों के शिर नहीं काटे हैं, मैं तो आफती के मारे जंगल में भजन करने गया था । मोपै तो ढाई साल के लिए शनिश्चर आया है । इस शनिचर की यह दशा यह दिन दिखा रही है । राजा ने कहा कि बेईमान तू झूट बोलता है, इसको फाँसी दी जाये । फाँसी के लिए जो गये फिर शनिश्चर ब्राह्मण का भेष धर के आया और कहा कि श्रीमान जी इस ब्राह्मण को फाँसी न दी जाये इन शिरों को बच्चों के धड़ से लगा दीजिये । राजा ने शिर लगाये । राजकुमार जिन्दे हो गये । राजा ने कही ये क्या बात है । पंडित ने कही कि इसमें तो ब्राह्मण का कोई दोस नहीं । आप पै ढाई घड़ी का शनिश्चर आया । ब्राह्मण पर ढाई साल को आया । शनिश्चर ने शिर काटे हैं और ब्राह्मण को कलंक लगा है । ब्राह्मण फाँसी से बच गया और अच्छी तरह से अपने घर चला गया ।

३५ : १ (७—२) शनिश्चर देव की कहानी—३०

एक बामन देवता ओ बाते शनिश्चर देवता नें कही मैं तौ तोएं लगुंगो । बानें कही महाराज कितने दिन कूं लगौगे । देवता नें कही बारह बरस कूं । बामन नें कही महाराज बारह बरस तौ मेरे बस की नायें । तौ एक बरस कूं लगूं, बानें कही नाएँ, तौ सवा महीना कूं लगूं महाराज । फिर शनिश्चर नें कही तौ कल सवा पहर कूं तो जरूर लगूंगो । बामन नें हामी भर लई । अच्छौ महाराज । सवा पहर कूं लग जइयो । सवा पहर दूसरे दिन जमुना जी के किनारे

भजन करबे बैठ गयौ। सोच लई भजन करते-करते सवा पहर जायबे में कहा लगै सो निकरि जाइगौ। बाई दिना राजा के दो कुमर कहुँ निकरि गए, पाए ई नाँ। सब जगह ढिंढोरा मच रह्यौ। इतने में जमुना जी में दो तरबूज बहे आ रहे। बामन के पास आय गए। बानें सोची इन तरबूजन नें ले लें औ बाल बच्चेन के काम आमेंगे। झट्ट निकारि कें खोंटून के नीचें धर लिए। इतने में शनीचर के लगबे कौ सवा पहर शुरू होने लग्यौ सो उन दोनूं तरबूजन के दो मूंड़ बन गए। दोनूंन के मूंह राजा के दोनूं कुमर, के से ई ए अब म्हाँ राजा के सिपाही उन कुमरन नें ढूँढ़ते म्हांई आय पहुँचे। जब बु दोनूं मूंड़ देखे तो झट्ट बामन ऐ गिरफ्तार कर कें राजा के पास लै गए कि सरकार याई नें आपके कुमर मारे एँ। झट्ट राजा नें कही अच्छौ याकूं सूली पै लटकाइ देऔ। सूली पै लटकायो तौ सूली नाँइ लगी। राजा ते कही महाराज सूली तौ नाँ लगे। बानें कही फाँसी देऔ। एँ फाँसी ऊ नाँय लगी। तीनों पोत फाँसी पै ते बच गयौ। इतने ई में अब शनीचर कौ सवा पहर बीति गयौ, पूरौ है गयौ। झट्ट इतने ई में राजा के दोनूं कुमर घोड़ान पै चढ़ कें आइ गए। झट्ट राजा नें देखत खेम कही अरे रे बा बामनें छुड़इयो कहूं मार तो नायँ दियौ। छुड़ाय कें हियाँ बोल लाऔ। झट्ट राजा के नौकर बामन ऐ बोल लाए। राजा नें कही महाराज मैंने बड़ौ अपराध कियौ सो क्षमा करौ। बा ब्राह्मन नें कही राजा तुम्हारो यामें कछु दोष नाएँ। मो कूं तौ सवा पहर कूं शनीचर लग्यौ औ, बाई नें मोय ये खेल खिलायौ। अब सवापहर पूरौ है गयौ। राजा नें सुनकें बा बामन कूं खूब माल दियौ। बामन खुश है कें अपने घर आय गयौ।

३५.१ (७-३) हर शनिश्चर को नहाने के पीछे पीपल को जल चढ़ाने की कथा।

दो०—पीपल हम पूजन चले, अपने कुल की लाज।
पीपर पूजत हरि मिलें एक पंथ दो काज।।

हर शनिश्चर को सूरज और चन्द्रमा पर जल चढ़ाते वक्त की कथा।

आकतर सासुरी ढाकतर ननसाल, चन्द्रमा सूरज जल चढ़ाऊं जियौ देवर भरतार

३५.१ (८) इतवार की कहानी ७*—३१

इतवार के दिन सूर्यनारायन हरीखाने जाते, तो दो लाल तो अपनी मैइया कूं दे देते, और एक लाल रोज सब प्रजा को देते, तो विन दोऊ लालन में से सास के हाथ पड़ते तो सास खाजाती और बहू के हाथ पड़ जाते तो बहू खा जाती, भिखति एकऊ नाँई वुई भूंकी की भूकी रह जातीं दोनों। और एक लाल में से सब प्रजा भुनाती नोट रुपया पैसा गेहूं व अन्य सामान, चावल चीनी सब आनन्द की चीजें लात पीमतें। सब आनन्द करतें। सूर्य नारायन शाम कूं आये। तो सूर्य नारायन की मइया बोली कि बेटा तेरे राज में हम बहुत दुखी हैं। दों मइया—एक लाल प्रजा ऐ देतूं तो सब चैन उड़ा रहे हैं और तुमको दोनों बीच दो लाल देतूं तोऊ दुख पारही हैं। कैसें खातें तुम। ऐसे खातें बेटा, कि दो लाल मोय मिले तो मैंने खा लये और दोऊ लाल वापै पहुँचे तो बानें खा लये। तो सूर्यनारायन बोले ऐसें नहीं खाते हैं। तवही तो भूकी मरती हो तुम। ऐसौ करौ तुम दो लाल भुनाओ नोट करो रुपया करो बाग लगाओ,

कुंश्रा, खुदाश्रो, खेती करौ, भागवत करौ श्रौर सपता करौ, पुन्न करौ, भूके टूटे जिमायौ, सदावृत बाँटौ, गरीबन जिमाश्रो, कपड़ा देउ जाड़े में, कम्बल पुन्न करो गरीबन । तो सूर्य नारायन की बहू बोली कि सपता हम सबेरे ही करेंगी । सूर्य नारायन बड़े खुश, कही सबेरे से ही करौ हमनों मनें करतई । तो सबेरे से सपता शुरू कर दई । सात दिन बाद ब्रह्म भोज् करौ । दुनिया सबेरे से जिमाई सब गरीब श्रमीर सब बस्ती शाम तक जिमाई तो सूरजनारायन नहीं श्राये–श्रपने बाने ते एक श्रतीत बुड्ढो बनकर पाट बाँधकर हाथ में लुकटिया लेकर सूरजनारायन श्रपने घर पर पधारें श्रौर मइया से बोले कि हम बहुत जोर से भूके हैं श्रौर बड़ी दूर से चल कर श्राये हैं तू हमनि जिमाइव तो सूरज नारायन की बहू बोली सास ते कि जाय जिमाइदेऊ जि भूको हैं । तो जू वे (सूर्य नारायन) श्रा जायगें फिर हम सब पीछे भोजन कर लेंगे । बिनें जिमाय कें । तौ बुड्ढो बोलौ कि ऐसें मइया नहिं जेमंगो । में तो सूरजनारायन की थाली में जेमंगो । तौ नूँ मइया बोली जा निपूते तोइ सूर्यनारायन की थाली में तौ जिमाऊंगी ही हूं तौ—तोइ जिमावति नाँऊ मेरौ बेटा श्रावत ही होगौ, तौ बहू बोली सास ते जिमाइ देउ थाली में ही, थालीएं माँज धोय कें धर देगें, बिन्नें का खबरिऐ को जेंगयौ ए जामें । समपूर्ण सपता है जागी श्रौर भूकों चलौ गयौ तो हमारौ सब पुन्न नष्ट हैजागौ फिर जिमाइ दयौ थाली में । खा पी कें निरचू है गयौ—तो साधू बुड्ढो बोलो कि माता श्रब कहाँ जाँगें हमतो यहीं सूरजनारायन की सेज्जा पर सोएंगे । तौ मइया बोली सूर्यनारायन तूई भयौ जातुऐ कै सूरजनारायन की सेज्जा पर सोएंगौ सूरजनारायन श्रब्हाल श्रावतुऐ सो तोय मारंगौ पीटंगौ—खाट पर से ढकेल देगौ । बहू बोली—कि सो रहेन देऊ । श्रब रात में कहाँ जाइगौ एक करवट ते धरौ रहैगौ, मेरौ कहा लेगौ । तौ बहू गरबतो धारण है गई । तो सवेरे ही ᳚—बुड्ढो—चलो गयौ, तौ शाम को सूरजनारायन श्रपने घर श्राये श्ररे श्रम्मा तेरो खूब तारीफ सुनी कै तेंने खूब जग्य सपता करी, थोरौ घनों परसाद सपता कौ होय तौ हमनकूं दे देऊ, सूरजनारायन की बहू सूरजनारायन की थाली में धर कें भोजन लाईं । तौ सूरजनारायन बोले जा मेरी थाली में तौ कोऊ जें गयौ है । मइया बोली तेरी बहू ऐ खबरि होगी । बहू बोली एक श्रतीत साधू भिकारी श्रायौ सो बो जें गयौ ऐ—क्योंकि तुम्हारी थाली की कही श्रौर काऊ की में जेंमतु नाँश्रो—श्रौर घर द्वार से भूको जातो तौ हमारी सपता निष्फल हो जाती तासूँ जिमाइ दयो । तौ सूरजनारायन बोले श्रपनी बहू ते कि जिमाइ तौ दयौ श्रौर कछु बात तुमनि से तौ नां कही । तौ बहूश्रल, काँपति-डर से कहन लगी श्रौर तौ मुझसे कछू नां कही । तौ सूरजनारायन इतने में हँस मुसका कर बाहर चले गये । तौ बस्ती की श्रौरत श्रापस में कहन लगीं कि सूरजनारायन ऐसौ तपधारी है । बाकी बहू के पेट में गर्भ रह गयौ ऐ । तौ सूरजनारायन की मइया बोली सूरज-नारायन ते कि बेटा बड़ौ गजब भयौ ऐ, तेरी बहू गर्भवती है—तौ सूरजनारायन बोले कोऊ बात नाँहिं मैया, काऊ बात की चिन्ता नाँयें । जो, सूरजनारायन बोले कि मेरे श्रंश ते होगौ तौ, सात कोठरी भीतर बन्द कर दीयौ तौ ताले सातों खुल जायेंगे श्रौर श्रन्धेरे कौ उजेला है जाइगो फक्क । जो श्रौर के श्रंश कौ होगौ तौ सात कोठरी भीतर बो मर जायगा । सो रानी स्त्री को सात कोठरी भीतर यथासमय पर ताले भीतर बन्द कर दिया ।

फिर सूरजनारायन की स्त्री के पुत्र पैदा भये जैसें ई—सातों ताले टूटते चले गये। भक्क उजीते है गये अंधेरे कौ। सूरजनारायन की मइया बोली। जैसें बेटा नें कहीं वुही बात बैठी। सूरजनारायन के पुत्र ही थे। यह तो सूरज नारायन बुई साधु बनकर परीक्षा लेवे हमारे घर पर आये। शाम सूरजनारायन घर पर आये तो उनकी मइया बहुत खुशी भई और बेटा को देखकर अति खुशी हुई तो सूरज नारायन बोले कहि मइया कैसे हालियत हैं। तो मइया बोली जैसें तुमनि कही वैसें ही हालत है। सूरजनारायन बोले मेरी सब दुनियाँ निगाह में है सब पर नज़र है। अगर इतना ही तेज़ न हो तो मेरी को महिमा करें। इसीलिये सूरजनारायन सोलह कलाधारी कहलाते हैं।

३५.१ (८—१) सूर्यनारायन की इसी कहानी के कई संस्करण मिलते हैं—

एक इस प्रकार है—

सूरज देवताए। उनकी मैया ई और बहू ई। सूरज देवता इतनों ई तौ सामान सबरी दुनियाँ कूं देए और इतनों ई उन अपनी मैया बहू दोन कूं देए। तौऊ जब बु साँझ कूंघर आमते तौ उनकी मैया कहे ई बेटा हमतौ भूखे रहे। सूरज जी नें कही जिका मैं जितनों सामान सबरी दुनियाँ कूं दऊँ उतनों तुम दोनोंनें कूँ दऊँ तौऊ तुम भूखी रहौसो या लिए दूसरे दिन सूरज जी पाँच कन्टू ले आए उन्ने अपनी मैया ते कही मैया इन कण्टूनें बहू रखो देई को दै दीजो सो वु घर घर खेल्यावैगी। मैया नें कण्टू बहू ऐं दै दिए सो रखा देई घर घर खेलने गई सबते कहै कोई कण्टू खेल लेओ। कोई कह दे हमतो चौका बासन कर रही हैं। कोई कछू कह दे। सब पै है आई। कोई नांय खेल्यी फिर वापिस अपनी सास के पास आई। सासजी मैं जाके पास खेलने गई बुई अपने घर के काम में लग रही। हमऊ सब दुनियाँ की तरैं पीसौ पोयौ करिंगी और रोटी खाओ करिंगी अब तौ सब दुनियाँ की तरैं काम करन लगीं। अब तौ उनकौ नाज बढ़बे लग्यौ बीतेई नाँ। अब सूरज नें पूछी मैया अबतौ तुम भूखी नाँय रहौ। सूरज की माँने कही बेटा अब तो नाज कहूँ समाइ नायें हम तौ अब जज्ञ करिंगी सूरज जी ने कही कर मैया जज्ञ। मैं नांई करूँ का। झट्ट मैया नें सब कें न्यौतौ भिजवा दियौ। जो आवें वाई यें जिमाय दें। या तरियाँ संजा है गई। दिन मुँद गयौ। सूरज घर आये ई नाँ। जब रात है गई तो सूरज जी बाबा जी कौ भेष बनाय कें घर आए। माई हमकूँ भिक्षा देओ। झट्ट उनकी मैया जेंमे कूँ ले आई। बाबाजी नें कहीं मैं तौ सूरज जी की थारी में जेंउंगो। मैया नें कही जा निपूतें सूरज जी की थारी में का तो बाबा जी ऐ जिमाउँगी। झट्ट सूरज जी की बहू नें कही सास जी जिमाय देओ। थारै धो पोंछ लिगी। झट्ट थार दै दियौ। जेंमें। फिर कही मैं तो हियाँई सोउँगो। मानें कही नायँ नायँ अपने स्थान पै जा। बहू नें कही सो जान देओ जी पौरी बौरी में। बाबा जी नें कही मैं तो सूरज की खाट पै सोउँगो। मानें कही नाँय नाँय जा अपने घर कूँ पलंग पै ई सोमन कहै। बहू नें कही सो जान देओ सास जी। कहा बिगरै। सोय गए। रात कूं बाबा जी कें दरद उठ्यौ, मर्‌यौरे चल्यौरे। सास नें कही मैंने तो ते पहलें ई नाँई करी, ला कोई चूरन होइ तो दै आऊँ। मैया चूरन देवे गई। बाबाजी ने कहीं मैं तो सूरज की बहू के हाथ ते चूरन लूँगो।

जा निपूते आधी रात पै बहू हियां आवैगी, लै। फिर बहूनें कही सासू जी दूर ते ई दै आउँगी। झट्ट दंबे गई। वाके आमत खेम सूरजजी नें अपनी किरण फैला दयी और बाबाजी ते सूरज जी बन गये। बहू नें कही महाराज तुमनें इतनों छल क्यों कियौ। सूरज जी नें कही तुमनें जज्ञ करी ही नां, सो मैंने तिहारौ मन देख्यौ कि तुमने जज्ञ झूठे मन तें करी कै सांचे ते। रात भर सूरज देवता म्हांई सोए। सबेरें चलबे लगे। बहू नें कही अपनी मैया ते मिलकें जइयों नई वे किहिंग्गीं जाने कौनो। झट्ट सीनें बोल लाई। मांनें कहो बेटा तेंने बड़ौ छल कीयौ। उननें कही मैया मेंने तौ तुम्हारी परीक्षा लई कि तुमनें जज्ञ में आदर सत्कार कैसौ करयौ।

३५:१. (८-२) दूसरा रूपान्तर इस प्रकार है—

सूरज नारायण जी और उनकी बहू माता जी थी। एक दिन सूरजनारायण जी नें अपनी माँ से कहा कि जा को डोलने भेजौ कर। माँ ने कहा बहू तू पार परोस में डोल आयौ कर। वहू गई सो कोई चौका कर रही और कोई बर्तन मांज रही और कोई गेंहूँ समार रही थी। बहू ने घर आय कर सास से कहा कि अम्मा हमहूँ काम करौ करिंगे सास ने कहा कि अच्छा बहू सब काम करौ करि। फिरि कातिक नहाई। बहू को कातिक पूरौ भयौ सो राईदामोदर को जिमा रही थी। इतने में एक साधू आया और कहा कि मइया रोटी दे दें। बुढ़िया बोली कि बाबा ले। साधू ने कहा कि मइया ऐसे नहीं लुंग्गो। तो कैसे लेगो ? कि सूरज नारायण की चौकी पै नहाउँगो और उनके थार में भोजन करुंग्गो और उनकी खाट पै सोउँगो। बुढ़िया नें कहा कि वा रे बाबा तू मेरे लाला की चौकी पै कैसे नहावेगौ मेरौ तौ लाला किल्लावेगौ। और कैसें तोय लाला कौ थार दुंग्गी मेरो लाला काये में खायेगा। और कैसें तोय खाट दुंग्गी मेरौ लाला मोय घर में न रहन देगौ। रात हुई उसने कहा कि में कहाँ सोउँगो। सो बु बहुत मचला कि मैं तो सूरज नारायण जी की खाट पै ही सोउँगो। उस बुढ़िया नें बतला दी। बारह बजे सो उस साधू नें हल्ला मचाया और कहा कि मेरे पेट में दरष है रयौ है। सो मइया गई और कहा कि सूरजनारायण जी की बहू को भेज दे। फिर बहू गई। वानें उसके पेट पै हाथ फिराया सो उसके पेट में बच्चा रह गया। एक महीने से नौ महीने हो गये फिर उसके पुत्र पैदा हुआ। एक दिन सूरजनारायण जी नें अपनी अम्मा से कहा कि अम्मा यह लड़का मेरा नहीं है। क्या कोइ साधू घर आया था। अम्मा नें कहा कि भइया एक दिन एक साधू आया सो वानें कही कि मैं तो सूरज नारायण जी की खाट पै सोउँगो सो फिर सोय गयौ और फिर बारह बजे कही कि मेरे पेट में दरध है रयौ है सो बहू को भेज दे सो मेंने बहू भेज दी सो मोय तो खबरि नाँय कै ये तेरौ ऐ या वाकौ ऐं। सूरजनारायण जी नें कहा कि मेरौ होगौ तौ गंगा सागर की धार में से निकल आवेगौ और वाकौ होगौ तो नहीं निकरेगौ सो वह निकल आया। सूरजनारायण जी नें कही कि इतवार बर्त सब स्त्री रहा करें। सो सब रहने लगीं।

३५:१. (८-३) इसी कहानी का जो रूप भारद्वाज जी ने दिया है उसमें आरंभ का अंश तो उक्त कहानियों जैसा ही है पर अंत का भाग कुछ भिन्न है। यह अन्तिम अंश इस प्रकार है—

बोला—सूरज देवता की बहू मेरा पेट सेके, तो मैं अच्छा होऊँ। बुढ़िया बहुत गुस्सा हुई—लो, सुनो इसकी बात। बहू बोली—सास, बुड्ढा आदमी है, क्या हरज है, सेक आऊँगी। वह जो वहाँ गई, तो छः महीने की रात हो गई। सूरज नारायन प्रकट हुए। माँ बोली—बेटा, तुम्हें कौन सी चोरी थी जो ऐसे आए? बोले—मा, बहू को गर्भ है इसे निकालना मत, और चले गए। बहू को छः-सात महीना हुए तो सास बोली—मेरी सुसरी जाने कौन का पेट ले आई है और घर से निकाल दिया। बहू एक कुम्हार के यहाँ जाकर रहने लगी। उसकी स्त्री भी पेट से थी, दोनों के एक साथ एकसी सकल के लड़के हुए। सूरज देवता का लड़का जो था वह तो सोना हँगै करे था, और दूसरा पाखाना। जब कुछ दिन बीत गए तो सूरज देवता घर आए, और बोले—मा, मा बहू कहाँ है? कि बेटा न जाने सुसरी कौन का पेट ले आई, मैंने निकाल दी तो वह कुम्हार के यहाँ जा रही ऐ। उन्होंने बहू बुलाई। कुम्हारी ने अपना बेटा तो दे दिया, और लोभ से उसका रख लिया। सूरज देवता ने उसे करुए की ऐंटनी में निकाला, उससे न निकला गया। फिर बदल कर मँगाया तो दूसरा छः दफे तो निकल गया। सातवीं बार गलती से एक आँख फूट गई। इसलिये उसका नाम सुक्कर (शुक्र) देवता रक्खा और वरदान दिया कि जब तुम डूबोगे (अस्त होगे) तब क्वारियों के न तो ब्याह होंगे न ब्याहियों के गौंने, न और कोई शुभ काम होगा। कलियुग में तुम्हारी मानता होगी।

३५:१. (८-४) सूर्यनारायण की एक कहानी श्री चुन्नीलाल शेष जी ने भी लिपिबद्ध की है। वह उपरोक्त कहानी से भिन्न है—उसका रूप यह है।

"एक डोकरी सूरज नारायन को बर्त रहौ करै ई, ऐंतवार की ऐंतवार, पार-परोसिन सें दूध-दही लै आऔ करै ई, वासों अपनों पालन कर लेई। एक दिना काऊ पार-परोसिन नें कछू नाँय दियौ, सो भूखी-प्यासी ई सोइ गई। रात कूँ आए सूरज भगवान—कै डोकरी, सुखी कै दुखी। डोकरी बोली—महाराज, सुखी काए तें। नित्त तो पार-परोसिन दूध-दही दें दई। आज काऊ नें कछू नाँय दियो सो भूखी प्यासी परी ऊँ। सूरज भगवान बोले—तू कहै तो तेरे गैया बाँध जाऊँ। डोकरी बोली—भगवान जाते का बड़ी बात ऐ। सूरज भगवान गैया बाँध गए, सो बाहर बंधी रहै ई। सो सोने कौ चोथ हँगो करै ई। सो पार-परोसिन लेई और उठा लै जाई। एक में दूत लगाए—डोकरी, तेरी गैया सोने को चोथ हँगे। सो डोकरी खूब मालदार है गई। पार-परोसिनें राजा ते दूत लगाए। राजा ने अपने नौकर भेजे। नौकर नें डोकरी ते कही—डोकरी, जि गैया तोए न सोहे, जि तो राजा महाराजन कूँ ई सोहे। डोकरी बोली—लै जाओ, महाराज। राजा कें आइकें गैया ढाड़ेई ढाड़ हँगवे लगी। बास के मारे ठड़ौऊ न भयौ जाइ। राजा ने डोकरी बुलाई—कै डोकरी जादू कियौ कै टौना कियौ। हमारे तो जि ढाँडे हँग रई ऐ। तेरें घर सोने चाँदी को चोथ करौ करै ई। जि गैया तेरे काँते आई ऐं। डोकरी बोली—महाराज मोए तो जि सूरज भगवान दै गए ऐं। राजा बोल्यौ—डोकरी मैया, जाए तू लैजा, जि गैया तोकूँ ई सोहे। डोकरी गैया ए लै आई और वु फिर सोने-चाँदी कौ चोथ हँगवे लगी। सो राजा नें नगर में डोंड़ी पिटवा दीनी कै ऐंतवार की ऐंतवार सब कोई सूरज नारायन को बर्त करौ करें। (ब्रजभारती, वर्ष १६ अंक २)

३५.१ (६) कार्तिक—७ कहानी (१) पहली—जी बार के साथ चलती है—

सास कार्तिक न्हाती, सो बहू नें कही कि अम्मा हमऊं न्हालें तुम्हारे संग सहारे में, सो सास बोली तू तौ नई नौवटी बहू ऐ तू अबही मत न्हाय, कुआ पर कहा जागी न्हावें। तौ सास सखी के संग कुआ पैं न्हावें जाती और मन्दिर पूजा करबें जाती तौनूं बहू मही चलावति जाती। सास कह जाती बहू सिब काम करकें तैयार पईयो। ताँई बहू खटौटी में पानी कर न्हाय लेती—और कहती कि मन चंगा, खटौंटी में गंगा और मांटी के राई-दमोदर बना लेती और पटा पर रख लेती और कहानी कहती जाती और मही चलावत जाती, सासु के डर के मारे। एक समय बहू मही फेरति जाति और कहानी कहति जाती तौ नूं सासु आगई। सासु बोली बहू ते कि तू कहा—टुटुरहा रही है। तो बहू नें डरके मारें राईदमोदर मही की बिलोवनी में पटकि दये। बहु मही करकें ठाड़ी निच्चू है गई, आई परौसिन। भैंना नेंक मोऐ मही दें दें। सासु नें मही दयौ सो बिलोमनी में रा दमोदर की खड़र बड़र भई और वे सोंने के हो गये सासु ने देखे ऐ बहू कौंन के चुरा लाई है। हूँ तो चुरा नौं लाई काऊके, तुम न्हावे जाती तो मेंहूँ खटौटी में पानी कर न्हा लेती—मन चंगा तो खटौटी में गंगा। हूँ मही करती जाती राई दमोदर बना पटा पर घर में हूँ कहानी कहती जाती व सुनत जाती। जैसेई आप आवत सुनीं जैसे मेंने तुम्हारे डर के मारे विलोवनी में डार दये सो मट्टी के बनाये सो यह सोने के हो गये। यह भगवान कृपा से। सासु बहुत हँसी खुशी हुई, सासु बोली बेटा तू बड़ी ग्यान मान अच्छी है तू न्हाय लई तो आई पूनों दोनों निं राई-दमोदर को पंडित और पंडितानी—सब तरह के भोजन कराये, और कोरे वर्तन दये और वस्त्र, दान दक्षिणा दये—संकल्प करायौ—सब से निवृत हो गई दमोदर-यानी पंडित् पंडितानी अपने घर कूं गये।

३५:१ (६-१) कार्तिक की अन्य कहानियाँ—३६

(१)

एक राजकुमारी अत्यन्त रूपवती थी। वह नित्य कार्तिक स्नान करने जाती। मार्ग में एक मुगल-पठान रहता था। उसने उसके रूप की बहुत प्रशंसा सुनी थी। वह यह चाहता था कि रात्रि के पिछले पहर में जब वह राजकुमारी कार्तिक स्नान के लिए जाती है, उसे देखे। पर जिस समय राजकुमारी के जाने और लौटने का समय होता, उसे नींद आ जाती। उसने उस जागने के लिए अपनी आंखों में मिर्च भर लीं, उस रात भर तो वह तड़पता रहा, पर चार बजे के समय जैसे ही कि राजकुमारी के आने का समय हुआ, उसे ठंडक पड़ गयी, और वह सो गया। उसके पास एक तोता था। राजकुमारी आयी और उसने पूछा—

तोता मेरे देवर
तेरे पांयन बाजें नवर
सोवै कै जागै।

तोते ने कहा—"सोवै" निश्चिन्त होकर जाओ। राजकुमारी गयी। स्नान करके लौटने पर पुनः उसने पूछा—

तोता मेरे देवर
तेरे पाँयन बाजैं नेवर
सोवै कै जागै।

तोते ने कहा—सोवै। निश्चिन्त होकर घर जाओ। राजकुमारी चली गयी। तब पठान की आँखें खुलीं—उसने पूछा—

तोता मेरे भाई
राजकुमारी आयी।

तोते ने कहा—हाँ आयी और गयी भी।

तब मुगल पठान ने दूसरी रात को जाँघ में चीरा लगाकर नमक भर लिया। रात भर तो तड़पता रहा—हाय मरा। हाय मरा। पर राजकुमारी के आने के समय फिर ठंडक पड़ गयी, फिर नींद आ गयी। राजकुमारी आयी तोते से पूछा—

तोता मेरे देवर
तेरे पाँयन बाजैं नेवर
सोवै कै जागै।

तोते ने कहा—सोवै। राजकुमारी चली गयी। नहा कर लौटी, फिर तोते से पूछा और चली गयी।

इस बार मुगल पठान ने बाँह में चीरा लगाया। नमक-मिर्च भरा रात भर कराहा। राजकुमारी के आने के समय फिर सो गया।

इसी प्रकार कार्तिक के पंचभीक (अखीरी पाँचों दिन) समाप्त हो गये। तब मुगल पठान ने समझ लिया कि लड़की में अवश्य सत है। उसने कहा—पर मैं देखूँगा उसे अवश्य। उसने उसे धर्म बहिन बना लिया। बहुत सी अमूल्य भेंट लेकर राजा के यहाँ गया। राजा से कहा वह मेरी धर्म बहिन है, उसे बुलाइये, मैं उसे यह भेंट दूँगा। उस राजकुमारी ने भी आकर उसे धर्म भाई मान लिया।

(२)

३५:१ (६-२) बुढ़िया सास-और उसकी बहू थीं। सास कार्तिक-स्नान करती। बहू को सबेरे-सबेरे अँधेरे ही सास की यह खटपट बुरी लगती। उसने अपने पति से कहा कि इनके लिए एक झोंपड़ी यमुना के किनारे ही बनवा दो। वहीं पड़ी रहेंगी और नहाती रहेंगी। सास ने भी कहा—हाँ बेटा, बहू ठीक कहती है। मुझे तू वहीं झोंपड़ी बनवा दे। लड़के ने एक झोंपड़ी बनवा दी। उसकी माँ वहाँ जाकर रहने लगी। फिर उसने सोचा कि माँ के लिए खाने को भी तो वहां पहुँचाना चाहिये। वह घी, बूरा, सूजी, मेवा, आटा लाया और बहू से कहा कि माँ के लिए लड्डू बना दो। बहू ने वह सब सामान तो घर में रखा। भुसी-चोकर के लड्डू बना कर एक घड़े में सरिया से बंद कर सास के पास

पहुँचवा दिये। प्रातः कार्तिक स्नान करके जैसे ही वह बुढ़िया झोंपड़ी में आती कृष्ण आकर उससे कहते—

टांटरियां सरकावै
कान्हा लाड़ू पावै

बुढ़िया उस घड़े में से एक लड्डू निकाल कर कान्हा को दे देती और स्वयं रेती-पत्ते वगैरह खाकर काम चलाती। पूरा महिना हो गया इसी प्रकार। तीस ही लड्डू थे। तीसों दिन में कान्हा खा गये। अब उन्होंने फिर लाड़ू माँगा—

टांटरिया सरकावैं
कान्हा लाड़ू पावैं

बुढ़िया ने कहा—अब क्या लड्डू धरे हैं। यह सुनते ही कान्हा ने एक लात तो बुढ़िया में जमाई, वह बारह वर्ष की कन्या बन गयी। एक लात जमाई घड़े में, वह सोने का हो गया। एक लात जमाई झोंपड़ी में, वह महल में बदल गयी। बुढ़िया वहाँ मजे में रहने लगी। अब बहू को ध्यान आया कि कार्तिक तो कब के खतम हो गये। बुढ़िया नहीं आयी। बहू ने अपने लड़कों से कहा कि अपनी दादी को तो देख आओ। लड़के गये और लौट आये। बोले—वहाँ न तो दादी है न झोंपड़ी है। एक बड़ा महल खड़ा है, उसमें एक लड़की रहती है। तब बुढ़िया का लड़का गया। उसे देखकर उसकी माँ ने पूछा—क्या देखते हो लाला? लड़का आश्चर्य में पड़ गया। यह लड़की मुझे लाला कहकर पुकार रही है। तब उसकी माँ ने सारा हाल बताया। बड़ी धूमधाम से लड़का उसे घर लाया। बहू इस आश्चर्य को देखकर सोचने लगी मैं अपनी मां को भी बुला के कार्तिक स्नान कराऊँगी। दूसरे कार्तिक में उसने अपनी मां को बुलवाया, यमुना किनारे झोंपड़ी बढ़िया सी डलवादी। घी, मेवा, सूजी के बढ़िया लड्डू बनवा कर घड़े में बंद करके भिजवा दिये। उनकी माँ न नहाती न धोती, सुबह देर से उठती और बिना हाथ-मुँह धोये ही लड्डू खा लेती। आते कान्हा कहते—

टांटरिया सरकावैं[१]
कान्हा लाड़ू पावैं

वह बुढ़िया कहती है—

घी के घरके, जमाई की कमाई के
कान्हा तो कूँ कै मो कूँ,

कान्हा बिचारे यों ही चले जाते। आखिरी दिन आ गया। लड्डू समाप्त हो गये। कान्हा ने फिर कहा—

टांटरिया सरकावैं
कान्हा लाड़ू पावैं

---

१. भारद्वाज जी ने कासगंज की ओर की जो कहानी दी है उसमें "सरकावै" के स्थान पर 'खड़काऊँ' है।

बुढ़िया ने कहा—

घी के घर के जमाई की कमाई के
न कान्हा तो कूँ न मो कूँ ।

कान्हा ने एक लात जमाई बुढ़िया के वह सूअरिया बन गयी । घड़े में लात जमाई, वह टूट-फूट के बिखर गया । एक झोंपड़ी में जमाई, उसका फूँस उड़ता फिरा । उसकी लड़की ने अपने लड़के को नानी को देखने बड़े चाव से भेजा । लड़कों ने आकर सूचना दी कि वहाँ न तो नानी है, न झोंपड़ी, न घड़ा । एक सुअरिया घुरघुर करती घूम रही है, फूँस उड़ता फिर रहा है, घड़े के टुकड़े इधर-उधर पड़े हैं । वह गयी—अपनी मां को सूअरिया के रूप में देखकर दुखी हुई । घर लायी । पंडितों से पूछा—उन्होंने बताया कि अगले कार्तिक में यह विधिवत् स्नान करे, दान-पुण्य करे तो इस योनि से छूटे । आया कार्तिक, पर उससे नियम से स्नान नहीं हो सका । उसने अपनी लड़की से कहा—यह सब मुझसे नहीं होता । मैं सूअरिया ही भली । (भारद्वाज की कहानी इस आगरा-मथुरा की कहानी से कुछ कहीं-कहीं ही भिन्न है ।)

(३)

३५:१ (९-३) एक बुढ़िया थी । वह नौ कातिक नहा चुकी, सब देवताओं के लिए उसने पुण्य-धर्म किया । पर वह धर्मराज का सोटा-टोपी पुण्य न करती । वह मरी, तो धर्मराज ने बैकुंठ जाने से रोका । बुढ़िया ने पूछा—क्यों ? धर्मराज ने कहा—तैंने सब कुछ किया पर मेरे लिए सोटा-टोपी तो दी ही नहीं, इसलिए बैकुंठ नहीं जा सकती । बुढ़िया ने कहा—भूल हुई महाराज । मैं फिर कार्तिक नहाऊँगी और आपके नाम का सोटा-टोपी दूँगी । वह लौटी, फिर नौ कार्तिक नहाई । इस बार उसने नियम से धर्मराज के नाम के सोटा-टोपी दिये, और उनकी बहिन जमुना के लिए धोती-चोली दी । इस बार वह बे रोक-टोक बैकुंठ चली गयी ।

(४)

३५:१. (९-४) एक घुनया, एक घुना थी । दोनों एक किवाड़ में रहते थे । उस किवाड़ के पास बैठकर कार्तिक नहाने वालियाँ कार्तिक स्नान की कहानियाँ कहा सुना करती थीं । घुना कहानी सुनती और घुन से कहती—'घुन कुछ सुन, कुछ घुन' । घुन कहता कि तूही सुन मैं तो घुनता हूँ । अब दोनों की मृत्यु हो गयी । घुन ने हाथी का जन्म लिया, उसी राजा के यहाँ घुना ने राजकुमारी का जन्म लिया । राजकुमारी विवाह योग्य हुई, उसका विवाह हुआ, वह पालकी में बैठकर चली । हाथी दहेज में दिया गया । जब विदा का समय आया तो हाथी अड़ गया । तरह-तरह से सभी लोगों ने चेष्टा की कि हाथी आगे बढ़े, पर वह टस से मस न होता । सभी तदबीरें विफल हुई । तब अखीर में राजकुमारी ने कहा कि मैं देखूँ शायद मेरे कहने से यह चले । राजकुमारी हाथी के ऊपर चढ़ी और कान में कहा—मैं तो तुझसे पहले ही कहती थी कि घुन कुछ सुन, कुछ घुन, तब क्यों नहीं ध्यान दिया । अब यों अड़ने से क्या होगा । सबने उत्सुकता से राजकुमारी से पूछा कि आपने हाथी के कान में क्या कहा—उसने

कहा कि पूर्व जन्म में मैं घुना थी, यह घुन था। मैं कार्तिक कहानी सुनती थी सो राजकुमारी हुई। इससे कहती थी तब भी नहीं सुनता था। वही याद दिला रही थी।

(५)

३५:१. (६-५) एक कुतिया थी। वह एक कुए के पास के गड्ढे में पड़ी रहती। कार्तिक के महिने में स्त्रियाँ स्नान करने आतीं, वह उनके स्नान के पानी में लोटती रहती। वह एक दिन मर गयी। उसने एक राजा के घर में राजकुमारी के रूप में जन्म लिया। विवाह योग्य होने पर एक राजकुमार से उसका विवाह हो गया।

राजकुमार अपनी रानी के साथ सोता तो रात को रानी का तलुआ चटकता, वह जग पड़ती और राजा के जूतों को खा जाती। राजा देखता कि सबेरे उसके जूते गायब हैं। वह रोज नये जूते पहन कर आता, रोज जूते गायब हो जाते।

तब उसने एक रात जगते रहकर पता लगाने का निश्चय किया। वह पलंग में पड़ा तो ऐसे रहा मानों सो गया है, पर जग रहा था। काफी रात होने पर रानी का तलवा चटका। उसने उठकर जूते चबा लिये। राजा ने यह सब देख लिया। पर चुप सोया-जैसा ही पड़ा रहा। वह बड़े आश्चर्य में था।

दूसरे दिन प्रातःकाल उसने बड़े-बड़े पंडितों को बुलाया और रानी के संबंध में पूछा—उन्होंने बताया कि यह पिछले जन्म में कुतिया थी, कार्तिक स्नान करने वालियों के पानी में पड़े रहने के कारण इसे राजकुमारी का जन्म मिला है। इसका पूर्व जन्म का स्वभाव रात में इसे जूते खाने को विवश कर देता है।

राजा ने उपाय पूछा तो बताया कि यह विधि पूर्वक यदि अब कार्तिक स्नान करे तो इस दोष से भी मुक्त हो जायगी। उसने ऐसा ही किया और वह पूरी तरह उस दोष से मुक्त हो गयी।

(६)

३५:१. (६-६) एक ननद-भाभी थीं। भाभी कार्तिक स्नान करके पीपल देव की पूजा करने जाती। भाभी के साथ ही ननद भी नहाती और उसी के साथ ही पीपल देव की पूजा करती। पीपल की परिक्रमा करके भाभी कहती—

पीपल देव सनीचर देव
मेरी गोद में लरिका देउ

ननद भी कहती—

"पीपल देव सनीचर देव
जो भाभी ऐ देउ बु मोऊ ऐ देउ"।

भाभी गर्भवती हुई, उधर ननद की उंगली पर भी एक छाला उठ आया। जैसे-जैसे भाभी का गर्भ बढ़ता, वैसे-वैसे ही ननद की उँगली का छाला भी बड़ा होता गया। दिन पूरे होने पर भाभी के लड़का हुआ, और ननद का छाला भी फूटा, उसके भी लड़का हुआ। भाभी दोनों बच्चों को पालने लगी। किन्तु उसने ननद के भाई को उस

ननद के बालक का पता नहीं लगने दिया। एक दिन वह ननद के बालक को खिला रही थी और कह रही थी—"रे बिना बाप के पूत कहाँ ते ढरक पर्यौ" इतने में ही भाई आगया, और अपनी पत्नी को विवश किया कि वह बताये कि किससे क्या कह रही थी। आखिर भाभी ने पीपर देव के प्रसाद से ननद के छाले से लड़के होने की बतादी। भाई ने विश्वास नहीं किया। यह हो कैसे सकता है। जब भाई को किसी तरह विश्वास करते नहीं देखा तो भाभी ने कहा—पीपल से ही क्यों न जाकर पूछा जाय। उस बालक को लेकर भाई, भाभी और अन्य रिश्तेदारों के साथ पीपल देव के पास गये।

भाई ने कहा—हे पीपल देव सनीचर देव। यदि यह लड़का आपका है तो आप इसे लौटा लें। पीपल का तना फट गया। और वह बालक उसमें समा गया। यह तो हो गया, पर भाई उसी दिन से कोढ़ी हो गया। बहुत इलाज कराये कोई लाभ नहीं हुआ। तब पंडितों ने बताया कि यदि किसी के सत का भानजा हो, और वह इन घावों पर थूके तो ये अच्छे हो सकते हैं।

अब तो भाई को बड़ा दुःख हुआ। उसने सोचा कि मेरे तो सत का भानजा था, मैंने तो जान-बूझकर उसे पीपलदेव को दे दिया। वह फिर पीपलदेव के पास गया और विनती की कि हे पीपलदेव मेरा सत का भानजा मुझे लौटा दो। पीपल का तना फिर फटा, और वह बालक निकल आया। लोगों ने उस बालक से कहा कि बेटा अपने मामा के ऊपर थूक तो दो। उसने थूका तो मामा का कुष्ठ दूर हो गया।

३५:१. (९-७) एक आदमी था। वह परदेस जाने लगा। अपनी बहू से बोला कि देख री मेरी माँ को तू अच्छी तरह रखियो; जैसे अपने बच्चों को रखे वैसे ही मेरी माँ को रखियो। यह कह कर वह चला गया। बहू ने अपने बच्चों को जाड़ों में कपड़े सिलवाये। बुढ़िया को भी सिलवा दिये। अपने बच्चों को गिल्ली डंडा बनवाये, उसे भी बनवा दिये। बुढ़िया सड़क पर गिल्ली-डंडा खेलती-फिरती। जब भूख लगती तो घर आती, बहू उसे कच्चा चून घोलकर पिला देती। इस तरह बहुत दिन बीत गये। चून पीते-पीते उसका गला रुक गया। अब उससे साफ बात भी न कही जाती थी। उसका बेटा आया, बोला मेरी माँ कहाँ है? बोली कि बच्चों के साथ सड़क पर खेल रही होगी। इतने में माँ आई। बेटा क्या देखे कि उसका सिर तो मुड़ रहा है कुर्ता-पाजामा पहने हाथ में गिल्ली डंडा लिये खड़ी है। बुढ़िया बोली कि बेटा चुनरस मारी। पूछा कि माँ क्या कह रही है? बहू ने कहा कि तुम्हारी माँ यों कह रही है कि मेरा ब्याह राजा चून से कर दो। बेटा बोला, माँ, राजा चून से ब्याह करवायगी? बोली, हाँ। बेटा ने राजा चून के पास खबर भेजी और उसका ब्याह पक्का करवाया। ठीक समय पर बरात आई और बुढ़िया को जेवर-कपड़े से सजा कर ले चले। रास्ते में एक खेत पड़ा। बुढ़िया बोली मेरे पेट में दर्द उठा है, मैं टट्टी जाऊँगी। उसी वक्त डोला ठहरा दिया गया। बुढ़िया ने उतर कर क्या काम किया कि जेवर-कपड़ा तो खेत में गाढ़ दिया। और आप फटे कपड़े पहन हाथ में लकड़ी ले खेत रखाने लगी। जब बहुत देर हो गई तो राजा के आदमियों ने उसे ढूँढा। बहू का कहीं पता न पाकर बुढ़िया से पूछा कि हमारी रानी देखी है? बुढ़िया नाराज होकर

बोली कि मैं क्या तुम्हारी रानी का पहरा दे रही थी, मुझे खबर नहीं। वे सब देख-भाल कर लौट गये। बुढ़िया जेवर-कपड़ा लेकर घर आई। सारा धन बेटा को देकर बोली कि मैं राजा चून को लेकर क्या करती। बहू ने मुझे कच्चा चून पिलाया इससे मुझसे बोला न गया। बेटा को मन ही मन बहू पर बहुत गुस्सा आया। सोचा कि इससे बदला लेना चाहिये। वह अपनी सुसराल पहुँचा और सुस्त मुँह बनाकर सास से बोला कि तुम्हारी बेटी बहुत बीमार है, सख्त गिरह हैं, उपाय भी बहुत कड़ा है। बोली क्या है कहो तो सही ? कहा—पंडितों ने यह बताया है कि इसके पीहर के सारे मर्द और औरतें काला मुँह करके हाथ में चक्की का पाट, सिर पर थाली और एक कपड़ा पहने यह कहती हुई चलें कि 'हाथ हथेला मूँड़ थली, धी हो भली' तो वह अच्छी हो। सब बोली कि हमारा क्या बिगड़ जायगा; हम ऐसे ही तुम्हारे साथ चली चलेंगी। वह सारे सुसरालियों को लेकर वहाँ से चल दिया। उन सबको तो घर से कुछ दूर खड़ा कर आया और घर आकर बोला कि तेरे पीहरिये बड़ी सज धज से आ रहे हैं; तू पहले मुझे खीर करके खवा दे, तब घर लीप कर गाजे बाजे से उन्हें लिवा लाना। उसनें खुशी-खुशी जल्दी से खीर-पूरी बनायी और उसे खिला कर औरतों को जमा कर उन्हें लेने गयी। वहाँ जाकर देखा तो उसे बड़ा दुःख हुआ। उसका पति कहने लगा कि ये मर्दों के काम हैं। अपनी माँ को मेरी माँ से मिला किसकी अच्छी है। उसे अपने पिछले किये कामों पर बहुत पछतावा हुआ, वे सब अपने घर लौट गये।

३५:१. (६-८) एक बुड्ढा था। वह रोज नित्यनेम किया करे था। जब उसकी मृत्यु का समय पास आया तो मन में सोचा कि अब मैं अपना नित्यनेम किसे दूँ। बेटे बहुओं सबसे कह हारा परन्तु कोई भी लेने को राजी न हुआ। तब एक लड़की बोली मुझे अपना नित्यनेम दे दो। बुड्ढा बोला कि, बेटी, लेने वाले तो लेने को राजी नहीं हैं, तू क्या करेगी ? तुझे सुसराल जाना है। बेटी ने कहा—नहीं मुझे दे दो, मैं कर लूँगी। लड़की सुबह नहा धोकर जल से घड़ा भर पूजा-भजन करती, परमात्मा का नाम लेती; यही उसका नित्यनेम था। जब उसका ब्याह हुआ, तो उसके साथ वह घड़ा भी गया। उसको सास घड़ा देख कर बोली कि संसार के तो दान-दहेज आवे और मेरे यह घड़ा आया है। पड़ोसिनें बोलीं कि, बहिना, इसे रख लें; इसमें कुछ भेद होगा। दूसरे दिन नहा धोकर बहू बोली कि, सास, मुझे दाल-आटा दे दो। तो मैं भोजन बना लूँ। घर में कुछ था नहीं इससे सास बोली कि ब्याहुली बहू रोटी ना बनाया करें; तू रहने दे मैं बना लूँगी। उसने कहा—नहीं, सास, रोटी तो मैं ही करूँगी। सास पड़ोसिनों के यहाँ से पाव भर चावल आध-पा घी और आध-पा बूरा लायी। बहू ने रोटी बनायी। बोली कि, सास, किसी ब्राह्मण को बुला लाओ, मैं जिमाऊँगी। पहिले तो ब्राह्मण को जिमाया, फिर अपनें पति को, फिर सारे परिवार को पीछे से आप जीम कर बचे चावल उठाकर रख दिये। दूसरे दिन सास बोली कि इसमें क्या धरा है ? बहू ने कहा कल कुछ चावल बच रहे थे वे रखे हैं। सास ने जो खोलकर देखा तो उसमें मोती हीरे लाल भरे धरे हैं। अब बहू को घर के कामों से सोफता न होता तब भी नित्यनेम करती रहती। उस नगर के राजा की रानी

अपने पति से बोली कि राजा इस गाम में सुना जाता है कि किसी के घर बहू आई है और वह रोज नित्यनेम की कहानी कहा करती है, उसका पता लगा कर उसे बुलाओ में भी सुनूँगी। बुलाया तो बहू ने कह दिया कि मुझे ऐसी क्या गरज है जो मैं वहाँ जाऊँ। उन्हें सुननी है तो यहाँ आन कर सुन जायँ। राजा पर ऐसी मुसीबत पड़ रही थी कि धन तो सब लड़ाई में हार चुका था और बेटा बहू परदेश में लापता थे। रानी ने मन में सोचा कि मेरा क्या बिगड़ जायगा, मैं उसी के घर सुन आऊँगी। पहिले दिन नित्यनेम सुना तो रानी की पड़ोसिन आई और बोली कि रानी घर चलो तुम्हारे बहू-बेटा आये हैं। वह बोली कि गा-बजा कर ले लो मैं तो पूरा नित्यनेम सुन कर आऊँगी। दूसरे दिन सुनने फिर आई। फिर पड़ोसिन आई और कहा कि तुम्हारे बाग-बगीचे सब हरे-भरे हो गये हैं। रानी ने कहा कि तुम आम खाओ, अमरूद खाओ; मैं तो कहानी सुन कर आऊँगी। तीसरे दिन सुनने आई, तो फिर पड़ोसिन आई, बोली कि, रानी, घर को चलो तुम्हारे धी—जमाई आये हैं। रानी ने कहा कि तुम आव-आदर करो, बैठालो; मैं तो कहानी सुन कर आऊँगी। चौथे दिन सुनने आई, तो पड़ोसिन फिर आई और बोली, रानी, घर को चलो, राजा हारा हुआ राज जीत गये हैं। तब से रानी रोज नित्यनेम अपने घर पर करने लगी।

३५:१ (९-९) बरनबिंदा की कहानी

राजा की बेटी फूलों से तुलती थी। वह कार्तिक स्नान करती, पर बरन बिंदाक की कहानी नहीं सुनती थी। बरन बिंदाक को बुरा लगा।

दूसरे दिन उसने बरन बिंदाक नें जल में उसको पैर छू लिया। फूलों से तौली गयी तो न तुल सकी। सब समझे कि देवता का कोप है। प्रार्थना करने पर बरन बिंदाक ने बताया कि "यह अपने भाई के साथ काले कपड़े रँगवा कर पहन कर धारा नगरी को जायँ। रास्ते में लोगों का उपहास सहते जायँ। धीरे-धीरे कपड़े सफेद होने लगेंगे। धारा नगरी में पत्थर के किवाड़ मिलेंगे। खोलने पर जल के घड़े और ध्वजा मिलेगी। पानी पीना मत। ध्वजा लेकर उपहास सहते हुए लौटना, ध्वजा मुझ पर चढ़ाना। इस पर कपड़े सफेद होते जायेंगे। और कलंक छूट जायगा।

३३:१. श्री भारद्वाज ने जो कहानी 'चटक बिंदाक' के नाम से दी है, वह मथुरा-आगरा में बरन-बिंदाक की ही कहानी है। भारद्वाज जी की कहानी धारा नगरी के स्थान पर 'बदरीनाथ' हो गया है। भारद्वाज जी की कहानी यों है :—

चटक बिन्दा

सतवंती बहिन और कुलवंता भइया था। बहिन जो थी वह ज्ञान-धर्म बहुत करै थी; कार्तिक नहाती, दान करती पुन्न करती, पर चटक बिन्दा के नाम का कुछ भी नहीं करै थी। उसके नाम से हाथ झाड़ कर खड़ी हो जाती। चटक बिन्दा ने मन में सोचा कि इसे कुछ चटकूला लगाना चाहिए। रात को जब वह सोती तो क्या काम करता कि चर्र-मर्र का जूता पहिन कर आता और उसकी खाट के चारों ओर फूल बखेर जाता, पान की पीक थूक जाता, खाट पर इतर छिड़क जाता। यह हाल उसकी

भावज ने देखा तो वह नाराज हुई कि ये हमें नीचा दिखाती है। भावज रोटी करैं थी, भाई खाने को बैठा, तो दाल का चमचा भात में और भात का चमचा दाल में डाल के तीन रोटी परोस दीं। वह बोला कि हाथ तेरा कैसा है जो खाना भी न परोसा जाय। बोली कि मेरा हाथ क्या देखो, देखो अपनी बहिन का। यह बात सुनकर अचरज से बोला कि बहिन को क्या देखूं उसका सा तो दुनियाँ में होना मुश्किल है। बोली कि मेरी बात झूंठ मानों तो रात को दिखा दूंगी कि तुम्हारी बहिन कैसी है। नित्य की भांति चटक बिन्दा आया। भाई ने जाकर उसे पकड़ लिया, और बोला कि सच बता तू कौन है, यहाँ क्यों आता है? वह बोला कि मैं चटक बिन्दा हूँ। जब यह पुन्न धर्म करती तो मेरे नाम से हाथ झाड़ कर खड़ी हो जाती। मैंने इसे अनहौना चटकूला लगा दिया। वह बोला कि अब इसका चटकूला कैसे छूटे। चटक बिन्दा बोला कि तुम दोनों भाई-बहिन बदरीनारायन जाओ, रास्ते में जितने आदमी तुम्हें टोकेंगे उतने ही पाप दूर होयँगे। एक राह तो भाई-बहिन जायँ, और दूसरी राजा प्रजा जाय। बहिन भाई दोनों बदरीनाथ के मन्दिर के पीछे जाकर बैठ गये। दुनिया प्रार्थना करके हार गई पर किसी के कहने से पट न खुले। तब वहाँ के पंडा बोले कि कि सतवन्ती बहिन और कुलवन्ता भइया आवें तो पट खुले। उसकी बहिन ने किवाड़ से पैर का अंगूठा लगा दिया। पट खुल गये, वे दर्शन करके घर आये। तब चटकुला छुटा।

३५. १. (६-१०) चटक विन्दाक की कहानी

मथुरा में "चटक-विन्दाक" की कहानी इस प्रकार कही जाती है:—

बरन बिन्दाक की कहानी कही जाती तब एक पाँच वर्ष का सुन्दर लड़का टोपी में चावल और दूध लेकर आता और कहता—मेरी खीर पकावो। सब हँसकर उसकी बात उड़ा देतीं।

कातिक की पूर्णमासी को वह फिर आया तो एक वृद्धा तैयार हो गयी। उसके चावल और दूध से उसने खीर राँध दी। उससे सारा गाँव जिमा दिया गया। खीर तब भी बची रही।

१. यह कहानी कार्तिक में गंगास्नान के पश्चात् कलंक देवता को प्रसन्न करने के हेतु है। पुराण-वर्णित सत्राजित की कथा से इसका सादृश्य नहीं है। यद्यपि वह भी कलंक निवारणार्थ है।

यह कहानी वस्तुत संकट गणेश की है। संकट प्राय: ब्रज में 'सकट' कहे जाते हैं। यही सकट वर्ण विपर्यय और वर्ण विकार से सकट और तब 'चटक' हो गये प्रतीत होते हैं।

यह तो स्पष्ट है कि भारद्वज जी ने चटक बिंदाक के नाम से जो कहानी दी है, वह वरन बिंदाक की है, चटक बिंदाक की नहीं। चटक बिंदाक की यही कहानी है जो ऊपर दी गयी है।

३५ : १ (६—११) मेंढ़क की कहानी—

एक बुढ़िया थी। वह नित्य सबेरे कातिक नहाती और नहा धो कर परमात्मा से प्रार्थना करती कि, हे परमेश्वर, घर दीजे, घरवाला दीजे, देहली का रख वाला दीजे,

श्रीकृष्ण का नाम दीजे, बैकुण्ठ का बास दीजे। जब इस तरह व्रत करते बहुत दिन हो गये, तो भगवान ने सोचा कि सब चीज तो मैं बुढ़िया को दे सकूंगा पर घरवाला इस उमर में कैसे दूं। बुढ़िया का दाँया हाथ बड़े जोर से पक उठा अब तो वह हाय हाय चिल्लावे। न दिन को चैन, न रात को नींद। एक दिन उसका पका हुआ हाथ फूट गया। उसमें से एक मेंढ़क निकला और उछल कर देहली पर जा बैठा। बुढ़िया ने अपने मन में सोचा कि मैं जो भगवान से प्रार्थना करती थी सो उन्होंने मुझे यह देहली का रखवाला दिया है। किसी राजा की बेटी का स्वयंवर था। मेंढ़क बोला कि मैं राजा की लड़की ले आऊं। बुढ़िया बोली कि वहाँ बड़े-बड़े महाराज आयेंगें, उन्हें छोड़ भला वह तुझे क्यों बरेगी, तू मत जा, छोटा-सा तू जीव है, किसी के पैर तले पिच जायगा। बोला मा हम तो जायेंगे। बोली तेरी इच्छा। अब मेंढ़क नहा-धोकर स्वयंबर में जा बैठा। जयमाल का वक्त आया, तो राजकुमारी आयी। उसने एक ओर से सब राजाओं को देखा। उसकी पसन्द कोई न आया। फिर जो देखा तो एक कोने में मेंढ़क बैठा था। जयमाल उसके गले में डाल दी। राजा बोला कि, बेटी, भूली; अब की बार फिर डालो। फिर भी मेंढ़क को ही माला पहनादी। राजा को अपनी बेटी की एसी इच्छा जानकर दुःख हुआ। पर दहेज देकर बेटी को बिदा कर दिया।

मेंढ़क ने दरवाजे पर आकर आवाज दी; किवाड़ खोल, तेरे लिए बहू लाया हूँ माँ बोली कि, मेंढ़का, क्यों झूठ बोलै ? तुझे बहू कहाँ रखी है ? कहा—देख तो सही। बुढ़िया ने जो किवाड़ खोले तो क्या देखा कि हाथी घोड़े गाड़ी बहली फौज पियादे सिपाही डोलें में बहू और घोड़े पर मेंढ़का। बुढ़िया बहुत प्रसन्न हुई। भीतर बाहर से उसका सब घर भर गया। बहू सोलह सिंगार रोज करती तो एक दिन बुढ़िया बोली कि बहू तू सिंगार मत करा करे; दुनिया मुझे चरचे है कि मेंढ़का की लुगाई कैसे सिंगार से रहती है। बहू ने कहा कि सास तुम्हारा बेटा मेंढ़का नहीं है वह सुन्दर युवक हो जाते हैं फिर मैं सिंगार क्यों न करूँ। बुढ़िया बोली—बहू आज जब वह आदमी के रूप में आवे तब मुझे दिखाना। वह छिपकर बैठ गयी। जब रात हुई तब उसने मेंढ़का का चोला तो उतार कर रख दिया और एक राजकुमार हो गया। बुढ़िया ने चुपके से उसके चोले में आग लगा दी। अब तो वह बहुत घबराया। माँ, तैंने यह क्या कर दिया ? मैं क्या पहनूं ? बुढ़िया बोली कि, बेटा, किस की चोरी है, अच्छी तरह खाओ पहनो, मौज उड़ाओ; सब कुछ तुम्हारा ही तो है। तब से तीनों बड़े प्रसन्न रहने लगे।

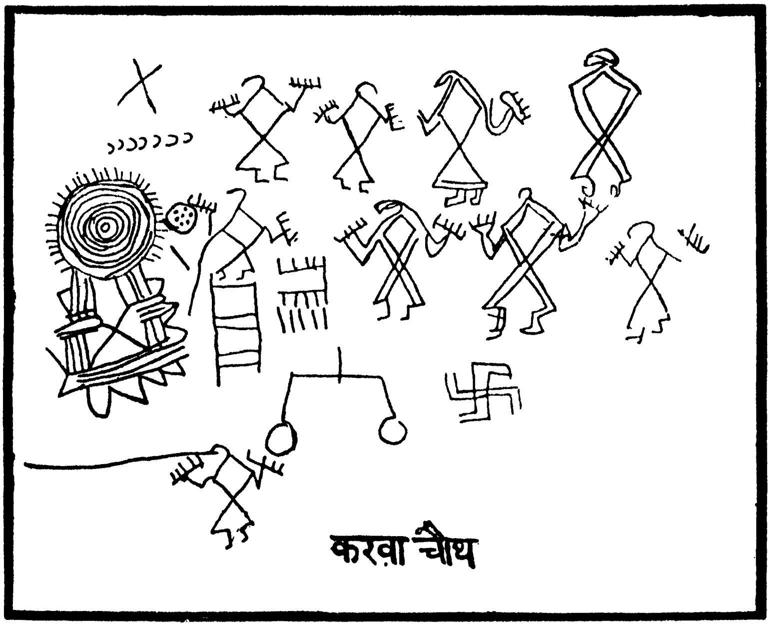
३५:२. करवाचौथ

करवाचौथ सौभाग्यवती स्त्रियों का सौभाग्य विषयक व्रत है। कार्तिक कृष्ण चौथ को यह व्रत रखा जाता है। इस व्रत में दिवाल पर एक चित्र भी रखा जाता है। दिन भर उपवास भी रखा जाता है। चित्र स्थान पर 'करुए' रखे जाते हैं। गौर रखी जाती है। चित्र पूजन के साथ गौर पूजन भी होता है। कहानी सुनी जाती है। करुए बदले जाते हैं।

३५:२:१. चित्र रखने की क्रिया प्रायः दिन भर में समाप्त होती है। एक अच्छी दिवाल को पहले सामान्यतः लीप कर उसे गेरू से पोता जाता है। गेरू की पृष्ठभूमि

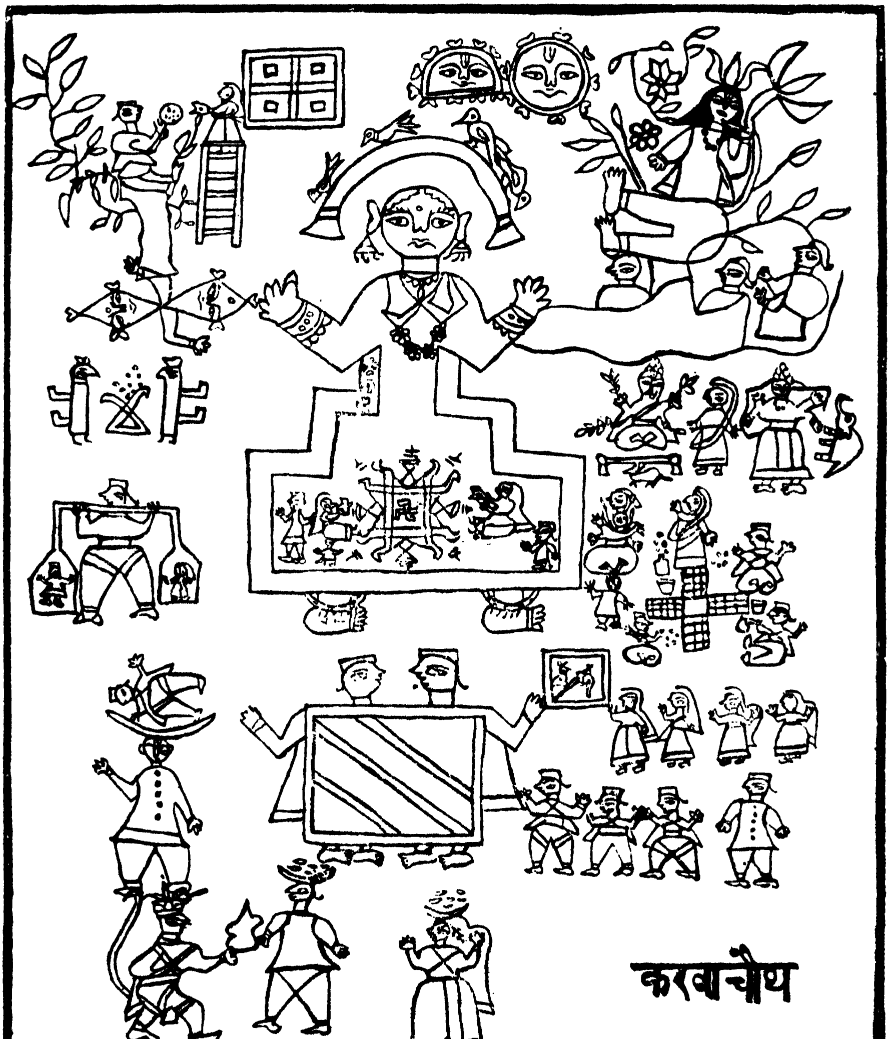
भली प्रकार सूख जाने पर चावल पीस कर सफेद रंग तय्यार किया जाता है। इस रंग से गेरू की पृष्ठभूमि पर 'करवाचौथ' रखी जाती है। इस चौथ के चित्रों में हमें वैविध्य मिलता है। यहाँ इस चित्र के पाँच रूप दिये जा रहे हैं। ये हमें विविध स्थानों से प्राप्त हुए हैं।

३५:२:१:१. यह चित्र ब्रज प्रदेश के ठेठ गाँव से मिला है—



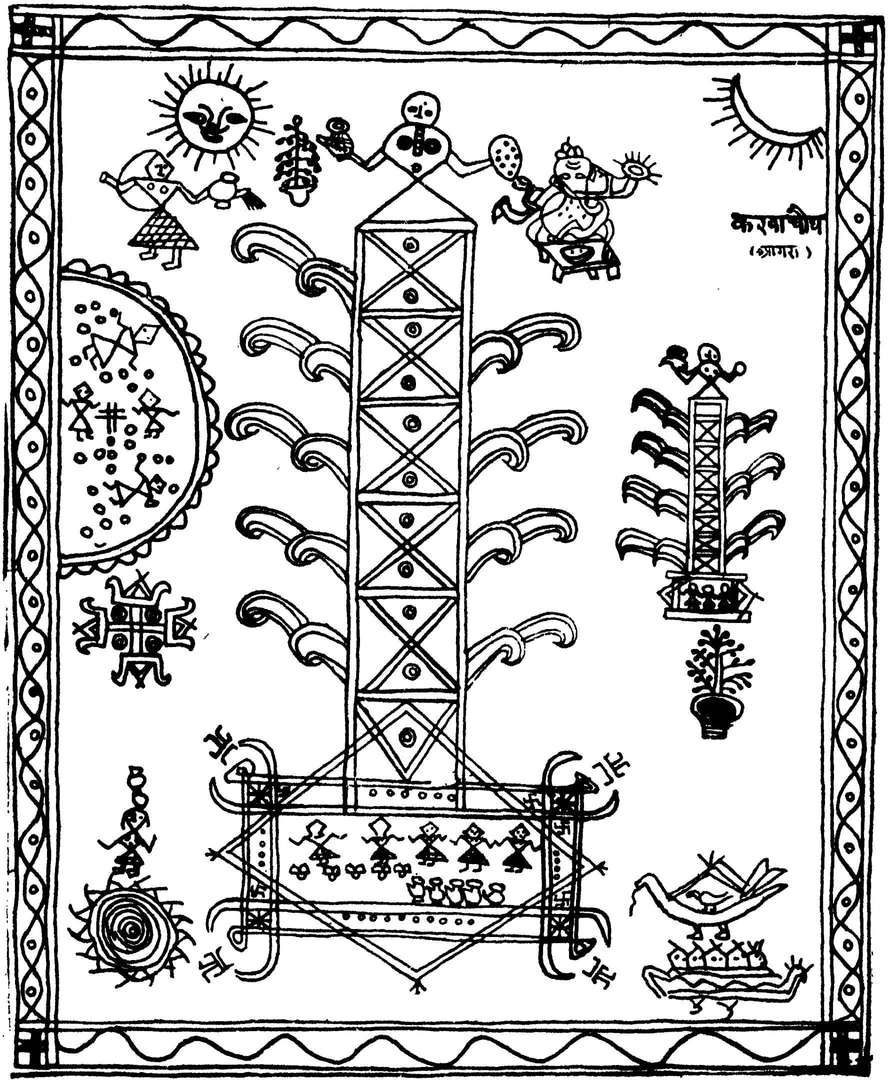
इस चित्र में रेखाओं के अंकन में किसी परिमार्जन या सौष्ठव का विशेष ध्यान नहीं रखा गया है। सभी आवश्यक अभिप्राय सीधी सच्ची रेखाओं से खींचे गये हैं। पर ये रेखाएँ स्पष्ट हैं और अर्थ प्रकट करने में समर्थ हैं। मुख्य तत्व वृक्ष से दीखने वाले चन्द्रमा को अर्घ्य देने का है। वही इसमें ऐसी विधि से दिया गया है कि ध्यान आकर्षित हुए बिना नहीं रहता। नसेंनी पर चढ़ी हुई स्त्री के एक हाथ की रेखा ही नीचे की ओर खिंची चली गयी हैं। यह अर्घ्य के जल की धारा का द्योतक है। स्वस्तिक बहुत स्पष्ट है। कुछ घरेलू चीजें भी हैं, कंधे तथा तराजू सहज ही दृष्टि में आते हैं। सात मानवाकृतियाँ सात सुहागिनों या सप्त मातृकाओं को बताती हैं। उदय और अस्त के दो अचल स्तम्भों पर देदीप्यमान है सूर्य अपनी सहस्र कलाओं के साथ, बगल में है चलनी के प्रतीक जैसा चन्द्र। इन दोनों से ही बटवृक्ष तथा चलनी से चन्द्र का भी काम निकाला गया है।

३५:२:१:२. यह चित्र लोहबन गाँव का है—



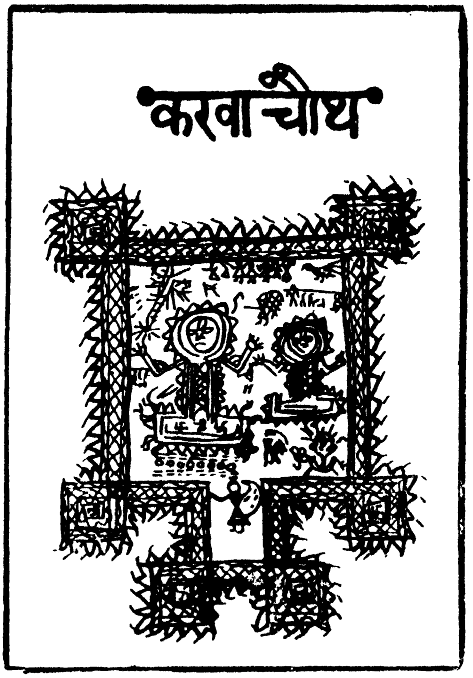
इस चित्र में वैविध्य है। कितने ही नये अभिप्राय इसमें आये हैं। रेखांकन करने वाला हाथ पहले से विशेष कलात्मक है। मुख, आँख आदि भली प्रकार बनाने का प्रयत्न किया गया है। देवी देवताओं का भी अंकन है। प्रत्येक अंकन सावधानी से करने की चेतना इस चित्र बनाने वाले में मिलती है।

३५:२:१:३. यह चित्र आगरा के एक परिवार से प्राप्त किया है:—



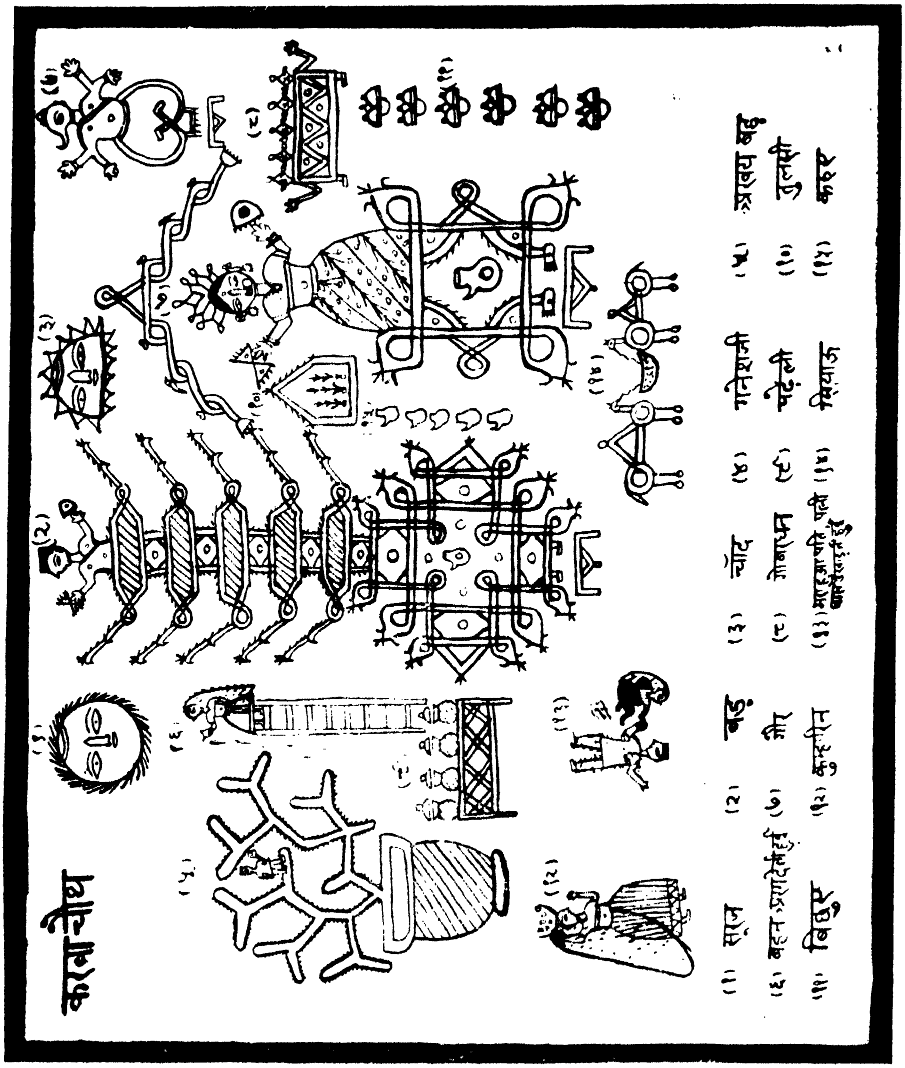
इसमें मुख्य अभिप्राय को ही सबसे अधिक महत्त्व मिला है। वही छाया हुआ है। वृक्ष, उस पर चढ़कर चंद्रमा दिखाता हुआ भाई, अर्घ्य देती हुई बहिन ये ही इसमें है। वृक्ष को ही चित्रित करने में विशेष रूचि दिखायी है।

३५:२:१:४ यह चित्र भी कितने ही नये अभिप्रायों को समाविष्ट किये हुए हैं--



इस चित्र में दृष्टव्य यह है कि अवसर के अनुकूल अभिप्राय बहुत छोटे बनाये गये हैं। प्रत्येक रेखा छोटी होते हुए भी साभिप्राय है। पर बाहरी चौक को बड़ी सजावट से प्रस्तुत किया गया है। उस सजावट में ज्यामितीय चतुष्कोणों की जाली का उपयोग किया गया है। उसके ऊपर त्रिकोण गुरियों की शृंखला जँची हुई है। इन रेखाओं का चित्रकार उक्त दोनों चित्रों से अधिक कुशल प्रतीत होता है। यद्यपि मुख, आँख आदि अंग-प्रत्यंग उतने उभरे और सधे नहीं हैं, फिर भी अभिव्यंजक हैं। सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उनकी रेखाएँ लोककला की द्योतक हैं, कला-चेतना की नहीं। क्या शुक, जो अन्य अभिप्रायों की अपेक्षा कुछ बड़ा बन गया है, क्या सात सुहागिनें, क्या स्वस्तिक, और क्या करुए, जो चौथ देवी के चरणों में सजाये गये हैं तथा अंडाकार बनाये गये हैं, सभी एक अछूती सुन्दरता से युक्त है जो सिंधुघाटी की प्रागऐतिहासिक कला से मिलायी जा सकती है। पहले वाला चित्र लोक-कला की व्यंजकता से दूर हट गया था, इसमें उस व्यंजकता का अच्छा रूप मिलता है।

.३५:२:१:५. इस चित्र में कुछ कलात्मकता भी दिखायी पड़ती है । अन्य चित्रों से इस चित्र में एक विशेष अभिप्राय संख्या १२ वाला सम्मिलित है, जिससे इसका संबंध एक विशेष कहानी से हो जाता है । शेष चित्रों का संबंध, सामान्य कहानियों से है ।



३५:२:२. करवा चौथ की कहानी का सामान्य ढाँचा तो प्राय एक ही जैसा है। जिसे यों प्रस्तुत किया जा सकता है—

१—बहिन ने करवा चौथ का व्रत रखा।

२—भाइयों ने बहिन के अत्यन्त स्नेह के वश चलनी में दीपक रख पेड़ पर से नकली चन्द्रमा दिखा दिया।

३—बहिन ने उसी चन्द्रमा को अर्घ्य देकर व्रत खोल दिया।

४—व्रत खोलते समय ही उसे सूचना मिली कि उसका पति मर गया।

५—वह श्वसुरालय गयी। पति की लाश को जलने से रोका।

६—अन्त में अपनी निष्ठा से उसने पति को जीवित कर लिया और उसे पुनः प्राप्त कर लिया।

अब जितने भी इस कहानी के रूपान्तर मिले हैं उनमें संख्या ५ तक के अभिप्रायः प्रायः समान हैं।

छठवें अभिप्रायः में बहुत अन्तर है। एक कहानी में तो इसी में एक दूसरी कहानी जुड़ गयी है। किन्तु इस कहानी का ही चित्र सं० ३५.२.१.:५: से संबंध है। अब इस कहानी के विविध रूपान्तर यहाँ दिये जाते हैं। एक कहानी ऐसी भी है जिसमें छठवाँ अभिप्रायः सम्मिलित ही नहीं। कहानी दुखान्त ही रह जाती है।

३५:२:२(१) यहाँ जो पहली कहानी दी जा रही है वह 'गिडोह' गाँव से प्राप्त हुई है। संकलन कर्त्ता श्री डालचंद जी है। यही कहानी दुखान्त है। कहानी यों है—

करवाचौथ के व्रत की कथा

संकलन कर्त्ता—डालचंद गिडोह 'डा० कोसी' जि० मथुरा। प्राप्ति तिथि विजया-दशमी। २००३।

एक राजा के सात लड़के और एक लड़की थी। वह लड़की हर करवाचौथ का व्रत रहती थी। एक बार करवाचौथ को उपास रही तो आठ पहर बिना कुछ खाये बहुत घबड़ायी क्यों कि वह बहुत कोमल थी। यह हालत देखकर भाइयों ने कहा बीबी तू रोटी खाले। उसने कहा जब तक चंदा न दीखगौ तब तक रोटी न खाऊंगी। भाइयों ने कहा देखो बहन यह हठ है मैं दीयौ और चालनी लैके इस पीपर के पेड़ पर जा रह्यौ हूँ उसमें होकर या दीये की लाल किरण दीख जायँ तो कह देना बीबी चंदा निकल आया। पानी दे कर अब रोटी खा ले। उसने ऐसा ही कियौ और लड़की से और भाइयों ने कहा बीबी देख चंदा निकल आया। पानी देकर अब रोटी खा ले। लड़की चन्दा को पानी देकर रोटी खाने को बैठी तो रोटी को पहलौ टूंक तोर्यौ तो बाल निकस्यौ और दूसरौ तोरौ तो मक्खी निकली तीसरौ तोर्यौ तो सासरे को नाई आयौ कि या को पति मर गयौ। सो यह रांड़ हो गई है और बेचारी सदा के लिए भाइयों के पास रहने लगी। नकली चन्द्रमा को पानी देने से यह पाप इस लड़की को लगा।

३५.२.२. (२) यह दूसरा रूपान्तर लोहबन से प्राप्त हुआ है। इसमें छोटी भाभी के कारण पति को प्राण मिले हैं। कहानी इस प्रकार है—

(कार्तिक में गणेशजी के इस व्रत को 'सुहागिन' स्त्री ही रखती हैं)

(१)

एक गाम में सात भया रहत ए। उनकी एक बहुत कछ् प्यारी बहिन ई। सातौ भैया अपनी भैंनि पै इतनों प्यारु करत ए कि बे बैंहन ते पहलें रोटी नाँए खाँत। कातिक लगत करवा-चौथि आई। सातौ भौजाई और आठेंई भैंनि नें बतु करयौ। जि भैंनि के ब्याह के पहली वर्ष ई।

जब भैया बाहिर तें आए तो उन्नें अपनी अम्मा ते कही कि अम्मा ला रोटी दै दै। अम्मा ने रोटी परोसी। फिरि जब रोटी पसि गई तौ उन्नें पूछी क हमारी भैंनि कहाँ ऐ। अम्मा नें कही: 'बेटाओ आजु तुमई रोटी खाइ लेउ। बु तो बर्ती रही है। चंदा ऐ देखिकें रोटी खाइगी। उन्नें कही कि तौ री हमऊँ जबई रोटी खाँगे।

(२)

सातौं भैया अखैबरि[1] के पेड़ पै चढ़ि गए उनमें से एकु तौ दीओ ले गयौ और एकु चलनीं लैं गयौ। एक नें चलनीं रोपी और एक नें दीओ दिखायौ। एकु भाजि कें अपनी भैंनि के पास आयौ और व्वाते कहा: देखि बु चंदा निकरि आयौ। माँ नें सातों भौजाई और आठेंई नन्द अरघु देबे कूँ पठै दई। भौजाई जब छत्ति पै चढ़ि कें गईं तौ उन्नें कही: जेई अपने भैयान की प्यारी भैंनिऐं। जिनई की चंदा निकरि आयौ होइगौ। हमारौ तौ निकर्यौ नाएं। जि कँह कें बे उल्टाबाटुई लौंटि आईं।

मैंरि भैंनि नें तो अपने भैया को साँचु मानिकें अरघु दै ई दीयौ।

(३)

लौटि कें व्वानें अपनी भौजाईन ते करुए बदले। करुए बदल्त में तौ कहंत ऐं ('सदा सुहागिल करुए लै। सात सपूती करुए लै।' परि बिन्नें करुए बदल्त में अपनी नन्द ते कही) कि बतु खंडिनी करुए लै। अधवर खानी करुए लै।' भैंनि बिचारी भोरी ई। व्वाकी समझि में कछू न आई। फिरि आठौ भैंनि-भैया खाइवे कूँ बैठे। बहिन नें पहिलौ गसा तौरयो सो तो व्वा में बारु निकरयौ। दूसरे में मक्खी निकरी। तीसरे गसा ए मुंह तक लै जान न पाई सोई सासुरे ते नौआ आयौ। व्वानें महमान के मरिबे को संदेसौ सुनायौ। रोहा-राटु मच्यौ। नाऊ ते व्वा भैंनि नें कही कि ल्हासै विकरन न करैं। मैं अव्हाल आई।

भैया अपनी प्यारी भैंनि एैं लैकें व्वाके सासुरे कूँ चले। भैंनि नें ल्हास न उठन दई। ल्हास के आस-पास पीरी माँटी बखेर दई और व्वामें जौ बोइ दए। साल भरि तक न व्वानें अन्नु खायौ, न पानी पीयौ। व्वा ल्हास के जोरें बु बैठी रही। फिरि साल भरि पीछें बुही करवा चौथि आई।

---

१. गाँवों में यह मान्यता है कि शिवरात्रि को इसी पेड़ को पाला नष्ट करता है और फिर जाड़ा चला जाता है। उसी समय महादेवजी पाताल से आते हैं।

(४)

करवा चौथि कौ दिनाँ ओ। सब वय्यरबानी बर्त की तैयारी करि रही ई। ब्बाई बखत एक डोकरी आई। ब्वानें ब्वा दुखियारी ते कही कि तू अपने पीहर कूँ चली जा। अपने भैयान ते कहिकें जा ल्हासैं म्वाँई मँगवाइ लीजो। तेरी छोटी भाभी की कन्नी उँगरिया में इमितु ऐ बु ही तोइ सुहागु देगी। जब छोटी भाभी करुए पलटिबे आई तो ब्वानें बु पकरि लई। भाभी नें 'सदा सुहागिल करुए लै' कहके, अपनी उँगरिया चीरि कै ब्वाके मोंह में निचोरि दई।

बु हरे-हरे कहिकें ठाड़ौ हैगौ।—(सं० क० चन्द्रभान : लोहबन)

३५:२:२:३. श्री भारद्वाज जी ने जो कहानी दी है, वह भी इसी कहानी के तुल्य है। उसमें अमृत वाली भाभी छोटी नहीं बूढ़ी है। उनकी कहानी का यह अन्तिम अंश यों हैं :—

छठी ने कहा—पीहर-पूरी करुआ ले। बींझा बेटी ने छओं से कहा कि मुझे अपसी कर ले। छओं कह गईं कि सातवीं को पकड़ियो; उसके सन के से बाल हैं, बिनौले से दाँत हैं, लातों मारेगी, दाँतों काटेगी, उसे छोड़ियों ही मत। सातवीं ने उसे खूब तो मारा, काटा; पर उसने कहा, भाभी, मुझे अपसी कर ले। भाभी ने अपनी कन्नी उँगली तरास कर मुरदे के मुँह में गेरदी। बींझा बेटी का दूल्हा हरे-हरे कहता उठ बैठा। पहली आई काहू को मत अइयो, पिछली आई सो सब काहू को अइयो।

३५:२:२:४. एक कहानी में भाभियों का स्थान परियों ने ले लिया है। कहानी यों है—

एक भैंनि के सात भैया ऐं। बु भैंनि एक पोत करवाचौथ बरती रही। जब भैया नें देखी कि उनकी भैंनि भूखी है। तौ उननें अपनी भैंनि ते भोजन करने की कहीं। परि भैंनि नें भोजन न करे तौ भैयन नें एकु उपाय सोच्यौ। जंगल में जाय के आग लगा दई और वा आगि के ऊपर एक थारी दिखाय दई थारी दूरि तें चन्दा सी लगन लगी बाके भैया ने कही कि देखि भैंनि चन्दा निकरि आयौ। पूरब में चन्दा दीखि रह्यौ ऐ। भैंनि कूं जि देखि कें बड़ौ अचंभौ भयौ और अपने भैया ते बहस करन लगी। परि बाके भैया नें एक न चलन दई और भैंनि कूं भोजन करिबे कूं तैयार करि दीयौ। जैसे ही भैंनि नें पहलौ ग्रास खायौ बामें बारु निकर्‌यौ बानें बु ग्रासु डारि दयौ। दूसरे ग्रास में ऊ मक्खी निकरी तीसरौ गसा जैसेंई तोरि कें खान लगी वैसेंही बाकी सुसरारि ते बाके पति के मरिबे की खबरि आय गई। जा खबरि कूं सुनि कें भैंनि बहुत व्याकुल भई और बिलाप करन लगी। उठि कें अपने सासुरे कूं चलि दई। अपने पति की लास कूं मरघट में धरि के बाबा ऊपर महल चिनवायौ और बाई महल में अपनी छोटी नंद के संग रहने लगी फिर करवा चौथ आई बरत रही पहली परी आई बाने कही अधवर खानी करुऔ लै भैयान की प्यारी करुऔ लै। सबर सुहागिल करुऔ लै। यह कहि कें परी चली गई और कहि गई कि सातई परी पै ते बर माँगियो। ऐसे ही ६ परी आईं। सबन नें ऊपर की ई बात कही। फिर सातईं परी आई। सातईं परी ने ऊ कही।

अथवर बानी कवग्रो लं। भैयान की प्यारी कवग्रो लं। सबरि सुहागिन कवग्रो लै बो परी जाय कहि के भागन लगी परि बानें न छोड़ी फिर परी ने बरदान दियौ। बाकौ पति हरे-हरे कहि कें बैठि गयौ।

३५.२.२ (५) खैरागढ़ तहसील से प्राप्त एक कहानी में भगवान स्वयं आये हैं और यही बता गये है कि विधि पूर्वक फिर करवाचौथ का व्रत करने से पति जीवित हो जायगा—

यह कहानी इस प्रकार है—५१

सब घर घर में करवाचौथ उपासी रह रहीं, भाई की ज्यादा लाडली बहन ही, जब बहन ने भाई से कही, हम भी उपासी रहेंगे, भाई ने कही बहन से सात भाई बीच एक बहन है तो भूकी प्यासी मर जायगी सो हमना रहन देत, तो फिर बहन नें कही कि सब घर घर में उपासी हैं सो मैं ऊ रहूंगी। तो भइया बोलो ना मानत कही तो रह लेऊ उपासी, तब ई घर की लीपापोती करी और करवाचौथ, दीवर पर चावल धोयपीस कर काढ़ी जैसे शाम भई, तो कुम्हारि की लड़की करुये के जोड़ालाई, एक में चावल भरें एक पानी से भरों-व उसके ऊपर पाँच पूड़ी रक्खी तो जू शाम कूं चन्द्रमा निकलों नाँही, भईया ने बहन से कही, कि भैंना चन्द्रमा, निकरि आयो, भाई धर नसैनी बर के पेड़ पर चढ़ गयो, और चलनी में दिया रख के भैन कूं दिखा रहौ है। तौनूं भाई बोलौ बहन ते देख तो ऊगौ चन्द्रमा अरघ दे दै, तो बहन ने अरघ दे दयो तो सबेरे बहन के सासुरे ते आदमी आयो सो उसने कही भाई की बहन ते कि तेरो पति मरि गयौ सब पंडितों से पूछागछी की तो लड़की को परदोष लगो। ऐसौ कहा पर दोष लगौ? लड़की को जि परदोष लगो है कि चन्द्रमा ऊगौ नां और भाई ने चालनी में दीयो दिखाय अरघ देने को परदोष लगो। जब एक साल बाद करवाचौथ परें तबही चन्द्रमा ऊगें तब ही अरजा देय: तब पति जिन्दा होय ऐसें अरजा देनों चहियों सो पति मुर्दा की बारह माह सेवा करी सो आप रूप भगवान आये हैं सो लड़की से बोले कि बेटी तेंने बड़ी सेवा की जो तू मागनों चाहें सो माँगलें, सो लड़की मुर्दे पति को जिन्दा करने की विनय करी सो आप रूप भगवान् बोले कि तेरा पति जिन्दा हो जांयगे लेकिन तुम को परदोष लगो है। सो लड़की बोली बाबा कैसें छुटनों चाहिये परदोष बताऊ बेटी काहे को लगों एँ-तो बेटी परदोष लगो कि तैंने चन्द्रमा को अरज नहीं दे पायो। तेरे भाई नें चलनी में दीयो घर दिखायो तो तेंनें चन्द्रमा जानि अरजा दे दयो जाई सों परदोष लगो है। तो बाबा जिह कैसे परदोष छूटें तो बाबा बोले बेटी ऐसे छूटेंगों परदोस। दूई साल ये माह आवे चन्द्रमा ऊगौ—तब अरजा दें। तब परदोष छूटे। तब पति जिन्दा भयो—जब चन्द्रमा ऊगे जब अरजा देनो चहिये ऐसी भूल कभी नहीं करनी चहिये।

(श्री अनार कली देवी कौम सुनारि—खेरा कला आगरा। मौजा सरेड़ा पोस्ट खेरागढ़ तहसील: खेरागढ़)

३५.२.२ (६)

इस कहानी के एक रूप में विधि से व्रत करने पर चन्द्रमा से अमृत और घी की धारा छटी है—

करवा चौथ सुहाग गिल की कहानी

१—पुरानी लोकाचलन—

एक राजा के सात बेटा थे, व एक बहिम थी। सातों बेटों की शादी हो गई थी, और बहन की भी शादी हो चुकी थी, और सात भाईन बीच एक बहन ही, और आई करवाचौथ सो, सातों भौजाई व नन्द सब उपासी रहीं, सातों भाईन कें बहन अति प्यारी थी, छोटा भाई बोला दादा हमारी बहन तौ भूखी मर जायगी, मझलौ भाई बोला कि ऐसौ इन्तजाम करो कि हमारी बहन सिदौसी भोजन कर लेय, लौहरौ भइया नसैंनी धरि कें अखेंवर के पेड़ पै चढ़ि गयौ, चलनी में दियो धरि लयौ। उस पेड़ की पलगईयों में से दियो दिखाइ दयौ, मझलौ भइया बोला बहन ते कं देखले बहन चन्द्रमा उगि आयो, बहन नें न्हाय धोयकें जल कौ लोटा लेकें अरग दयो, सोई खून की धार है गई, छोटो भईया बोला माता मोय कछु अपराध लग गयौ, बहन बोली माता तें कि अब माता हूं भोजन नांहि करुंगी जाने मेरी तपस्या में कहा है गयौ, भाई फेरि लौहरौ मा पहुचौं, बहन के यहाँ मा बहनोई मरे पाये सो भाई व बहन नें साल भर सेवा करी, मक्खी तक ल्हास पर नहीं बैठने दी। तब सेवा करीयें खूब दोनों भाई बहन ने, तब फेर ऐसी सेवा करी अन्न पानी सब छोड़ कें, तो फिर भगवान का सिंगहासन डिगमगायौ, जब भगवान जी ने नारद जी से कहा है कि देखों कौन भक्त पै कहा औखा पर रही है। तब फिर नारद आये हैं। पलक मारत ही नारद जी सब संसार में फिर आये हैं। आइकें देखते हैं कि बहन-भाई एक लहास के सेवा में लगे हैं। इतने में साल पूरी होने में आई है। तौनूँ करवाचौथ आने को है। सोई नारद जी ने भगवान को बताया है कि वो ही दोनों भाई बहन लहास पर सेवा करते मिले हैं। भगवान साधू रूप धार कर आये हैं। तो उन्हों को समझायौ है और उन दोनों से कहा कि लहास को जलाओ, इसे क्यों खराब करते हो। तो भाई बोला बहन के करवाचौथ व्रत का अपराध है सो मरना मंजूर है। जब करवाचौथ आयेगी तब बहन कौ अपराध छूटेगा। सो भगवान जी बोले हैं सो तैनें करौ सो भलौ करौ, आज करवाचौथ का दिन भी है। सो ऐसौ करौ सो अब जब चन्द्रमा उदय हो तब तुम्हारी बहन अरगा दें। तौनूं दिन पूरो है गयौ चंद्रमा उदय है आयौ है। बहन न्हावे गई और भाई ल्हास पै बैठा है। बहन न्हा धोकर जल का लोटा लेके अरगा कों चली है। सोई बस चन्द्रमा उग्यौ है। सोई कुम्हारि करये लेकें आई है। बहन नें विर्त अरगा दयौ है सोई आकास से गंगा जल की अमृतधार छूटी है, सो ल्हास पर धार की छींट परी सोई राम राम कह कें बैठा है गयौ है। फिर वे ही वर पूज्यौ है सोई बिरत ते पूजे है सो चन्द्रमा में से घी की धार छूटी है। तब ही से धार बही है, जप तप से विरत करके वर पूजो है जब खानौ खायौ है। अब कलजुग में लिख कर पूजे जाते हैं।

३५:२:२:७. किन्तु सुश्री रामेश्वरी शर्मा की कहानी में शिव-पार्वती मिले हैं, और विधि-पूर्वक व्रत-विधान करने का परामर्श दिया है। उस व्रत-पालन से ही पति जीवित हो गया है—उनकी दी हुई कहानी यों है :—

एक राजा के सात पुत्र और एक पुत्री थी। आपस में असीम प्यार होने के कारण सभी एक साथ भोजन करते थे। लेकिन विवाह हो जाने पर लड़की ने करवा-

चौथ का व्रत रक्खा । भाइयों के साथ उस दिन बहिन ने भोजन नहीं किया । उन्होंने भी यह कह कर खाना नहीं खाया कि हम भी शाम को बहिन के साथ ही खायेंगे । लेकिन शाम होते होते वह भूख से व्याकुल हो उठे और बहिन से प्रश्न किया 'तुम्हारा व्रत कब खुलेगा ? 'चन्द्रमा को अर्घ देकर ही मैं भोजन करूँगी ।' बहिन ने संक्षेप में उत्तर दिया ।

लेकिन चतुर्थी को चन्द्रमा देर से निकलता है अतः भाइयों को एक तरकीब सूझी । एक ने दिया लिया और दूसरे ने छलनी फिर पेड़ पर चढ़ कर दिये के आगे छलनी इस प्रकार रखी कि ऐसा विदित होने लगा कि मानों पेड़ के झुरमुट में से चाँद चमक रहा हो । अन्य भाइयों ने बहिन को बुलाकर दूर से चन्दा दिखा दिया । बहिन ने सरल भाव से उसे अर्घ दिया और भोजन करने बैठ गई । लेकिन प्रथम ग्रास के तोड़ते ही किसी ने छींक दिया । उसने अपशकुन समझ कर उसे फेंक दिया, दूसरे ग्राम में बाल निकल आया और तीसरे पर उसके पति की मृत्यु का समाचार आया । लड़की रुदन करती हुई पति के घर चली गयी। वहाँ से पति के शव को लेकर दूर जंगल में सती होने की इच्छा से चल दी । जिस समय वह रोती हुई बनों में जा रही थी उसी समय शिव-पार्वती भ्रमण करते हुये उधर आगये । सुनसान जंगल में अकेली युवती को रोते देखकर पार्वती ने शिवजी से उसके रोने का कारण पूछा तो शिवजी ने कहा 'इसने अनजाने में करवा-चौथ का व्रत खण्डित कर दिया । यदि यह उस व्रत को पूरा कर ले तो इसका पति जीवित हो सकता है' पार्वती जी ने युवती के समीप आकर उसकी भूल उसे समझाई और व्रत की सम्पूर्ण विधि भली प्रकार समझाकर घर वापिस भेज दिया । घर आकर लड़की ने पूर्ण विधि-विधान से व्रत का पालन किया और उसका पति जीवित हो गया । 'भगवान् नें जैसा उसका भला किया वैसा सबका करे' ।

३५:२:२:८. अब वह कहानी दी जाती है जो विशिष्टता युक्त है ।

एक डोकरी के सात बेटा और एक छोरी ई, कातिक के महीना में चौथि के दिनां गाम में छई छापरीं उपासी रहीं, बु छोरी ऊ उपासी रही, साँझ कूं व्वाके सातों भइया कामु करि कें आये, सबन्नें साँझ कूँ रोटी खाई पीई, परि व्वा छोरी नें न खाई, व सातों भइया डोकरी ते बोले मइया आजु हमारी बहनि नें रोटी क्यों नाँय खाई, हम सात भइयान बीच लेंत देंत एक तौ बहनिऐं और बुह भूखी प्यासी ऐ । डोकरी बोली बेटा आजु करवाचौथि ऐ सो लाली उपासी रही ऐ, जब चंदा निकरैगो तब अरगु देकें और व्वाके दर्शन करिकें रोटी खावैगी, वे सातों भइया बोले—जब तक तौ हमारी बहनि भूखीई मरि जायगी, वे आपुस में बोले एक कामु करौ कें एक तौ नसैंनी लाओ, और एक चालनो लाओ और नीम पैं चढ़िकें चालनो में है कें 'दीयौं' दिखाओ, और लाली ते कह देउ कैं चन्दा निकस्याओ सो ज्या ढंग ते उलाइती रोटी तऊ खाइ लेगी, बिन्नें ऐसी ई करयौ, कहूँ ते तौ नसैंनी लाये और चालनी लाये, दीयौ जोर्‌यौ, एकु तौ नीम पै चढ़ि गयौ और द्वै तिनिन नें नसैंनी डाटी, एकु चालनी लैकें और एकु दीयौ लैकें नीम पैं चढ़ि रह्यौ कहाओ व्वाइ देवे गयौ, व्वानें दीयौ चालनी की ओटक में करि लीयौ, एकु बोल्यौ लाली चन्दा निकस्याऔ, देखि, लाली नें देखि कें करुये ते अरगु दीयौ,

अरगु दैकें हात जोरिकें दर्शन कीये, परि ब्वाकूं कछू साँचु न आयौ, वे बोले लाली अब रोटी जें लै, बु छोरी रोटी जेमें बैठी, पहलौ कौर तोर्‌यौ तौ बार निकरि आयौ, दूसरौ कौर तोर्‌यौ तौं माखी निकरि आई, बहू फेंकि दीयौ। तीसरौ गिरासु जबई तोर्‌यौई ओ कै ब्वाके सासुरे ते एक आदिमी आयौ, ब्वानें कही कै तिहारौ महमान मरि गयौऐ झट्ट रोटी छोड़िकें बैठी है गई और रोआराट हौन लगौ, घोंतारौ भयें बु छोरी अपने भइयान के संग सासुरे कूं गई, और जाइकें लाश फूंकत ते रोकि दई, और सब ते कह दई कै तुम अपने अपने घर जाओ में तौ न्याँई रहूँगी. आदिमी बोले अरी बावरी तू ज्या की माँटी क्यों पलीत करत्यै, ज्याइ फूंकि पजारन दै, बु हट परि गई, औरु काऊ की न मानी, आदिमी सबु अपने अपने घरन कूं आये, बु ल्हाश कूं अपने आगें धरि कें बैठि गई, माखी मार्‌यौ करै और भगमान कौ भजनु कीयौ करै। ऐसेंई ऐसें जानें साल कै दो साल ब्वाकूं बीति गये, ल्हाश की माटी है गई और ब्वाके ऊपर घास पैदा है गई, बु बैठी बैठी घासु उखार्‌यौ करै, घासु उखारत उखारत ब्वाकूं बौहौतु दिनां है गये, अब घास थोरी सी आँखिन के ऊपर रही—ब्वाकी एक बाँदी आई औरु ब्वाते बोली बीर तू कछू सहताइलै, मैं तेरी बांदी ऊं कछु मोते ऊ कामु लै लै, कछू ब्वाके ऊ मन में आइ गई, बु ब्वा की बगल ई में लोटि गई। बाँदी ब्वाकी घासु उखारन लगी, ब्वाइ लोटत खैम ओंघ आइ गई, थोरी घासु आँखिन पै हुति काई बु ब्वानें उखारि दई, पलकन के ऊपर ते उखरतई बु ल्हाश सरजीमन है गई, औरु बु उठ्यौ औरु बोल्यौ भाई हम बड़े सोये, बाँदी बोली, अजी आपकूं सोमत ई सोमत नेंक घाटि बारह वर्ष होति आई, बड़े का सोये—वे दोऊ जने म्वाँते घर कूं आये, नंगर में खबरि भई भाई फलाने की बहू बड़ी पति भरता ई ब्वानें अपनों पति जिवाइ गोंहनु छोड़्यौ, बु बिचारी म्वाँ मरहठान में सोई रही। अबई ब्वाइ काऊ बात की खबरि नां—बाँदी ई ब्वानें रानी बनाइ लई औरु दोऊ रहन लगे, द्वै दिनां कै जानें चार दिनां पाछें बु जागी, कहा देखै कै—म म्वाँ ल्हाश ई और न बाँदी, बु उठी, और उठि कें घर कूं आई। ब्वाइ देखि कें—पहलते पहलें बाँदी बोली राजासाब जि हमारी बाँदी ऐ, ज्याऊ नें बड़ी सेवा करीऐ-ज्याऊ कूं रनमास में कछु काम बताइ देउ, ज्याऊ की गुजर बसर है जाइगी, राजा नें ब्वाऊ कूं काम. बताइ दीयौ, और खाइबे कूं सेर भरि जौ बैनों कर दीयौ, बु अपने मन में बोली देखौ नेंक देर के काम करिबे में जि रानी बनि बैठी, और में काग-बिड़ारनी करि दई, वु बड़ी बड़ी ख्यालु करै, और दिन राति रोवै, ब्वा कौ दिनु न कटै। एक दिनां बु दरजी के ढिंग गई, और दरजी के ते बोली, कै हमारे काजें द्वै गुड़िया गुड्डा बनाइ दै, जिनके सहारे ते हमारी दिन औरु राति कटि जाय। दरजी के नें ब्वाकूं द्वै गुड़िया और गुड्डा बनाय दये, बे ब्वानें लाइकें आरे में धरि लये, जब काम पै ते सोफतौ है जाय जबई गुड़िया गुड्डा ते मन बैलाइबे आ जाय-और बिनते कहै कै।.........

सुनि गुड्डा सुनि गुड़िया सुनों हमारौ दुक्खु।
बारह बरस सेवा करी तोऊ न पायौ सुक्ख ॥

ब्या बातें बु जब सोफतौ परि जाय जब रोजु कह्यौ करै, राजा सुन्यों करै, एक दिनां राजा बोल्यौ बाँदी तू गुड़िया गुड्डा ते रोजु कहा कह्यौ कर्‌यै। बु बोली—

राजा साब कछू नाँ मैं अपनों मनु बेंलाइ लेत्यू, राजा बोल्यौ नाँइ कछू तौ कहुत्यं, हमें समझाइ दै। वु बोली राजा साव तुम काये कूँ सुनिग्गे, राजा बोल्यौ जरूर सुनिग्गो। वु बोली जरूर सुनौ तो तिरबाचा भरजाश्रो। राजा नें तिरवाचा भरि लई—वु बोली राजा साव मैं जि कहत्यूं कै मैंनें आपकी बारह् वरस सेवा करी ई और जि जो आजु रानी बनी बैठीयै, जि मेरी बाँदी ई—ज्यानें मोते धोकौ करयौ—आपकी ल्हाश की सबु घासु मैंने उखारि दई, खाली नेंकसी आँखिन पै रही ई जि मेरे ढिंग पहुँची और मोते बोली बहन तुम तनक सहताइ लेउ लाश्रो श्रब मैं उखारूं सो राजा साब मेरी आँखि लगि गई, आँखिन की धास उखरतई आपु सरजीमन है गये और जि रानी बनि गई, सो मैं गुड़िया गुड्डा पै धरिकें ज्याई बातें कह्यौ करतूं। कै सुनि गुड़िया सुनि गुड्डा सुनों हमारौ दुक्ख। बारह वर्ष सेवा करी जौऊ न पायौ सुक्ख। राजानें ब्वाकी कथा सुनि कें बड़ौ ख्यालु कीयौ, और ब्वाई खन बु बाँदी बुलाई और हुकमु दीयौ कै ज्याइ काऊ जंगल में जाइकें मारि आश्रो और बुही अपनी रानी बनाई।

३५.२.२ (८-अ)

इस कहानी में पहिले पाँच तत्व तो प्रायः समान ही हैं। छठे तत्व में पति के पुनरुज्जीवन का तत्व भी विद्यमान है, पर इसके लिए अन्य ऊपर की कहानियों से भिन्न मार्ग इसने ग्रहण किया है। यह इसलिए हुआ है कि ५वें तत्व के बाद पति सेवा के तत्व के लिए इसमें एक अन्य कहानी का कथाँश जुड़ गया है। पति की लाश पर घास उग आई है। वह घास उखाड़ती है। यहीं से दूसरी कहानी का प्रवेश हो गया है।

३५.२.२ (८-आ)

इसी कहानी का सम्बन्ध ऊपर ३५.२.१ (५) में दिये चित्र से है।

३५.२.३. यह स्पष्ट है कि करवाचौथ की कहानी का रूपान्तर उपरोक्त भिन्न-भिन्न चित्रों में प्रस्तुत किया गया है। और उनके द्वारा कथा-तत्वों की ही पूजा की गयी है। दूसरे शब्दों में कथा यदि मंत्र है तो उसका चित्र 'जंत्र' है। कथा तो सुनली जाती है, और समाप्त हो जाती है। उतने से ही वह अपना कल्याणकारी प्रभाव व्यक्त करती है, पर चित्र तो घर में पूरे वर्ष भर विद्यमान रहता है, और अपनी उपस्थिति से ही कल्याण करता है।

३५.२.३ (१) यह चित्र उस तांत्रिक मनोस्थिति का दिग्दर्शक है जिसके कारण बौद्धों में 'ओम नमो मणि पद्मे हुँ' मंत्र को जपने के लिए केवल जाप-चक्र (मानी) ही बना लिये जाते थे, तथा उन्हें घुमाने से ही उतनी बार उस मंत्र के जाप का फल मिलता था। इसी मनोस्थिति के परिणाम स्वरूप बौद्धों में विविध सिद्धों के पट बनाकर टाँगे जाते थे। उसी मनोस्थिति से ये चित्र घर में बने रह कर घर और गृहपति के कल्याण का विधान करते रहते हैं। उन पर दृष्टि पड़ने से भी कल्याण होता है, उनकी पूजा का प्रभाव जाग्रत हो जाता है।

३५.२.४. करवाचौथ के अनुष्ठान में निम्नलिखित बातों पर ध्यान रखा जाता है:—

१. करवे जल भर कर रखे जाते हैं। एक करवा और एक अठियावरी गौर के लिए भी रखी जाती है।

२. कहानी सुनने के उपरांत सुहागिन दौरानी-जिठानियाँ करवे बदलती हैं। जहाँ कोई और सुहागिन स्त्री नहीं होती वहाँ गौर के करवे से ही करवे बदल लिए जाते हैं।

३. करवे बदलते समय कहा जाता है—लेउ सुहागिन करवे लेउ।

४. गौर मिट्टी की पूरी बनायी जाती है। सिर बनाया जाता है, बेंदी लगायी जाती है, सिंदूर भरा जाता है, माँग बनाकर। उसके हाथों में मिट्टी का लड़का भी दिया जाता है।

५. पूजा के उपरान्त अठियावरी घर की सब से बड़ी बूढ़ी को दी जाती है। उससे पैर छूकर आशीर्वाद माँगा जाता है।

६. चन्द्रमा निकलने पर करवे से उसे अर्घ्य दिया जाता है।

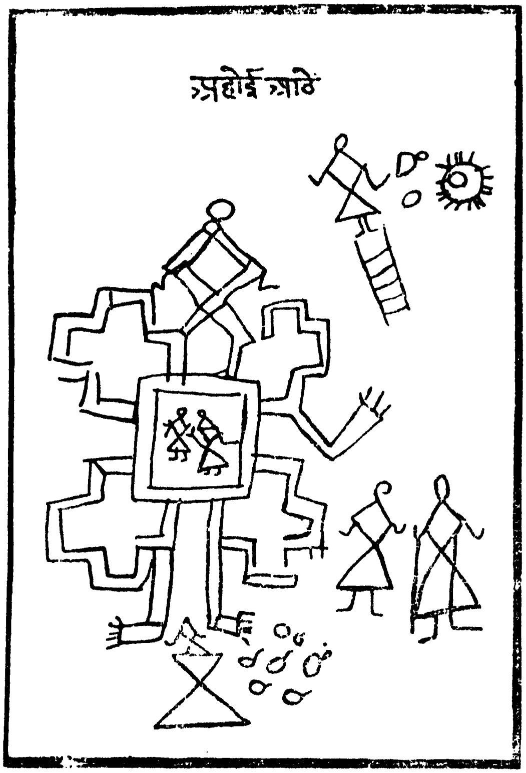
७. इसी के उपरान्त भोजन किया जा सकता है।

३५.३. अहोई आठें

करवाचौथ स्त्री के सौभाग्य से संबंधित है, वह पति-कल्याण-कामना और पतिव्रत के भाव से ओत-प्रोत है। पर यह 'अहोई आठें' कार्तिक कृष्णा अष्टमी को आती है, और संतान की कल्याण-कामना से परिपूर्ण है।

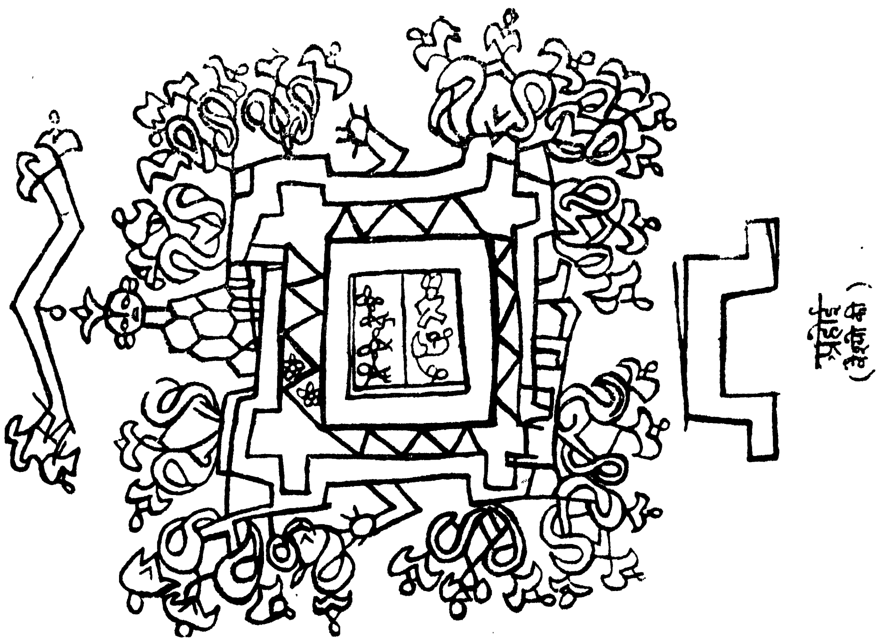
३५.३.१. इस अनुष्ठान में भी चित्र अंकन, चित्र पूजन, गौर-पूजन, तारों को अर्घ्य, अठियावरी भेंट, कहानी सुनना—इतने आनुष्ठानिक कार्य होते हैं।

३५.३.२. अहोई आठें के आठ चित्र हमें विविध क्षेत्रों से प्राप्त हुए हैं। उन्हें विकास-क्रम से निम्न रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है:—



३५.३.२ (१)

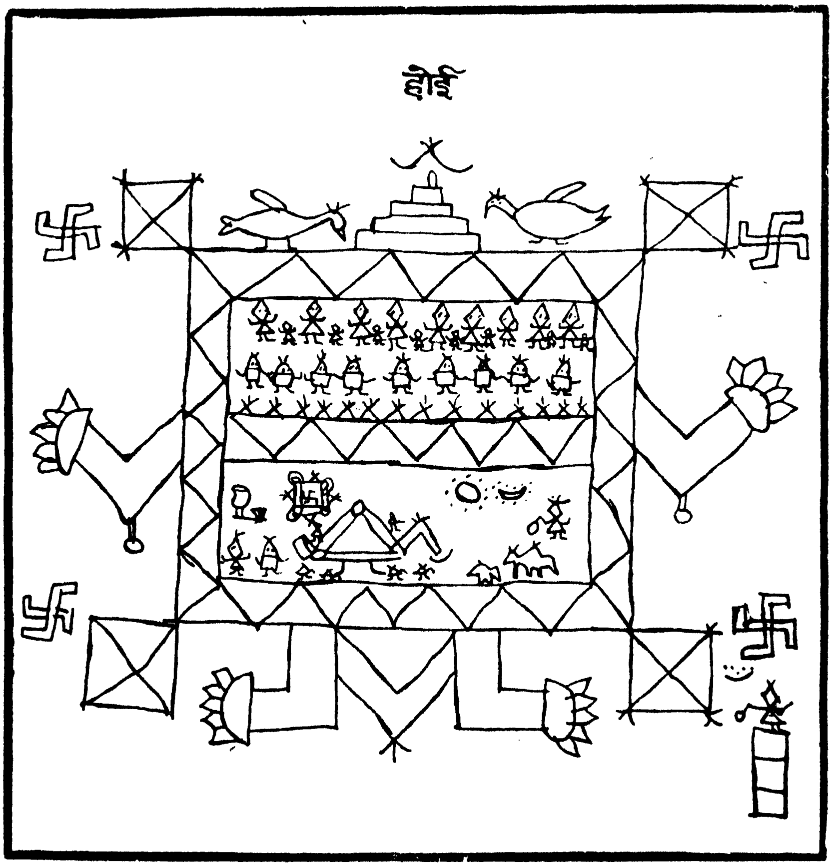
यह चित्र अत्यन्त ही स्थूल रेखाओं मात्र से बना चित्र है। चित्रकार का अभिप्राय केवल अनुष्ठान-मात्र के लिए एक सामान्य प्रयत्न प्रस्तुत करना रहा है। बिना किसी प्रकार की कलात्मकता का ध्यान किये ही, सामान्य रेखाओं से स्वाभाविक आवश्यकता भर का दिग्दर्शन इस चित्र में है। फिर भी चार कोनों पर चार योग-चिन्ह (+) रूप में अंकित कर तांत्रिक मूल की ओर संकेत अवश्य करते हैं।



३५.३.२ (२)

यह चित्र पहले से कुछ अधिक कलात्मक प्रतीत होता है। पर कला का प्रयत्न विविध स्वस्तिक गुरियों के अंकन में ही दिखायी पड़ता है। चारों कोनों के योगात्मक घरों ने परस्पर मिलकर सम्पूर्ण विधान के लिए एक चौक का रूप ग्रहण कर लिया है, चारों कोनों पर उन योग (+) चिन्हों की आधी बनावट रह गयी है। इसमें अन्य कई आवश्यक अभिप्रायः (Motif) छूटे हुए हैं। पर रूपरेखा ३५:३:२ (१) के चित्र से मिलती है।

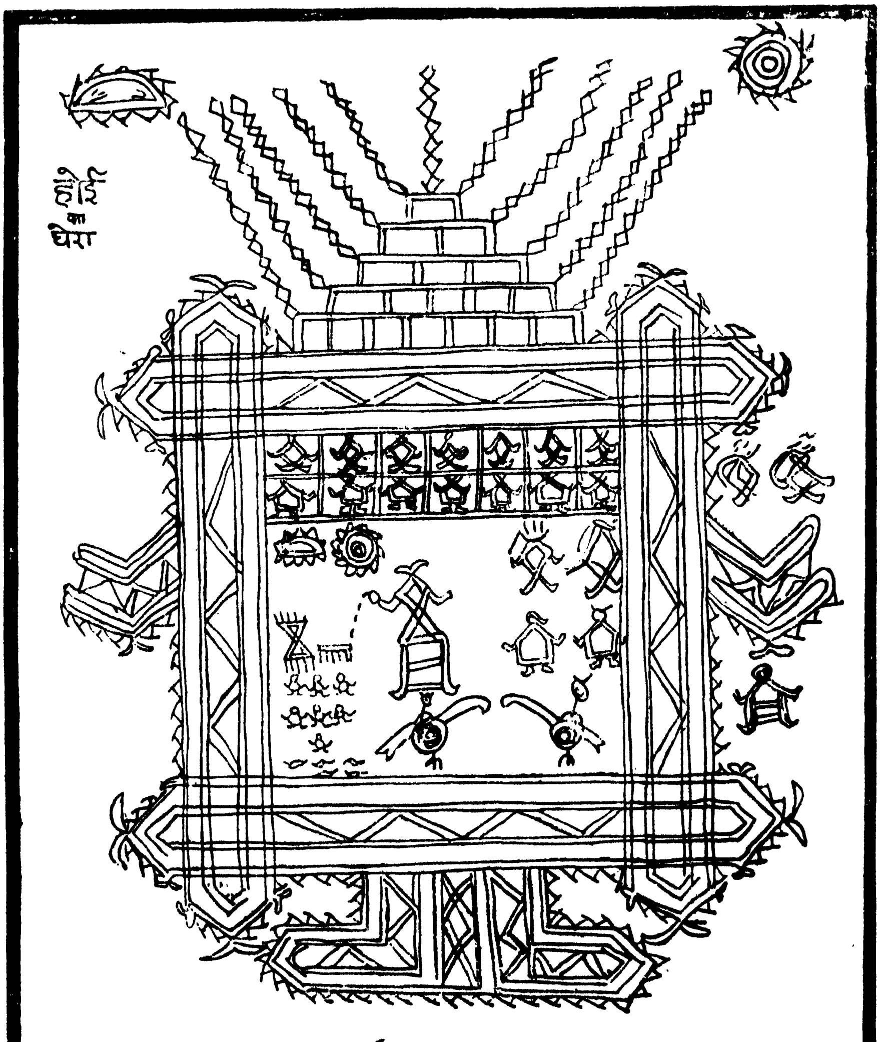
३५.३.२ (३)



इसकी रेखाएं पहले तथा दूसरे की अपेक्षा अधिक सधी हुई हैं, यह स्पष्ट प्रतीत होता है। अहोई का घेर ही विशेष बड़ा है, वह जटिल भी नहीं। आभूषण भी सीधे-सादे हैं पर कुछ सँभालकर बनाये गये हैं। अन्य अभिप्राय बहुत कम हैं।

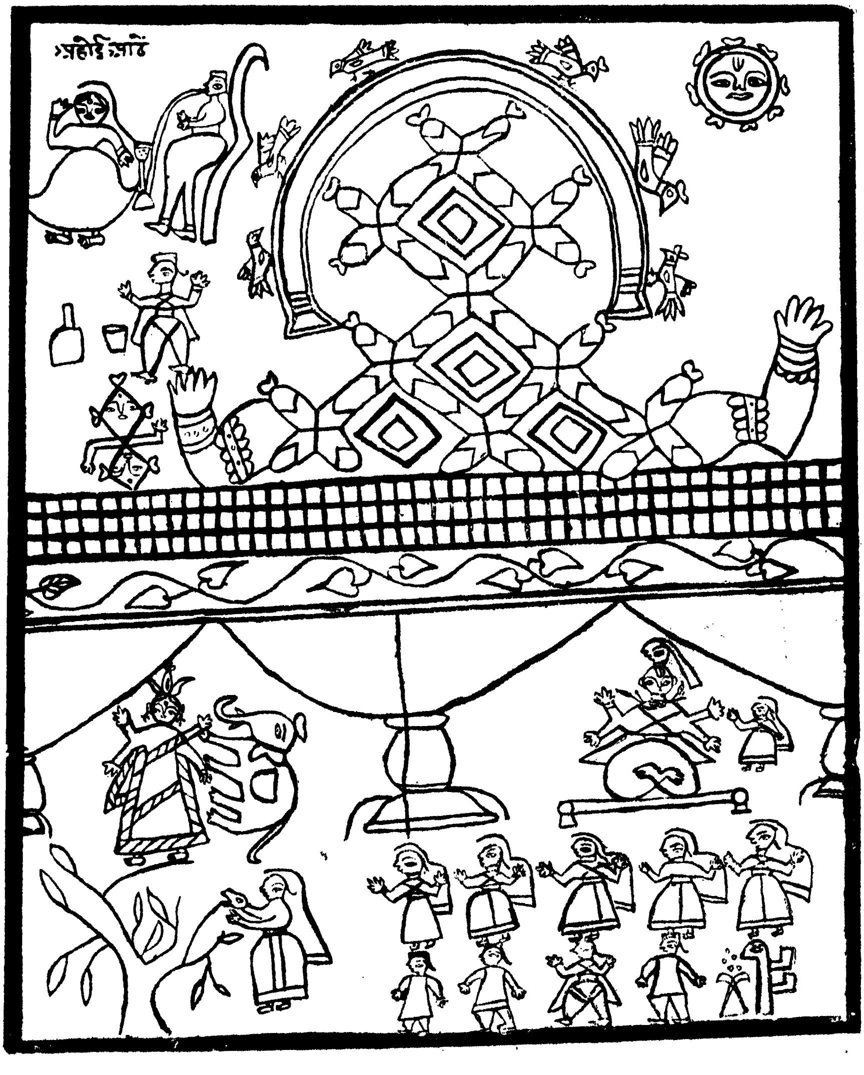
३५.३.२ (३-अ) इस चित्र की रेखाओं में ऊपर के दोनों चित्रों से अधिक स्पष्टता और सुन्दरता प्रतीत होती है। विविध स्वस्तिकों, चौकों और गुरियों के बनाने में उलझी रेखाएँ और जटिल रूप नहीं खींचे गये, पर इस अनुष्ठान के लिए आवश्यक अभिप्राय इसमें उपरोक्त दोनों से अधिक हैं।

३५.३.२ (३-आ) यह विश्वास प्रचलित है कि अहोई के चित्र में अहोई का सिर नहीं बनाया जाता। यह बात इस चित्र में ठीक-ठीक विद्यमान है। अहोई के चित्र के हाथ बने हुए हैं, पैर बने हुए हैं। गरदन का प्रतीक भी है, पर सिर नहीं बनाया गया
३५.३.२. (४)



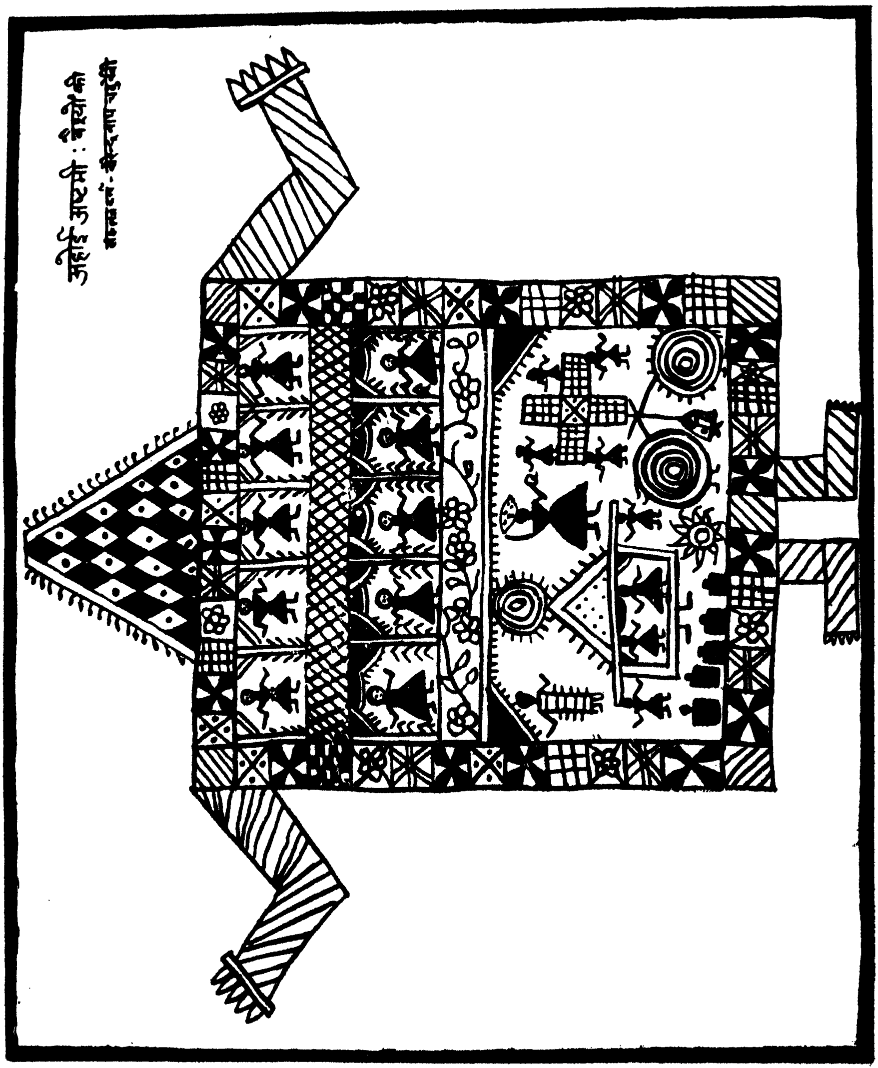
इस चित्र में तीसरे चित्र से अधिक कारीगरी दिखायी गयी है। अहोई के संपूर्ण चौक में आलंकारिक विधान मनोयोग से और सुघराई से किया गया है। आनुष्ठानिक अभिप्राय जो अधिकांशतः अहोई के पेट में ही चित्रित किये हैं, अपनी लोक-मानसिक रेखाओं के साथ तो हैं, पर रेखाओं का अंकन सावधानी से किया गया प्रतीत होता है। सूर्य और चन्द्रमा इसमें बाहर भी हैं, और चित्र ३ की भाँति पेट में भी हैं। सिर नहीं है, पर विविध जंजीरी किरणें अहोई को आभामय बनाती प्रतीत होती हैं।

३५.२.२ (५)



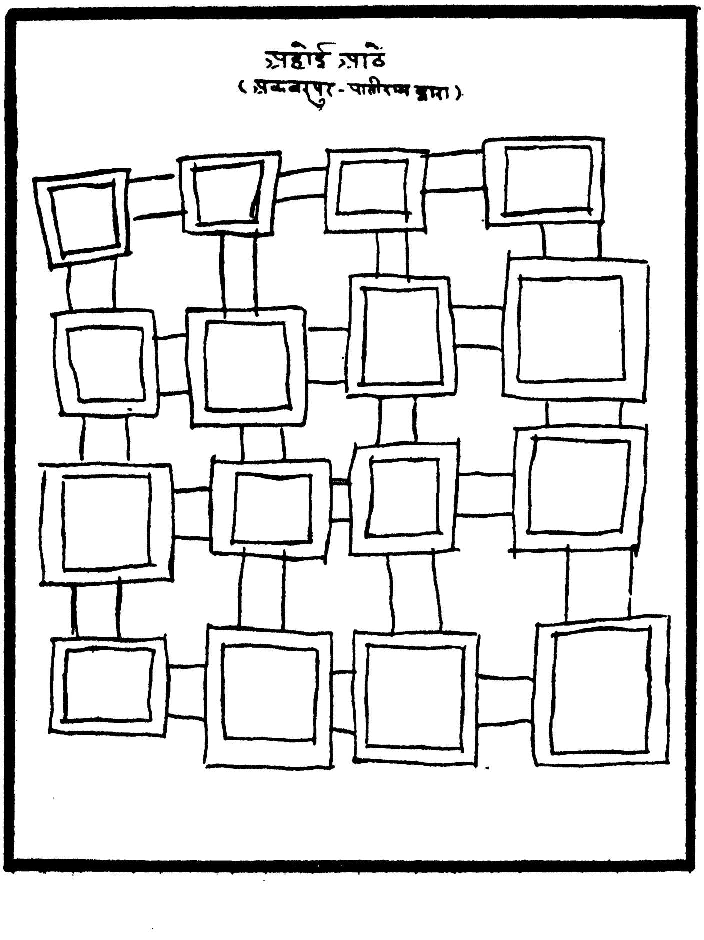
उक्त चित्र के उपरांत यह चित्र रखा जा सकता है। इसमें कलात्मकता का विशेष ध्यान रखा गया प्रतीत होता है। इसके लिए अहोई के हाथों को उदाहरणार्थ प्रस्तुत किया जा सकता है। ज्यामितिक रेखांकन, पक्षी तथा अन्य सभी अभिप्रायों के चित्रण में कलात्मकता का समावेश मिलता है। समस्त चित्र का विधान भी कुछ अनूठा ही है तथा दूसरों से नहीं मिलता।

३५.३.२ (६)



यह चित्र विधान की दृष्टि से तो परम्परा के अनुकूल ही प्रतीत होता है। ५ की भाँति विधान में ही अनोखापन नहीं प्रस्तुत किया गया। हाँ, उसी बहु-ग्राह्य रूप-विधान को अधिकाधिक कलात्मक बनाने की चेष्टा की गयी है। समस्त चौक को चतुर्दिक विविध डिजायनों से युक्त गोट से सुसज्जित किया गया है। अहोई की देवियाँ सुन्दर घरों में स्थापित की गयी हैं। उन्हें महराबों से युक्त कर दिया गया है। फूल-पत्तियों के काढ़ने देकर दो हिस्से कर दिये गये हैं। नीचे के अंश में अन्य आनुष्ठानिक चित्र हैं, सभी को सुन्दर रूप में प्रस्तुत करने की चेष्टा दिखायी पड़ती है। मुख के स्थान पर जो जाली युक्त सूच्याकार त्रिकोण दिया गया है, वह भी सुन्दर प्रतीत होता है।

३५.३.२ (७)



यह सातवाँ चित्र उपरोक्त परंपरा से बिल्कुल ही भिन्न है। चतुर्भुजों का एक तांत्रिक विन्यास सा इसमें प्रतीत होता है।

३५.३,३. अहोई आठें पर जो कहानी कही जाती है वह 'स्याहू' या 'स्याऊ' की कहानी है। सभी स्थानों से एक ही कहानी मिली है, उसमें परस्पर कुछ अन्तर अवश्य है। उन्हें दिखाने के लिए ये कहानियाँ यहाँ दी जा रही हैं।

३५:३:३ (१) अहोई आठें की कहानी—

एक दिन भौजाई, नन्द ते बोली, चलौ आजु पीरी माँटी लै आमें, नन्द नें नाहीं करि दई, कै हम नाँय जाँय, हम तौ आजु उपासी ऐं, तुही लै आ। भौजाई बोली, ए लाली चलौ, में खोदि दुंगी तुम भर्ति जइयौ, कछू ब्वाकी समझ में आइ गई, और झट लै डला ब्वाके संग चल दई, पीर खदाने में पौंहोंचीं, भावी फावरे ते माँटी खोदिबे लग गई, खोदते-खोदते माँटी में द्वै तीन अंडा बच्चा निकरे, बे फावरे ते कटि गये, ये अंडा बच्चा चकोल चकवा के ए, ब्वा दिनां ते ब्वाकूं ऐसौ सराफु लग्यौ, जब ब्वाकें बालक होइ, बुही बालक मरि जाय और कातिक लगती आठें कूँ बरस दिनां के दिनां ब्वाकौ बच्चा मरौ दीखै, ज्याई तरह ब्वाके छै बालक मरे और छैऊ छोरा ई छोरा भये, जब सातईं पोत बच्चा हैवे कूँ भयौ तौ बु घर कूँ छोड़िकें बिटौरा में चली गई, म्वाँ ब्वाकें बच्चा पैदा भयौ, ब्वाते काऊ नें कही कै देखि तेरे बच्चान्नें स्याओ मइया लै जातयैं, सो तू एकु कामु करियौ कै जब बु आवै तौ तू जगी रहियौ, ब्वानें कही अच्छौ, ब्वाई आठें कूँ आधी राति के वखत स्याओ मइया आई, पहलें एक आई, बु ब्वाइ पकरिवे चली बु बोली मोते पीछें आवै ब्वाइ पकरियौ। ऐसें ईं बु दूसरी कह गई और ऐसेंई तीसरी, छैऊ ऐसें ई कह कें चलीं गईं। सबते पीछें सातईं एक बूढ़ी सी डोकरी आई, ब्वानें बु पकरि लई, और बैठारि कें ब्वाकें जूंआँ देखन लगी, छोरा गोद में स्वाइ लीयौ, जूंआ देखति जाइ, और कबऊँ-कबऊँ छोरा ऐ नौंचि दे सो छोरा रोमन लगै, स्याओ मइया बोली, एरी तू मेरे जीवा कै काये कूँ स्वाय रही ए, तोइ नेंक प्यारु करनों ऐं तौ करि लै में तौ अपने ए लै जाऊँगी, बु बोली, अम्मा जि तेरे कान की तरकी सी ऐं देखिकें रोइ जातवै, तू ज्याइ दै दै। स्याओ मइया बोली, इतराइ मति। कहूँ हाल के बालक काऊ चीज कूँ रोम तऊ हुंगे। बु बोली, अरी हम्बै तू ज्याइ दै दै, देखि हवाल रहस्वै। स्याओ मइया बोली लै तू ज्या तरकुलाऐ लै ले, ब्वानें उतारि कें फेंकि दई। तरकुली सी के फेंकत ई ब्वाके बेऊ छै बालक म्वां के म्वांई पैदा है गये, स्याओ मइया बोली में तो तोइ छलिबे आई ई, परि तैनें तौ मेंई छलि लई, जा अब तेरे बालक अमर है गये और जि जो झगड़ौ तो ते लगि रह्यौ ओ, अब न रहैगौ। ऐसें कहकें स्याओ मइया म्वाँते चली गई। इतमें ब्वाकी औरु, जिठानी, नन्द, अहोई आठें कौ बरतु रहीं ई वे अपने बालकन ते बोलीं देखि अइयों कहूँ सद रोमनी रोइ तौ नाँय रहीं, हमतौ अब अरगु दैकें उपासु खोलिंगी, बालक आये, और ब्वाके ढिंग छैऊ बालक खेलत देखे, वे उल्टेई भगे और बोले—वु तौ बड़ी मगन है रही ऐ, और छै सात बालक ब्वाके ढिंग खेलि रहे ऐं, सुनि कें बे बड़ी अचम्भे में भगी-भगी ब्वाके ढिंग आईं, और बोली ये बारी कौन के बालकन्नें लै आई ऐ, बु बोली भैनाओ मोइ तौ बु स्याओ मइया दै गई ऐ, में काऊ के बालक नांइ लाई, जे तौ मेरे ई छैऊ ऐं, ब्वानें

बु सबु किस्सा बिन्नें सुनायौ, फिर अपने घर आईं, ब्वा दिनां ते वूह अहोई आठें कौ बरतु रहन लगी।

३५:३::३ (२) दूसरी कहानी—

एक राजा के सात बेटा और एक बेटी थी। उसका नाम बींझा बेटी था। अहोई आठें के दिन सास ने बहुएँ मट्टी खोदने भेज दीं, पीछे से नन्द भी संग लग ली, बहू उसे भी लिवा ले गई। वहाँ जाके नंद से बोलीं—हम सब टट्टी हो आवें; जब तक न आवें, मट्टी मत खोदियो। वे चली गईं। बींझा बेटी खोदने लगी। मट्टी में से स्याऊ के बच्चे निकले, वह उन्हें काटती गई। इसी तरह छै बच्चे मार डाले तो स्याऊ खाऊँ-खाऊँ करती निकली। इतने में बहुएँ आ गईं। बोलीं—एजी, आप इसको माफ कर दो, इसके जो बाल बच्चा हो, उसे आप खा जाना। स्याऊ ने माफ कर दी। जब कभी उसके बच्चा होता, उसे स्याऊ खा जाती। इसी तरह स्याऊ ने उसके छै बच्चे खा लिए। जब सातवाँ हुआ, तो उसने एक पड़ौसन से कहा कि कोई उपाय बताओ कि यह बच्चा बच जाय। बोली कि अपना घर लीप-पोत सात नाँद अन्न की धरवा, एक तरकारी की धरवा। जब स्याऊ आवे और खा पी चुके, तो कहियो—आओ सास, जूँ देख दूँ। तो जब तू जूँ देखे, तो अपने बच्चे को नोंच लीजो। जब बच्चा रोवे और स्याऊ कहै कि, बहू, यह क्यों रोवे है, तो कह दीजो यह तुम्हारी कान की बाली माँगता है। उसने ऐसे ही किया। खाऊँ-खाऊँ करती स्याऊ आई और नाँदों पर फैल गई। जब पेट भर गया तो बहू बोली कि सासूजी, जूँ देख दूँ। उसने कहा कि देख दे। वह देखने लगी और बच्चे को नोंच दिया। वह रोने लगा। स्याऊ बोली—यह क्यों रोवे है? कि तुम्हारी बाली मांगे है। स्याउ ने बाली निकाली, तो पहले छओं बच्चे निकल पड़े। कोई खेलता, कोई कुछ करता और कोई कुछ करता। पहली आई काई को मत अइयो, पिछली आई सब काहू को अइयो।

३५:३:३ (३) अघोई आठें की कहानी—५७

नन्द भाभी माँटी लैवे गईं भाभी नें नन्द ते कही कि मैं तौ परात ले आऊं तू माँटी खोद ले। तो, वापै स्याओ के बच्चा मर गए। आई स्याओ माता वाकी नन्द कूँ खामन लगी। इतने में वाकी भाभी आई वाने कही कि तू याहे मत खावे तू मेरे बेटा कूँ खाय लीजो। वानें कही अच्छी तो वाकें एक बेटा भो वाये खावे कूं स्याओ माता आई वा छोरा है खाय गई फिर ऐसे छः बेटान नें खाय गई तो वा भाभी नें काऊ ते पूछी तौ एक डुकरिया नें कही कि जब स्याओ माता आवे तो सात कुड़ेलियाँ बनाकर एक में चामर दूसरे में पूआ तीसरे में कढ़ी चौथे में सेंमई पाँचमें में बीआ, छटवी में खीर सातवें में फुलका औ बिटौरा में बेटा जनियो। वानें ऐसें ही करी। जब स्याओ आई तो वानें एक एक करके सब चीज खवाय दीनीं औ अपनी लामिन में छोरा दुबका लियौ जब स्याओ माता भिक गई तो मूंड़ में जूंआ टटोरन लगी। तौ ऊ भाभी माता के जूंआ देखन लगी तो वाकौ छोरा रोमन लग्यौ तौ माता नें पूछी तो वानें कही कि आपको नाती है यों कहरौ है कि अपनी दुरपती है देऔ। माता ने दुरपती उतार के दई तौ वाके सातों बेटा बिटौरा में खेलन लगे। बिटौरा को महल है

गयौ तौ बाकी सास देखवे आई वानें देखे कि खारबुखार भर गए बिटौरा कौ महल है गयौ। पहली आई कोऊ कूं मत अइयौ पिछली सब काऊ कूं अइयौ।

३५:३:३ (४)—५८

अहोई आठें आई। सास ने कही बहू से और बेटी से तुम खदाने में से मट्टी ले आओ, आज बिरती रहेंगे सो लीपापोती करेगें। वो दोनों जनी गईं जाकर नन्द ने मिट्टी में कुदारी मारी। मिट्टी के भीतर सिआओ बिआयो के बच्चा बैठे। नंद के हाथ से कट गऐ। आई सिआओ वानें कही तुमनें जे का करो मेरे बच्चा काट दिए अब मोऐ अपनी कूँख दे या माँग दे। तौ उसकी भाभी बोली जाके नहीं देने दूँगी, जाकी माँ मुझसे लड़ेगी। मेरी कूंख लेले। कह कें वो दोनों चली आँईं। जब अहोई आठें आई जबी उसके लड़का होय और सिआओ आवै। उसके लड़के को ले जावै। बो रोती जाया करे। इसी प्रकार छह लड़काओं को ले गई सातवें कौ नंबर आयौ। एक बुढ़िया आई वानें कई तू खूब लीपियो और पोतियो, खूब पूड़ी पूआ बनाके रख लीओ जब सिआओ आवै तौ वाके पैर छू इओ और बाते कहियो पूरी खाओ पूआ खाओ। वह सिआयो झिक गई तो वानें कही में खब झिकी। आज अम्मा जी तुम झिक गईं। आज तो तुम्हारे जूआँ देखूं। उन्हौंने जूंआँ देखे। लड़का गोदी में ले लिया जूंआ देखती जाय और अपने लड़के को नोंचती जाय। लड़का खूब रोऐ। सिआओ नें कही जें क्यों रो रहा है। अम्मा जे बड़ा सैतान है। ये तुम्हारे कान में तुरपती पुर रही हैं इनको माँग रयौ। तुरप्ती क्या बच्चा से जादा है। तुरप्ती छै थीं सभी तुरप्ती लड़के को दे दीं। सिआओ चली गई छै औ तुरप्ती के छै लड़के बन गए और सातों खेलने लगे। पड़ोस में सब कान लगा रहीं कि आज सतरोई क्यों न रोई। वो सब उसके घर आई तो सातो लड़के खेल रहे थे।

३५:३:३ (५) कार्तिक में इस व्रत को केवल बेटा की माँ ही रखती है।

सात दौरानी-जिठानी ईं। छैन के तौ बेटा जीमत ऐ। सातईं के बेटा साल भरि के हुं कें ईं छीजि जाँतए। जाकौ कारनु जि हो कै बु एक दिनाँ मट्टी लैबे कूँ गई। ब्वाके पाँवरे ते स्यांपिन के बच्चो-बच्चा कटि गए। बुही स्यांपिन ब्वाके बेटान नें काटि जाँती। अहोई आठें कूँ छैन के घर राग रंग होंत ए। ब्वा बिचारी के घर रोहा-राट् मचतौ।

एक पोत अहोई आठें कौ दिनाँ ओ। एक ब्होतु कछू फूंस डोकरी ब्वाके जौरें आई। ब्वानें कही कि आजु तू बर्तु रहि जा। द्वै नाँदन में दूध भरवाइ कें अपने कोठे में धरवाइ दै। एक में मीठौ और एक में नोंन कौ। फिरि स्याहो माता (स्यांपिन) दूध पीवे आवैगी। फिरि तू अपने जा छोरा ऐ लैकें बाहिर निकरिओ। फिरि स्याहो माता ऐ पकरि कें बैठि जैयो और ब्वाके मूंड़ के लोक-जूंआ बीनिओ। छोरा ऐ बेरि बेरि नोंचि खायौ करियो। बु जब रोवैगो तो स्यांपिन कहैगी कै री तू जाइ राखि लै। फिर बु तो पै परसंद है जाइगी और तोते कहैगी कि तोइ माँगनों होई सो माँगि लै। जा पै तू अपने सातौ बेटन नें माँगि लीजो।

ब्वानें ऐसोई करयौ। जब स्यांपिन नें कही कि तोइ माँगनों होइ सो माँगि लै तौ ब्वानें अपने सातौ बेटा माँगि लए। बु अपने बेटन की ल्हासन ऐ घलि गई। स्यांपिन

नें कही कि तू मेरे बच्चौ-बच्चन नें छोड़ि। स्यानें कही कि मैं तेरेन नें कहाँ ते लाऊँ। वे तौ कटि गए। मेरे बेटन की ल्हास तौ धरी एँ।

स्यौंपिन नें कही कि खैरि, जो कछू भई सो तो भई। अब आजु ते इतमें मेरे मरे भए बच्चन नें तू पुज्जिमान मानियो। कच्चे दूध में कौला घिसिकें उनें काढ़ौ करियो। फिरि उनकौ पूजन कर्‌यौ करियो। मैं तेरे बेटननें सरजीवन करें देतिऊँ। स्यौंपिन नें बेटन कौ जहर सूंति लीयौ। बे जीमते है गए।

(सं० क० चन्द्रभान (लोहबन)

३५. ४. धन तेरस
३५. ५. नरक चौदस
३५. ६. दिवाली
३५. ७. स्याहू-पूजा
३५. ८. अन्नकूट
३५. ९. गोवर्द्धन-पूजा
३५. १०. भैया दूज या यम द्वितीया

कार्तिक के ये समस्त त्यौहार व्रत एक बड़े त्यौहार दिवाली के पहले-पीछे जुड़े हुए एक प्रकार से एक ही त्यौहार या व्रत का अंग-रूप हो जाते हैं। अतः इन पर एक साथ ही विचार करना समीचीन प्रतीत होता है।

३५:४. धनतेरस

धनतेरस पर साधारणतः यह आवश्यक समझा जाता है कि इस दिन कोई धातु की वस्तु क्रय करके घर में अवश्य लायी जानी चाहिये। इससे वर्ष भर सम्पत्ति की वृद्धि होती है। फलतः इस दिन बर्तनों की बहुत बिक्री होती है। प्रत्येक घर में एक नया बर्तन अवश्य पहुँच जाता है। अन्य प्रकार की स्वच्छता के साथ पात्रों की स्वच्छता का महत्व इससे प्रतिपादित होता है। पुराने टूटे फूटे बर्तन इसी दिन बदल दिये जाते हैं। और घर में नये बर्तन जगमगाते हैं। कहीं-कहीं धनतेरस के दिन से दिवाली तक तीन दिवस निरंतर लक्ष्मी-पूजन होता है। धन-तेरस लक्ष्मी-पूजन का आरम्भिक दिवस है। इस दिन स्त्रियाँ उबटन आदि करके स्नान करती हैं। लक्ष्मी की मूर्ति को दूध से स्नान करा के पूजते हैं।

३५:५. नरक चौदस

दूसरे दिन नरक चौदस होती है। इस दिन तैल मर्दनकर स्नान करना अत्यन्त अनिवार्य है। सायंकाल को आटे का चौमुख दीपक बनाकर मोरी में रख दिया जाता है। यह 'जम दीया' कहलाता है। यह ध्यान रखा जाता है कि उस दिन दीपक को कोई जल्दी न बुझा जाय। कहीं-कहीं इस दिन अँधेरे में ही उठकर स्नान किया जाता है। तब चावल के आटे का दीपक बना कर और लड्डू बना कर किसी बालिका द्वारा प्रत्येक पुरुष की आरती उतारी जाती है। उसके सामने चिराग रख दी जाती है। वह पुरुष चिराग को बाँये पैर से कुचल कर बाँये पैर की ठोकर से दीपक बुझा देता है। तब दुबारा स्नान

करता है । नये-नये वस्त्र पहिनता है । यह मानो नरकासुर के बध पर शुद्धि के लिए स्नान किया जाता है ।

३५:५:१. जमदीये की एक कहानी कुछ इस प्रकार बतायी जाती है:—

एक बुढ़िया रही । उसके एक बेटी ही । और कोई न था । तो गरीब बुढ़िया औरों का नाज पीसने जाया करे ही । उसकी बेटी उसमें से चुरा कर खा जाती । मा को पता न चलता । आटा घटता तो नाजवाली कहती, बुढ़िया कसम खा जाती कि जो मैंने नाज चुराया हो, तो मुझे कीड़ों की गाड़ हो । बुढ़िया तो मर गई, बेटी यमराज को ब्याही गई । जब उसे रहते-रहते बहुत दिन हो गए, तो किसी की भेजी हुई दूती उसके पास आई और कहने लगी कि तेरा पति तुझे प्यार नहीं करता । कि तुमने कैसे जाना ? बोली—वह तेरे साथ छुपाव करता है; देख, तेरे घर में सात कोठरी हैं, उनमें से इसने तुझे एक भी नहीं दिखाई । यह सुन कर यमरानी ने कहा कि आज अन्न-जल तब करूँगी, जब मुझे कोठरी की ताली दे देंगे । यमराजा घर आए, सो रानी रूठ के खाट पै जा सोई । राजा बोले—रानी क्यों पड़ी हो ? कि तुम मुझसे बहुत छुपाव करने लगे हो । आज अन्न-जल तब करूँगी, जब मुझे कोठरी दिखा दोगे । राजा बोले—रानी । तुम्हें बहुत दुःख होगा, ऐसी जिद मत करो । कि ना, चाहे कुछ हो, मैं तो देखूँगी । राजा ने ताली का गुच्छा दे दिया । बस वह कोठरी देखने लगी । किसी में कुछ देखा, किसी में कुछ देखा । एक में क्या देखा कि उसमें एक गड्ढा खुदा हुआ है और राद खून और कीड़ों से भरा हुआ है, उसी में उसकी माँ गोते खा रही है । यह देख उसे बहुत दुख हुआ और पहले दिन की भाँति फिर रूठ के पड़ रही । यमराजा आए कि रानी अब क्यों पड़ी हो ? बोली कि, राजा, तुम इंसाफ करो, दे सको तो स्वर्ग दो । मेरी माँ की यह दसा तुमने कर दी है । कहा कि रानी यह तुम्हारा ही परताप है, तुम जो नाज चुरा कर खातीं थीं, और यह जो झूठी कसम खाया करे ही उसी का दण्ड इसे मिला है । कि, राजा, चाहे कुछ हो, अब या तो मेरी मा को अच्छा करो, नहीं मैं अपने प्राण दे दूंगी । बोले कि अपनी माँ से पूछो कि हम सकोरा-भर राई खेत में बखेर दें, तो वह समेट लावेगी । कि, माँ, यमराजा ऐसा कहते हैं, तू भर लाएगी ? कि बेटी, भर लाऊँगी । गई खेत में । कीड़ों के खाए हाथों राई न बिनीं । बोली—बेटी, मेरे कीड़ों के खाए हाथ; मुझसे राई ना उठे । मेरी कीड़ों की गाड़ ही भली है । फिर उसी में जा पड़ी । कि, राजा, मेरी माँ से तो राई न भरी जाय । कि अच्छा उससे पूछो कि वह मेरी धोती धो दिया करेगी । कि माँ राजा ऐसा कह रहे हैं । कि, बेटी, धो दिया करूँगी । आई निकल कर । यमराज की धोती, लाद की लाद, उससे न धुली । फिर जा पड़ी । राजा, मेरी माँ से तो यह भी नहीं होता । कहा कि हमारे बाल बच्चों को खिला लिया करेगी ? कि, बेटी, खिला लिया करूँगी ? बच्चों को गोद में लिया, तो भला यम की औलाद । कभी उसको नोचें कभी काटें । बुढ़िया तंग आ गई । बोली—भाड़ में जाओ, मुझसे ये नां खिलें । मेरी तो गाड़ ही भली है । फिर जाकर कहने लगी कि, राजा मेरी माँ से तो तुम्हारे बच्चे भी

नां उठें। बोले कि अच्छा, गंगा-पार एक धोबन है, वह दिया-गौर किया करै है, और वह गर्भवती है, और फलाने दिन कसटेगी। तुम उस दिन गूजरी का भेस धरके उसकी बेटी से दिया-गौर माँग लाना, उससे तुम्हारी माँ अच्छी हो जावेगी। उसने ऐसा ही किया। दही लेकर उसके दरवाजे पर चिल्लाने लगी—दही लो, दही। उसकी बेटी बोली—बहनाँ, यहाँ दही न चाहिए। यहाँ तो खुद ही मुसीबत पड़ रही है। कि क्या बात है? कि चार दिन हो गए, मेरी माँ कसट रही है, बच्चा ही ना हो। गूजरी बोली कि तेरी माँ कुछ पूजा-पाठ भी करा करै है? कि हाँ, दिया-गौर का पूजन किया करे है। कि वह मुझे दे दे अभी तेरे भइया कर दूँ। कि अच्छा। बस लाकर उसने दे दी। वह तो लेकर चली आई। उसके उसी वक्त लड़का हुआ। जब दस दिन की धोबन हो गई बोली—बेटी, मेरी दिया-गौर ला; मैं पूजा करूँगी। कि दिया-गौर तो मैंने गंगा-पार की गूजरी को देदी। बेटी तैंने बुरा किया। मुझे कीड़ों की गाड़ में कर दी। कि माँ, मैं ऐसा न करती, तो कहाँ से तो भैया आता, और कहाँ तू बचती। बुढ़िया तो अच्छी हो गई और धोबन को उसकी गति मिल गई।

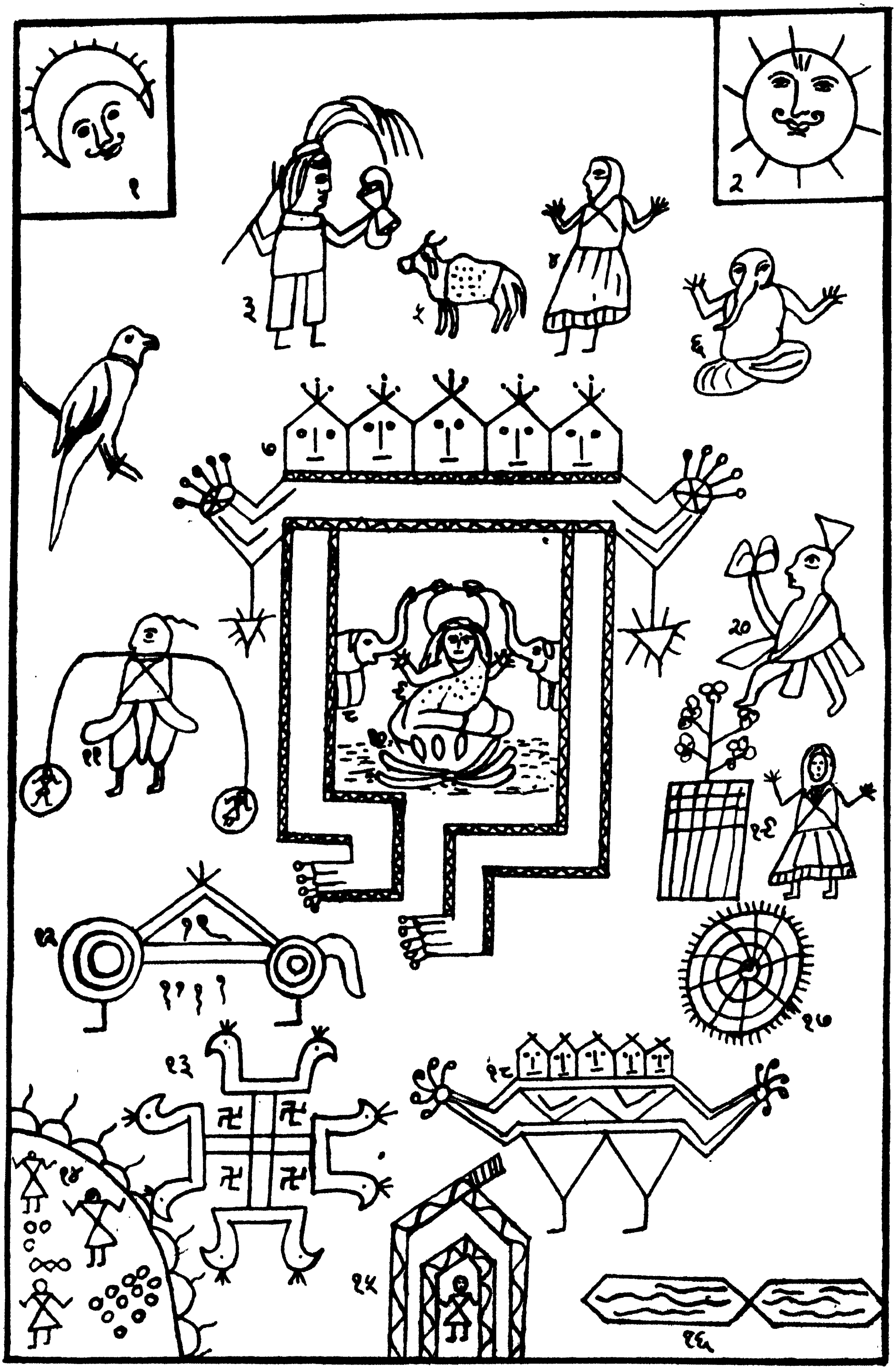
३५. ६. दिवाली

अमावस्या को दिवाली होती है। दिवाली के दिन कहीं-कहीं आठें से घर में चित्र बनाये जाते हैं। ब्रज में तो करवा चौथ से ही चित्र बनते हैं। चौथ, आठें और अमावस्या को अलग-अलग चित्र बनते हैं, करवाचौथ पति की मंगल कामना के लिए, आठें, जो अहोई आठें कहलाती है, पुत्रों की मंगल कामना के लिए और दीपावली समस्त घर और कुटुम्ब की श्री वृद्धि के लिए होती है। ब्रज में ये चित्र भित्तियों पर बनते हैं। इसकी साधारण रूपरेखा एक-सी होती है। मध्य का मुख्य अभिप्राय (मोटिफ़) उस दिन के अनुकूल रहता है। दिवाली का चित्र सफेद भूमि पर नारियल के खोपड़े को जलाकर दूध में घोलकर उसकी स्याही बनाकर काढ़ा जाता है। दिवाली को समझने के लिए इस भित्ति चित्र (पृ० २२२ पर दिये हुए चित्र) का समझना आवश्यक है।

३५. ६ १. इस चित्र में ये अभिप्राय मिलते हैं—

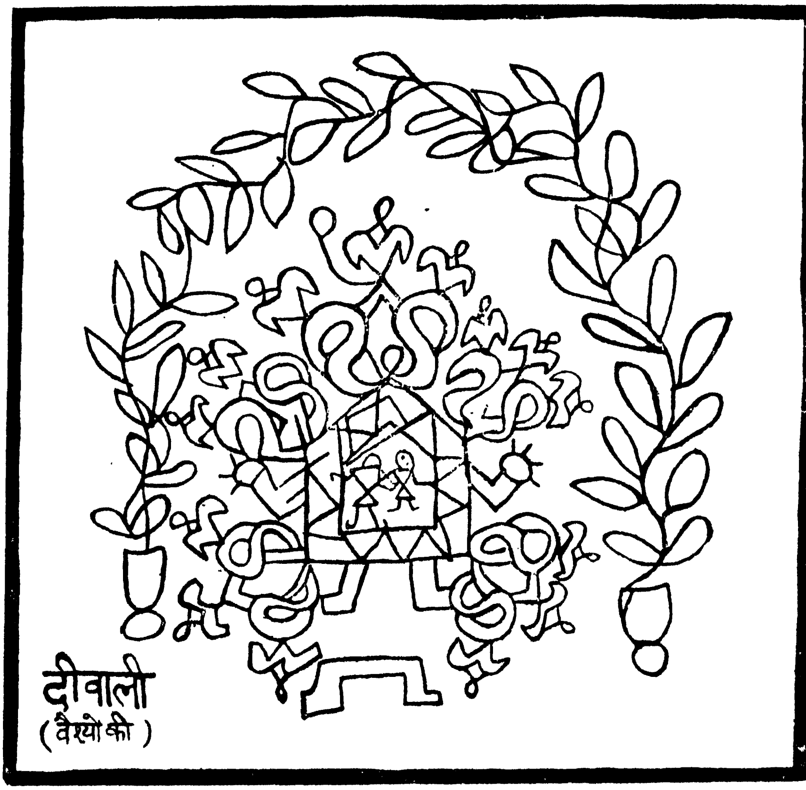
(१) चन्द्रमा, (२) सूर्य, (३) शिव गंगा, (४) पारवती, (५) नादिया, (६) गणेश, (७) दिवाली, (पंचमुखी), (८) हाथी, (९) लक्ष्मी, (१०) कमल, (११) सरमन-काँवरि लिये श्रवणकुमार. (१२) स्याहू. (१३) साँतिया (स्वस्तिक), (१४) ग्वारिया-ढिटारिया (जुआ खेलने वाले), (१५) दिवाली का द्वार और उसका द्वारपाल, (१६) गंगा और यमुना। (१७) छबरिया, (१८) गोवर्धन, (१९) तुलसी जी और उसकी पूजिका, (२) हनुमान, (२१) तोता। घर और स्थान भेद से कुछ भेद हो सकता है। पर साधारणतः ये बातें दिवाली के चित्र में आवश्यक है इनके अतिरिक्त उक्त कारण से और भी कुछ बातें इसमें सम्मिलित की जा सकती हैं।

३५. ६. १.यह चित्र पृष्ठ २३३ पर दिया गया है।


१
2
३
४
५
६
७
८
११
१२
१३
१४
१५
१६
१७
१८
१९
२०

३५.६.१.२. दिवाली पर केवल इसी प्रकार का चित्र बनाया जाता हो, ऐसी बात नहीं है। जातिभेद, स्थान-भेद, आदि से कई प्रकार के चित्र मिलते हैं। उन्हें भी दिया जाता है।

३५. ६. १. २. (१) नीचे दिया हुआ चित्र एक वैश्य परिवार के यहाँ से दिया गया है।

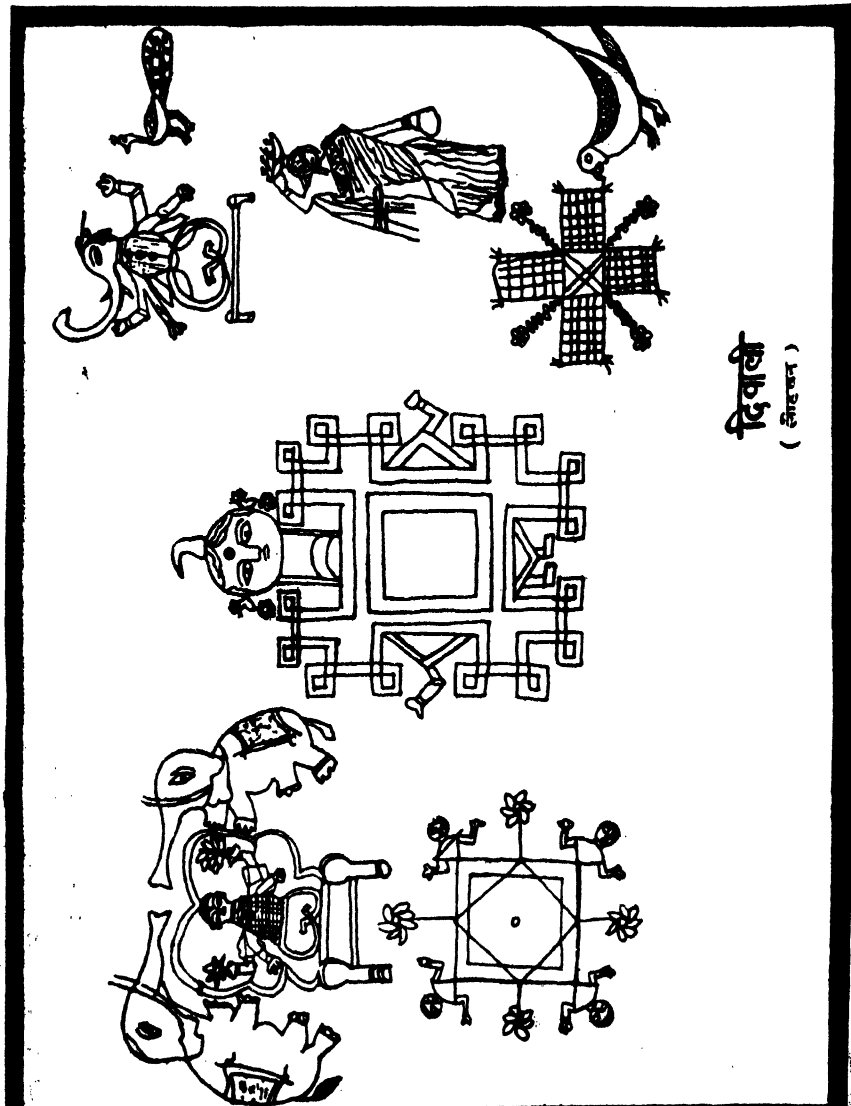


३५.६.१.२. (२) लोहबन के एक ब्राह्मण परिवार से उपलब्ध चित्र इस प्रकार है:—

३५. ६. १. २ (३) ऊपर ३५. ६. १ में जो चित्र दिया गया है वह आगरे के एक कायस्थ परिवार से लिया गया है।

३५. ६. २. जहाँ यह चित्र बनाया जाता है वहीं मिट्टी के खिलौनों के रूप में लक्ष्मी गणेश आदि देवताओं की मूर्ति लाकर रखी जाती है। मृण्मूर्तियों की यह पूजा अच्छी मूर्तियों की स्थानापन्न नहीं वरन् यह पूजा वैदिक आर्यों के आगमन से भी पूर्व की सिद्ध होती है। मोहनजोदड़ो की खुदाई में मिली मृण्मूर्तियों से यह बात सिद्ध हो चुकी है। लोक में इतनी पुरानी परम्परा आज तक जीवित है। इनमें दीपक रखने का दीपक, चंडोल जिसमें मिट्टी के चार छोटे पात्र जुड़े रहते हैं गूजरी, जिसके सिर पर एक खाली घड़ा रहता है और मिट्टी की छोटी कोठी भी होती हैं। रात्रि में

यहाँ पूजा के समय दीपक रखा जाता है । फिर तेल डालते रहते हैं । यह श्यौरती का दीपक कहलाता है । रात्रि पर्यन्त दीपक जलते रहने की एक रोचक कहानी प्रायः भारत भर में प्रचलित है ।



३५. ६. २. १. उसका मुख्य अभिप्राय यह है कि किसी राजा के भाट ने राजा से यह वरदान मांग लिया कि दिवाली की रात को केवल उसी के यहाँ दीपक रात भर

जलेगा कोई दूसरा नहीं जला सकेगा। दिवाली को ऐसा ही हुआ। सारा नगर अन्धकार मग्न था। केवल भाट के यहाँ दीपक जल रहा था। दिवाली की रात को लक्ष्मी आती है। नगर में लक्ष्मी आयी। राजा के यहाँ अंधकार देखकर लौट पड़ी। घर घर में अन्धकार था, प्रकाश केवल भाट के यहाँ था। लक्ष्मी ने उसके घर में प्रवेश करना चाहा। भाट ने कहा कि सदा के लिए आओ, स्थिर होकर आओ तो आ जाओ। लक्ष्मी को वचन देना पड़ा उसके लिए और चारा ही नहीं था। वह अन्धकार में जा नहीं सकती थी। उसी दिन से भाट के यहाँ श्री वृद्धि होने लगी। तब से रात्रि पर्यन्त दीपक जलाने की प्रथा हो गयी।

३५.६.२.२. इस कहानी का एक रूप यों भी है:—

एक राजा था। अपनी बेटी से बोला कि तू किस के भाग्य का खाती है। बोली कि, पिता, अपने भाग्य का। राजा को यह जवाब बहुत बुरा लगा। उसने अपने आदमियों को हुक्म दिया कि जो कोई दीन दुखिया तुम्हें मिले उसीसे इसकी सगाई कर आओ। आदमी देखने को बाहर चल पड़े। उन्हें एक लकड़हारा मिला। उसी से संबंध करना उन्होंने ठीक समझा। उसकी सगाई कर दी। लकड़हारा बहुत घबड़ाया पर राजा के आगे क्या कह सकता था? व्याह होने पर राजा की बेटी बड़ी खुशी के साथ लकड़हारे के घर रहने लगी। एक दिन वह अपने पति से बोली कि आज जो कुछ तुम्हें मिले उसी को लेकर तुरन्त घर आ जाना। वह बाहर गया पर मजूरी न मिली, सो रास्ते में एक मरा साँप पड़ा था उसे लेकर घर आया। मरा साँप देखकर राजकुमारी ने उसे छत पर डाल दिया। ऐसा हुआ कि उस नगर के राजा की रानी नहा रही थी। उसने अपना हार उतार कर वहीं रख दिया था। इतने में एक चील आई और खाने की चीज समझ हार को उठा ले गई। उधर मरे साँप को भी चीलने देखा तो वह आई, साँप को उठा ले गई और हार को छोड़ गई। हार कीमती और सुन्दर था, रानी को बहुत दुःख हुआ। उसने घर घर दूती भेजी। एक दूती ने आन कर सब हाल कह सुनाया। तब रानी ने उस लकड़हारे की बहू के पास खबर भेजी कि जितना रुपया तू माँगे मैं उतना ही तुझे दूँगी, मेरा हार मुझे दे दे। उसने कहा कि मुझे तेरा धन नहीं चाहिये। तू एक चीज देने को कहे तो मैं तेरा हार तुझे दूँ। रानी ने वायदा कर लिया। उसने एक दिवाली की रात माँगी। तब तो रानी ने बहुत खुशी से सारे नगर में ढिंढोरा पिटवा दिया कि अब की दिवाली को मत कोई लीपो पोतो, मत दीवे ही जलाओ। दिवाली की रात को लकड़हारे की बहू ने अपना घर लीपा-पोता और दीवे जलाये। घर खूब सजा कर दरवाजे के किवाड़ बन्द करके वह बैठ गई। रात को लक्ष्मी जी आईं, बोलीं कि किवाड़ खोल। राजकुमारी ने कहा मैं तुझे किवाड़ नहीं खोलूँगी तू किसी और के घर जा। लक्ष्मी जी सारे नगर में घूम आईं। उन्हें किसी का घर साफ़ सुथरा न मिला। वापिस आकर बोली—किवाड़ खोल। लकड़हारिन बोली कि मैं ऐसे किवाड़ नहीं खोलूँगी, मुझसे कौल करे तो मैं खोलूँ। लक्ष्मी जी बोली कि तू मुझे आने दे मैं तेरे घर से कभी न जाऊँगी। उसने किवाड़ खोले। तब से उसके घर में लक्ष्मी का खूब प्रकाश होने लगा। दोनों मौज में रहने लगे।

३५.६.३. पूजा के समय कहीं कहीं थालों में रुपये आदि रखकर पूजे जाते हैं। पूजा खील बतासों से होती है। कहीं-कहीं लक्ष्मी पूजन के लिए धन राशि न रख कर केवल एक रुपया ही रख लिया जाता है। कोई कोई लक्ष्मी पूजा के साथ सरस्वती पूजन अथवा शस्त्र पूजन भी करते हैं।

३५.६.३.१. दरिद्र भगाना

यहाँ तक के अनुष्ठान में प्रायः पुरुषों का ही हाथ विशेष है। स्त्री तो उस अनुष्ठान के लिए आवश्यक भित्ति-चित्र ही अंकित करती हैं। पर इस पूजा के उपरांत अनुष्ठान का कार्य स्त्री के हाथ में आ जाता है। रात्रि के पिछले प्रहर ब्राह्म मुहुर्त में उठकर वह पुराने सूप को एक लकड़ी से पीटती हुई घर भर में और घर के कौने कौने में जाती है और मन में कहती जाती है कि दरिद्र दूर हो लक्ष्मी आवे। समस्त घर में से दरिद्र को इस प्रकार भगा कर वह मुख्य द्वार से बाहर जाकर कुछ दूर और दरिद्र को खदेड़ आती है। और वहीं वह पुराना सूप फेंक आती है।

३५.७. स्याहू

तब वह एक नये सूप में उबले चावलों का एक लड्डू व स्यौरती का दीपक, चार खीखरी, एक सरवे में हल्दी, कुछ सींकें तथा रुई लेकर नये वस्त्र पहन कर सूर्योदय से पूर्व अपने कुटुम्ब के केन्द्र गृह की किसी पौरी में जाती है, कुटुम्ब की अन्य स्त्रियाँ भी आ जाती हैं। वहाँ गोबर का एक चोथ रख लिया जाता है। वहाँ पहुँच कर प्रत्येक स्त्री दो-दो सींकें गोबर में गाढ़ देती हैं। उनमें सींक की दो बालियाँ बनाकर लटका देती हैं। ऊपर रुई की फुरफुती लगा देती हैं। पाँच सींकें सर्प गति रूप टेढ़ी-मेढ़ी तोड़ के उसमें लगा देती हैं। इसके उपरान्त सूँड़ा-भसूँड़ा किया जाता है, सूँड़ा-भसूँड़ा एक प्रक्रिया है। प्रत्येक स्त्री अपने चावल के लड्डू को लेकर अपने आँचल में अपने हाथ को छिपाकर हिलाती हुई कहती है—लडुआ ले, ललुआ दे। तब वह उसे दूसरी स्त्री को दे देती है। इस प्रकार प्रत्येक स्त्री का यह लडुआ पाँच बार घूम जाता है। फिर ब्राह्मण को दे दिया जाता है। फिर सब की सींकें एकत्र करके बुहारी बना ली जाती है। यह झाड़ू बायें हाथ से पीठ पीछे ले जायी जाती है। और पीठ पीछे दोनों हाथों से इस झाड़ू से जमीन साफ करने का अभिनय किया जाता है। और तब पड़ौसिन को दे जाती है। वह भी ऐसा ही करती है। इस प्रकार पाँच बार यह बुहारी भी घूमती है।

३५.७.१. इस समस्त तांत्रिक से अनुष्ठान में स्याहू की कहानी का ही प्रति-विधान है। स्याहू के अंडे बच्चे इसी प्रतिपदा के दिन एक गरीब स्त्री ने भूल से काट डाले थे। अब तो स्याहू प्रतिवर्ष उस स्त्री के बच्चे को ले जाने लगी। वह बड़ी दुःखी रहने लगी। तब एक बुढ़िया ने उसे गाय की सेवा करने का परामर्श दिया। गाय की स्याहू से मैत्री थी, वह स्त्री प्रतिदिन अँधेरे अज्ञात ही गाय का स्थान झाड़ आती थी। सींकों से संभवतः इसीलिए झाड़ने का अनुष्ठान किया जाता है। गाय प्रसन्न हुई। उसने उसे बताया कि जिस दिन स्याहू आवे उस दिन खूब बेसन भात बनाना, पक्का भोजन भी बनाना,

नाँद भरकर दूध रख देना—चावल के लड्डू से सूंड़ा-भसूंड़ा करना स्याहू को खिलाने का रूपक है। गाय ने बताया कि जब वह खा चुके तो उसके सिर के जूंये देखने लग जाना। गोद में अपना बच्चा ले लेना। बीच-बीच में उसे नोंच देना। वह रोयेगा। जब स्याहू पूछे क्यों रोता है तब कहना अपने भाइयों को माँगता है, रहे कैसे। उसने ऐसा ही किया और स्याहु ने प्रसन्न होकर कान की तुरपुती में से उसके सातों बच्चे निकाल के दे दिये। बालियाँ बनाकर लगाने से कान का बोध कराया जाता है। रुईकी फुरफुती तुरपुती या तरकी का स्थान लिये हुए है। पाँच सर्पाकृति सींकों के टुकड़े स्याहों के अंडे बच्चों के स्थान पर हैं। इस प्रकार अहोई आठें पर जो कहानी कही जाती है वही यहाँ मौखिक और पृथुल रूप ग्रहण कर लेती है। पुत्रों की कल्याण-कामना का यह आज एक धार्मिक तंत्र बन गया है।

३५.८. इसी दिन अन्नकूट का उत्सव भी मनाया जाता है। विविध प्रकार के नये अन्न तथा शाक पकाये जाते हैं, और गोवर्द्धन की पूजा करके खाये जाते हैं। गोवर्द्धन पर्वत पर मुख के पास वृहत् आयोजन अन्नकूट का होता है। बल्लभ सम्प्रदाय के विविध मन्दिरों में अन्न आदि के पर्वत खड़े कर दिये जाते हैं। बहुत से व्यक्ति घरों में भी इसे मनाते हैं। और इस दिन इस पूजा से पूर्व नये अन्न और शाक वे नहीं खाते।

३५.६. गोवर्द्धन

दोपहर को आँगन में गोवर्द्धन बनाया जाता है, यह गोबर से बनाया जाता है। इसमें एक ओर मुख, चौड़ा पेट दोनों ओर हाथ और दो पैर बनाये जाते हैं। पैरों की ओर द्वार होता है। वहाँ एक गोवर का कुत्ता बनाया जाता है, पेट में बरोसी, दूध की हाँडी, मठा चलाने की मथानी आदि गोपालन और दूध मक्खन से सम्बन्ध रखने वाली चीजें बनाई जाती हैं। रात्रि में पुरुषों द्वारा इसकी पूजा होती है। और परिक्रमा की जाती है। विविध स्थानीय देवताओं की जय बोली जाती है। इस परिक्रमा में गोवर्द्धन पर्वत और अन्य तीर्थों का उल्लेख होता है। 'गोरधन की परिकम्मा देउ, मानसी गंगा श्री बलदेव:' पूंछरी के लौठा की भी जय बोली जाती है। कहीं-कहीं जैसे इंदौर में गोबर से राजा बलि की रचना की जाती है। गोवरधन की नहीं। गोवर्द्धन की पूजा के अवसर पर गौ-पूजा भी होती है। आटे के दीवले घी में सेक कर पूजा में सम्मिलित होने वालों को बाँटे जाते हैं।

३५.६.१. गोवर्द्धन-पूजा का विवरण श्री नवनीतलाल नागर ने यों दिया है:—

यह उत्सव दीवाली के दूसरे दिन कार्तिक सुदी १ को आता है। उस दिन गौओं के गोबर को एक राशि में कर उस गोमय पिंड का आकार मनुष्य का सा अथवा पर्वत का सा बना लेते हैं। उसके मध्य भाग में नाभि-सी बनाई जाती है, जो गहरी होती है, उसमें अधिक मात्रा में दूध भर दिया जाता है। हरे-भरे फूल वाले छोटे-छोटे पौधे अंकुरित कर दिये जाते हैं और खील (लाजा) की सुन्दर वर्षा भी उस पर की जाती है। ग्वाल-बाल अपनी-अपनी सजी सजाई गौओं को, जिनके माथे पर मोरपंख के मुकुट और गले में चेल आदि के कंठे बँधे रहते हैं एक ओर लिए खड़े रहते हैं। दूसरी ओर गोप बधूटियाँ रंग-विरंगे वस्त्र धारण कर रसिया गाती हुई

विधान से प्रथम गोधन की, फिर गौम्रों की पूजा करती हैं। तदनन्तर भक्ति-भाव से गोवर्धन रूप मानकर 'मानसी गंगा श्रीहरदेव, गिरिवर की परिक्रमा देव' का उच्चारण करते हुए, भावना में ओत-प्रोत उस गोरधन की सात परिक्रमा देते हैं। परिक्रमा के बाद गौम्रों द्वारा उस गोमय राशि का उल्लंघन कराया जाता है। फिर नाभिस्थ दूध ग्वाल को पिलाया जाता है और कहीं-कहीं कम्बल से उसे ढँक भी देते हैं। नर-नारियाँ अपने कुल और स्वजन वर्गों के हेतु उस गोधन से प्रार्थना करते हैं। बाद को अपने घरों में पूआ और पूरियों का प्रसाद कर लेते हैं।

इस प्रकार यह गोधनोत्सव किसी गाँव में सामूहिक रूप से और कहीं व्यक्तिगत रूप से मनाया जाता है।

३५.१०. भैयादूज

भैयादूज इस त्यौहार का अन्तिम उपसंहार का दिन है। इस दिन गोवर्द्धन उठा दिया जाता है। उस स्थान पर हल्दी और आटे का चौक पूरा जाना है, इस चौक में भीतर गोबर का घर बनाया जाता है। इसमें गोबर की एक गौर बनाई जाती है। गोबर को सूच्याकार करके रख लेते हैं। उस दिन की गौर की विशेषता यह होती है कि उसके मुँह आदि नहीं बनाया जाता है। उसे ओढ़नी भी नहीं ओढ़ाई जाती है, नंगी रहती है, गौर की पूजा खीलों से करके गीत गाते हुए आव बनाई जाती है। ये रुई और कपास की बनायी जाती है, गोल अँगूठी जैसी। उन्हें हल्दी से रँगते जाते हैं।

३५.१०.१. गीत यह गाया जाता है—

जुहार मच्यौ है दिवारी की राति
को हारे को जीतिए
रामप्रसाद (क्रमशः सब भाइयों का नाम) जीते सब सुसरारि
बहुरियाँ हारीं सब प्योसार

३५.१०.२. अब गौर हटा दी जाती है। गोबर का घर भी समेट लिया जाता है। उस स्थान पर कटेरी के पत्ते रख लिए जाते हैं उन पर लोटा रहता है। सीधे हाथ की पीठ पर हल्दी से साँतिए बनाये जाते हैं। उलटे हाथ की छिगुनी उँगली में बनी हुई आव पहन ली जाती है, कुवारी दो आव बनाती हैं। व्याही चार आव पहनकर उसी उँगली से लोटा स्पर्श कर हिलाती जाती हैं।

३५.१०.३. और यह गीत गाया जाता है—

आज दौज को दोसरो भैया न्यौंतौ भैंन कें
एक रे भैया दूजी भावजी तीजे भवजिया कौ बालका
लागौ नगीना मैलौ न होय
हीरालाल भइया (सब भाइयों का क्रमशः नाम लिया जाता है।)
आव अहो नेक बेग जुरि अइयो
भवजिया को लाल नगीना मैलौ न होय

३५:१०:४. आव की कितनी ही कहानियाँ हैं। उन में से सब या कुछ कहानियाँ इस अवसर पर कही जाती हैं। सभी कहानियों में बहिन का भाई के प्रति प्रेम और उसके लिए सब कुछ करने का भाव प्रकट होता है।

३५:१०:४:१. एक कहानी कुछ ऐसे है।

एक राजा के रानी थी, रानी ने एक साँप मार कर उसके जहर को दीपक में डाल दिया, हड्डियाँ खाट के चारों पायों के नीचे गाड़ दीं, झिल्ली की अंगिया बना के पहिन ली, राजा के आने पर उसने कहा राजा एक पहेली का अर्थ बताओ।

द पिय बाँयत पिय बाँयत पिय कौ जोरूं दीवला पी की पहरूं अंगिया
सो हियरा बसै समाय

जब किसी विद्वान से भी अर्थ नहीं बता, तब बहिन के यहाँ गया। बहिन बैठी भैया की आव जोड़ रही थी, वह टूट-टूट जाती थी पर राजा जब उसके पास पहुँच गया तो आव जुड़ गई, बहिन ने पीछे देखा तो भाई खड़ा है। भाई ने अपना कष्ट बताया, बहन ने कहा मैं जानती तो नहीं पर लौट कर चलो भेद शायद मिल जाय। उसने बरोसी में औटता दूध छोड़ा, पालने में बच्चा छोड़ा, घर द्वार योंही छोड़ भाई के साथ चल पड़ी। बीच में एक जगह रात को ठहरे वहाँ दीपक की माँ रहती थी। दीपक आया, माँ ने पूछा बड़ा परेशान रहता है, बड़ी देर से आता है। दीपक ने कहा—एक राजा की रानी ने साँप का विष मेरे तेल में डाल दिया है जिससे जला जाता हूँ। उसने और सब बात भी बता दी। बहन जग रही थी। समस्त बात सुन ली, घर पहुँच कर भाभी की चोली फाड़ कर फेंक दी और समस्त बात बता दी। इस प्रकार बहिन ने भाई को कष्ट से उबारा।

एक था भाट और एक थी भट्टिनी। यह भट्टिनी प्रेम करती थी एक नाग से। एक दिन वह नाग उस भाट को काटने के लिए उसके जूते में जा बैठा। भाट को किसी प्रकार पता चल गया और उसने उसे मार डाला। भट्टिनी ने क्या किया कि उस सांप के सात टुकड़े कर डाले और उन्हें कहीं छिपा दिया। लेकिन भाट को नहीं बताया और लगी उससे पहेली बुझाने—'पी खटिया, पी मचिया, पी की तेल जले सारी रतिया।' और साथ ही यह भी शर्त लगायी कि यदि वह न बता पायेगा तो वह उसे जलते हुए भाड़ में झुकवा देगी अन्यथा वह उसको बदले में मरवा डालेगा। भट्टिनी को पूरा विश्वास था कि उसका पति उसकी पहेली न बुझा सकेगा और इस प्रकार वह उससे अपने प्रेमी का बदला ले लेगी। जब भाट वह पहेली न बुझा पाया तो उसने भट्टिनी से कुछ दिनों का अवकाश मांगा और वह सीधा अपनी बहिन के यहाँ चल दिया। संयोग से जिस दिन वह बहिन के यहाँ पहुँचा, उस दिन 'भइया दुइज' थी। बहिन भाई को देखकर बड़ी प्रसन्न हुई और उसने उसके टीका काढ़ा और खीर-पूरी बनाकर प्रेम-पूर्वक उसे खिलाया-पिलाया। जब वह चलने लगा तो बहिन भी साथ हो ली। चलते-चलते थक गये थे, मार्ग में एक तालाब के किनारे तनिक विश्राम करने को ठहर गये। दोनों लेटे हुए बात-चीत कर रहे थे। भाई ने उस पहेली की बात बहिन से भी कही। आज अवधि का अंतिम दिन था। भाई ने सोचा कल तो मरना

ही है, चलो आज तो आराम से सो लें। भाई तो सो गया, लेकिन बहिन जागती रही। इतने में संयोग से यमदूत भी वहाँ आ पहुँचे और आपस में भट्टिनी की कथा कहने लगे, किस प्रकार साँप को मार कर अपने पति से पहेली बुझाई और किस प्रकार वह हेली बुझाकर अपने प्रेमी का बदला अपने पति से लेना चाहती है। बहिन ने सब बातें सुन लीं और वह बड़ी प्रसन्न हुई। उसने भाई को जगाया और बोली, चलो तुम डरो मत, तुम्हारी पहेली मैं बुझा दूंगी। घर पहुँच कर उसने भावज से पूछा कि बताओ तुम्हारी पहेली क्या है, बोलो मैं बुझाऊंगी। वह बड़ी हँसी और बोली, कुछ भाई ने बुझाई और कुछ बहिन बुझाने आयी है। अच्छा बता 'पी खटिया, पी मचिया, पी का तेल जले सारी रतिया।' और तड़ककर बोली कि यदि न बता पायी तो मैं तुझे भी भाई के साथ जलते हुए भाड़ में जीते जी झुकवा दूंगी। बहिन ने कहा, 'अवश्य, परन्तु यदि बता दिया तो फिर तेरी भी वही दशा होगी।' भाभी बोली, 'स्वीकार है।' बस बहिन गयी और जाकर खटिया-पिढ़िया सब जगह से मरे हुए साँप के टुकड़े उठा लायी और लाकर भावज के सामने रख दिये और बोली, 'ले अपना पी, और दे अपना जी। साँप के टुकड़ों को देखकर भट्टिन के तोते उड़ गये। अन्त में बहिन ने पापिन भावज को भाड़ में झुकवा दिया और इस प्रकार अपने भाई की जान बचायी। ऐसे भाई-बहिन भगवान सब किसी को दे।

३५:१०:४:२. एक दूसरी कहानी यों है —६५

राजा की रानी राजा को भुसी की रोटी देती थी। कनक की स्वयं खाती थी। राजा पूछता तो कह देती थी।

पल्ली पार तेरी भेंन बसै।
वाके पादे कनक उड़े।।

राजा बड़ा दुखी था। वह बहिन के गया, बहिन आव जोड़ रही थी। भाई के पहुँचने पर ही आव जुड़ी। बहिन ने भाई से पूछा—क्यों पीला पड़ रहा है। बात सुन कर उसने पाँच कठपुतलियाँ राजा को दीं, वे कठपुतलियाँ बहिन के परामर्श के अनुसार चारों कोनों और देहँरी में गाड़ दी। स्वयं कुठिला में छिप गया, रानी ने भूसी की रोटियां राजा के लिए बनायीं, अपने लिए कनक का अंगा बनाया। अंगा दूध में मीड़ कर उसने रख दिया।

एक पुतली ने कहा क्या करती
स्त्री ने कहा नित करती सो अब करती
चारों पुतिलियों ने ऐसे ही कहा
पाँचवीं ने कहा नित करती
तो खसमा पूता क्यों डरती ?
रानी शौच के लिए चली।

राजा कुठीले में से निकल कर आया और अंगा खा गया, उसकी जगह चाकी का झन्ना (चाकी साफ करने का कपड़ा) पानी में डाल कर रख दिया।

रानी आकर खाने बैठी और अन्ना खा गयी। पहली से चौथी तक की कठपुतली ने तो वही कहा पूछा जो पहले पूछा था। पाँचवी ने कहा—

अनखाती धनियाँ
लीलि गयी खसम कौ तनियाँ

राजा बाहर आया उसने रानी को बुरा-भला कहा।

३५:१०:४:३. इस अवसर पर कही जाने वाली कहानियों में सबसे अधिक प्रचलित वह कहानी है जो 'कोसी कौ पून अनकोसी कौ भइया' नाम से विख्यात है। इसमें बहिन को भाई पर आने वाले संकटों का पता चल गया तो वह पागल सी बन कर भाई को कोसती-कोसती गयी और उसे संकटों से बचा लिया।—इसी कहानी के कई रूपान्तर मिलते हैं—वे तुलना और अध्ययन की दृष्टि से यहाँ दिये जाते हैं :—

३५:१०:४:३(१)

एक डोकरी के एकु छोरा ओ, और एक ब्वाकें छोरी ई, छोरी कौ ब्वानें ब्याहु करि दीयौ ओ, छोरा ब्वा छोरी ते ल्हौरौ ओ, बु छोरा ढोर चरायौ करत्वो, एक दिना बु छोरा कैऊन के घर कलेऊ माँगिवे गयौ, सबन्नें ज्वाबु दीयौ कै आज तौ भइया दूँजं, हमतौ अपने अपने भइया जिमाइबे जाइ रहीं हैं तोइ कलेऊ कैसें वें, । इतनी बात सुनि कें बु छोरा घर कूँ आयौ और अपनी माँ ते बोल्यौ, कैमाँ आजु काऊ के घर कलेऊ नाँय मिल्यौ, सबन्नें जि कहीऐ कें आजु भइया दूँजं, हमतौ अपने-अपने भइया जिमाइबे कूँ जातें माँ हमारें कोई बहनि नायें, माँ बोली बेटा बहनि तौ हत्यें परि बौहौतु दूरिऐ, तू कैसें जाइगौ, बड़े बड़े बीयावान जंगल परिग्गें म्वां हैकें कैसे जायगौ बेटा। भइया मोइ गाम कौ नामु बताइ दै में तो जाउंगो—लट्ठु लैकें बु चल्यौ, बीयावान जंगलें पारि करि कें जैसें तैसें जानें द्वै दिना में कै जानें तीनि दिना में ब्वा गाम में पौंहौच्यौ, ब्वा की बहन चरखा काति रही। भइया ब्वाके जौरें ठाड़ौ, बु भइया जो पैंहचानति नाईं सो मिलिवें ठाड़ौ न भई, बु न भइया ते मिलै न टूट्यौ तार चरखा कौ जुरै, बड़ी सी देर भई। बु झट चलिवे लग्यौ जबई ब्वा की पींठि फिरी तौई तार जुरि गयौ, तार के जुरतई बु जानि गई और छोड़ि चरखा कूँ पिछारी ते भइया की जेठ भरिलई और खूब मिली, मिलि मिलाइ कें भइया कू खाट बिछाइ दई बिछइया कर दयौ। भइया बैठारि दयौ, अब बु दौरी दौरी पार परौस में गई और बोली भैना आज मेरौ भइया आयौ ऐ ब्वा की कहा खातिर और महमानी करूं। एक जनीं बोली घ्यौ में चामर राँधि लै और तेल में गोबर माँटी मिलाइकें चौका लगाइलै—बु उलाइती सी आई और बटला में घ्यौ भरि कें चामर राँधिवे धरि दीये और गुबरौटी में तेलु करि कें चौका लगाइवे लग गई, चौका लगाइ लीयौ, अब न तौ घ्यौ में चामरई रंधें और न तेल कौ चौकाई सूखं। घ्यौ पजरि जाय चामर आधेऊ न रंधं, फिरि दौरी परोसिन के घर गई और बोली बहनाओ हमारे घ्यौ में न तौ चामर रंधे और न तेल कौ चौकाई सूखं, बु परोसिन बोली दारी कहूं घ्यौ में चामर रंधतऊ हुंगे सो तैंनें राँधे ऐं और तेल में चौका लगायौ ऐ। पानी में चामर राँधि और पानी कौई चौका लगाइ। बु म्वांते आई और पानी में चामर राँधे और पानी मेंई चौका लगायौ, चौकाऊ हाल सूखि गयौ, और चामरऊ रंधि गये, फिर अपनौं

भइया बुलायौ और रोटी जिमाई । ब्वानें चार पाँच दिनां अपनों भइया डाट्यौ, एक दिना ब्वाकौ भइया बोल्यौ, भट् अबतौ मैं जाउंगो कैऊ दिनां मोइ है गये भइया पैंड़ौ देखि रही होएगी, बु बोली भइया धोंताइ जरूर चल्यौ जइयौ मैं सिदौसी तोकूं रोटी करि दूंगी, बु डटि गयौ, साँझ कूं आधी सी रात में बु उठी और चाखी पीसिबे लग गई, चाखी के कौरे डारनी ठौर में एक सिपरोटा आइ घुस्यौ ओ—कोरे के संग में बूहू पिसि गयौ, पीसि पासि कें अंधेरेई में ब्वानें अपने भइया कूं रोटी करीं और रोटी करि कें मलीदा करि दीयौ और छन्ना में बाँधि कें भइया कूं दै दियौ, मलीदा लेकें बु चलि दीयौ, बौहोतु सी राति कौ जग्यौ भयौ ओ, ओंघ नें चलन न दीयौ, थोरी दूरि चलि कें एक बर के पेड़ के नीचें सोइ गयौ, मलीदा बर की डार ते बांधि दीयौ, धोंताएं भएं ब्वा की बहन के बालक बच्चे जागे और रोंटी कूं रोमन लगे । ब्वानें कहा कामु करौ कि कछु मलीदा बच्यौ धरयौ सो मलीदा दैवे लगी, जब लडुआ फोरिकें दीयौ तौ ब्वामें साँप की माँझरि निकसी, बु बोली हाय मैंनें तो अपनों भइया अपनेंई हात करि कें मारौ, बाल बच्चे सब्बनें छोड़िकें भगी, और गैल में पूछति जाय कै कोई गैलऊआ जाँतु मिल्यौ एरे, चलत चलत ब्वाई बर के ढिंग पौंहौंचि गई । कहा देखै कै भइया सोइ रहयौ ऐ, ब्वानें जाँतई झकझोरि के बु जगायौ औरु बोली भइया तैनें कछू खायौ तौ नायें, भइया बोल्यौ बीर मैंनें तौ कछू नाँय खायौ, जो कछू तैंनें दीयौ ओ सो मैंने बर की डार ते बाँधि दीयौ ऐ—ब्वानें बु मलीदा लैकें धरती में गाड़ि दीयौ, औरु भइया ते बोली मैं तौ तेरे संग चलुंगी । भइया बोल्यौ चलि वीर ? वे दोऊ चलि दीये । थोरी दूरि चलि कें बु बोली भइया हमतौ प्यासे ऐं, कहूं पानी होइ तौ पिबाइ दै, बु बोल्यौ बहन न्याँ बीयावान जंगल में पानी कहाँ ऐं, म्वाते थोरी सी दूरि पै चील्ह कौवा उड़ि रहे, बिनें देखि कें बोली भइया न्याँ पानी होइगौ मैं पी आऊं । भइया बोल्यौ बहन चील्ह कौवा की छेरन कौ पानी होगौ सो ठीक नायें, चलि आगें कहूं पींगे बहन न मानी औरु पानी पीबे चली गई, म्वाँ जाइकें पानी पीयौं, और कहा देखै—कै सिला गढ़ि रहीं बु बोली चौंरे ग्वारियाओ जे सिला काये कूं गढ़ि रहीं हैं ग्वारिया बोले कै इकलौती के पूत कूं और अनकोसे के बीर कूं ऐं—बु मन में बोली कै इकलौती कौ पूत और अनकोसी कौ बीर, मेरौई भइया ऐ, अब ब्वानें कोसिबे कौ लग्गा लगागो—तू मरि जइयौ, तेरी ज्वानी के क्यौला है जइयों, तोकूं ढाई घरी कौ सकेलौ अइयौ, तेरी पट्टाई पै राँड है जइयौ, दारी के । ऐसें गारी देति जाय और चलति जाय, भइया बोल्यौ देखि लै मैंनें पहलेंई नाहीं करी कै चील्ह कौअन की छेर कौ पानी मति पीबें, परि न मानीं, बावरी है गई, अबतौ कोसति जाइ चलति जाय । चलत चलत गाम में पोंहोंचें, पहल ते पहलेंई जायकें बोली अरी मिलि ले कल्लि तेरौ इकलौता मरैगो, माँ बोली छोरी कहा कहतिऐ छोरी बोली मैं साँची कहतूं कल्लि ज्याकी काठी कसैगी, जि मरैगौ । भगमान की करनी ऐसी भई कै ब्वाकौ गारीन ते अब ब्वाके ब्याह की चरचा होन लगी और सगाई कौ ठीयौ धरि गयौ जब सगाई आई तो खूब रंगल मंगल होन लगे, साँझ कूं चौकी बिछाई और पंडित जी बुलाये । अब बुलायौ दबे कूं बुही बावरी गई, घर घर में कहंति डोलै ये दारियो ब्वा पै भूभरि डारि आओ, ब्वाकी सगाई आईये ब्वाकूं चलि कें रोइ आओ बइयर बानी बोलीं ये जि बावरी काये कूं भेजि दई ऐ—कैसी

कुसुब्व बोलि रही ऐ—एक जनीं बोली ये दारियौ या रांड की गारीई फर रही एं, बुरी कहंतिएे भलौ होंत्वे। मूर बात जिहै कै सगाई है हिबाइ गई, थोरे दिनां पीछें ब्वाकी लगुन फगुन आई बूहू लै लिबाइ लई, अब बरात की निकासी हैवे लगी निकासी के बखत ब्वा दुल्हा की पन्हां में स्यांपिन आई घुसी, बाबरी देखि रही। बावरी नें ब्वाई खन मौर में सुई उरसि दई। सुई के उरसतई स्यांपिन निकरिकें भग गई, सबु आदमी बोले देखौ हम सबु ज्याते बावरीई बावरी किल्लातें, और जि कितनी हुस्यार एं, निकासी कौ सबु काम जब है गयौ और चलिवे लगे तौ बावरी बोली में अपने भइयाऐ दरबज्जे में है कें न जान दूंगी छेंड़ी में है कें निकारुंगी, आदमी बोले जि कम्मखत कहा कह रही है कहूं छेंडी में हैकें दुल्हा नांय निकासे जांत—बिन्नें न मानी दरबज्जे में हैकेंई निकरे। दरबज्जौ गिरौ औ, ब्वाकी बावरी बहन नें झटपट एक सोंने की ईंट लगाइ दई। दरबज्जौ रुकि गयौ आदमी वोले भाई हमनें बावरी की बात न मानी, अबई सब मरजांते जो बावरी न होंती तौ बात जिहै कै गामते आगें चले बाबरी बोली मैं तौ अपने भइया की बरात में संग चलूंगी, आदमी बोले जि कहंति कहाऐ हमारी हँसी करावैगी, बरात में बइयर कहूं जांतऊ हुंग्गी, बाबरी नें न मानी और संग चल दई, आगें एक पीपरु बर आयौ, बाबरी बोली ज्या तर जनवासौ मति लगइयों, आदमी बोले देखौ बावरीऐ सांचु मांचु कैसी बढ़िया सीरक ऐ और न्यां की नाईं कर रही है। आदमी न माने बर तर डटिबेकूं चले ज्योंई वे चले कै बर कौ डग्गौ टूट्यौ, बावरी नें अपनौ हातु ब्वा डग्गे ते लगायौ देग्गौ रुकि गयो बराती बोले देखौ हमनें अबऊ बावरी की बात न मानी, सांझ कूं बरात ब्वा गाम में पोंहची जनमासौ लगायौ। बरौनिया भयौ, अब बारौठी कूं चले, बाबरी बोली कै मैं अपने भइयाऐ ज्या दरबज्जे में है कें न जान दुंगी बराती बोले जि कहंति कहाऐ—न्यां आन गाम मेंऊं कुसुब बोलि रही ऐ, बराती न माने और दरवज्जे मेंई है के चलन लगे। दरबज्जौ गिर्‌यौ, बावरी ने लेह देह ग्वांऊं सोने की ईंट लगाई, ईंट के लगतेई दरबज्जौ डटि गयौ अब वु बाबरी बोली लेउ मैं तौ गाम कूं जांतू। तुमें दीखैं जैसे भामरि डारि लइयौ, बावरी अपने गाम कूं आई, जब ब्याह है गयौ बरात घर आइ गई तौ खूब आनन्द मंगल हौंन लगे। द्वै चारि दिन पीछे सब मेंहमान बिदा भये—बावरीऊ विदा करी। बावरी कूं खूब बिदा दई बावरी बोली—कै मेरी मेरी चीज मेरे संग चलौ और मेरे भइया की चीज भइया के ढिग रहौ। ऐसें कहि के बावरीऊ अपने घर कूं गई।

दौज की कहानी

३५.१०.४.३. (२)

एक डोकरी और एक बेटा औं सो बेटा ने कही कि माता हमारें बहन नहीं एं का, ए बेटा बहन ते कहा करै गौ, ऐ माता ऐंसी कहा बातै कि सब बहन घर घर अपने-अपने भाइयों का टीका यानी तिलक कर रही है माता तिलक हमे भी करवाना चाहिये। ए बेटा तेरी बहन देश परदेश है तो माता तिलक करवावन जायंगे, तो वो घरते चल दये, तो उनके आगे नाग मिलौ नाग से पूछी कि ए भाईयौ कौनें खाऊगें तो बिन सर्प ने कही कि तोई में खाऊंगों। तो मोय बहन से मिलआावन दें तबई खाइलीयौ, फिर आगे आई नदी सो नदी नें कहीं तोय बहाओंगी, वाते कही कि बहन से मिलआवन दें तब बहाइलीओ आगे आये बनी में तौ नाहर मिलौ और हूंक दई, कहि भइया कैसे हूंक दई। कै तोय खागों, तो भाई मोय

बहन से मिलआवन दे तब खाइलीजो तब फिर पहुँचे बहन के देश तो बहन चरखा कात रही । तब बहन के भाई लौट गयें भईया तू कंसे लोटो हूं तेरीई अरबरिया करवरिया वाच रही सो बिन कौ तार जुर गयौ तौ बिहन नें भाई से मिला भेंटी करी फिर मांसे बहन गई सो परोसिन कौ गई पूछवे एरी बहनौ भईया जाकौ ज्यादा प्यारौ होय तौ बाकें कहा करिबो चहियें तबही परोसिन बोली कि घी में चावल डाल देउ ऐरी बहनौ तेल पानी ते लीपि लेऊ तब बने जिही काम करो बाने चीज बनाईं, परि एकऊ ठीक चीज नहीं बैठी, घी भी जल जाय चावल उसीजें नहीं, लीपनों नहीं सिमटें फिर अपनी सासू के पास पहुँची और मेरी सासु ही अच्छी है उरोसिन-परोसिन तो कोऊ काऊ की नायें, तब सासु नें कही बहू-दूध में चावल डाल । गोबर, माटी व पानी का लीपनों कीयौ तब ही खूब बहन नें भाई जिमायों । भाई नें फिर बहन के पास से दौज कौ तिलक करवायौ । तब भाई ने बहन से कही कि में जाऊगों तो बहन बोली कि भईया कलेंऊ करिके जइयें । फिर बहन ने चाकी ते आटा पीसौ तबई बिननें तीन लड्डू बनायें सो दो लड्डू भाईए रखदये हैं । एक लड्डू रख लियों है । सो वो लड्डू अपने बालकन कूं बहन नें फोरीकें दीयौ सो वा लड्डू में सर्प की माजर निकली है । साँप की माजर देख कर बहन वहाँ से चल दई बहुत रुदन कर चल दई । तब ही कहन लगी है कि मैंनें अपनौ भाई हाथ कर मारौ ऐ बहन कूं गैल में गैलहारौ मिलौ । एरे भइया तोय गैल में मेरौ भइया मिलो का, । अरी बहन खबर नायें ? एक आदमीएं वर के पेड़ ते पोटरी बंधी है और नीचें पेड़ के सो रहो एं । तो बहन पहुंच कर पेड़ से पोटरी खोल लड्डू खोल कर जमीन खोद गाढ़ दये एं और फिर भईया जगायौ यो कि भईया तनें कछू खायौ तौ नाँनें, मैंने तौ बहना कछू खायौ तौ नाँनें, कि वाँमें सर्प है या गेंडुआ है । तेरो बो है तो बहन बोली भइया हूंतो तेरे संग चलूंगी । भइया बोलो गैल में पानी नहीं पात नहीं, गैल में प्यासी मर जायगी । नहीं भईया में तो तेरे संगई चलुग्गी । तौ बो संग गई । गैल में प्यास लगी भईया से कही हूंतौ प्यासी हूं । तई भईया बोलो मैंने तब ही नाँही करी कि प्यासी मरजायगी—देख चील उड़रही एं वहीं पानी होगा वहीं चली जा । तब ही मा पहुँची । पानीयें तौ भूल गई । वजू सिला गढ़ रही तब ही पूछी भइया तुम काये कूं गढाई कर रहेओ तू प्यासी है तौ पानी पीजा तोय जाते कहा परी । कै तौ बतादेऊ नहीं प्यासी यहीं मर जाऊंगी और श्राप दे दुंगी तब ही कहन लगे अनकोसे कौ भईया है कोसन हारो कोऊ नाँये ताकौ ब्याह है ताकें गढ़ रहे हैं पानी बिनाँ पियें वहीं ते बहन लौट गाली देत चली आई । भईया बोलो अपनी बहन तें भइया तैंने कबहु नाय कोस्यौ जि क्यों कोस रही है । बहन मेरी बावली हो गई तब दोनो चल दये । चलते समय बनी में नाहर मिलौ नाहर नें कही अब खाऊगो तो बहन बकरा पकड़ नाहर के आगे डाल दओ कोई नदिया गैल में परी तो नदी ने रोका दयो तौ उननें बिनहीं लड्डूओं की छार नदी के पानी में डाल दी पानी ने रस्ता दिया (थम गया पानी) फिर आगे चलते चलते सर्प मिला तो सर्प नें कहीं में अब भाई खाउंगो तो बाऊएं मीठा दूध पिलाय दयौ इतने पर घर चल कर आगये । तो बहन के भाई की सगाई आई तो बहन बोली मैं तो अपनी सगाई करवाऊंगी, करदेउ भइयायें पहलें जई की पर यह तो बावली है । लगुन आई फिर बोली मेरी लगुन चढ़नी चहियें वह भी कर दी गई । ज्योंनार तक तेल मागर वगैरह सब साथ साथ भाई की बहन ने करवाये, तो सब भाई वगैरह बोले इस पागल बहन को कोठी

में बैठाल देऊ—मौहर कोठी में चलते चलते रह गयो तौ बहन बोली मोहर तौ लेजाओ, मूड़ पै तौ अंगार को फेरौगें तो मोहर ले गये। बहन के कहने से उसको भी साथ में ले गये। तो उस गांव पहुंचे तौ बहन बोली में तो वारौटी छेंडी में से करुंगी, तो बारौटी के समय दरवाजे पर वज्र सिला गिरी दरवाजा वन्द होगया, फिर भामरन की पोत बहन नें कही कै भामर मेरी परेंगी, इतने में मँडवा हिलने लगा तो बहन बोली मोहर में से सुई निकाल वेओ मँडवा हिलना बन्द होगया। बहन जनमासे में आकर सोगई—भाँवर उसके भाई के साथ पड़ी फिर विदा हो बरात वहाँ गई तो आगे आगे भाग कर घर आकर पहले बताये नियम मुताबिक कहे अनुसार घर के अन्दर —पानी—व अनाज नहीं थी सिर्फ पोतनी के कुल्लड़ में पानी पहले चाकी की गलाई में अनाज पाया और उसी के द्वारा सब कार्य किया गया। बरात आने पर बहन का दरवाजा लिया फिर भाई व भाई की बहू का दरवाजा लिया गया। फिर रात को सुहागरात होने के बखत बहनबोली कि में अपने भाई के पास पहले सोऊंगी तो भाई ने विचारकर व पागल समझ कर भाई बहू और बहन की बीच तेगा—तलवार रखकर—सो रहे। इतने, सर्प डसने को बहन के भाई को आया। भगवान का दिया हुआ वरदान निभाने को सर्प देवता आये तो उनसे पहले यह कही कि ३ तीन सर और छः पैर हों तो उसे नहीं डसना और दो सर चार पैर हों तो डसना लेकिन खाट पर तीन सर—छः पैर मिले। सर्प चारों तरफ घूमा-खटका मिलने पर बहन जाग पड़ी—तलवार से बहन ने मार कर वह ढाल के नीचे ढक दिया—और कोठरी में जा सोई। सवेरा हुआ बहन को विदा करने की तैयारी करी। तब बहन बोलती माता से तेरो तनक से भनक नहीं कर पायौ, मूड़ देखो, जुआँ देखे, तेल डाला, मूढ़ बाँध कर लड़की बोली माता से कै तेरी तौ वेटा राखो—भौजाई को सुहाग राखौ, अपना वीर राखों मै न तो बावली न में पागल, मैंने पाँच काल ते बचायौ। तब लड़की विदा होकर चली तो पीछे चरन्न परिन्न मानष और दरखत वगैरह सबै पुलकित व खुशी हो कर लड़की के पीछे पीछे चलने लगे तो मात कहने लगी बेटी से बेटी पीछें तो देख। पीछे देखने पर सब के सब थम गये। लड़की खुसी होकर अपने घर पर आगई।

(श्री अनारकली देवी, कौम सुनार, खेरा कला, मजरा सरेड़ा, तहसील खेरागढ़।)

३५.१०.४.३. (३)

भैयादोज की कहानी

एक आदमी के एक लड़का था एक लड़की थी। लड़की कभी अपने भाई को गाली नहीं देती, न उससे लड़ती-झगड़ती थी। एक बार भाई उसकी ससुराल गया, तो बहन चर्खा कात रही थी। उसका तार टूट गया, बहुत देर तक जोड़ती रही, पर न तार जुड़ा, न भाई से मिली। भाई बोला—बहन, मैं कितनी देर से खड़ा हूं, और तू मुझसे नहीं मिली। बोली—भाई, मं, तेरी ही सुध कर रही थी। अब तार जुड़ा तो मैं तेरे पास आई हूँ। फिर वह अपनी पड़ोसिनों से बोली—बहना, जो किसी का प्यारा भाई आवे, तो उसकी क्या खातिर करे? उन्होंने जवाब दिया कि तेल से चौका लगावे, घी में चावल पकावे तब भाई को खवावें। उसने ऐसा ही किया। न तेल का चौका सूखा, - न

चावल पके, न भाई को खाना मिला। तब एक बोली—मिट्टी से तो चौका दे, और दूध में चावल बना। जब ऐसा किया तो भाई को भोजन मिला। भाई बोला—बहन, मैं कल घर जाऊँगा। सो वह उस दिन बड़े सबेरे उठी, और आटा पीसने बैठी। चक्की में एक साँप बैठा था, वह पिस गया। उसे खबर न लगी। उसी चून के, घी बूरा डाल कर, लड्डू बनाये। लड्डू लेकर भैया घर को चल दिया। उसके जाने के पीछे बहन को पता लगा कि मेरी चक्की में साँप पिस गया। उसके जी को चिंता हुई। घर वा खन जैसा पड़ा था, वैसा ही घर छोड़ा। पालने में लड़का सो रहा था, उसे भी सोता छोड़ा। आप अकेली चल पड़ी। रास्ते में उसे जो मिलता, उसी से पूछती जाती। एक ने बता दिया कि फलाने पेड़ के नीचे सो रहा है और पोटली पेड़ से बँधी है। वह वहीं पहुँची। देखा कि भाई सो रहा है। उसे जगाया और पूछा कि तुमने ये लड्डू तो नहीं खाए? बोला कि जैसे दिये हैं वैसे ही मैं ले आया। मुझे नींद लगी, सो पेड़ से बांध कर सो गया। झट से लड्डू खोल कर एक तरफ फेंक दिये. और आप उसके साथ हो ली। रास्ते में क्या देखा कि पत्थर की सिलाएँ आकाश में उड़ती हुई जा रही हैं। सो उन्हें देखकर एक रस्तेगीर से बोली कि भैया ये कहाँ जा रही हैं? कि जो अपने भैया को कभी न कोसती हो और अपनी मा का इकलौता बेटा हो, जब उसका ब्याह होगा तो ये उसकी छाती पर रक्खी जायेंगी। आगे उसे साँप-साँपिन मिले। उन्होंने कहा कि ब्याह पीछे हम इसे काटेंगे। पूछा कि इसका कुछ उपाय है? कि है। सब काम उसकी बहन उसके बदले में करे और खूब गालियाँ दे, तो उसकी गिरह उतरें। यह सुना तो वह अपने भाई को गालियाँ देने लगी। कोसती हुई घर आई। मा को बुरा लगा कि यह बेटी किस काम की जो मेरे इकलौते बेटे को गाली दे। उसने नेंक भी बेटी की खातिर न की। ब्याह उठा, लगन आई। बहन बोली यह मरा लगन कैसे चढ़वाएगा, पहले मैं चढ़वाऊंगी और फैल-भर गई। आदमियों ने हार कर कहा कि, भैया, पहले इसी की लगन चढ़ा दो। घुड़चढ़ी का वक्त हुआ, बोली कि वह मर-जाना कैसे घोड़े पर चढ़ेगा, पहले मैं चढूँगी। कि अच्छा भैया, इसी को चढ़ जाने दो। जब वह घोड़े पर बैठी तभी सिलाएँ आईं पर उसे वहाँ न देख और उसकी जगह औरत को देख कर वे उलटी लौट गईं। बरातियों ने कहा कि इसे अपने साथ जरूर ले चलो। यह कुछ जादू जाने है। बस वह बरात में साथ गई। जब फेरों का वक्त हुआ तो बोली कि यह मिटा पहले कैसे फेरे लेगा, पहले मैं लूंगी। सो फेरे फिरवा लिये। अब वहाँ से बरात चल दी। और उसने गाली देना शुरू किया। भैया को खांउ भौजाई को राँड करूं, माँ को निपूती करूं ऐसा कहती घर आई। दरवाजा रोकने के वक्त बोली इस मरे का दरवाजा कैसे रुकेगा, पहले मैं रुकाउंगी। रात हुई तो बोली इसकी सुहाग रात कैसे होगी, पहले मैं करूँगी। बहू को लेकर एक कमरे में जा सोई। आधी रात जब हुई तो साँप-साँपन का जोड़ा उसे काटने आया। वह झटपट दोनों को मार और उन्हें अपनी जेब में रख कर सो गई। ऐसी गहरी नींद सोई कि तीन दिन निकल गये। सारे मेहमान विदा हो गये तब उसकी माँ बोली कि मेरी कुसकटी बेटी कहाँ है! उसे भी छींट घोट देकर विदा करूँ। बेटी उठी, और माँ से बोली—देख मैंने इस भाई के पीछे महिनों से मुसीबत उठाई है। देख ये तो साँप और साँपिन का जोड़ा आया, सिला आई। ये सब मैंने अपने ऊपर लीं। मैं क्या करूँगी तेरी छींट का, मेरे घर भुतेरा है। अपना लड़का भी छोड़कर आई हूँ, और

अब में जाऊँ हूँ। अपने बहू बेटे को अच्छी तरह रखियो। माँ ने उसे अच्छी तरह विदा किया और बड़ी खुसी मनाई। अगली जैसी किसी को मत अइयो, पिछली आई सब किसी को अइयो। छोरी न मानी और अपने सासरे चली गई देखो उसने अपने भैया की जान कैसे संकटों से बचाई तभी से भाई बहिनों को पूजते हैं। और तभी से भइयाद्योज कही जाती है और, भइयाद्योज की यही कथा है।

३५. १०. ४. ३. (४) भइया द्योज के दिन उपवास रहने की कथा

एक राजा के एक लड़का एक लड़की थी। लड़की बड़ी और उसका व्याह हो गया अपने घर की हो गई। लड़का छोटा था। एक दिन लड़का बोला माँ री सब लड़के द्योज के दिन बहिन को पूजते हैं और मैं भी अबके पूजूंगो मेरी बहिन कहाँ है तू मुझे बता दे। माँ बोली भइया तेरी बहिन बहुत दूर है तुझ पर नहीं पहुँच्यौ जायगो। गैल में बड़े दुख हैं। बेटा बोला नहीं मैं जाऊँगो। माता ने कहा बेटा बन में नाहर मिलेंगे तो बकरा ले जा सर्प के लिए दूध लेजा एक बड़ी भयानक नदी पड़ेगी सो इन पढ़े दानों को ले जा उसमें इनको पटक देना नदी उतर जायगी और तू चले जाना और बहिन को पूज आना। लड़का गया और गैल में ऐसा ही करता गया। और दो तीन दिन रह कर भइया ने कही बीबी हम जा रहे हैं। बीबी ने कहा भइया अब मति जाय। भइया ने हठ कियौ। नहीं मानौ तो भइया ने कही बीबी मैं धोंहताय बहुत सिदौसौ जाऊँगो। मेरी रोटी रात में ही करदीयों बहिन के पास चून नहीं यो तो रात में ही चून पीस्यौ सो उसमें साँप पिस गयौ और रात में ही साँप पिसे की रोटी करके मलीदा कर दियौ आधौ भइया के लिए आधौ बाल-बच्चेन के लिए। वह धोंताइ उठिकें बहिन से मलीदा लेकें भइया चल दियौ। जब सबेरा हुआ तो छोरा छोरी जगे उनने माँ ते कही माँ जो तैंने मामा कूं करिदयौओ बामें ते हमकूं दे दे। माँ घर में से मलीदा उठा लाई और देने लगी तो बामें देख्यौ तौ कारौ साँप पिस गयौ उसमें उसका जहर और हड्डी पिस गई। तौ छोरा छोरी वहीं पर रोते छोड़ और मलीदा को अपने साथ लेकर चल दी परौसिन ते सब हाल सुनाके कहा मैं तौ गाँव जा रही हूँ जब तक मैं आऊँ तब तक मेरे घर की देख भाल करियो। घर के सामान को योंही पटक गई और गैल में जो कोई पावै उससे ही पूछे कि रे तुम्हें कोऊ बटेऊ पायौ। है सब नाहीं कर देते। अन्त में एक आदमी पायौ बानें कही कि वीर मैं तो यह जानूं नहीं कि कौन ऐ पर फलाने गाम की परली पोखर की पार पर पीपर के नीचें सो रह्यौ है। और एक पुटरिया छोटी सी पीपर में बँध रही है। और जो जीव जिनावर खाते हैं मर जाते हैं। यह बहिन भइया के पास पहुँची तो उसे मरा पाकर रोने लगी तब कहा—काटे काट कटेंरिनि माँटे लिए लगाम। पीपर बोली हे बहिन तू रोवें मति मेरे जो ये फूल हैं तू उनको लगा दे तेरा भाई जी परेगा। बहिन ने ऐसा ही किया। भइया जी पड़ा और कहा भइया यह तैंने भलौ कियौ कि यह न खायौ यह बोल्यौ मैंने नहीं खायौ यह बँध्यौऐ पीपर की डार से। उसने उसको खोलकर धरती में गड़वा दियौ और बोली भइया मैं तेरे संग चलूंगी भइया ने नाँहीं करी कि तू अपने घर चली जा। नहीं मानी और संग चली गई। जब दोनों बहिन भइया जा रहे थे तो बहुत प्यास लगी और बोली मैं प्यासौ बहुत हूँ। भइया ने कहा यहाँ पानी कहाँ है। तब बहिन को बहुत दूर पर पानी दिखाई दिया

और बहिन वहीं पर गई, भइया को वहीं पर बैठा गई, वहां पर जाकर देखा तो कोरी जेहर धरी हैं। और बहुत से कारीगर बहुत बड़ी-बड़ी शिला बना रहे हैं। इसने कहा भइया तुम कहा करि रहे औ वो बोले चल चल अपना काम कर वह हट पड़ गई वे बोले ये शिला इसलिए बनवाई जा रही है कि एक राजा के एक ही लड़की और एक ही लड़का है जब बाकी व्याह होगी तो उसके ऊपर गिरेगी क्योंकि ये उसी राजा के दरवाजे में लगेगी जिसके यहां उसकी बगदी हो रही है। यह समझ गई कि मेरे भइया को ही कह रहे हैं। इसने पूछा वह बच भी जायगा उननें कहयौ कि उसकी बहिन अब से ही व्याह होय जब तक गाली देती रहे तौ बच जाइगौ। उसनें वहीं से उसे गाली देना शुरू कर दियौ। वे शाम को अपने घर पहुँचे मां से बोली तेरौ बेटा मर जाय और तेरौ पेट गिर जाय हमतौ आगये। मां बोली बेटा तू इस डाहिन को कहां ते ले आयौ, तोय गारी देतिऐ। तेरौ तौ व्या होने वारौ है। झट छोरी रोज धोबी के गधों की लीद उठाया करैई एक दिन धोबी की ने पकड़ ली और कहा मैं धोबी की तू राजा की अगर राजाजी को खबर पड़ गई तो हम सब घरकेननें मरवा देगौ छोरी बोली तू मेरी धर्म की भायेली है तू काई बात की फिकर न कर पर काई दिन मो पै बिपत परै और मैं तोय अपने संग ले चलूं तो चलना। उसने कहा जरूर चलूंगी। यह उपाय किसी पंडित ने बताया कि तू किसी धोबी के गधों की लीद रोज धौंताई धौंताई उठायौ करियौ। तो यह रोज उठत उठत ही भइया को कोसी करैही मा बाप ने इसे बावरी बता दियौ किजि तो बावरी है व्याह आया लगुन धरी गई घुड़-चढ़ी हुई यह छोरी बराबर कोसती रही जब बरात चली तो बहिन बोली मैं तो भीया के साथ चलूंगी। घर के बोले तू कहा करैगी वहां छोरियों का क्या काम है वह हठ पड़ गई बूढ़े बड़ों ने कहा अरे ले चलो भइया। छोरी धोबी की सजाई, एक ढाल तलवार और घोड़ा पै बैठारि कर उसे ले चली। आप रथ में भइया को कोसती हुई चली जा रही थी। कि तू यहां पै मरजाय, तेरी बहू मरि जाय। बरात एक पेड़ के नीचे जाकर डटी छोरी ने कहा अरे या सत्यानासी को धूप में बैठारौ। या में नहीं बीजरा नां मारे। उसको धूप में बैठार कर देर नहीं हुई कि थी नीम टूट कर गिर गया वह बच गया। वहां से चले गांव पहुँचे बारौठी हुई। वह भीया के पास गई और सब आदमियों से कहा इस निपूते की घोड़े में खड़ौ करिकें बारौठी करौ लोगों ने ऐसा ही किया। झट दरवाजे की शिला गिर गई वह दोनों तीन पैसे बच गया। एक फेरेन की रह गई। जब जनमासे में आये तो आदमी कहने लगे कि इसको फेरान में मत ले चलो सौमती छोड़ चलना आधी रात के फेरे थे। सो गई। जब आधी हुई फेरेन में गये तो बाजा भी नहीं बजने दिया चुपचाप चले गये। छोरी जगी और उनके पीछे ही धोबी की जगी और ढाल तलवार लेकर चलदी और भैया के पीछे बैठ गई। जब फेरा फिरने लगे तो उनको देख देख कर वहां की स्त्रियां हंसने लगी कि भइया का व्याह है छोरी उसे गारी दे रही है। जब फेरा पड़ चुके तो काला सर्प निकला भाई को काटने के लिए झट से उसे बहिन ने ढाल के नीचे दबा दिया फिर सांपन निकली। उसे धोबी की ने दबा दिया और म्यान में दोनों उसमें भर लिए। सांपन बोली मेरे पती को छोड़। छोरी बोली तू मेरे भाई को छुड़वावें सांप ने तीन बचन भर दिऐ कि तेरा भाई छोड़ा

जब बरात गाँव को आने लगी और यहाँ से चल दिये। दोनों भायेली एक साथ लेकर सर्प साँपन को बन में गईं। बन में जाकर साँपन बोली अब छोड़ दे उसने कहा जो मेरे ६ भाई और मरे उनको छोड़ दे जब छोड़ूँगी उसने ६ भाई भी छोड़ दिये। छोरी ने यह वचन और लिये कि अब तो किसी को न खायेगी। उसने कहा अब किसी को न खाऊँगी वचन देती हूँ। जब उनको छोड़ दिया और ६ भाई और बहिन घर को गये और बहिन ने कहा माँ ले तेरे जो ६ लड़के मरे थे उनको और तेरा पहिला लड़का भी है अब तेरे सात लड़के हो गये हैं। अब मैं जाती हूँ। माँह पहला सब हाल बरातियों और धोबिन की ने कह सुनाया कि यह गाली इस बजय से देती थी। माँ ने कहा अब बेटी मत जा। पर छोरी न मानी और अपने सासेरे चली गई देखो उसनें अपने भैया की जान कैसे संकटों से बचाई, तभी से भाई बहिनों को पूजते हैं। और तभी से भइया दौज कही जाती है और भइया दौज की यही कथा है।

३५:१०:४:३. (५) कहानी भैया दौज

एक विधवा के पाँच बेटा ए। एक पोत एकु बेटा अपनी माँ कूँ पूछि क अपनी बहिन के न्याँ पहुंचौ तौ वाकी बहिन चर्खा काति रही ई। जैसे ई वाकौ भैया आयौ तौ वाके चरखा कौ तारु टूटि गयौ। बु अपने तारैं जोरिबे में लगी रही जब वाके भैया ने जि बात देखी तौ बु लौटि के अपने गाम कूँ चलन लग्यौ। जब वाकी भैन अपनें तार कूँ जोरि चुकी तौ अपनें भैया ते बोली कि भैया आओ और दौज खाओ। लैंनें अपन भैया ते मिली। और अपने भैया के काजें लडुआ बनाये। उन लडुआन में साँप पिस गयौ। भैंनि नें सब लडुआ अपने भैया कूँ ई दै दिए और द्वै अपने बालकन कूँ राखि लिए। भैया उन लडुआन कूँ लैकें अपनें गाम कूँ चलि दियौ। जब भैंनि के बालकन ने लडुआ खाये तो बाकूँ लडुआन में साँप के टूँक मिले भैंनि ने जि देखी तौ अपने भैया के पीछें भागी। रास्ता में एकु रस्तागीर मिल्यौ वाने कही कि तेरौ भैया आगेंई जाय रह्यौ ऐ। भैंनि ने कछू दूरि जाय कें अपनौ भैया पकरि लियौ भैया एक पेड़ के नीचें सोइ रह्यौ ओ भैंनि ने भैया ते लडुआ खाबे कूँ मनैं करि दई और अपने भैया के संग वाके गाम कूँ चलि दई। भैया ने बहुत नाह्नी करी परि भैंनि न मानी। गाम में जाइ कैं भैया के व्याह की तैयारी भई। व्याह के सबु कामन में भैंनि भैया ई के संग रही। और जो जौ आफति भैया पै आई सबु दूरि करि दई। भैंनि कूँ पहलें कौतरि फिर बीछू और फिर साँप मिले। वाने सब मारि दिए और अपने भैया की रक्षा करी. जो भैंनि न होंती तौ सबु आफति वाके भैया ई पै आमती। व्याह के पीछे सब तौ अच्छे-अच्छे भोजन करि रहे ए परि भैंनि एक घर में जा परी। वाकी माने बु बुलाई तब वाने ऊ भोजन करे।

३५:१०:४:३. (६) भैयादूज

एक बहन थी, उसके एक ही भाई था। वह अपने भाई को बहुत प्यार करती थी। कार्तिक में शुक्लपक्ष के द्वितीया के दिन भारत में एक भाई-बहन का पर्व होता है जिसका नाम भैयादूज है। उसी दिन चित्रगुप्त पूजा भी होती है। उस दिन सभी बहनें अपने भाइयों को श्रापती हैं। उस दिन का, बहन का श्राप भाइयों के लिए आशीर्वाद होता है। उस दिन बहनें भाइयों को टीका लगाती हैं।

लेकिन बहन यशोदा मारे स्नेह के अपने भाई को नहीं श्रापती थी। वह कहती थी कि मुझे एक ही भाई है, मैं भाई को कैसे श्रापूंगी। उसके भाई की शादी ठीक हुई। यशोदा अपनी दाई के साथ खेत में मिट्टी लिवाने गयी। उस मिट्टी से शादी के लिए चूल्हा बनता। जब मिट्टी कुड़वा रही थी तब उसे किन्हीं दो आदमियों के बातचीत करने की आवाज मालूम पड़ी। यशोदा बहुत ध्यान से सुनने लगी। बात करने वाला यमराज मालूम पड़ रहा था। यमराज ने कहा—संसार की सभी लड़कियाँ भ्रातृद्वितीया के दिन अपने भाई को श्रापती हैं, और यह यशोदा अपने भाई को कभी नहीं श्रापती है। न कभी श्रापती हैं, और न कभी टीका ही लगाती है। कैसे इसका भाई अमर होगा? इसका भाई शादी करने जा रहा है, उसी में उसको मैं ले लूंगा। फिर दूसरे तरफ से आवाज आई कि किस तरह से उसको ले लीजियेगा। यमराज ने बताया कि जब वह शादी करने जायेगा तो मैं उसे साँप बन कर काट लूँगा। यदि उससे बच गया तो बाघ बन कर निगल जाऊँगा। अगर उससे भी बच जायेगा तो दरवाजा बारात लगने के समय दरवाजा गिर जायेगा और वह दब कर मर जायेगा। और किसी तरह से इन सभी चीजों से भी बच जायेगा तो शादी के वक्त स्त्री के माँग में सेन्दूर रखने के समय काँटा बन कर उसके हाथ में चुभ जायेंगे और वह मर जायगा। हमारे पास अनेकों प्रकार के साधन हैं जिससे वह मारा जा सकता है। फिर कोई पूछता है—यमराज! क्या उसके बचनें का कोई उपाय नहीं है। ऐसे शुभ अवसर पर बेचारा मर जायेगा तो उसके घर में हाहाकार मच जायेगा। यमराज बोले—हाँ उपाय क्यों नहीं है? लेकिन कोई ऐसा आदमी होना चाहिये जो बारात चलने के समय नाग की पूजा पूजा के लिये और द्वार की पूजा के लिये सब सामग्री साथ नें ले ले। और जो सामने आवे सब की पूजा करता जाय। और जब सेन्दूर कन्या की माँग में पड़ने लगे तब पहली चुटकी जल्दी से छीनकर अपने गोद में ले लें। और अब से बहन अपने भाई को श्रापे तथा टीका लगावे तब उसका भाई अमर होगा। यशोदा खड़ी-खड़ी सभी बातों को सुन रही थी। सुनते ही उसके मन में घबड़ाहट पैदा हो गयी। उसी समय से वह बकने लगी। मेरा भाई मरे मेरा भाई मरे। और वहाँ से वह जल्दी अपने आँगन में आई। शादी के लिए चूल्हा बना रही थी तथा अनेकों काम कर रही थी, और यही बक रही थी कि—भईये खाउँ, भईये खाउँ। सारे आँगन के लोग अचम्भित हैं कि क्या हो गया है इस लड़की को। पागल तो नहीं हो गयी है यह। सभी पूछते हैं कि यशोदा तुम्हारे भाई की शादी है और तुम ऐसा क्यों बोलती हो। पर वह किसी को नहीं बताती है। बारात जाने का दिन आया, सब कोई सब तैयारी कर रहे हैं, लेकिन यशोदा नाग की पूजा के लिये दूध-लावा तथा बाघ की पूजा के लिये मांस और द्वार पूजा के लिये धोती, पान, सुपाड़ी इत्यादि इकट्ठा कर रही है। बारात जाने लगी तो वह भी बारात जाने के लिए तैयार हो गयी। सब कोई कहने लगे कि तुम बारात जाओगी तो लोग क्या कहेंगे। लाख मना करने पर भी वह नहीं मानी और बारात के साथ चल दी। बराबर अपने भाई के साथ-साथ चलने लगी। बारात के कुछ दूर जाने के बाद यशोदा ने एक विशाल साँप को आते देखा। यशोदा ने झट आगे बढ़कर साँप को दूध लावा दे कर प्रणाम कर लिया और जल्दी से भाई की पालकी आगे बढ़वा ली। फिर कुछ दूर आगे

जाने के बाद एक जंगल पड़ा उस जंगल से एक बाघ दहाड़ते हुए इधर आने लगा। सारी बारात के लोग घबड़ा गये। पर यशोदा हिम्मत करके आगे बढ़ी और मांस का कुटिया उसके सामने देकर प्रणाम कर ली। और फिर आगे बढ़ी। जब दरवाजा पर बारात पहुँची तब यशोदा ने आगे बढ़कर पान, सुपाड़ी, रुपया से द्वारपूजा कर ली। तब भाई की सवारी दरवाजा लगने दी। शादी करने के समय भाई जब आँगन में आने लगा तो वह भी साथ आई। और जब उसका भाई अपनी स्त्री की माँग में सेन्दूर देन लगा तो यशोदा ने पहली चुटकी सिन्दूर छीनकर अपनी गोद में रख ली। यशोदा के ऐसा करने से सभी बाधाएँ दूर हो गयीं। खुशी-खुशी शादी होने के पश्चात् सभी अपने घर लौट आये। और घर आने पर सबों को पता चला कि यशोदा क्यों ऐसे-ऐसे कर रही थी। तभी से कार्तिक में द्वितीया के दिन यशोदा अपने भाई को श्रापने लगी तथा टीका भी लगाने लगी।

३५:१०:४:३:७. जमुना अपने धर्मराज भाई को हमेशा बुलाती थीं। परन्तु धर्मराज को फुरसत नहीं मिलती थी। कार्तिक में जो शुक्ल पक्ष की दौज होती है उसको धर्मराज अपनी बहन जमुना के घर गये। जमुना ने उनकी बहुत खातिर की उससे प्रसन्न होकर अपनी बहन से कहा कि तुम वर माँगो। जमुना ने वर माँगा कि इस दौज के दिन जो भी भाई अपनी बहन के घर जाकर अपनी बहन के हाथ से मिठाई आदि कुछ खायेगा और बहन को उपहार में कुछ देगा वह दीर्घ आयु वाला होगा। तब से हिन्दुस्तान में हरेक भाई अपनी बहन के घर जाता है। जिसकी बहन दूर होती है वह अपने भाई को टीका भेजती है।

३५:१०:४:३(८) भाईदूज की कहानी

एक भाई, दूज के दिन अपनी बहन के यहाँ गया। उसकी बहन दौज की पूजा कर रही थी। न उसको आव जुड़ती थी न वह पीछे देखती थी। भाई ने सोचा देखो मैं तो बहन के घर आया और बहन मिलने भी नहीं उठती। जब उसकी आव जुड़ गयी तब वह उठी भइया से मिली और भाई को उसने आदर पूर्वक बैठाया। तब वह अपनी पड़ोसिनों के पास भगी गयी। पूछने लगी कि मेरा बहुत ही प्यारा भाई आया है उसकी मैं क्या खातिर करूँ। पड़ोसिनों ने कहा कि घी में चावल राँध तेल में चौका लीप। उसने ऐसा ही किया न चौक सूखे न चावल गलें। भाई भूख से तड़पने लगा। तब वह अपनी सास और जिठानी के पास गयी और बोली कि मेरा बहुत प्यारा भाई आया है तो मैं क्या खातिर करूँ। तब सास ने कहा बढ़िया-बढ़िया पकवान बनाओ और गोबर का चौक लीपो। उसने ऐसा ही किया। उसका भाई कई दिन तक बहन के पास रहा। बहुत[illegible] हो गये तब भाई बोला अब मैं घर जाऊँगा। बहन ने रात में उठकर चावल पीसे रात ही में उस चावल के लड्डू बनाये बना कर अपने भाई को दिये। भाई लेकर रात ही में चल दिया। उस औरत के बच्चे उठे और उन्होंने पूछा तुमने मामा के लिये क्या बनाया हमको भी दो। जैसे ही उसने लड्डू तोड़ा वैसे ही उसके अंदर साँप की [illegible]ी निकली। लड्डू को उसने वहीं फेंक दिया और वहाँ से भैया-भैया चिल्लाती हुई [illegible]गी जो रास्ते में मिलता था उसी से पूछती थी कि मेरा भाई देखा है। वह इस प्रकार

पूछती चिल्लाती एक पेड़ के नीचे पहुँची तब वहाँ पर उसने देखा कि भाई सो रहा है। पोटली पेड़ से लटक रही है। उसने अपने भाई को जगाया और पूछा कि तुमने लड्डू खाये नहीं भाई ने कहा मैंने तेरे लड्डू नहीं खाये वह लटक रहे हैं। बहन ने गड्ढा खोदकर लड्डू उसी में गाड़ दिये और वह आगे चले थोड़ी दूर जाने पर बहन को प्यास लगी सब जगह देखा परन्तु कोई तालाब या कूँआ न मिला। बहन को बहुत जोर से प्यास लगने लगी। भाई अकेला पानी की खोज में चल पड़ा, थोड़ी दूर जाकर उसने देखा कि कौवे और चील मंडरा रहे हैं। तब भाई ने कहा जरूर यहाँ पर पानी होगा। भाई देखने गया वहाँ पर सचमुच में पानी निकला। भाई ने बहन को भेजा कि जा तू पानी पीया। बहन तालाब के पास गई वहाँ क्या देखा कि सिला रक्खा हुआ है और एक बूढ़ी औरत उसके पास बैठी थी। लड़की ने बूढ़ी से सिला के बारे में पूछा बूढ़ी ने कहा जो कोसी का पूत अनकोसी का भइया होगा तब उसकी शादी होगी तो यह सिलेगा खिसगा तब वह मर जायेगा फिर लड़की ने पूछा और क्या होगा तब उसकी जब लगुन आयेंगी तो उसमें विसखांपर आयेगी तो वह उसे खा जायेगी, और क्या होगा जब उसका जनमासा होगा तो वह पेड़ गिरेगा, और क्या होगा तब उसने कहा जब भाँवरें पड़ेंगी तो काला आयेगा तो उसे डस जायगा और क्या होगा उसने कहा पानी कहीं नहीं मिलेगा केवल पुंतैड़ी में मिलेगा। ब्रज में पुंलेड़ी चूल्हा पोतने वाले बर्तन को कहते हैं। उसीसे गोद सेकी जायेगी और क्या होगा उस बूढ़ी ने कहा जब सुहागरात होगी तो काला नाग खा जायेगा। उसने वहीं सोचा कि में उसको गाली दूंगी तो अमर हो जायेगा। वह वहीं से कोसती हुई आई भाई देख कर घबराया उसने कहा ये चील कौवों का झूँठा पानी पीकर पगली हो आई वह घर पहुँची तो वह अपनी माँ से भी गाली देकर मिली। सबने समझा कि ये तो पगली है। तो उसने उसे भिसौरा में ठहराया और मेहमाहन महल और बागों में ठहरे। शादी का दिन आया तो वह बोली लगन में लुँगी भैया नहीं लेगा। सबनें बहुत समझाया परन्तु वह न मानी। उसने लगुन ली उसमें विषखांपर आई उसने मार कर रख लिया। निकासी के समय भी उसने वही किया। निकासी में भी बहन गई दरवाजा खिसला तो वह सिल आई। उसने दरवाजे की एक ईंट अपने पास रखली। सब जने जान गये कि ये पगली नहीं है कुछ जानती है। सब उसकी बात मानने लगे जब जनमासा हुआ तो वह बोली हम तो मैदान में ठहरेंगे पेड़ के नीचें नहीं। जैसे ही वह मैदान में ठहरे तो पेड़ गिर गया। उसमें से उसने एक पत्ता तोड़ कर रख लिया। भाँवर का समय आया तो वह कहने लगी में आऊंगी। सबने कहा ऐसी अनुचित बात मत करो परन्तु वह न मानी जब वह भाँवरों पर गई तब एक नाग लहराता हुआ आया वह भी उसने मार कर रख लिया वह पहले अपनी माँ को कह गई थी कि कहीं पानी नहीं मिलेगा केवल पुतैंड़ी से गोद सेक लेना। बरात लौटने पर उसकी माँ ने देखा कहीं पानी नहीं है। तब माँ ने पूतैंड़ी देखी पुतैंड़ी में खूब पानी लहरा रहा है। उसी से गोद सिकी उसी से सब काम हुआ।

३५.१०.४.३.१. स्पष्ट है कि इन सभी कहानियों में भाई बहिन के प्रेम का दृढ़ रूप दिखाया है। बहिन ने त्याग पूर्वक कष्ट सहकर भी भाई को कष्टों से उबारा है। ऐसी कहानियाँ ही तो बहिन-भाई के प्रेम को बनाये रखने में सहायक होती रहती हैं। इसके द्वारा ही दूर-दूर होते हुए भी दोनों को एक दूसरे की हित-चिंतना का ध्यान रहा है।

३५.१०.४.४. इन कहानियों के उपरांत गणेश जी की एक अद्भुत कहानी और कही जाती है। **गणेश जी एक चिमटी या चुटकी में चावल लेकर आये और एक कुल्हिया में दूध। घर-घर में जाकर पूछते फिरे की कोई मेरी खीर बना देगी। सबने असमर्थता प्रकट की। एक बुढ़िया ने कहा—ला भैया बना दूंगी। गणेश जी ने कहा तो ला, सबसे बड़ा पात्र ला। चावलों और दूध से सब पात्र भर गए और खीर बनायी गयी। गणेश जी कुछ समय उपरांत लौटने का वचन देकर स्नान करने चले गये। उस बुढ़िया ने चावल दूध खूब पास-पड़ौस में बाँटा। वह कम ही न होता था। खीर पक गई, बुढ़िया की बहू को बहुत भूख लगी। गणेश जी को आने में देर हो गई। उसने गणेश के नाम से खीर निकाल दी और कहा गणेश जी महाराज जहाँ भी हों स्वीकार करें। उसने तब स्वयं खीर खाई। तभी गणेश जी आये। बुढ़िया ने कहा खीर खाओ पक गई है गणेश जी ने कहा मुझे तो तेरी बहू ने पहले ही खिला दी। तब गणेश जी के आदेश से वह खीर बुढ़िया ने सभी को बाँटी।**

३५-१०-५. पूजा हो जाने के उपरांत आव उतार कर गौर के सिर पर रख दी जाती हैं। मूसल पर हल्दी के पाँच फेरे लगा दिये जाते हैं। फिर कटेरी, खील, गोबर, बतासे आदि आदि वहाँ से उठाकर घर के बाहर उल्टे हाथ के कौरे के नीचे ये चीजें डालकर मूसल से कूटी जाती हैं। और यह गीत गाया जाता है।

३५. १० ५. १. वैरीयरा जे सब दल मारे हो आज

(राम के कुटुम्ब के सब व्यक्तियों के नाते-रिश्तेदारों के नाम क्रमशः लिए जाते हैं।)

वैरीयरा जे सब दल मारे हो आज
घर कूटे घरि मारे वैरियरा जै सब दल मारे हो आज।

३५. १०. ५. २. सबका नाम ले चुकने पर हल्दी की चिड़ियाँ दोनों कौरौं पर बनाई जाती हैं। दोनों कौरौं पर पानी डालकर कौरौं को सिराया जाता है।

३५. १०. ५. ३. घर में लौटते समय यह गीत गाया जाता है।

आज की घड़िन भरे आनन्द बधाये जी राज
शुभ की घड़िन भरे आनन्द बधाए जी राज
साहब घर आये जी राज
ससुर वियाही हमारी सास कहामें जी राज
जेठ वियाही हमारी जिठानी कहाई जी राज
जिठानी के जाये जेठौत कहाये जी राज
देवर वियाही दौरानी कहाई जी राज
दोरानी के जाये दौरौत कहाये जी राज
ननद वियाहे हमारे नन्दोई कहाये जी राज
नन्द जाये भानेज कहाये जी राज
साहिब वियाही हमारी सौत कहायौ जी राज
सौत के जाये सौतेला कहाये जी राज

३५. १०. ६. इस समस्त दीपावली की लोकवार्ता का रूप कितना ऊंचा, कितना भावुक, कैसा गूढ़ और कल्याण भावों से परिपूर्ण है । इसकी वैज्ञानिक शोध भी उतनी ही रोचक है ।

'दिवाली' के त्यौहार का समारोह कार्तिक कृष्णा त्रयोदशी से ही आरम्भ हो जाता है और कार्तिक शुक्ल द्वितीया तक चलता है । प्रत्येक दिन एक विशेष निमित्त लिये रहता है। धनतेरस को कोई नया बर्तन खरीदा जाना चाहिए । दूसरे दिन नरक चौदस को तैल-मर्दन करके स्नान करना अनिवार्य है अन्यथा नरक मिलेगा । इसे छोटी दिवाली भी कहते हैं । तीसरा दिन ही दिवाली का दिन है । यह दिन दीपदान का है । इस दिन अमावस्या होती है । प्रतिपदा को गाय बैलों के साथ गोवर्द्धन पूजा होगी और दौज को बहिन द्वारा भाई का तिलक और सत्कार होता है ।

३५. १०. ६. १. यों तो प्रत्येक दिन का त्यौहार एक अलग त्यौहार है, फिर उनमें परस्पर एक संगति भी है । इसमें मुख्य अनुष्ठान तो दीपमालिका के दिन का लक्ष्मी-पूजन ही ठहरता है। पहला दिन त्रयोदशी के अनुष्ठान के लिए पात्र तथा आवश्यक सामग्री खरीदने के लिए है। चतुर्दशी अनुष्ठान पूर्व के स्नान और शुचि के लिए । तब अमावस्या को इष्ट पूजन अनन्तर गो-पूजन तथा आयुध-पूजन प्रतिपदा को, और तब अन्तिम दिन भोजन तथा भेंट आदि ।

मुख्य उत्सव तथा अनुष्ठान का प्रधान अंग दीपदान है, लोकवार्ता में दीपदान का बहुत महत्व है ।

३५. १०. ६.२. नटेश शास्त्री ने दक्षिण भारत की एक वार्ता में बताया है कि प्रकाश से समृद्धि आती है। उन्होंने जो कहानी दी है उसका सार यह है :—

गरुड़ पक्षी किसी राजा की अंगूठी उड़ा लाया । वह अँगूठी उसने एक सगुनी के घर में डाल दी । वह उसे लेकर राजा के पास गया । राजा अँगूठी पाकर बहुत प्रसन्न हुआ । उसने कहा—कुछ माँग । राजा का हठ देखकर उस व्यक्ति ने विचित्र माँग रक्खी कि प्रति शुक्र को सब घरों में अँधेरा रहे केवल मुझे ही अपना घर प्रकाशित करने दिया जाय । राजा ने स्वीकार कर लिया । शुक्रवार को समस्त राज्य में अँधेरा देखकर लक्ष्मी उस सगुनी के घर में ही आयी । इस प्रकार उसकी दरिद्रता सदा के लिए दूर हो गयी ।

३५. १०. ६. ३. ऐसी ही एक वार्ता ब्रज में भी प्रचलित है ।

एक राजा ने यह आदेश प्रचारित किया कि कार्तिक की अमावस्या को किसी के घर में रोशनी नहीं की जायेगी । सबने राजाज्ञा का पालन किया । किन्तु एक भटियारिन थी, उसने छिपा के अपने घर में दीपक जलाया । रात में लक्ष्मी सर्वत्र अंधेरा देखकर भटियारिन के घर में ही आयी । भटियारिन ने अपनी किवाड़ तब खोले जब लक्ष्मी से वचन ले लिया कि वह कभी उसके द्वार को छोड़कर नहीं जायगी । लक्ष्मी प्रकाश में ही रह सकती थी । उसे वचन देने पड़े । इस प्रकार दरिद्रता भाग गयी ।

३५. १०. ६. ४. कहानी का नटेश शास्त्री वाला रूप बहुत प्रचलित है। उसमें केवल थोड़ा हेर-फेर स्थान-स्थान पर मिलता है। यथा बंगाल में लक्ष्मी-पूजा की एक कहानी में राजपुत्री ने बरदान माँगा कि उसके घर को छोड़ कार्तिक अमावस्या को और किसी के घर प्रकाश न हो। राजपुत्री का राजा ने एक बहुत दरिद्र से विवाह कर दिया था। राजपुत्री ने अपने पति से कहा था कि तुम्हें मार्ग में जो वस्तु मिले ले आना। उसे एक मरा साँप मिला। राजपुत्र बीमार हुआ और वैद्यों ने बताया कि मरे साँप के सिर से यह अच्छा हो सकता है। राजपुत्री मरे साँप का सिर ले गयी, राजपुत्र अच्छा हो गया, और तब राजपुत्री ने वह बरदान माँगा। राजपुत्री के लक्ष्मी आगयी। बंगाली कहानी इससे आगे बढ़कर यह बताती है कि राजा दरिद्र हो गया और पुत्री के यहाँ भिक्षार्थ पहुँचा। उसने पिता को पहचाना और लक्ष्मी-पूजा की विधि बतायी आदि। अवध में दिवाली की कहानी की भूमिका में एक ऐसा घर है जिसमें सात लड़के और छः बहुएँ थीं, सबके अलग अलग चूल्हे थे। सब लड़ते थे। सातवीं बहू आयी तो उसने एक चूल्हा किया। पहली छः मायके चली गयीं। वह अकेली सब भाइयों को खिलाती। उसने कहा कि सब भाई कमा-कमा कर लाओ, जिसे कमाई न मिले, वह कोई चीज ही लाए। एक दिन सबसे बड़े भाई को काम नहीं मिला तो वह रास्ते में पड़े साँप की केंचुली ही उठा लाया। बहू ने वह छप्पर पर रखदी, एक चील रानी का हार लेकर उड़ी, और बहू के घर पर केंचुली को देख, हार छोड़ गयी। केंचुल ले गयी। बहू ने हार राजा को लौटाया और वह बरदान माँगा। अवध की बहू चतुर थी। उसने अमावस्या को खूब रोशनी की, घर के कोने-कोने में। कोने-कोने को मूसल से पीटा। दरिद्र भाग गया। प्रकाश देखकर लक्ष्मी आगयी। दोनों से बहू ने वचन ले लिया कि सात पीढ़ी तक दरिद्र इधर झांकेगा नहीं और लक्ष्मी घर छोड़ कर नहीं जायेगी। अतः यही प्रकाश और लक्ष्मी का सम्बन्ध दिखाने वाली लक्ष्मी की वास्तविक कहानी बड़े क्षेत्र में प्रचलित है।

३५. १०. ६. ५. मिश्र में ईसा पूर्व के तीस वर्ष से भी पूर्व एक दीपदान महोत्सव हुआ करता था। यह महोत्सव ओसिरिस के लिए किया जाता था। इसका वर्णन हेरोडोटस तथा प्लूटार्क ने किया है। प्लूटार्क ने जिस प्रकार से इसका वर्णन किया है। उससे विदित होता है कि यह उत्सव चार दिन तक लगातार होता था और इसकी तारीखें १३, १४, १५, १६ नवम्बर होती थीं। यह उत्सव उस समय होता था जब नील नदी में पानी घटने लगता था, उत्तरी हवाएँ शिथिल पड़ जाती थीं, रातें बड़ी होने लगती थीं, और पेड़ों से पत्ते झड़ने लगते थे। ओसिरिस के इस महोत्सव का महत्वपूर्ण अंग था—रात्रि दीपमालिका। लोग तेल के दीपों की माला अपने मकानों के बाहरी भाग में प्रज्वलित करते थे, और यह दीप रात भर जलते थे। यह दीपमालिका स दिन मिश्र भर में होती थी।

फेजर महोदय ने हेरोडोटस, प्लूटार्क, लक्टण्टियस के कथनों तथा डेण्डेरा के भित्ति-लेख से यह सिद्ध किया है कि यह उत्सव तीन पहलू रखता था—ओसिरिस की मृत्यु, उसका अंगच्छेदन, और पुनरुज्जीवन। इस समस्त व्यापार का प्रतीक होता था—जौ बोना। भूमि में जौ बोना जैसे मृत ओसिरिस को दफनाने

के समान था। जल आदि देकर जौ का फूटना दूसरी स्थिति थी, और जा कि अंकुरित होने की अवस्था पुनरुज्जीवन की द्योतक थी। इस प्राचीन उत्सव में दीपदान का सम्बन्ध स्पष्टतः पुनरुज्जीवन से प्रतीत होता है, पुनरुज्जीवन कृषि-देवता का अथवा स्वयं कृषि का। भारत में लक्ष्मी के पूजन में खील-बतासों का प्रयोग अनिवार्य है।

३५:१०:६:६. ओसिरिस की पत्नी का नाम "ईसिस" है, जिसे हरी वस्तुओं का निर्माता, रोटी की देवी, सुरा की देवी, समृद्धि की देवी कहा गया है। ईसिस ही ओसिरिस को पुनरुज्जीवन कराके पुनः प्राप्त करती है। ईसिस लक्ष्मी के स्थान पर है और ओसिरिस शस्य या शस्य-देवता अथवा उर्वरता का देवता है। उस दीप-दान को 'ईसिस' की पूजा में भी समझा जा सकता है, क्योंकि वही ओसिरिस को खोज कर प्राप्त करती है। ईसिस को गायें बहुत प्रिय हैं। अतः गाय उसका प्रतीक हो गयी है। इस उत्सव में ईसिस को लकड़ी की गाय के रूप में दिखाया जाता था। यह ईसिस भारतीय अदिति प्रतीत होती है।

३५:१०:६:७. १—द्यौर्व : पिता पृथिवी माता : ऋ० १.१६१.६:=Osiris and Isis, Brother and Sister; Children of Geb, the earth and Nut the sky Gooddess. (Folklore Dictionary, God p.p. 835)।

३५:१०:६:७:१. १—ऋग्वेद में अदिति को धेनु कहा गया है (१, १५३, ३) अदितिर्हि गौः (श. १४, २, १, ७, २, ३, ४, ३४) "The Cow no doubt represented Isis Herself, for cows were sacred to her and she was regularly depicted with the horns of a cow on her head, or even as a woman with the head of a cow" (Golden Bough. p. 373)—कहीं अदिति को गाय ही न समझ लिया जाय, इसलिये ऋग्वेद ने कहा है : "वचोविंद वाचमुदीरयन्तीं विश्वाभिर्धी भिरुपतिष्ठयानाम्। देवीं देवेभ्य पर्येयुषीं। गामा मावृक्त मर्त्यें दभ्रनेताः।" "अदिति गौ मात्र नहीं वह देवी है, वाक् विद है।" ऋग्वेद ८, ७४-५ में कहा गया है—"दधाति गर्भमदितेरुपस्थे आ येन तोकं च तनयं च धामहे।" ये सोम के द्वारा होता है। सोम कौन ? सोमा भ्रातादितिः स्वहा—सोम भाई अदिति बहिन। "Osiris and his brother and sister......lived together in happy marriage" Folklore Dictionary p. 935)। लोक वार्ता के मर्म पर दृष्टि डालने से विदित होता है कि आइसिस की पूजा और लक्ष्मी की पूजा वस्तुतः अदिति की पूजा है, पृथ्वी माता की पूजा है। उसके उस रूप की पूजा है जिसका उर्वरत्व से और समृद्धि से संबंध है। समृद्धि पुनः प्राप्त हो, दारिद्रय् नष्ट हो, यही इस पूजा के तंत्र का मूल है। महाराष्ट्र में स्त्रियाँ बलि की मूर्तियाँ चावल के आटे अथवा गोबर से बनाती हैं, उसे पूजती हैं और यह कहती हैं—"सब बुराइयां दूर हों और राजा बलि का साम्राज्य पुनः प्राप्त हो।"[1] मिश्र में

---

१. रायबहादुर बी० ए० गुप्ते : हिन्दू होलीडेज एवं सेरीमोनियल्स, पृ० ३६।

हजारों वर्ष पूर्व बनस्पतियों के गूदे से ओसिरिस की मूर्ति चन्द्रमा के रूप की बनायी जाती थी, उसे वस्त्राभूषण पहनाये जाते थे। यह ओसिरिस की पुनः प्राप्ति का प्रतीक थी।

३५:१०:६:७:२. यह शस्यदेव, यह शस्य देवी, यह गाय, और यह रात्रि पर्यन्त दीपमाला, शरद ऋतु में जब कि रातें बड़ी होने लगती हैं अत्यन्त प्राचीन काल में भी दीपमालिका का महत्व सिद्ध करते हैं।

३५:१०:६:८. फ्रेजर महोदय ने इसी दीपमाला के संबंध में लिखा है कि :—

"वर्ष में एक रात को घरों को ऐसा सार्वजनीन रूप से प्रकाश पूर्ण करने की प्रथा से यह संकेत मिलता है कि यह उत्सव केवल मृत ओसिरिस के ही स्मरण से नहीं होता होगा, वरन् मृत मात्र के लिएहोता होगा, दूसरे शब्दों में यह समस्त आत्माओं की रात होती होगी। क्योंकि यह एक अत्यन्त व्यापक विश्वास है कि मृत की आत्माएँ वर्ष में एक रात को अपने पुराने घर को देखने आती हैं, और ऐसे अवसर पर लोग इन आत्माओं के स्वागत की तैयारी में, उनके लिए भोजन तैयार करते थे तथा दीपदान करते थे, जिससे उन्हें मजारों से घर तक के मार्ग का निर्देश मिल सके।"[२]

३५:१०:६:९. दिवाली के इस चार दिन व्यापी त्यौहार के अन्तिम दिन पर जब ध्यान जाता है तो विदित होता है कि यह भइया दौज है और इस दिन भाई-बहिन का यमुना स्नान करना अत्यंत शुभ माना जाता है। मथुरा में इस यमद्वितीया को लाखों भाईबहिन स्नान करने के लिए देश भर से आते हैं। यहां भाई-बहिन गाँठ जोड़ कर स्नान करते हैं। एक बात की ओर और ध्यान जाता है। ब्रज में चौदस या छोटी दिवाली के दिन जो दीपक आटे का बना कर द्वार के बाहर रखा जाता है वह जमदीप या यम का दीपक कहलाता है। चौदस को यम का दीपक रखना प्रतिपदा को गोवर्द्धन अथवा गाय—बैल की पूजा, दौज को भाई-बहिन का यमुना स्नान और बहिन का भाई को तिलक और स्त्रियों द्वारा गौर-पूजा इस बात की ओर संकेत करते हैं कि इसकी जड़ में यम-पूजन का भाव भी अवश्य है। यम मृत्यु के देवता हैं। ओसिरिस भी मृत्यु के देवता हैं।[१] मिश्र के ओसिरिस भारत के यम हैं—ऐसा प्रतीत होता है। सूरसागर के एक पद में आया है :—

दीपमालिका रचि रचि साजत
पुहुप माल मंडली विराजत,
+ + +
घर-घर देति जुबति जम हाथा[२]
पूजा देखि हँसत ब्रजनाथा।

---

२. देखिये—फ्रेजर गोल्डनवाउ (संक्षिप्त संस्करण) मेकमिलन एण्ड को० लि० सैन्ट-मार्टिन्स स्ट्रीट, लन्दन, १९५० पृ० ३७३-७४।

१.

२. काशी वाली प्रति में संपादकों ने 'जम' को 'जन' लिखा है। यह पाठ भेद मुझे ठीक नहीं प्रतीत होता।

३५:१०:६:१०. इससे दिवाली और यम-पूजा का भी घनिष्ठ संबंध दिखायी पड़ता है। यदि मिश्री लोकवार्ता की दृष्टि से समझा जाय तो ओसिरिस यम भी है और कृषि देवता भी है। आइसिस गौ प्रेमी ही नहीं स्वयं गौ मान ली जाती है। आइसिस को अदिति माना जाय तो वेदों में भी अदिति को गौ माना गया है। प्रतिपदा के दिन गौ-पूजा दिवाली के दिन की पूजा की ही गोवर्द्धन के रूप में विवृति है। द्वितीया के दिन भाई-बहिन का मिलन आइसिस और ओसिरिस के मिलन के समान है, उस समय के मिलन के समान है जिस समय कि आइसिस ओसिरिस के अंशों को छोड़कर उसे पुनरुज्जीवित रूप में प्राप्त करती है।

३५:१०:६:११. इस विवेचन से इतना तो स्पष्ट हो ही जाता है कि दीपमालिका की लोकवार्त्ता के मूल तंतु बहुत प्राचीन हैं और बहुत बड़े क्षेत्र में व्याप्त हैं। ओसिरिस आइसिस, अदिति, यम की पूजा के प्राचीन तंतुओं पर इन्द्र-पूजा का पर्त चढ़ा। साहित्यिक साक्षी से विदित होता है कि गोवर्द्धन-पूजा से पहिले इन्द्र-पूजा प्रचलित थी। इसके ऊपर कृष्ण ने गोवर्द्धन पूजा चलायी। ऊपर जो संकेत हमें मिले हैं उनसे यह कहा जा सकता है कि ओसिरिस, आइसिस आदि का जिस प्रकार कृषि-सम्बर्द्धन से सम्बन्ध था उसी प्रकार गौ-सम्बर्द्धन से भी था। अतः गौ-पूजा गौ-सम्बन्धी अन्य अनुष्ठान से जुड़ गयी होगी। इसी लिए कृष्ण ने उसे मूल परम्परा की जाति की पूजा समझ कर उसका निवारण कर दिया होगा और गोवर्द्धन-पूजा को पुनः महत्व दिया होगा। इस समस्त लोकवार्ता में एक तत्व ऐसा है जो सुलझा हुआ नहीं है। प्रतिपदा के प्रातः ब्रज में सूर्योदय के पूर्व से लेकर सूर्योदय तक घर की स्त्रियाँ स्याहू पूजती हैं। इसमें वे बीच में गोबर का एक पिण्ड स्थापित करती हैं और सूप में सींकें, रुई, हल्दी और खील, दो पूड़ियाँ, लड्डू आदि लाती हैं।। सींकों को वे उस पिण्ड में लगाती हैं और उसके ऊपर हल्दी में भिगोकर उसके सिरे पर रुई लगाती हैं। देवी देवताओं के बहुत से गीत गाये जाते हैं। यह स्याहू क्या है? और इसका क्या अभिप्राय है? यह अभी तक स्पष्ट नहीं। व्रज-लोक-साहित्य का अध्ययन करते समय स्याहू के सम्बन्ध में यह पंक्तियाँ लिखी गयी थीं :—

३५:१०:६:१२. स्याहू के सम्बन्ध में व्रज के गाँवों में एक प्रचलित मत है कि यह एक स्याँपिन है। भाषा-विज्ञान की दृष्टि से भी यह असम्भव नहीं। सर्प से साँप—स्याँपु—स्याउं—स्याउ—स्याऊ—स्याहू यह निरुक्ति हो सकती है। अहोई आठें को जो भित्ति-चित्र स्त्रियाँ पूजने के लिए बनाती हैं उनमें भी सर्प-आकृतियाँ बनायी जाती हैं। दिवाली के उपरान्त प्रतिपदा को सूर्योदय से पूर्व ही स्याहू का पूजन स्त्रियों के द्वारा किया जाता है। गोबर का एक गोल चौक बीच में रख लिया जाता है। सींकों के सिर पर रुई के फूल (फाहे) लगाकर उन सींकों को उस गोबर में चारों ओर गाड़ देते हैं। इस पर एक दीपक जला दिया जाता है। स्याहू को यदि सर्प ही माना जाय तो यह उसके मणिधर फण का प्रतीक हो सकता है। यह भी हो सकता है कि यह 'स्याहू स्यावढ़ हो, सर्प नहीं। दीपावली 'शश्य' का त्यौहार है। शश्य की जो ढेरियाँ 'भूमि'

गणेश' के निमित्त बनाई जाती हैं वे उजरी या स्यावढ़ कहलाती हैं।[1] कुछ भी हो अहोई-आठें की कहानी की स्याहू स्याँपिन ही है। उसे स्याहो माता भी कहा गया है। एक स्त्री से मिट्टी खोदते समय फावड़े से अनजाने ही अंडे बच्चे कट गये।[2] उनकी माँ अब प्रति वर्ष उस स्त्री के बच्चे ले जाया करती, इस प्रकर प्रति अहोई आठें को उसे रोना पीटना पड़े। उसकी ननद, दौरानी, जिठानी ने उसका नाम 'सद रोमनी' रख लिया। उसके इस दुःख से करुणा-कातर हो एक बुढ़िया[3] ने उपाय बताया कि आने वाली अहोई आठें को तू किसी नांद में कढ़ी, किसी में कुछ पका के रख लेना।[4] बिटौरा में पुत्र जनना। आधी रात को स्याहू माता आयेगी, उसके जूएं देखना, उससे कानों की तुरपुती या तरकी मांग लेना। तेरे बच्चे जी उठेंगे। उसने ऐसे ही किया और उसके बच्चे उसे मिल गये।

अकबरपुर की कहानी में किसी भ्रम से ही ये चकाल-चकवा के बच्चे हो गये हैं। आगे उसमें भी स्याहो द्वारा प्रतिकार की बात कही गयी है।

ब्रज में इस स्याहू का जो थापा बनता है उसका रूप मराठी के दिवाली के थापे में शेष और बट सावित्री के थापे में शेषाचपत्नंग से मिलता जुलता होता है। इस साक्षी से भी स्याहू का सर्प से सम्बन्ध विदित होता है, ऊपर जो कहानी दी गयी है उसमें स्याहू और गाय की मित्रता का उल्लेख है। यह स्याहू को प्रसन्न करने का उपाय बतार्ता है। इस सम्बन्ध से लोकवार्त्ता का रूप कुछ और खुलता है। गाय अदिति है, आइसिस है, कृषि देवी है अथवा लक्ष्मी है। वह शेष नाग से सम्बन्धित है। शेष नाग विष्णु अथवा नारायण के लक्ष्मी सहित शैया का काम करते हैं। किन्तु यहाँ पर प्रश्न उपस्थित होता है कि स्याहू का वह गोबर रूप क्या है और उसमें लगी हुई सींकें और लगी हुई रुई के फाए क्या अर्थ रखते हैं। विलियम टाइलर आलकाट ने सनलोर आफ औल एजेज में पृ० १३६ पर लिखा है।

"As we have seen Osiris, the sun god the egyptians triumphing over the demon of darkness, so in India we find Indra, the great Solar deity of Hindus, successful in his combat with Vratra, the serpent of night."

[देखिये परिशिष्ट २:३५:१६. ४—इसमें स्याहो को हमने षष्ठी सिद्ध किया है।]

---

१. देखिए-सर हेनरी ऐम० ईलियट की 'मेमायर्स आन दी हिस्ट्री फोंक लोर एन्ड डिस्ट्रीब्यूशन आव दी रेसेज आव दी नार्थ प्राविन्सेज आव इंडिया' भाग १, पृ० ३११ की पाद-टिप्पणी।

२. ये अंडे बच्चे स्याहो के ही थे। अकबरपुर से पातीराम जी ने जो कहानी संग्रह की हैं उसमें ये चकोल चकवा के लिखे गये हैं। लोहबन की कहानी में भी स्याँपिन

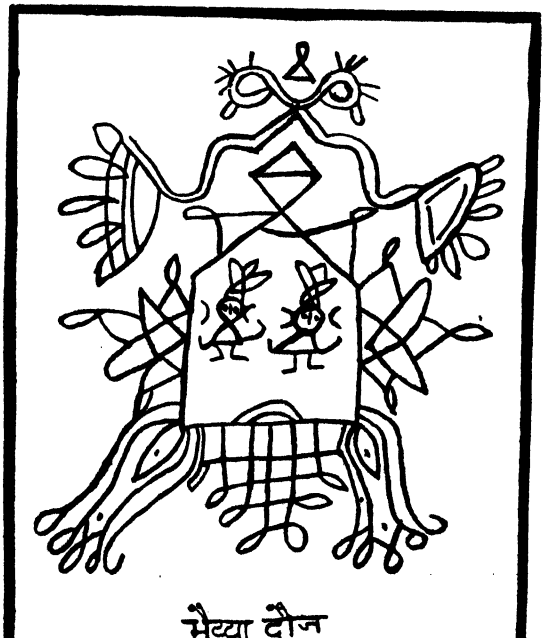
३. किसी-किसी कहानी में बुढ़िया ने तो केवल इतना बताया है कि पड़ोस की गाय की स्याहू से मैत्री है। उसकी सेवा कर। उस स्त्री ने मन लगाकर सेवा की प्रसन्न होकर गाय ने स्याहू को प्रसन्न करने का उपाय बताया।

४. लोहबन वाली कहानी में दो नाँदों में दूध भर कर रखने की बात है। एक में मीठा दूध, दूसरी में नमकीन, कहीं-कहीं इस अभिप्राय का उल्लेख ही नहीं किया गया।

२५:१०:६:१३. वृत्र की कहानी में हमें यह उल्लेख मिलता है कि इसने स्वर्ग के भण्डार, स्त्रियों, आदि को बन्दी बना लिया था। ब्रज की कहानी में स्याहू बच्चों को ले गई है और उसने उन्हें अपने कान में रख लिया है। वृत्र ने उन्हें एक खोह में बन्द कर दिया था। स्याहू अथवा वृत्र से स्वर्गिक समृद्धि और सूर्य के पहिए तथा स्त्रियों की मुक्ति की प्रसन्नता में गोबर के पिण्ड में सींकें लगाकर और रूई के फाए लगाकर संभवतः सूर्य रूप में इन्द्र अथवा विष्णु की पूजा की जाती है। गोबर का पिण्ड सूर्य का प्रतीक है और सींकें सूर्य की किरणें और रुई के फाए प्रकाश हैं। सूर्योदय से पूर्व से लेकर सूर्योदय तक इस अनुष्ठान का विधान भी यही सिद्ध करता है कि यह अहिवृत्र से मुक्त करने वाले और होने वाले सूर्य की और समृद्धि की ही पूजा है। इस दृष्टि से यदि समीकरण करके देखा जाय तो सूर्य = ओसिरिस = यम = इंद्र = गोबर्धन = आदित्य विष्णु = नारायण आदि एक ही हैं, इसी प्रकार अदिति = आइसिस = यमी = गौ = पृथ्वी लक्ष्मी भी हैं। अतः सूर्य और कृषि के सम्मिलित मूल पूजा-विधान से सम्बन्ध रखने वाले जितने भी तत्व हो सकते हैं इतिहास क्रम में समय-समय पर वे इस दीपावली के साथ जुड़ गये हैं। इसके अन्तरंग में वह नाग-पूजा भी है जो भादों में प्रबल रहती है, क्वार में कम और कार्तिक में केवल प्रतीक-संकेतों से प्रकट होती है।

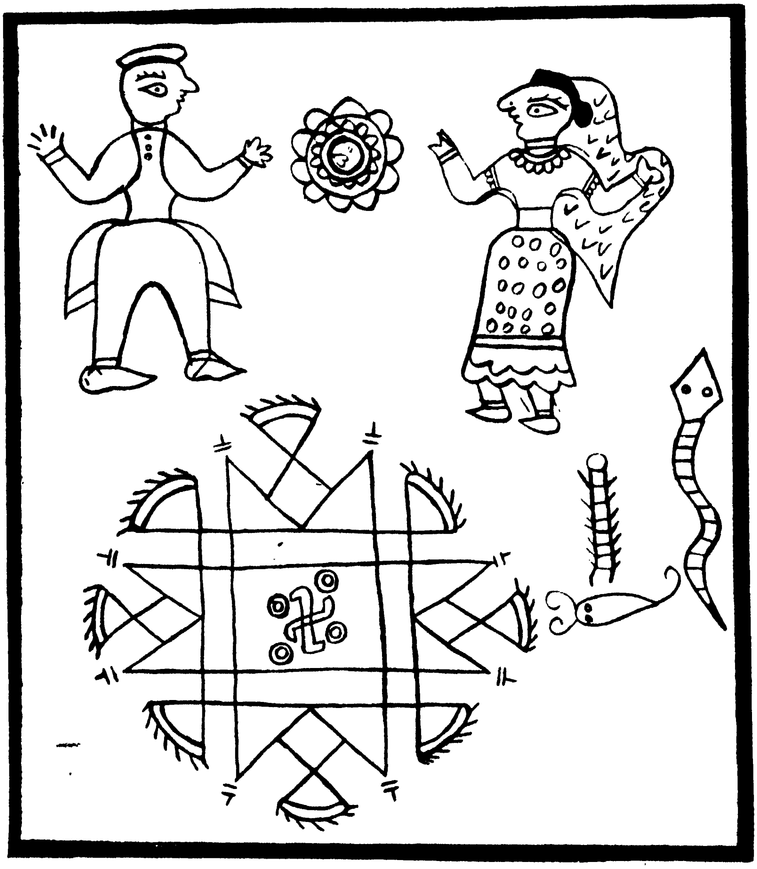
२५:१०:६:१४. कहीं कहीं भैयादूज की पूजा के अवसर पर भी चित्र काढ़े जाते हैं। इस सम्बन्ध में हमें दो चित्र प्राप्त हुए हैं। वे यहाँ दिये जाते हैं।

२५:१०:६:१४:१.



भैय्या दौज

३५:१०:६:१४:२. यह चित्र किस परिवार और किस क्षेत्र का है, यह हमें सिद्ध रूप विदित नहीं हो सका। यह मथुरा से प्राप्त हुआ है, अतः मथुरा का ही होना चाहिये।



३५:१०:७. साहित्य और दिवाली

दिवाली भारत का एक अत्यन्त आकर्षक त्यौहार है। कार्तिक की घोर अंधेरी अमावस्या को दीपमालिका का सौन्दर्य किसे नहीं मुग्ध करेगा। वह दीपमालिका भी सामूहिक, समस्त देश भर में। ऐसी दीपमालिका स्वयं काव्य है, और काव्य का विषय तो हो ही सकती है।

बहुधा हिन्दी के प्राचीन और मध्ययुगीन काव्य में दिवाली का उल्लेख ऋतु वर्णनों और बारह मासों में हुआ है। सन् १०१० ई० के लगभग 'अद्दहमाण' अथवा अब्दुलरहमान ने 'सनेह-रासय' अथवा 'संदेश रासक' नाम का शृंगाररस प्रधान काव्य लिखा। इसमें शरद वर्णन में इस कवि ने दिवाली के दीपकों का उल्लेख किया है:

इम बिलवंती कहव दिण पाइउ।
गेउ गिरंत पढंतह पाइउ।
प्रिय-अणुराइ रसणिअ रमणीयव।
गिजइ पहिय! मुणिय अरमणीयव॥
सोहइ सिज्ज तरुणि जण सत्थिहि।
घरि घरि समियइ रेह परित्थिहि॥
दिंतिय णिसि दीवालिय दीवय।
णावससिरेह सरिस करि लीअय॥
मंडिय भुवण तरुण जोइक्खहिं।
महिलिय दिंति सलाइय अक्खिहिं॥

नव शशि देख सदृश दीपकों का दिवाली के दिन शरद ऋतु में यह दान कैसे सुन्दर शब्दों में इस कवि ने अभिव्यक्त किया है।

शरद ऋतु वर्णन 'पृथ्वीराज रासो' में चंद ने भी कराया है, पृथ्वीराज संयोगिता के स्वयंवर में जाने के लिए अपनी रानियों से विदा लेने गये हैं। शरद ऋतु में वे हंसावती रानी के भवन में गये। हंसावती ने शरद का वर्णन किया है—

आयो सरद स इंद्र रिति। चित पिय पिया संजोग॥
+ + +
अति सरद सुभ गति राज राजति सुमति काम उभछयं।
ग्रह दीप दीपति जूअ जूपति भूपति भूप भूपति सछयं॥
+ + +
रस तीय राजन लहय सौजन सरद दीपक जामिनी।

जायसी ने (१५२७-१५४० ई०) पद्मावत में 'नागमती वियोग खण्ड' में बारहमासा लिखते हुए कातिक के वर्णन में 'दिवारी' खेल का उल्लेख किया है।

कातिक अमावस्या की ओर संकेत करते हुए वे लिखते हैं :—

चहूँ खंड लागै अंधियारा। जौं घर नाहिन कंत पियारा।
अबहूँ निठुर आव एहि बारा। परब देवारी होइ संसारा।
सखि झूमक गावहिं अंग मोरी। हौं झूरी बिछुरी जेहि जोरी।
जेहि घर पिउ सो मुनिवरा पूजा। मो कहं बिरह सवति दुख दूजा।

सखि मानहिं तेवहार सब गाइ देवारी खेलि।
हौं का खेलौं कंत बिनु तेहिं रही छार सिर मेलि।

जायसी ने बताया है कि दिवाली के पर्व पर नाचते-नाचते झूमक गाये जाते थे, मुनिवरों की पूजा की जाती थी, देवारी खेली जाती थी। विरहिणी ने 'दिवारी' को जिस रूप में देखा है, और उसके हृदय में उस दिवारी ने जो आह पैदा की है, वही जायसी के उक्त शब्दों में ढल गयी है।

संवत् १६३७ या १६४४ में पीथल अथवा महाराज पृथ्वीराज ने बेलि क्रिसन रुक्मिणि री' में भी 'शरद' वर्णन में कार्तिक महीने में कार्तिक के दीपक का उल्लेख करते हुए घर-घर में चित्र चित्रित करती हुई कुमारियों का वर्णन किया है।

दीघा मणि मंदिरे कातिग दीपक।
सुत्री समाणियाँ माहि सुख ।।
भीतर थका बाहिर इम भासैं।
मनि लाजती सुहाग मुख ।।
छवि नवी-नवी नव नवा महोछव।
मंडियै जिणि आणंद मई ।।
कातिग घरि घरि द्वारि कुमारी।
थिरि चीत्रंति चित्राम थई ।।

इसमें 'कातिग दीपक' शब्द बहुत संभव है, कार्तिक स्नान के व्रत के दीपक से हो, और दिवाली से संबंध न हो, पर नये महोत्सव पर घर-घर चित्रांकन से दिवाली का संकेत अवश्य मिलता है। दिवाली पर चित्रांकन की प्रथा विशेष महत्व रखती है।

इसी युग में महाकवि सूरदास ने तो दिवाली का वर्णन खूब किया है—उनके लिए इस दीपावली का विशेष महत्व है। इस त्यौहार का दिन कृष्ण-जीवन में एक क्रान्ति का दिन था। इस दिन उन्होंने एक अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य किया था। सूरदास ने बताया है कि दीपमालिका के दिन इन्द्र-पूजा होती थी—

अपनैं अपनैं टोल कहत ब्रजबासियाँ।
भोग भुगति लै चलौ, इन्द्र के आसियाँ।।
सरद-कुहू-निसि जानि, दीप मालिका बनाई।
गोपिन कैं आनंद, फिरत उनमद अधिकाई ।।
घर-घर थापैं दीजियैं, घर-घर मंगलचार।
सात बरस कौ साँवरो, खेलत नंद-दुवार ।।
बैठि नंद उपनंद, बोलि वृषभानु पठाए।
सुरपति-पूजा देत, जानि तहँ गोविंद आए।
बार-बार हा-हा करहिं, क़हि बाबा यह बात।
घर-घर नेवज होत है, कौन देव की जात ।।
कान्ह तुम्हारी कुशल लागि इक मंत्र उपैहौं।
षटरस भोजन साजि, भोग सुरपति कौं दै हों ।।
नंद कह्यौ चुचकारिकै, जाइ दमोदर सोइ।
बरस दिवस कौ दिवस है, महा महोत्सव होइ।

इन्द्र पूजा के लिए कार्तिक की अमावस्या को दीपमालिका सजाई गयी है, घर घर थापे दिये गये हैं। षटरस भोजन बनाये गये हैं। पर कृष्ण ने क्या किया—

लीन्हे विप्र बुलाइ, जग्य आरंभन कीन्हौ।
सुरपति-पूजा मेटि, भोग गोवर्द्धन दीन्हौ।
दिवस दिवारी प्रातहीं, सब मिलि पूजे जाइ।
आनंद प्रीति जु मानहीं, सब देखत बलि खाइ।

दिवाली की दीपमालिका की दीप्ति पर जैसे सूरदास रीझे हैं, वैसे शायद ही कोई दूसरा कवि रीझा हो। सूर गाते हैं :—

आजु दीपति दिव्य दीपमालिका।
मनहु कोटि रवि चंद्र कोटि छवि मिटि जो गई निशि कालिका।
गोकुल सकल विचित्र मणि मंडित सोभित झाक झबि झालिका।
गजमोतिन के चौक पुराये बिचबिच लाल प्रवालिका।
वर शृंगार विरचि राधा जू चली सकल व्रज बालिका।
झलमल दीप समीप सौंज भरि लेकर कंचन थालिका।
करि प्रगट मदन मोहन पिय थकित विलोकि विसालिका।
गावत हँसत गवाय हँसावत पटकि पटाके करतालिका।
नंद द्वार आनंद बढ्यो अति देखियत परम रसालिका।
सूरदास कुसुमनि सुर बरषत कर संपुट करि मालिका।

और इस दिन—

वाजति नंद-अवास बधाई
बैठे खेलत द्वार आपनैं, सात बरस के कुंवर कन्हाई।
\+ \+ \+
थापे देत घरनि के द्वारे, गावति मंगल नारि बधाई॥
\+ \+ \+

षटरस भोजनों का एक स्थान पर तो सूर ने संकेत मात्र किया है पर दूसरे स्थान पर वे बड़ी रुचि से कुछ विस्तार से बताते हैं :—

नंद महर-घर होति बधाई। करत सबै बिधि देव-पुजाई।
जोवज करति जसोदा आतुर। आठौसिद्धि घरहिं अति चातुर।
मैदा उज्ज्वल करि कै छान्यो। वेसन दारि-चनक करि बान्यौ॥
घृत मिष्ठान्न सबै परिपूरन। मिश्री करत पागकौं चूरन।
कदुवा करत मिठाई घृत पक। रोहिनि करति अन्न भोजन-तक।
संग और व्रज नारी लागीं। भोजन करति हैं बड़ी सभागी।
महरि करति ऊपर तरकारी। जोरति सब बिधि न्यारी-न्यारी॥
\+ \+ \+
महरि सबै नेवज ले सैंतति। स्याम छुवै कहुं ताकों डरपति।

समस्त भोजन-सामग्री तय्यार हो गयी। सँभाल के रख दी गयी कि कहीं कोई बालक उसे छू न ले। फिर सूरदास बताते हैं :—

दीपमालिका रचि रचि साजत। पुहुप-माल मंडली बिराजत।
\+ \+ \+
घर घर देति जुवति जम हाथा। पूजा देखि हँसत ब्रजनाथा।

सूर के काव्य में दीपमालिका का संबंध इन्द्र-पूजा से है ; यह बात ध्यान आकर्षित करती है कि आज की तरह यहाँ लक्ष्मी-पूजन का कोई उल्लेख नहीं।

केशवदास ने कार्तिक वर्णन में दिवाली को ही प्रधानता दी है। उनकी दृष्टि ऋतु वर्णन में उतनी प्राकृतिक सुषमा की ओर नहीं जाती जितनी नागरिक सुषमा पर। अतः कार्तिक वर्णन में वे लिखते हैं—

बन, उपबन, जल, थल, अकास दीसंत दीपगन।
सुख ही सुख सुखराति जुवा खेलत दंपति-जन।
देव-चरित्र बिचित्र चित्र चित्रित आँगन घर।
जगति जगत जगदीस-जोति, जगमगत नारि नर।
दिन दान न्हान गुनगान-हरि जनम सुफल करि लीजिये।
कहि 'केसवदास' बिदेस-मति कंत न कातिक कीजिये ।।३१।।

चारों ओर दीपक ही दीपक हैं, दंपति-जन द्यूत-क्रीड़ा में मग्न हैं। आँगन और घर में देव-चरित्र चित्रित किये गये हैं। यह सब दिवाली पर आज भी होता है। पर लक्ष्मीपूजन का यहाँ भी उल्लेख नहीं।

प्राचीन और मध्य कालीन हिन्दी में हमें दिवाली-वर्णन की यही प्रणाली मिलती है। आधुनिक युग में जीवन के मूल्य बदले तो रचना का दृष्टिकोण कुछ और हो गया। महाकवि हरिऔध ने 'दीपावली' यों लिखी—

वसुधा हँसी लसी दिवि दारा।
विलसति शरद सुधा-निधि द्वारा।
हुआ विभासित नील गगन-तल।
उच्च हिमालय मंजुल अंचल।
काश-प्रसून-समूह समुज्वल।
कमला-कलित सकल पंकज-दल।
चढ़ा पादपावलि पर पारा।

अमल-धवल आभाओं से लस।
बहा दिशाओं में अनुपम रस।
विभा गई तृण वीरुध में बस।
हुआ उमंगित मानव मानस।

चमका जगत विलोचन-तारा।

मिले विमलता परम मनोरम।
बने नगर, पुर, ग्राम दिव्यतम।
सुधा-धवल मंदिर सुर-पुर-सम।
स्वच्छ सलिल सर-सरित-समुत्तम।

हुआ रजत-निभ रज-कण सारा।

मना काल को कलित कांतिधर।
अमा-निशा को आलोकित कर।
पावस-जनित कालिमाएँ हर।
दमक दीपमालाओं में भर।
घर घर बही ज्योति की धारा।

और इधर महाकवि मैथिलीशरण गुप्त 'दिवाली' यों मना रहे हैं :—

रहे हर्ष का ओर न छोर।
दीपावली जगे सब ओर।
रत्नहार पहने निज देश।
त्यागे जीर्ण मलिन यह वेश।
कुल-लक्ष्मी को पूज प्रसन्न।
हो धन-धान्य-धर्म-सम्पन्न।
हाँ, प्राणों का पण लग जाय।
इस रज का कण कण जग जाय।
एक क्षण में भय भग जाय।
जीवन-रण में जय जग जाय।
हुए इसी दिन थे उद्भूत।
भागे जिनसे भय के भूत।
आंजनेय, 'अतुलित बलधाम।'
जिनके रोम रोम में राम।
धर्म भक्ति का हो निर्वाह।
हो शंका-लंका का दाह।
महावीर-दल का जय-नाद।
दूर करे भय-विषम-विषाद।
देकर भव को भावुक प्राण।
लेकर आप अटल निर्वाण।
हुए आज ही थे अशरीर।
महावीर तीर्थंकर धीर।
अतुल अहिंसा के आचार।
पाकर धन्य हुआ संसार।
किन्तु समझ अब तक वह तत्व।
पा न सका हा ! प्रकृत महत्त्व।
युग युग से अक्षय अविराम।
पाप-पुण्य का है संग्राम।
किन्तु बन्धुगण, न हो सशंक।
सूखेंगे आखिर सब पंक।

सिद्ध हो चुका है यह मर्म—
जय है वहीं जहाँ है धर्म।
अपना धर्म यहाँ तक ध्येय—
कि है निधन भी उसमें श्रेय।
है अपार हिन्दू-संसार!
तेरा एक एक तिथि-वार।
रखता है सौं सौ इतिहास।
उद्यत हो तू, न हो उदास।
हुए सिद्धजन यहाँ अनन्त—
कृती, व्रती, विजयी, बुध, सन्त।
तिथियों, जयन्तियों की गोद
हमें पालती रहे समोद।

गुप्त जी ने 'दिवाली' के बहाने और उसके सहारे जहाँ परंपरा-मार्ग से समृद्धि और वैभव की कामना की है, वहीं विविध वीर-पुरुषों और सिद्धजनों की जयन्ती के रूप में भी उसका स्मरण किया है, और हिन्दू संसार को एक उद्बोधन दिया है, जिससे वह जय के प्रति आशान्वित हों और उदास न होकर सौ-सौ इतिहासों से शिक्षा ग्रहण कर वह कुछ करने के लिए उद्यत हो हाथ पर हाथ धर के न बैठें। किन्तु इन स्वरों से भिन्न और कुछ नये अद्भुत स्वर भी दिवाली के संबंध में सुनने को मिलते हैं—एक स्वर यहाँ श्री जानकीवल्लभ शास्त्री का दिया जाता है—शास्त्री जी सन् ४२ की दिवाली पर 'तिमिर-पर्व' मानते हुए गाते हैं:—

दीप जलाए, खूब संवारा है मजार को।
दीप सजाए, खूब लजाया अन्धकार को॥
मरने ही के लिए जिए कीड़े कि मकोड़े,
खूब लगाए इन पर घी के चुपड़े कोड़े।
मिट्टी नहीं हुई, मत हो; नभ तो आलोकित।
यही कम हुआ—हवा हो गई अहा! सुगन्धित॥
नई हो गई पुनः पुरानी अपनी संस्कृति,
छायापथ-सी नई बन गई ज्योतिर्मय संसृति।
नाड़ी ली है पकड़ ज्योति की, शुभ निदान है।
आसमान में तभी हो रहा कीर्ति-गान है॥
ज्योति जगाई है, विनोद तो नहीं किया है,
कहता ही, लो, इस मजार का दिया-दिया है।

\+ \+ \+

सिमटा जाता तेज, तिमिर तनता; क्या फेरा।
अरे, सबेरा भी होगा या सदा अँधेरा?

रहे अँधेरा, ये समाधियाँ दिख जाएँगी,—
घास-पात पर शबनम से कुछ लिख जाएँगी।
कभी पढ़ेंगे लोग,...न सब दिन अपढ़ रहेंगे,
कभी कहेंगे, मूक व्यथा सब दिन न सहेंगे।
...."अन्धकार का तना चंदोवा था इस भू पर,
दीप उजलते, जलते थे बस ऊपर-ऊपर।
जीवित जले हुए 'कीड़ों' की ये समाधियाँ,
दीप जलाना मना, यहाँ उठतीं न आँधियाँ।"

\+ \+ \+

दीप जलाना अगर बहाना, इधर न आना।
दीप दिखा कर अन्धकार को क्या चमकाना॥

दिवाली

दीप, दीपावली और तिमिर के कितने सांकेतिक प्रयोग करके शास्त्री जी ने अपनी ब्लैक आउट की प्रतिक्रिया को काव्य के दीपों से उज्ज्वल कर दिया है। कितना गहरा व्यंग है इसमें युद्ध-संस्कृति के प्रति !

आजकल दिवाली पर भिन्न-भिन्न दृष्टि कोणों से भिन्न-भिन्न कविताएँ लिखी जाती हैं। प्रत्येक दिवाली पर अवसरानुकूल कवि को कोई न कोई रचना प्रस्तुत करनी ही पड़ती है। दिवाली पर जैसे आज विविध काव्यमय अध्यात्म प्रकाश में आते हैं।

किन्तु, हम यहाँ स्वर्गीय पं० बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' की एक कविता उद्धृत करना चाहते हैं—

क्या जगाई है तुम्हीने, सजन, झिल-मिल दीपमाला ?
इस महद् ब्रह्माण्ड भर में खूब फैला है उजाला।

१

परम अणु-अणु में रमे हो, दीप्ति की सुषमा जगाते,
ओ मुदित आलोक-दानी ! फिर रहे तुम लौ लगाते;
भूमिमण्डल औ' खमण्डल थिरकते हैं जगमगाते;
तब कहो मम सदन अब तक क्यों रहा श्रीहीन, काला ?
क्यों न याँ फैला उजाला ?

२

घर अंधेरा छोड़, आया देखने मैं तव दिवाली,
मुग्ध हूँ, प्रिय, लुब्ध हूँ, मैं निरख कर यह ज्योति-जाली;
किरण-तन्तु अनन्त-फैले, तुम अलख चख अंशु माली;
स्तब्ध हूँ; मुझ पर कहो यह कौन मोहन मन्त्र डाला ?
यों दिखाकर यह उजाला।

३

हूँ सदा से ही गणित में मैं बड़ा असमर्थ, प्रियतम,
किन्तु इच्छा है कि गिन लूँ ये तुम्हारे दीप इकदम,
हैं अनेकों दीप; मैं हूँ एक; चिन्तित, भ्रमित, अक्षम,
चलन-कलन-हिसाब मुझसे तो न जायेगा सँभाला;
अगणिता तब दीपमाला।

४

यदि तुम्हारी ज्योति छिटके, इस अँधेरी कोठरी में,
यदि मुझे भी बाँध लो तुम दीपमाला को लड़ी में,
तो हृदय की कलन-लिप्सा शान्त होगी इसी घड़ी में,
क्योंकि मैं भी उस निमिष में हो उठूंगा ज्योति वाला।
यदि इधर फैले उजाला।

५

मन मगन होना, सजन, उस छिन कि जब नव दीप बनकर,
मैं लुटाऊँगा जगत को रुचिर आलोक मन हर;
ज्योति का सन्देश लेकर मैं फिरूँगा नित्य घर-घर;
मृत्तिका के पात्र में तुम अब भरो निज रूप-ज्वाला;
इधर फैला दो उजाला।

और आज दिवाली पर एक ओर ऐसी रचना भी हो सकती है—

लक्ष्मीपूजन हाय! दिवाली लक्ष्मीपति का साधन।
जिसके द्वारा होता जग में शोषण का आराधन।।

वह एक कवि यह भी लिख सकता है—

उठो-उठो लघु-लघु शोषित जन
मिलो, एक हो, बढ़ो, करो अर्पित जन!

लघु-लघु दीप दिवाली के फैला देते हैं उग्र तेज,
मिट जाता साम्राज्य तिमिर का, बिछ जाती है ज्योतिः सेज

कहीं से यह भी सुनने को मिलेगा—

यह दिवाली
हाथ खाली
आज आली खिलखिला ली,
खील खा ली,
पर,
उधर आकाश में
घर-घर हुई घर-घर,
उड़ रहा ऐअर प्लेन,

इस अमा में लाल-पीले रंग में सज
आ रही है कुछ प्रकाशाभा
हो रही है तारिकाओं की दिवाली में बेहाली ।
उड़ नहीं सकता, मेरा मकान,
उड़ा करते थे यक्ष-गंधर्वों के नगर जैसे
मेरा पासपोर्ट बनकर अभी आया नहीं,
मैं यहाँ हूँ पेट खाली, हाथ खाली बात खाली—
पर दिवाली खिल खिलाती, खील खा ली ।

और इससे भी जब मन नहीं भरता तो इसी दिवाली पर एक कविता यों पढ़ने को मिल सकती है—

बन्द कर दो जुआ, ऐ मेरी बुआ,
हाय यह क्या हुआ ?
कौन करता दुआ ?
यह अपव्यय हुआ,
यह अपव्यय हुआ—ए ! मेरी बुआ !
टी स्टाले हैं,
दुकानें, जिन पर मिठाई की थालें हैं,
घर में पकवान क्यों हुआ ?
बिजली की लेम्पें हैं,
गैस के हण्डें भी—
फिर मिट्टी के दीपक ले
यह दीपदान क्यों हुआ, ए मेरी बुआ !

३५:११. बाल छठ: सूर्यषष्ठी :—

यह पुत्रों की कल्याण कामना के लिए होती है । इसका कोई विशेष विधान हमें प्राप्त नहीं हुआ ।

३५:१२. गोपाष्टमी

कार्तिक शुक्ल अष्टमी को गायों की पूजा होती है । ब्रज में कई स्थानों पर बड़ा भारी मेला होता है । गायों को चित्रित किया जाता है । कौड़ी आदि के कितने ही आभूषण पहिराये जाते हैं । गाय की सेवा की जाती है । किन्तु इसके संबंध में किसी विशेष व्रत का या अनुष्ठान का विशेष पता नहीं चला ।

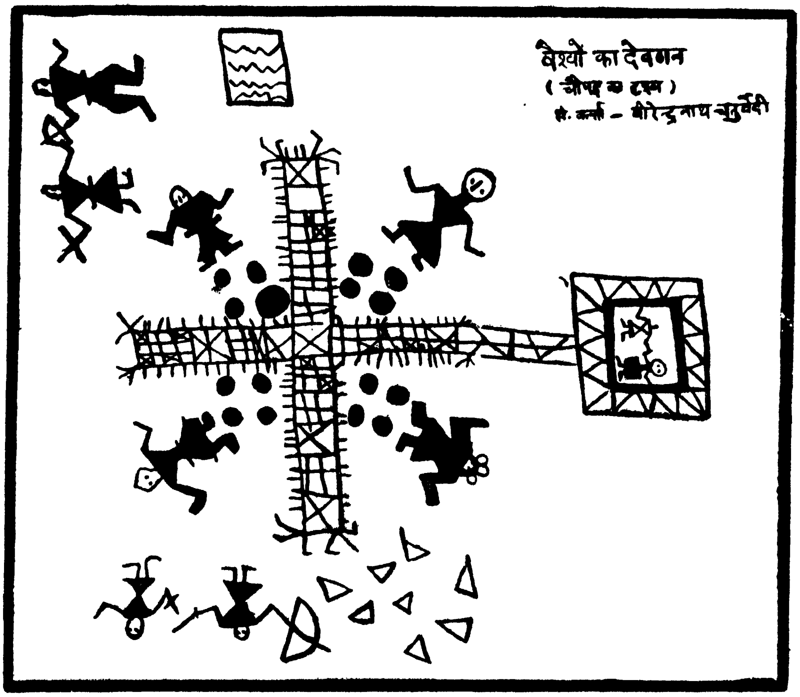
३५:१३. अक्षय नवमी या अखैनौमी के दिन आँवले के वृक्ष की परिक्रमा और पूजा करती हैं ।

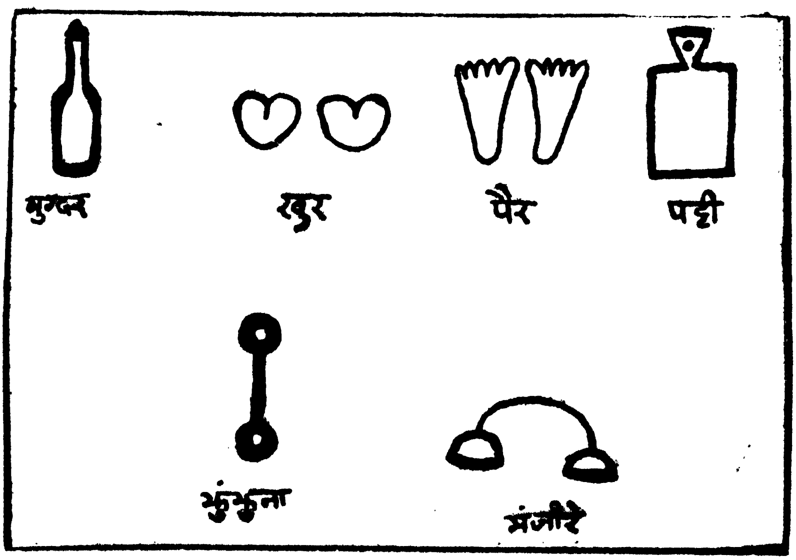
३५:१४. देवठान

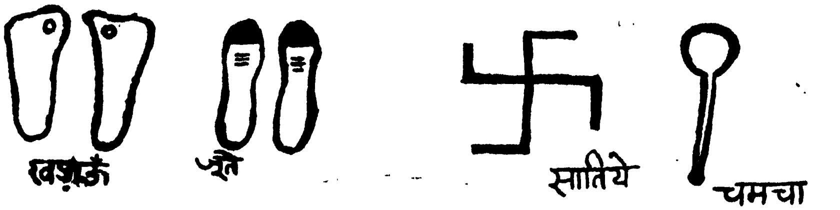
कार्तिक शुक्ल एकादशी को यह देवोत्थान एकादशी होती है । इस दिन गेरू तथा खड़िया से विविध चित्र बना कर समस्त घर-आँगन चित्रित किया जाता है ।

३५:१४:१. इन विविध चित्रों में अधिकांश घरों में काम आने वाली चीजें भी होती हैं। चौपड़ आदि भी बनायी जाती है। वैश्यों के यहाँ देवठान पर बनने वाली चौपड़ का एक रूप यह है :—

३५:१४:१(१) चित्र



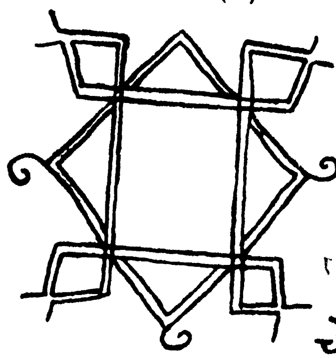




३५:१४:१(२) कुछ अन्य अभिप्राय ये हैं :—

३५:१४:१(३) उक्त सजावट और शोभा के रेखाचित्रों के साथ-साथ दो पूजा-विषयक चित्र भी बनाये जाते हैं।

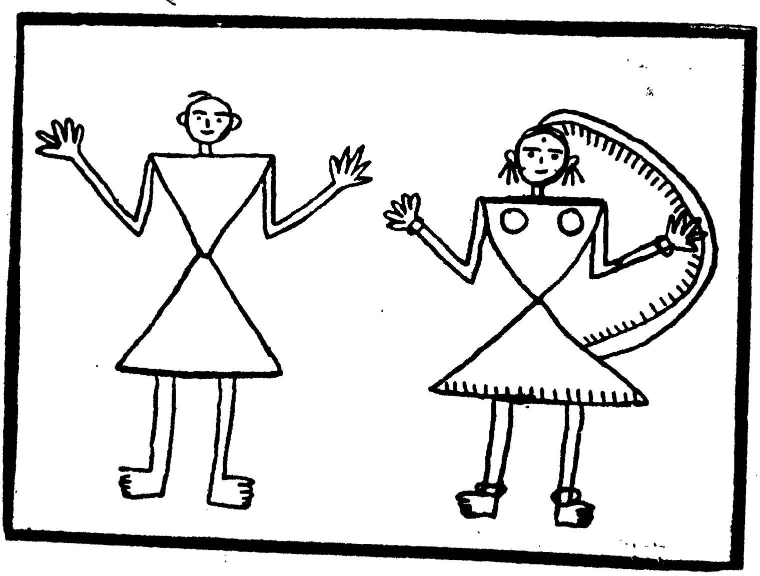
(अ)



३५.१४.१.३ अ

चौक

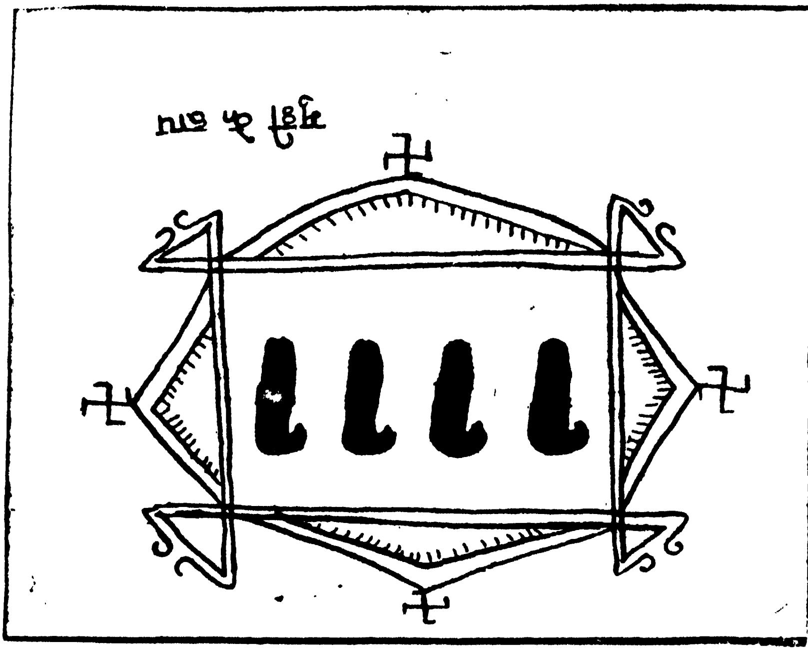
एक आँगन में बीचों बीच सं० ३ के जैसा चौक बनाकर उसके बीच में दो पुरुषाकृतियाँ बनायी जाती हैं—



इन आकृतियों को एक डलिया से ढक दिया जाता है। रात्रि को इन्हें ही जगाकर पूजा जाता है।

(आ)

चूल्हे के ऊपर की भींत पर चौक बनाकर उसमें चार मुट्ठी की छाप बनादी जाती है।



इनकी पूजा स्त्रियाँ कर देती हैं।

३५:१४:२:१. रात्रि के समय गन्नों को तिपाई के आकार में (अ) के ऊपर खड़ा कर दिया जाता है। एक पटे पर ५ या ७ दीपक रख दिये जाते हैं। एक लोटा पानी तथा एक दोनी पूजा के सामान की जिसमें कुज पत्तियाँ, कुछ साग, सिंघाड़े, बेर, शकरकंद, भात, एक टुकड़ा मिठाई कुछ फूल होते हैं।

३५:१४:२:२. दीप जलाने का समय हो जाने पर सभी पुरुष और लड़के एकत्र होकर पटे पर रखे दीपकों को जलाकर, उस पटे से सभी अपने हाथ लगाकर उसे कुछ ऊपर उठाकर झुलाते हुए आरती सी करते जाते हैं, और यह कहते जाते हैं:—

३५:१४:२. (२ अ)

उठो देव
बैठो देव
पाँवरिया चटकाओ देव
क्वारेन के व्याह करौ

ब्याहेन के गौने करौ
बौनेन के छोरा करौ
सुखी करौ ।

इस प्रकार ५ या ७ परिक्रमाऐं दी जाती हैं, और प्रत्येक परिक्रमा पूरी हो जाने पर उक्त प्रकार से दीपकों को उक्त गीत-जाप के साथ झुलाया जाता है ।

३५:१४:२. (अ) कहीं-कहीं उक्त गीत बहुत लम्बा होता है और कुछ इस प्रकार का होता है:—

उठौ देवा,
बैठौ देवा,
आँगुरिया चटकाऔ देवा ।
चलि-चलि मूसे गोबर जामें ।
गोबरु लाइ-लाइ अँगनु लिपामें ।
अँगनु लिपाइकें बम्हन नौतें ।
बम्हन दीजै कपिला गाय, सुरई गाय ।
चलि-चलि मूसे डाब कटामें ।
डाब कटाइकर जिबरी बटामें, जिबरी बटामें ।
जिबरी बडाबट खाट बुनामें, खाट बुनामें ।
इतनी अंबर तारइयाँ, तारइयाँ ।
इतनी जा घर भौटरिया, भौटरिया ।
इतनोई जा घर बरध किरौरौ, बरध किरौरौ ।
औरें कौरें धरे मजीरा, धरे मजीरा ।
जीऔ भगिनी तिहारेऊ बीरा ।
औरें कौरें धरे अनार ।
जीऔ खसमजी तिहारेऊ यार, तिहारेऊ यार ।
औरें कौरें धरे चपेटा, धरे चपेटा ।
जिऔ मातुल तिहारेऊ बेटा, तिहारेऊ बेटा ।
जनेऊ-जनेऊ,
थोकसरा फूटे राए में, चौराए में ।
कौशल्या नाची गिरारे में गिरारे में ।
इतनी पोखरि मेड़कियाँ ।
इतनी जा घर भैंसरिया ।

३५:१४:२. (३) परिक्रमाएँ पूरी हो जाने पर बड़े बूढ़े विवाहित डलिया से दबें देवताओं की प्रस्तुत सामग्री से पूजा कर देते हैं । गन्ने में से रस निचोड़ कर उन्हें रस पिला देते हैं । और गन्ने के सूखे पत्तों को ही जला कर उन्हें तपा देते हैं । तदनंतर वे दीपक घर में जहाँ तहाँ रख दिये जाते हैं । पनैंड़ी पर तथा शौचालय में अवश्य रखे जाते हैं ।

३५:१४:३. देवठान से देवता जग जाते हैं। देवशयनी एकादशी को देवता सोते हैं। पूरे चातुर्मास वे सोते रहते हैं। इस देवठान से वे जगते हैं। इसी के उपरांत विवाह-गौने आदि होते हैं।

३५:१५. कार्तिक पूर्णिमा—

३५:१५:१. महिने भर कार्तिक स्नान करने वालों के लिए यह अत्यन्त महत्वपूर्ण पूर्णिमा है। राई दामोदर की पूजा की जाती है। कितनी ही कहानियाँ सुनी जाती हैं। ब्राह्मण भोजन कराया जाता है। मेला लगता है। इस अवसर पर अन्य कथाओं के साथ 'तुलसी की कथा' भी सुनी जाती है।

३५.१५.१.१. **"तुलसी की एक कथा" इस प्रकार है :—**

एक घर में नंद भावज थीं। नंद क्वारी थी, तुलसी की बहुत सेवा करा करे थी। भावज को बुरा लगता, कहती तेरा व्याह होगा तो इसी का दहेज दूंगी, यह तेरा व्याह कर देगी। उसका व्याह रचा, बरात आई तो तुलसी का गमला फोड़कर बरातियों के आगे रख दिया। पर बरात के सामने आते ही उसके भाँति-भाँति के खाने बन गये। गहने की जगह तुलसी की मंजरी पहना दी। वे अच्छे-अच्छे गहने हो गये। तीयल की जगह तुलसी का जनेऊ जो नंद पहनती थी रख दिया उसकी रेशमी तीयलें बन गईं। ससुराल में बड़ी बड़ाई हुई अब भावज की बेटी हुई। जब बेटी बड़ी हुई तब माँ कहती तू भी तुलसी की सेवा किया कर, तेरी बुआ किया करे थी, उसका कैसा अच्छा व्याह हुआ। पर बेटी का मन न लगता। जब व्याह हुआ तो माँ ने सोचा कि मैंने उसके साथ ऐसा किया तो कैसी बड़ाई हुई, इसे भी ऐसा ही करूंगी पर अबके मिट्टी-मिट्टी ही रही पत्ते-पत्ते, मंजरी-मंजरी, जनेऊ-जनेऊ। ससुराल में बहुत बुराई हुई। बराती भूखे प्यासे चले गये। भावज नंद को कभी नहीं बुलाती थीं। भाई बोला कि मैं बहन के पास हो आऊँ, बहुत दिन हो गये हैं, ला, मुझे कुछ दे दे। उसने सेर भर ज्वार दे दी और कहा कि और क्या ले जाओगे? यही है इसे ले जाओ। वह ज्वार लेकर चल दिया। जब बहन के नगर में पहुँचा तो एक गोशाला पड़ी। शर्म के मारे ज्वार गाय के आगे डाल दी। पर गाय के आगे डालते ही वह सोना हो गई। गोशाला वाले बोले कि तैंने इसके आगे सोना मोती क्यों डाल दिये? उसने सच बात बताई तो उन्होंने कहा कि अब उठा ले। उसने उठा लिया और लेकर बहन के घर चल दिया। बहन को बहुत आनंद हुआ। जैसी उसकी तुलसी लहनी आई वैसी सब किसी को आये।

३५.१४.१.१. (अ) ब्रज में तुलसी का स्वतंत्र महत्व भी है। प्रत्येक घर में 'तुलसी' का रहना शुभ माना जाता है। जिस घर में तुलसी रहती है, उस घर की स्त्रियाँ उसे नियमत: प्रतिदिन जल चढ़ाती हैं, और दीपदान देती हैं।

किन्तु कार्तिक में इसकी पूजा का विशेष माहात्म्य है। इस सम्बन्ध में श्रीमती कुसुम का 'तुलसा का व्याह' विषयक निबन्ध यहाँ साप्ताहिक हिंदुस्तान से साभार उद्धृत किया जाता है—

३५. १५. १. १. (अ–१)

कार्तिक मास के आगमन से ही प्रात: स्नान, दीप-दान देव-दर्शन, तुलसी-सेवा,

कथा, उपवास और भजन-कीर्तन की धूम-सी मच जाती है। उत्तर प्रदेश में घर-घर बड़ी-बूढ़ी स्त्रियाँ दिन अस्त होने पर तुलसी के बिरवे पर दीपक सजो कर उनके व्याह का गीत गाती हैं। एकादशी को उसकी स्मृति में नाना प्रकार के विधिवत् पकवान बनाये जाते हैं। लाल चूनरी ओढ़ कर तुलसी दुलहिन बनती है। विविध प्रकार के खेल-खिलौने से विरवा सजाया जाता है और आटे-चावल के रंग-बिरंगे मंगल-चिन्ह अंकति किये जाते हैं। सिंघाड़े, बेर और नई फसल की चीजों का भोग लगाया जाता है। व्याह का जो लोकगीत प्रचलित है, उसमें प्राचीन संस्कृति का सुन्दर चित्रण है जिससे ब्रज में प्रचलित विवाह-पद्धति का रूप सामने आ जाता है।

३५. १५. १. १. (अ-२) गीत का आरम्भ बिरवे के प्रारम्भ से होता है:—

आषाढ़े उजियारी उतीजा, ले रे वोवड रानी तुलसा के बीजा,
जोतहु बोवहु करहु कियरियाँ, धनि जा मलिया बेटा हू जायो,
तुलसी को बिरवा सींच जमायो।
असाढ़ में तुलसा का बिरवा बोया गया, यह माली का
बेटा धन्य है, जिसने बिरवा बोया, ज़ोता और सींचा।
सावन तुलसा पात दुपाती, भादों तुलसा गहल गंभीली,
क्वार में तुलसा कान कुँवारी, कातिक तुलसी को रचौ है बियाहू।

सावन में एक-दो पत्ते आये, भादों में तुलसा लहराई और क्वार में युवा हो गई। कातिक में व्याह रचा गया और वर के विषय में राय लेना आवश्यक समझा गया।

बोलो रानी तुलसा का कौन वर व्याहूँ ?
इस प्रकार तुलसा ने कहा :—

सूरज ना व्याहूँ ऊग्रत डहाएँ, चाँदुल ना व्याहूँ एक पखवारे।
ब्रह्मण हि ना व्याहूँ चार मूड़वारे, विष्णुहिं ना व्याहूँ चार भुज धारी।
महादेव ना व्याहूँ वे जटा धारी, हनुमान ना व्याहूँ वे बल धारी।
शुक्रहि ना व्याहूँ एक आँख काने, शनीचर ना व्याहूँ गिरहन घेरे।
मंगल ना व्याहूँ हीरा पीरि वारे, बुद्धिहि ना व्याहूँ बुद्ध कुबुद्धीं।
विसपित ना व्याहूँ विसिपित सीरीं, गणेशज़ी ना व्याहूँ सूँड़-सुडारे।
व्याहूँ श्रीकृष्ण वे मेरे कंता, व्याहूँ श्रीकृष्ण जग उजियारे।

उगता हुआ सूर्य गर्म होता है। चन्द्र एक पखवारे का राजा है, ब्रह्मा चार सिर वाले, विष्णु चार भुजा वाले, शिवजी जटा वाले और गणेशजी सूँड़ वाले हैं। शुक्र की एक आँख है, शनीचर ग्रहों से घिरे हैं, मंगल पीड़ा-दायक और बुद्ध बुद्धिहीन है, बृहस्पति शीतल है, इसलिए जग को ज्योतिमय करने वाले कृष्ण ही मेरे पति हैं। इसके बाद—

सोदहु पंडित लगुन लिखावो, तुलसा की लगन द्वारका पठावो,
नौमी के माँगर दसमी को तेला, एकादशीया को मंडप छवायो,
पवित्रा द्वादशी व्याह रचायो।

पंडितो ने तुलसी के व्याह का मुहूर्त निकाला और लगन द्वारिका भेजी गई। मी को मांगर (सामूहिक श्रृंगार), दसमी को तेल, हरिद्रालेपन, एकादशी को मंडप

और द्वादशी को व्याह निर्धारित हुआ। (आजकल एकादशी को ही व्याह भी रच लेते हैं।) तुलसा के व्याह की तैयारी शुरू हुई :—

हरे-हरे गोबर अँगन लिपायो, गज मोतिन के चौक पुरायो
हरे-हरे बाँसन मंडप छवायो, नागबेलि हूँ को गूँद दिवायो,
कुंकुंम कलश अभिरत भरिए, हीरा पदारथ भाँडन भरिए,
पीयरी सी माँटिन वेदी हूँ राची, वेदी न रचहु पँवारन केरा
रावटी सिल देहु घनेरा।

हरे-हरे गोबर से आँगन लीपा गया, मोती से मंगल-चिन्ह अंकित किए गए, हरे-हरे बाँसों से मंडप बनाया गया और नागर-बेल से सजाया गया, अमृत के समान जल से कलश भरे गये और उन का आम के पत्तों से शृंगार हुआ और वे भी सगुन के मंडप में रखे गए। पीली मिट्टी से विवाह की वेदी बनाई गई और उसे विविध प्रकार से सजाया गया और एक सिल भी रखी गई।

ता सिल बैठे तुलसा दे रानी,
सब सखियन मिलि तेल चढ़ाई, गंगा गवरि मिलि मंगल गावें।
तुलसा के हितु ऊ कुटुंम्बी आए, तुलसा को नाना भूषण लाए।
तुलसा के भाई मामा हू आए, तुलसा को खादी बरैया लाए।

उस सिल पर पैर रख कर तुलसाजी बैठीं। हरिद्रालेपन हुआ और गंगा-गौरी-सी सखियों ने मंगल गीत गाये। विविध प्रकार के आभूषण ले कर तुलसा के कुटुम्बी लोग आये और मामी-मामा भी खादी बरैया: (सफेद खादी की धोती और लाल चुनरी, जिसे पहन कर विवाह होता है) लाये। अब बारात आयी—

कृष्ण के भाई मामा हू आए, कृष्ण को भौर कजोंरा लाए।
घुड़िला चढ़ि वे सूरज आए, हिरना चढ़ि वे चाँदूल आए।
हंसा चढ़े ब्रह्माजी हू आए, गरुड़ चढ़ि विष्णुजी हू आए।
नदिया चढ़े महादेव आए, पवन उड़त हनुमानजी हू आए।
मूसे चढ़े गणेशजी हू आए, कमल के फूल लक्ष्मीजी हू आई।
भैंसा चढ़े सनीचर आए, करऐ की टोटनी पै शुक्कर आए।
उपला चढ़ी वे विसपित आई, बरोसी चढ़ी वैंसादरी आई।
हथिया चढ़े सब देवता आए, रथ चढ़ि के हरि आपुन आए।
सोने के रथ पर श्रीकृष्ण आए।

नाना वाहनों पर छत्तीस कोटि देवताओं की बरात ले सोने के रथ पर श्रीकृष्ण आये। (प्रति दिन के उपयोग की वस्तुओं में भी देवता का वास है।)

बरात जब द्वार पर पहुँची तब—

आई बरात दिए जनवासे, गगरो शरबत पौंनछक दीनी।
हरी-हरी पातर दोना हू डारे, मूंग भात घृत ऊपर डारे।
ता पाछे पकवान परोसे, लामन लाडू सिमई अदरसे।
दे बीड़ा डेरा पहुचाऐ !

बरात आने पर उसे जनवासे ले जाया गया और शरबत के घड़े और पाँनछक 'विविध प्रकार के व्यंजन जितने सम्भव हों) दी गई । फिर हरी-हरी पत्तल और दोनों पर मूंग-भात परसा गया, ऊपर से घी डाला गया, उस के बाद पकवान परसे गये, लड्डू सिमई अनरसे इत्यादि । इस प्रकार बरात का स्वागत कर बीड़े दे कर उन्हें जनवासे भेजा गया । इधर

हल्दी की गाँठ सेंदुर की है पुरिया, तुलसा श्रीकृष्ण परहि भवरियाँ ।
कानन खुटियाँ पाँयन पोला, तुलसा के व्याह को साजो है ढोला ।
चूड़ियाँ महाउर माँग सिंदूर, तुलसा के व्याह को बाजो है तूरु ।
पहली भाँवर दूसरी कीजै, त्यों-त्यों तुलसा सुहागन भीजै ।
तीसरी भाँवर पान जनेउ दीजै, चौथी भाँवर दैन दाइजौ दीजै ।
पंचम भाँदर पंचहड़ दीजै, छटई भाँवर माला मुदरिया दीजै ।
सतई भाँवर रानी तुलसाहु दीजै ।

३५.१५.१.२. कहानियाँ सुन के तुलसा और राई दामोदर पूजने के उपरांत बहुत सी दान-दक्षिणा तथा ब्राह्मण ब्राह्मणी को भोजनादि कराया जाता है ।

३५.१५.१.३. भविष्य पुराण के उत्तरार्द्ध में कार्तिक पूर्णिमा को कृत्ति व्रत का विधान बताया है । उसकी कथा तथा विधान इस प्रकार है :—

कलिंगभद्रा रानी की कथा कृत्तिका व्रत का विधान औ फल ।

श्रीकृष्णचन्द्र कहते हैं कि हे महाराज पूर्वकाल में मध्यदेश के बीच वृकस्थल नाम ग्राम में कलिंग भद्रा नाम अति रूपवती औ बहुपुत्रा राजा दिलीप की रानी थी। वह सदा ब्राह्मणों को दान देती देवार्चन करती ब्राह्मण भोजन कराती। उस समय में कलिंग भद्रारानी के समान कोई दूसरा दान देने हारा न था । एक समय उसने कार्तिक मास में छः महीने का कृत्तिका व्रत धारण किया औ नित्य पूजन दान ब्राह्मण भोजन हवन आदि में तत्पर रहती। व्रत में थोड़ा काल अवशेष था कि एक दिन उस को रात्रि समय पति के साथ सोती हुई को भयंकर सर्पके काटते ही उसके प्राण जाते रहे औ जन्मान्तर में बकरी बनीं परन्तु व्रत के प्रभाव से बकरी भी जातिस्मरा थी। उसने अपना कृत्तिका व्रत फिर ग्रहण किया । अपने यूथ से अलग हो उपवास करने लगी। एक दिन उसको उसके स्वामी ने बाँध रखा था। उस समय किसी जातिस्मर ऋषि ने उसको देखा औ जाना कि यह रानी कलिंग भद्रा है तब दयाकर बन्धन से छुटाया। वहाँ से छुट उसने बेरी के पत्र भक्षण कर शीतल जल पानकर व्रत पारण किया । ऋषि अपने आश्रम को गये औ वह अपने व्रत में तत्पर भई औ कुछ काल के अनन्तर उसने प्राण त्याग किया औ गौतम ऋषि की भार्या अहल्या के गभ से उत्पन्न भई माता पिता ने उसका नाम योगलक्ष्मी रक्खा औ तरुण भई जब गौतम मुनि ने बड़े तपस्वी औ शाँतचित शांडिल्य मुनि को बिवाह दी । वह भी शाडिल्य के घर में सरस्वती स्वाहा अरुंधती गौरी राज्ञी गायत्री अथवा साक्षात् महालक्ष्मी की भाँति शोभित होती थी । नित्य देवता पितर औ अतिथियों के सत्कार में लगी रहती ब्राह्मणों को भोजन देती। एक दिन शांडिल्य मुनि ने योग बल से सब वृत्तान्त जानकर पूछा कि हे प्रिये कृत्तिका कितनी हैं। तब योगलक्ष्मी को भी पूर्ववृत्त स्मरण आया औ कहा कि

महाराज छः कृत्तिका हैं तब शाडिल्य मुनि ने उसको मन्त्र औ कृत्तिका व्रत का फिर उपदेश किया जिसके करने से दोंनों चिरकाल संसार सुख भोग स्वर्ग को गये। राजा युधिष्ठिर ने इतनी कथा श्रवणकर पूछा कि हे श्री कृष्ण चन्द्र कृत्तिका व्रत का क्या बिधान है आप वर्णन करें। तब श्री कृष्ण चन्द्र कहने लगे कि हे महाराज कार्त्तिक की पूर्णिमा को कृत्तिका नक्षत्र में चन्द्रमा औ वृहस्पति होयं औ उस दिन सोमबार होय वह महाकार्त्तिकी होती है। महाकार्त्तिकी तो बहुत बर्षों में औ बड़े पुण्य से प्राप्त होती है इसलिये साधारण कार्त्तिकी पूर्णिमा को ही उपवास करै। कार्त्तिकी पूर्णिमा को प्रभात ही दन्तधावन आदि कर नक्तव्रत का अथवा उपवास का नियम ग्रहण करै। पुष्कर प्रयाग कुरुक्षेत्र नैमिष कुशावर्त्त बिल्वक गोकर्ण अर्बुद अमर कण्टक आदि किसी तीर्थ में अथवा अपने घर में ही स्नान करै फिर देवता ऋषि पितर औ अतिथि का पूजन कर सायंकाल के समय घृत औ दुग्ध से पूर्ण पात्र में सुवर्ण चाँदी रत्न नवनीत अन्न औ पिष्ट से छः कृत्तिका की मूर्त्ति क्रम से बनाय स्थापन करै फिर उनको रक्त सूत्र से वेष्टित कर सिन्दूर कुंकुम चन्दन चमेली के पुष्प धूप नैवेद्य आदि से उनका पूजन कर (ओंसप्तर्षिदा राह्यनरत्नस्थवल्लभा ये ब्राह्मणा ऋषि भावेनयुक्ताः। तुष्ट : कुमारस्ययथार्थमातरो ममापिसुप्रीततराभवनन्तुस्वाहा) यह मन्त्र पढ़ै सब कृत्तिकाओं की मूर्त्ति ब्राह्मण को देवै। ब्राह्मण भी ग्रहण करके (शर्मदा : कामदाः सन्तु इमानक्षत्रमातरः। कृत्तिका दुर्गसंसारात्तारयन्त्वावयो : कुलम्) यह मन्त्र पढ़ै पीछे ब्राह्मण सब सामग्री लेकर घर को जाय औ छः कदम तक यजमान उसके पीछे चलै पीछे लौटकर ब्राह्मण भोजन करावै। इस प्रकार जो पुरुष कृत्तिका व्रत करै वह सूर्य्य के तुल्य प्रकाशवान् विमान में बैठ नक्षत्र लोक में जाता है वहाँ प्रलय कालपर्यन्त दिव्य देहधार दिव्य नारियों के साथ बिहार करता है जो स्त्री इस व्रत को करै वह भी अपने पति सहित नक्षत्र लोक में जाय दिव्य भोग भोगती है औ जो स्त्री पुरुष इस माहात्म्य को भक्ति से सुनै वह सब पापों से मुक्त होता है इस विधि से सुवर्ण आदि की छः कृत्तिका बनाय पात्र में रख गन्ध पुष्प अक्षत धूप दीप नैवेद्य आदि से पूजने हारा जन्म मरण से छूट जाता है।

परिशिष्ट

३५.१६. दिवाली के इतिहास, उसकी परंपरा तथा उसका कला-क्षेत्र में रूप संबधी कुछ निबंध परिशिष्ट रूप में यहाँ दिये जाते हैं। जिन विद्वानों के ये निबंध हैं, उनके प्रति हम अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करते हैं।

परिशिष्ट (१)

३५.१६. दिवाली के इतिहास, उसकी परंपरा तथा उसका कलाक्षेत्र में रूप संबंधी कुछ निबंध परिशिष्ट रूप में यहाँ दिये जाते हैं। जिन विद्वानों के ये निबंध हैं, उनके प्रति हम अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करते हैं—

३५.१६.१. दीपावली की २००० बर्ष पुरानी परम्परा

(डा० शान्तिकुमार नानूराम व्यास)

लक्ष्मी के आवाहन और अलक्ष्मी के वर्जन की आकांक्षा मानव के हृदय में तभी से जागृत रही है जब से उसकी सभ्यता का पृथ्वीतल पर नवोन्मेष हुआ है। इसी भावना

ने एक ऋग्वेदीय कवि से एक श्र-श्री सूक्त की ही रचना करवा दी। सम्भवतः इसी सूक्त में हम धन और समृद्धि की देवी लक्ष्मी के स्तवन-पूजन की परम्परा का आदि-रूप खोज सकते हैं।

यक्ष-रात्रि

किन्तु जो दीपोत्सव हम आज मनाते हैं, उसका मूल वैदिक साहित्य में पाया जाकर लैकिक संस्कृत-काल में ही लक्षित होता है, और यह भी कम-से-कम २००० वर्ष पुराना है ही। लक्ष्मी-पूजन, दीपमालिका और द्यूत-क्रीडा का दीपावली के अवसर पर दीर्घ काल से प्रचलन रहा है। पर प्रारम्भ में यह उत्सव द्यूत-क्रीड़ा से ही अधिक सम्बद्ध था। उस समय इसे दीपावली के नाम से नहीं, वरन् यक्ष-रात्रि के नाम से पहचाना जाता था। ईसा की पहली शताब्दी में रचित वात्स्यायन के 'कामसूत्र' में यक्ष-रात्रि को 'माहिमनी' [राष्ट्रीय] महोत्सव कहा गया है। यह कार्तिकी अमावस्या की तिथि को ही मनाई जाती थी। 'कामसूत्र' के टीकाकार यशोधर ने यक्ष-रात्रि के लिए 'सुख रात्रि' का पर्याय दिया है और लिखा है कि इस समय लोग प्रायः द्यूत-क्रीडा से अपना मनोरंजन करते हैं—

यक्षरात्रिरिति सुखरात्रिः। यक्षाणां
तत्र सन्निधानात्। तत्र प्रायशो लोकस्य द्यूतक्रीडा।

ग्यारहवीं शताब्दी के जैन महाकवि हेमचन्द्राचार्य ने अपनी 'देशीनाममाला' में यज्ञ-रात्रि को 'जक्खरती' कहकर उसे दीवाली या दीपमालिका का ही समकक्ष माना है। इस प्रकार दीवाली का मूल ईसा के आसपास माना जा सकता है और तब उसका सम्बन्ध विशेष रूप से द्यूत-क्रीड़ा से था।

दीपप्रतिपदुत्सव

महाराज हर्षवर्धन (६०६-६४८ ई०) रचित 'नागानन्द' नाटक में 'दीपप्रतिपदुत्सव' का उल्लेख आया है। 'नागानन्द' के चौथे अंक में 'अस्मिन् दीपप्रतिपदुत्सवे मलयवत्या जामातुश्चैतदुत्सवानुरूपं यत्किंचित् प्रदीयते' कहकर इस प्रथा की ओर संकेत किया गया है कि इस दिन जामाता को आमंत्रित कर उसका उपहार आदि से सत्कार किया जाता था। यह 'दीपप्रतिपदुत्सव' आधुनिक दीवाली का ही पूर्व-रूप कहा जा सकता है, क्योंकि उक्त कथन के बाद ही यह कहा गया है कि वह शरद् ऋतु से सम्बद्ध था, जब कि 'मलय पर्वत की चोटियाँ, शरत्कालीन शुभ्र बादलों से छा जाने के कारण, हिमालय के शिखरों की शोभा धारण कर लेती हैं' (शरत्समयपाण्डुभिः पयोदपटलैः प्रावृत्ताः प्रालेयाचलशिखरश्रियमुद्वहन्ति एते मलयाचलसानवः)।

दीपावली की यह परम्परा छठी-सातवीं शताब्दी की कश्मीरी कृति 'नीलमतपुराण' में और अधिक सुस्पष्ट होती है। इस समय दीपावली के कार्यक्रम में उसके तीनों लक्षण प्रकट होने लगे। 'नीलमतपुराण' में वर्णित दीपावली की विधि वर्तमान काल के बहुत निकट है। उसके अनुसार कार्तिक अमा के दिन (१) सूर्यास्त के बाद कर्णीविणी

अर्थात् लक्ष्मी का पूजन किया जाता था; उसके बाद (२) मन्दिर, चौराहा, श्मशान, नदी-तट, पर्वत-शिखर, अट्टालिका, वृक्ष-मूल, गोशाला, बाजार-हाट आदि को दीप-वृक्षों से सुशोभित किया जाता; (३) संगीत और द्यूत का आनन्द लिया जाता और इस द्यूत में जिसकी जय होती उसका सारा वर्ष शुभ माना जाता था—'तस्मिन् द्यूते जयो यस्य तस्य संवत्सरः शुभः'; (४) रात्रि का समय अपनी प्रियाओं के साथ व्यतीत किया जाता (दयिताभिश्च सहितैः तैर्नेया सा निशा भवेत्); तथा (५) प्रियजनों एवं परिजनों को दान-मान-प्रसाद द्वारा परितुष्ट किया जाता था।

कश्मीर की दीपमालिका सोमदेव सूरि के 'यशस्तिलकचम्पू' (९५९ ई०) में प्रदीपोत्सव, दीपोत्सव और दीपावली का नाम धारण कर लेती है। 'दीपावली' शब्द का इस अर्थ में प्रथम प्रयोग संभवतः इसी ग्रंथ में हुआ। राष्ट्रकूट-नृपति कृष्ण तृतीय के राज्य-काल में रचित इस गद्यपद्यमयी कृति में दसवीं शताब्दी की दक्षिण भारतीय दीवाली की एक झाँकी मिलती है। इस समय से घरों की पुताई को भी दीवाली के कार्यक्रम के अन्तर्गत गिना जाने लगा। चूने से लिपे महलों की दीप्ति से दिशाएँ चमकने लगती थीं। घरों को बन्दनवारों से सजाना, रमणियों के साथ क्रीड़ा करना, संगीत और द्यूत से मनोरंजन करना, घरों की छतों को दीपों की अवली या पंक्ति से सजाना आदि इस अवसर की दिनचर्या बन गए थे, जैसा कि निम्नलिखित पद्यों से ज्ञात होता है—

हंसावली द्विगुणकेतुसितांशुरूत्रीः
पद्मावतंसरमणीरमणीयसारः।
प्रासादसारितसुधाद्युतिदिप्तदिक्को
दीपोत्सवस्तव तनोतु मुदं महीश ॥

\+ \+

आभान्त्यखर्वशिखराग्रविटं कपालि-
दीपावली द्युतिघृतपुरसौधबन्धाः ॥

जादू-टोने का समावेश

गुजरात के वर्धमानपुर (आधुनिक वढ़वान) के निवासी मेरुतुंग ने १३०५ ई० 'प्रबंध चिन्तामणि' की रचना की। जिसमें कोल्हापुर में मनाये जाने वाले दीपोत्सव का वर्णन मिलता है। कोल्हापुर-नरेश की रानियाँ दीवाली की रात को कोल्हापुर की महालक्ष्मी की अर्चना करती थीं। इस समय से इस उत्सव में जादू-टोने का भी उपयोग होने लगा था।

पूजा के भंडारकार प्राच्य शोध-संस्थान में 'आकाश भैरव कल्प' नाम के एक मध्ययुगीन ग्रंथ की पाण्डुलिपि रखी है, जिसमें विजयनगर साम्राज्य के सामाजिक एवं धार्मिक आचार-विचार का विस्तृत ब्यौरा मिलता है। इसमें दो अध्यायों में बताया गया है कि राजाओं को दीवाली कैसे मनानी चाहिये। उसके अनुसार प्रातःकाल भगवान् भुवनभास्कर की पूजा की जाती, अलक्ष्मी के परिहार तथा लक्ष्मी की स्थिरता के लिए भगवान् लक्ष्मीनारायण को तीन दीपों की भेंट चढ़ायी जाती, रंगशाला में मल्ल-युद्ध आदि मनोविनोद होते, राजधानी के मंदिरों तथा सभा-स्थलों, छतों, मार्गों, चौराहों

और नाट्य-शाला को दीपों से आलोकित किया जाता, राजकीय कर्मचारियों का ताम्बूल आदि से सत्कार किया जाता, बली की पूजा की जाती तथा सत्पात्रों को सुवर्ण आदि का दान दिया जाता था। इस विधि से दीपावली मनाने से शासक को यश की प्राप्ति होती थी—

एवं कृत्वा नरपतिर्दीपावत्युत्सवं प्रिय ।
तत्पुण्यं समवाप्नोति नात्रकार्या विचारणा ।।

इस प्रकार दीपोत्सव की इस द्विसहस्राब्दि पुरानी प्रथा में शनैः शनैः मनोरंजन, कला, धर्म, स्वच्छता, सजावट, स्वजनों का सत्कार, दान आदि के पुट आकर जुड़ते गये और वह एक 'राष्ट्रवर्धन' महोत्सव के रूप में समस्त देश में प्रतिष्ठित होगया ।

३५:१६:२. जब भारतीय गाँवों में हर्ष उल्लास के दीप जल उठते हैं ।

(श्री कृष्ण शंकर व्यास)

भारत में देवताओं के चरणों में दीपदान की पुण्य परम्परा बहुत प्राचीनकाल से चली आ रही है । महापर्व दीपावली पर हम दीपदान की पुण्य परम्परा का स्मरण करते हैं और साथ ही साथ लक्ष्मीपूजन द्वारा लौकिक एवं पारलौकिक ऐश्वर्य की प्राप्ति की कामना करते हैं । दीपावली पर्व भारतीय किसानों का राष्ट्रीय पर्व है । वे इस अवसर पर धरती, प्रकृति, बीज बैल, खाद एवं लक्ष्मी की पूजा करते हैं । भारत के कोने-कोने में यह पर्व मनाया जाता है और प्रत्येक प्रांत के ग्रामीण इसे मनाने के लिए नवीन, निराली तथा मनोहारी प्रथा का आश्रय लेते हैं । आइए हम भी आपको किसानों के इस पर्व के संबंध में कुछ मनोरंजक बातें बताएँ ।

गायों और बछड़ों की पूजा

दीपावली पर तो पर्वों की बाढ़ एक सप्ताह पहले से आरम्भ हो जाती है और दीपावली के कई दिनों बाद तक चलती रहती है । कृषक अपने दीपावली पर्व का शुभारम्भ गाय के बच्चों की पूजा से करते हैं। कार्तिक की पहली द्वादशी के दिन यह पूजा होती है । इस दिन प्रायः ब्राह्म मुहूर्त में गाय और उसके नवजात शिशुओं की पूजा होती है । गाय और बछड़ों की पूजा के बाद उस दिन प्रायः स्त्रियाँ उपवास करती हैं । इस पूजा के पीछे एक आध्यात्मिक एवं पौराणिक पृष्ठ भूमि है । इस सम्बंध में एक कहानी मैंने कहीं पढ़ी थी । लीजिए आप भी सुनिए—

युगों पुरानी बात है । एक दिन एक गाय अपना रास्ता भूलकर एक घनघोर जंगल में जा पहुँचती है । वहाँ उसे एक सिंह मिलता है जो उस जंगल का राजा था । वह गाय के मांस को खाने की इच्छा प्रकट करता है । गाय उससे कुछ समय की अवधि माँगती है । वह कहती है—'बन्धु मुझे थोड़ी देर का अवकाश दे दो । मेरा बच्चा भूखा होगा । उसे दूध पिलाकर वापस आ जाऊँगी । मुझ पर विश्वास करो ।"

"अच्छा तुम जा सकती हो ।" सिंह ने कहा ।

सिंह से छुट्टी लेकर गाय अपने गाँव जाती है । वहाँ वह अपने बछड़े को दूध पिलाती है और उसके बाद बहुत ही कारुणिक शब्दों में कहती है—'वत्स' यह अंतिम,

बार मैं तुम्हें दूध पिला रही हूँ। अभी तुरंत ही मुझे सिंह के पास वापस जाना है। इसके बाद वह अपने कृषक स्वामी से बच्चे का पूरा ध्यान रखने के लिए कहती है और उस पर ही उसके लालन-पालन का भार छोड़ जाती है। वस्तुतः माँ की ममता की अभिव्यक्त इस कहानी में सुन्दर बन पड़ी है।

बछड़े का माँ से अगाध प्रेम है। वह स्वयं माँ की मृत्यु के बाद जीवित रहना नहीं चाहता। वह भी अपनी माँ के साथ-साथ चलता है। माता पुत्र दोनों ही आगे बढ़ते हैं। जैसे ही सिंह का निवास स्थान आया बालक आगे बढ़ गया। वह सिंह से बोला—"हे पशुराज![1] पहले मुझे खाओ तब मेरी माता को खाना।"

बच्चे कभी-कभी ऐसी बातें कह देते हैं जिससे बड़ी से बड़ी विपत्ति टल जाती है। जैसे ही उसने यह ज्ञानमय बातें कहीं वैसे ही सिंहराज ने उन दोनों को आग्रहपूर्वक अपने पास बैठाते हुए कहा —"पहली बार आज मैंने एक बालक के मुँह से ऐसी बातें सुनीं हैं। आज से तुम्हारी माँ से मेरा बहन का रिश्ता होगा और तुम मेरे भाँजे हुए।"

वस्तुतः बछड़े की जितनी प्रशंसा की जाये थोड़ी ही होगी। भारत के सभी प्रांतों में गौ पूजन दीपावली पर्व पर किसी न किसी रूप में अवश्य मनाया जाता है। उत्तर प्रदेश के पहाड़ी प्रदेश में ग्रामीण अपने हाथों में बंधी रक्षाबंधन को इसी अवसर पर अपने हाथों से खोलते हैं। उसे वे गौ की पूँछ से बाँध देते हैं और फिर लोग उस गाय की पूँछ पकड़कर परिक्रमा करते हैं।

धनतेरस के दिन भी पशु पूजा की परम्परा का निर्वाह आज तक भारतीय गाँवों में बड़े उत्साह से किया जाता है। धनतेरस के दिन बड़े ही सवेरे पशुओं के नहलाने का कार्य होता है। उनका सिंगार किया जाता है और विविध आकर्षक ढंगों से उन्हें रंगा जाता है। सायंकाल कुमारी कन्याएँ उनकी आरती उतारती हैं और तत्पश्चात् उन्हें विविध व्यंजनों का भोज दिया जाता है। पशुओं की पूजा की यह गौरवमयी परम्परा भारत में बहुत प्राचीन काल से चली आ रही है और इसके मूल में यह भावना रही है कि जो हमारे लिए अन्न उपजाता है उसके प्रति हमें कृतज्ञता प्रकट करनी चाहिए।

विभिन्न प्रान्तों की मनोरंजक प्रथाएँ

असम के आदिवासी दीपावली पर्व को बड़े उल्लास के साथ मानते हैं। यहाँ इस अवसर पर कालीपूजा की प्रथा है। महामाता काली के चरणों में बलि देने की रीति का पालन आज भी बड़ी कठोरता से किया जाता है। नवीन वस्त्रों को धारण करके यहाँ के निवासी नृत्य एवं संगीत के विभिन्न सांस्कृतिक कार्यक्रमों में भाग लेते हैं। इस अवसर पर शराब एवं मादक द्रव्यों का सेवन भी वे माता काली के प्रसाद के रूप में लेते हैं।

बिहार के गाँवों में दीपावली मनाने का ढंग बहुत ही विचित्र है। ग्रामीण माता-काली की प्रतिमा से लेकर ड्योढ़ी तक आटे के यंत्र बनाते हैं। एक लकड़ी के पात्र को जिसमें धान और हरी दूब रहती है, अपने सिर पर रख लेते हैं। इस पात्र को सिर पर

---

१. ब्रज की कहानी में जो 'सुरही' के नाम से एक गीत में मिलती है बछड़े ने आते ही सिंह को 'मामाजी' कहा था।

रखकर वे तीन बार मूर्ति के निकट जाते हैं और रात्रि में मशाल लेकर सारे गाँव में घूमते हैं ताकि अंधकार की छाया में कहीं से दरिद्रता न प्रवेश पा जाये।

राजस्थान में बिल्ली का आदर महापर्व दीपावली पर किया जाता है। वहाँ बिल्ली को लक्ष्मी का स्वरूप माना जाता है। जिस प्रकार किसी अतिथि का स्वागत किया जाता है ठीक उसी प्रकार बिल्ली का स्वागत इस पर्व पर किया जाता है। घर में भोज्य सामग्री बनायी जाती है और उसे बिल्ली को खिलाया जाता है। यदि उस दिन बिल्ली सारी भोज्य सामग्री खा जाये तो उसे बहुत शुभ मानते हैं।

हैदराबाद में दीपावली के अवसर पर भैंसों के लड़ाने की प्रथा बहुत प्राचीनकाल से चली आ रही है। पहले दो भैंसों को खिला-पिलाकर तैयार कर लेते हैं और बाद में जिसका भैंसा होता है वह स्वयं उस पर सवार होकर युद्ध क्षेत्र में जाता है। वहाँ वह अपने भैंसे की शक्ति का प्रदर्शन करता है और उसे शराब पिलाता है। शराब पिलाकर वह भैंसे को युद्ध भूमि में छोड़ देता है। युद्ध देखने के लिए अपूर्व जनसमूह उमड़ पड़ता है।

पंजाब में ग्रामीण मशाल लेकर गाँव से बाहर एकत्र होते हैं। वे तालाबों के निकट मिट्टी का एक चबूतरा बना देते हैं। इसमें एक काँटेदार पेड़ की डाल गाड़ दी जाती है। इस काँटेदार वृक्ष की पूजा पंडितों द्वारा करायी जाती है। कहा जाता है कि यह मिट्टी एक दिन के बाद सोने की मिट्टी के रूप में परिवर्तित हो जाती है। कहा जाता है कि यह मिट्टी बहुत ही पवित्र होती है।

उत्तर प्रदेश के तराई क्षेत्र में थारू नामक जाति रहती है। इनकी दीपावली मनाने की विधि सर्वथा भिन्न होती है। यह पर्व उनके यहाँ लगभग एक मास तक चलता रहता है और दीपावली के दिन वे 'वर्षी' उत्सव मनाते हैं। इनका विश्वास है कि इस अवसर पर मृत आत्माएँ धरती पर आती हैं और अपने परिवार एवं ग्राम वालों के साथ हर्षोल्लास के कार्यक्रम में भाग लेती हैं।

थारुओं का नृत्य कार्यक्रम तीन दिनों तक चलता रहता है। द्वितीया के दिन चाँद के निकलने पर पंडाल के घेरे को तोड़ दिया जाता है और स्त्रियाँ प्रायः उन्हें गाँव के बाहर पश्चिम दिशा में रख आती हैं। दूसरे दिन सवेरे होने से पहले ही वे वहीं जाकर उन सामानों को नष्ट कर देती हैं और इस प्रकार इनका दीपपर्व समाप्त हो जाता है।

३५:६१:३. कमलालया लक्ष्मीः—

(श्री कृष्णदत्त वाजपेयी)

भारतीय देवियों में लक्ष्मी का स्थान बहुत ऊँचा है। यह सौभाग्य और समृद्धि की अधिष्ठात्री मानी गई है। उसका पूजन अनेक रूपों में बहुत प्राचीन काल से प्रचलित है।

हमारे सबसे पुराने ग्रंथ ऋग्वेद में 'लक्ष्मी' शब्द का प्रयोग कल्याण या मंगल के अर्थ में मिलता है। परवर्ती वैदिक साहित्य में श्री और 'लक्ष्मी' नाम साथ-साथ मिलते

हैं। प्रसिद्ध 'श्री सूक्त' के अनुसार ये दोनों नाम एक ही देवी के सूचक हैं, जिसे 'पद्म-स्थिता' (कमल के ऊपर बैठी हुई) कहा गया है।

वैदिक साहित्य में श्री-लक्ष्मी के जो उल्लेख प्राप्त हैं उनसे विष्णु के साथ इस देवी के संबंध का पता नहीं चलता। यजुर्वेद (तैत्तिरीय संहिता, ७, ५, १४) में अदिति देवी को विष्णु की पत्नी कहा गया है। अदिति को आदित्य, मित्र, वर्ण आदि की माता बताया गया है। उसकी एक संज्ञा 'भूदेवी' भी मिलती है। विष्णु की अनेक ऐसी प्राचीन मूर्तियाँ मिली हैं जिनमें विष्णु के एक ओर लक्ष्मी और दूसरी ओर भूदेवी दिखायी गयी हैं।

वाल्मीकि रामायण, महाभारत, पुराण-ग्रंथ तथा बाद के संस्कृत साहित्य में विष्णु-पत्नी के रूप में लक्ष्मी का स्थान प्रमुख हो जाता है। उसकी उत्पत्ति के विषय में पुराणों में प्राय: यही मिलता है कि देवासुरों द्वारा समुद्र का मंथन करते समय अनेक रत्नों के साथ लक्ष्मी का प्रादुर्भाव हुआ, जो भगवान् विष्णु की पत्नी बनी। सागर से उत्पन्न होने के कारण लक्ष्मी का नाम 'समुद्र-कन्या' प्रसिद्ध हुआ। वायु-पुराण (९, ७५, ९८) में श्री या लक्ष्मी की उत्पत्ति इस प्रकार दी है—हिरण्य-गर्भ से पुरुष तथा प्रकृति की उत्पति हुई। पुरुष ११ भागों में विभक्त हुआ। प्राकृति के दो भाग प्रज्ञा (सरस्वती) तथा श्री (लक्ष्मी) हुए, जो अनेक रूपों में संसार में व्याप्त हुए।

पद्म और लक्ष्मी

पद्म के साथ लक्ष्मी का पुराना संबंध परवर्ती साहित्य में बहुत व्यापक हो गया। उसकी संज्ञाएँ 'पद्मा', 'पद्म-हस्ता', 'कमलालया' आदि प्रसिद्ध हुईं। मूर्ति-लक्षण-ग्रंथों में लक्ष्मी के साथ कमल का विविध प्रकार से संबंध दिखाया गया है। उदाहरणार्थ 'पूर्व कारणागम' ग्रन्थ (पटल १२) में लक्ष्मी को पद्मपत्रासनासीना पद्माभा पद्म हस्तिनी' (पद्मपत्र के आसन पर बैठी हुई, कमल के से रंग वाली तथा हाथ में कमल-धारिणी) कहा गया है। 'विष्णु-धर्मोत्तर पुराण' में लक्ष्मी का वर्णन करते हुए उसे पद्मास्था पद्महस्ता च गजोत्क्षिप्तघटप्लुता' (पद्म पर स्थित, कमलधारिणी तथा हाथियों द्वारा उठाये हुए घड़ों से अभिषिक्त) कहा गया है। कमल का धारण करना उज्ज्वलता और सुकुमारता का अभिव्यंजक हो गया। साहित्य और कला में 'लीला कमल' धारण किए हुए सुंदरियों के आलेखन मिलते हैं। कालिदास ने मेघदूत (उत्तरमेघ) में अलकापुरी की वनिताओं का वर्णन करते हुए लिखा है कि वे हाथों में लीला कमल लिये हुए थीं और उनकी अलकों में कुंद के पुष्प शोभित थे :—

'हस्तं लीला कमलमलके बाल कुन्दानुविद्धम्'

आगम तथा अन्य लक्षण-ग्रन्थों में लक्ष्मी की प्रतिमा का विधान मिलता है। 'अंशुमद् भेदागम' (पटल ४९) में लिखा है :—

लक्ष्मी : पद्म समासीना।
द्वि भुजा कांचनप्रभा।।
हेमरत्नलोज्वलैर्नक्   ।
कुण्डलै : कर्णमण्डिता।।

(लक्ष्मी की मूर्ति को कमल-पुष्प पर बैठी हुई, दो भुजा वाली तथा सोने के से रंग वाली दिखाना चाहिए। उसके कानों में स्वर्ण एवं रत्नजटित मकराकृति वाले उज्ज्वल कुंडल सुशोभित होने चाहिए)।

लक्ष्मी को सुन्दरी युवती के रूप में चित्रित करने का विधान मिलता है। उसके नेत्र प्रफुल्ल कमल के समान और भौंहें कुंचित होनी चाहिए। एक हाथ में वह श्रीफल या बीजपूरक (बिजौरा नीबू) तथा दूसरे में पद्म लिए रहती है। सुन्दर वस्त्र तथा विविध आभूषणों से लक्ष्मी प्रतिमा को सज्जित दिखाना चाहिए। कुछ लक्षण-ग्रन्थों में लक्ष्मी के चार हाथ दिखाने का विधान है और लिखा है कि अतिरिक्त दोनों हाथों में क्रमशः अमृतघट और शंख होना चाहिए।

कमलालय लक्ष्मी का चित्रण भारतीय कला में कई स्थानों पर मिलता है। सांची, भारहुत, मथुरा, अमरावत आदि की कला में पद्मस्थिति लक्ष्मी की अनेक सुन्दर मूर्तियाँ उपलब्ध हैं। कहीं लक्ष्मी को पुष्पित कमल वन के मध्य में स्थित दिखाया गया है तो कहीं त्रिभंग भाव में लीला कमल ग्रहण किए हुए। कुछ कलाकृतियों में कमलारूढ़ा लक्ष्मी का अभिषेक हाथियों द्वारा दिखाया गया है। मथुरा की एक कुषाण-कालीन मूर्ति में सामने अन्न की बाल लिए खड़ी लक्ष्मी की मूर्ति है, जो यह प्रदर्शित कर रही है कि माता के दूध से और अन्न से प्राणियों का भरण-पोषण होता है। इस मूर्ति का पृष्ठ-भाग अत्यन्त कलात्मक ढंग से दिखाया गया है। इस पर कमलपुष्प, पत्ते, मयूर का जोड़ा आदि अलंकरण बड़ी सुन्दरता से उत्कीर्ण हैं। गुप्तकाल की एक मूर्ति पर कमलालया लक्ष्मी का गजों द्वारा अभिषेक चित्रित है। बीजापुर के समीप पट्टदकल नामक स्थान में एक कलाकृति पर जल बीच कमल शय्या पर लेटी हुई लक्ष्मी को दिखाया गया है। लीला बीच कमलशय्याधारिणी की एक सुन्दर प्रतिमा श्रवणबेलगोला (मैसूर राज्य) में मिली है।

कमल और लक्ष्मी का संबंध भारतीय कला एवं साहित्य में अमर हो गया। कमल शुभ्रता और शांति का प्रतीक है; लक्ष्मी सौन्दर्य और समृद्धि का। जहाँ इन दोनों वस्तुओं का समन्वय है वहाँ सोने में सुगन्ध है।

अन्त में हम महाकवि अश्वघोष का एक श्लोक उद्धृत करते हैं, जो कमलालया लक्ष्मी का एक आकर्षक चित्र उपस्थित करता है। इस श्लोक में नन्द की लावण्यमयी पत्नी 'सुन्दरी' का वर्णन है :—

> सा सद्म.रागं वसनं वसाना।
> पद्मानना पद्मदलायताक्षी ॥
> पद्मा विपद्मा पतितेव लक्ष्मी:।
> शुशोष पद्स्रगिवा तपेन ॥

(वह सुन्दरी पद्म के रंग वाला कपड़ा पहने थी, उसका मुख कमल जैसा था और बड़े-बड़े नेत्र कमल-दल के सदृश थे। परन्तु अपने पति से कुछ समय वियुक्त रहने के कारण वह ऐसी लग रही थी मानो कमलालया लक्ष्मी अपने स्थान से च्युत हो गई हो। वियोग-जनित ताप से वह पद्म की माला की तरह म्लान हो रही थी)।

परिशिष्ट (२)

३५:१६:४ दीपक और उसका एक अनुष्ठान

दीपावली भारत का एक महत्वपूर्ण त्यौहार है। सभी धर्म और वर्ण के लोग इस त्यौहार को धूमधाम से मनाते हैं। जैन तीर्थंकर महावीर स्वामी का निर्वाण ईसा से ४६८ वर्ष पूर्व दिवाली के दिन हुआ था। ग्यारहवीं शताब्दी में अलबेरूनी ने लिखा है कि दिवाली भारत में बड़ी उमंग से मनायी जाती है। दिवाली मनाने का कारण यह है कि इसी दिन वासुदेव की पत्नी लक्ष्मी, राजा बलि को बंधन-मुक्त करके पृथ्वी भ्रमण के लिए अवकाश देती है। १५वीं शती में निकोलई काउन्ते ने विजयनगर के सम्बन्ध में लिखा कि यहाँ दिवाली पर मंदिर की मुंडेरों पर रात दिन दिये जलाये जाते हैं। अबुलफज़ल ने १६वीं शती में लिखा कि यह वैष्णवों का त्यौहार है। इस दिन खूब आतिशबाजी जलाई जाती है, और नगर को दीपदान से जगर-मगर किया जाता है, जुआ खेला जाता है। अकबर के महल में एक चालीस फुट ऊँचा स्तम्भ है, जिस पर मिट्टी का एक दीपक दिवाली के दिन जलाया जाता है, जिससे प्रजा यह जान सके कि महलों में भी दिवाली हो रही है। सिक्खों में भी दिवाली का सम्मान है।

इतिहास में ही दिवाली के उल्लेख नहीं, साहित्य भी दीपावली के उल्लेखों से युक्त है। सन् १०१० ई० के लगभग अद्दहमाण (अब्दुल-रहमान) ने 'संदेसरासक' में लिखा—

दिंतिय णिसि दीवालिय दीवय
णवससिरेह-सरिस करलीअय

पृथ्वीराजरासो में शरद-वर्णन में दीपदान का यों उल्लेख है—

ग्रह दीप दीपति जूय जूपति
भूप भूपति सछयं

जायसी (१५२७–१५४० ई०) ने नागमती वियोग में कहलाया है—

अब हूँ निठुर आव एहि बारा।
परब देवारी होइ संभारा।

पीथल अथवा महाराज पृथ्वीराज ने 'बेलिक्रिसन रुक्मिणीरी' में कार्तिक दीपकों का उल्लेख किया है—

दीघां मणि मंदिरे कार्तिग दीपक
सुत्री समाणियाँ माहि सुख।

सूरदास का वर्णन तो प्रसिद्ध ही है—

सरद-कुहू-निसि जानि दीपमालिका बनाई
तथा
आजु दीपति दिव्य दीप मालिका
तथा
दीपमालिका रचि रचि साजत।
पुहुपमाल मंडली विराजत। आदि

केशवदास जी ने लिखा है—

वन उपवन जलथल प्रकास, दीसन दीपदान,
सुख ही सुख सुखराति जुवा खेलत दम्पति जन

ग्यारहवीं शती से आज तक हिन्दी के कवियों के दीपावली-वर्णन ऐतिहासिक क्रम से कहाँ तक दिये जा सकते हैं। सभी कवियों को दिवाली के सम्बन्ध में अपने मन के नन्हे-दीप सँजोने पड़े हैं। पर दिवाली का लोकतात्विक महत्व विशेष परिलक्षणीय है। इसमें इतने ताने-बाने मिले हैं कि उनका अनुसंधान आश्चर्य में डाल देता है। दीपावली की रात्रि के समाप्त होने पर प्रतिपदा के प्रकाश में आने से कुछ पूर्व ही स्याहू की पूजा होती है। यहाँ इस जटिल अनुष्ठान की और बातों को छोड़ कर केवल इसी पर कुछ प्रकाश डाला जाता है।

स्याहू अथवा षष्ठी

'स्याहू' के सम्बन्ध में 'ब्रजलोक साहित्य के अध्ययन' में सबसे पहले यह अनुमान प्रस्तुत किया गया था कि स्याहू का सम्बन्ध सर्प पूजा से है। कुछ अन्तर्राष्ट्रीय और अन्तर-प्रान्तीय सामग्री से तुलना करने पर दूसरा अनुमान यह निर्धारित होता हुआ प्रतीत हुआ कि यह सर्प 'शेषनाग' है, और इसकी पूजा का सम्बन्ध सूर्य अथवा विष्णु-पूजा से है। इस पूजा के अनुष्ठानों की कुंजी सूर्य-पूजा में प्रतीत हुई।

अब एक नयी सम्भावना विदित होने लगी है। ब्रज में स्याहू की जो कहानी कही जाती है, वैसी ही कहानी बंगाल में भी मिलती है। बंगाल की यह कहानी 'षष्ठी' की कहानी है।

श्री गुप्ते महोदय ने 'हिन्दू होलीडेज़' नामक पुस्तक में दो षष्ठियों का वर्णन दिया है, एक अशोक षष्ठी, दूसरी आम षष्ठी। इस आम षष्ठी की कहानी ही हमारी कहानी है। उन्होंने यह कहानी इस रूप में दी है—

"एक ब्राह्मण के तीन लड़के और उनकी तीन बहुएँ थीं। इन बहुओं में से एक खाना चुराकर खा जाती थी, और उसका दोष एक काली बिल्ली के सिर थोप देती थी। काली बिल्ली षष्ठी देवी का वाहन थी। इस बहू के एक पुत्र हुआ। रात में जब बहू सो गई तो पुत्र लुप्त हो गया। इसी प्रकार छः पुत्र और हुए, और रात में सभी लुप्त होते रहे। अब तो लोगों ने कहा कि बहू डाकिनी है। बहू इस आरोप में दुखी हो घर छोड़कर चल पड़ी। असहाय अवस्था में वह एक आम्रकुंज में बैठकर रोने लगी। यहाँ षष्ठी देवी प्रकट हुईं और उन्होंने बताया कि उसके बच्चों की हानि काली बिल्ली को दोष देने के कारण हुई है। मेरी काली बिल्ली वहाँ मूर्छित पड़ी है। दही का पात्र लेकर उसके पास जाकर दही को उसकी लाश पर डाल कर उसे जीभ से चाटो तो तुम्हें तुम्हारे बच्चे मिल जायेंगे। उसने वैसा ही किया। उसके बच्चे उसे मिल गये। षष्ठी ने कहा—इन बच्चों को लेकर अब घर जाओ और इन सबके दही का टीका करो। न तो अब चोरी करना, न मेरी बिल्ली को दोष देना। ज्येष्ठ (मई-जून) के शुक्ल पक्ष की छठ को चावल का आटा गूंद कर उससे बिल्ली का पुतला बनाना और मेरी और बिल्ली की डोरों से

बनाये एक जंत्र से पूजा करना। पूजा के उपरान्त उस जंत्र को अपने नवजात शिशु के सीधे हाथ में बाँध देना। फिर धर्म ग्रंथों से मंत्र या श्लोक सुन कर फलाहार और दुग्धाहार करना। उस दिन चावल मत खाना। बायें हाथ से किसी बच्चे के थप्पड़ मत मारना, और उसे गाली मत देना। किसी काली बिल्ली को कभी लात मत मारना, न उसे दोष ही देना। ऐसा करने से तेरे बच्चे दीर्घजीवी होंगे। (हिन्दू होलीडेज़, पृष्ठ २१२-२१३)

इस कहानी का पश्चिम बंगाल में प्रचलित एक रूपान्तर श्री एस० आर० दास ने दिया है कि षष्ठी देवी की पूजा के नैवेद्य में से एक स्त्री ने चुराकर कुछ भोग खा लिया, और सास के पूछने पर कह दिया कि एक काली बिल्ली खा गयी है। इससे षष्ठी रुष्ट हो गयी, और काली बिल्ली तब से उसके बच्चों को होते ही चुरा ले जाने लगी। एक बार उसने बिल्ली को नवजात-शिशु को ले जाते देखा और उसका पीछा किया, पर वह भूमि पर गिर पड़ी। तब षष्ठी प्रकट हुई और उसने काली बिल्ली को उसकी इन निष्ठुरता के लिए फटकारा। उसने उसके बच्चे लौटा दिये, और उस स्त्री से कहा कि वह षष्ठी पूजा व्रत करे।

यदि यहाँ षष्ठी को काली बिल्ली से अभिन्न मान लें जैसा एस० आर० दास ने लिखा है कि इस कहानी से यह स्पष्ट हो जाता है कि वह (षष्ठी) काली बिल्ली ही मानी गयी है अन्यथा यह कहा जा सकता है कि काली बिल्ली उसका वाहन है, और यह भी कि वह 'पुत्र-जन्म' अथवा जन्ति की अधिष्ठात्री देवी है, तो व्रज की स्याहू और षष्ठी की कहानियों के अभिप्रायों में नीचे लिखे रूप में तुलना हो सकती है—

१. स्याहो या षष्ठी रुष्ट		कारण भिन्न हैं। व्रज में स्याहो के अण्डे बच्चे उस स्त्री ने मार डाले हैं। बंगाल में अनजाने षष्ठी की काली बिल्ली को झूठा दोष लगाया है।
२. स्याहो या षष्ठी उस स्त्री के नवजात पुत्र को चुरा ले जाती है।	दोनों में	
३. सात पुत्र ले जाती है।	दोनों में	
४. स्त्री बहुत दुखी-सदारोमनी या डंकिनी कही जाती है।	दोनों में	
५. दुखी स्त्री एक बुढ़िया से उपाय पूछती है।		व्रज में
६. स्त्री घर छोड़ बन या आम्रकुंज में जाकर रोती है, षष्ठी स्वयं प्रकट होती है, स्त्री उससे उपाय पूछती है।		बंगाल
७. बुढ़िया या षष्ठी उपाय बताती है। (उपाय दोनों में भिन्न हैं)		दोनों में

ब्रज में : उपाय १. गाय की सेवा
२. गाय उपाय बताती है कि—
१. बिटोरा में पुत्र जन ।
२. स्याहू के लिए कढ़ी भात ।
३. उसे कढ़ी भात खिला कर उसके जूं देख।
४. गोद के बच्चे को नोंच कर रुलादे ।
५. बच्चे के लिए कान की तुरपुती माँग ले ।
६. तुरपुती से स्याहू के कान में से तेरे सब बच्चे निकल आयेंगे ।

षष्ठी की कहानी में उपाय—
१. दही लेकर काली बिल्ली के ऊपर छिड़क
२. उसे अपनी जीभ से चाट
३. और षष्ठी की तथा बिल्ली की पूजा किया कर ।

८. स्याहू या षष्ठी स्त्री के सभी बच्चे उसे लौटा देती है ।

इस तुलना से विदित होता है कि यह एक ही कहानी है, और निश्चय ही यह कहानी जन्ति की अधिष्ठात्री देवी की है ।

ब्रज में स्याहू की कहानी किसी छठ को नहीं कही जाती । यह कहानी अहोई आठें को कही जाती है और दिवाली की प्रतिपदा को स्याहू की पूजा होती है । ब्रज में यद्यपि 'देव छठ' को छोड़ किसी और छठ की पूजा नहीं होती पर 'षष्ठी देवी' का पूजन 'जन्ति' के बाद छठे दिन संतान की 'छठी' के रूप में अवश्य होता है । यह छठी-पूजन षष्ठी पूजन ही है ।

किंचित विचार के उपरान्त यह भी विदित होता है कि यह स्याहू या स्याहो माता षष्ठी माता ही है ; इसलिए नहीं कि 'स्याहू' स्याह शब्द से बना है जिसका अर्थ है काला या काली, और षष्ठी का वाहन काली या स्याह बिल्ली है । वस्तुतः यह व्युत्पत्ति ठीक नहीं । स्याहू वस्तुत: षष्ठी का ही रूपान्तर है; और यह रूपान्तर ब्रज में मराठी के प्रभाव से आया प्रतीत होता है । षष्ठ का जैसे छठ हिन्दी में वैसे मराठी में 'सह' होता है सहमाता = सहो माता = साहोमाता । इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि स्याहू षष्ठी पूजा ही है । षष्ठी तिथि का सम्बन्ध गरुड़ पुराण के अनुसार सूर्य और स्वामी कार्तिक से भी है ।[1]

इस ऊहापोह से यह प्रकट होता है कि स्याहू पूजन भी एक जटिल अनुष्ठान है । उसमें भी कितनी ही संस्कृतियों के युगयुग से प्राप्त अवशेष गुम्फित हैं ; और अब भी अन्तिम रूप में उसके सम्बन्ध में निश्चयात्मक निष्कर्ष नहीं दिया जा सकता ।

---

1. The Sun God and Kartikeya should be worshipped on the Sixth—Garud Puranam : Edited and published by Manmath Nath Dutt. page—354.

३६. अगहन-पौष

व्रतानुष्ठानों की दृष्टि से अगहन हमारा ध्यान इसलिए आकर्षित करता है कि इस महीने में ब्रज में कोई उल्लेखनीय व्रतानुष्ठान नहीं होता। किसी किसी ने पौष में रुक्मिणी अष्टमी को कृष्ण-रुक्मिणी तथा प्रद्युम्न की पूजा का विधान बताया है। तथा पौष शुक्ल सप्तमी को सूर्य-सप्तमी बतायी है।

३६.१· पूस चैंकाना

पूस के शुक्ल पक्ष में जितना जल्दी हो सके पूस चैंकाना आवश्यक है। मूँग की दाल के मँगौड़े बना कर एक सींक में ७ या ९ लगाकर कहीं छप्पर में या कहीं उन्हें टाँक दिया जाता है। इसे एक प्रकार का टोटका मानना चाहिये। घर में किसी महमान के आने से पहले पूस चैंका देने पर यह विश्वास किया जाता है कि इस वर्ष अधिक महमान नहीं आयेंगे।

३७. माघ में ब्रज में निम्नलिखित व्रतानुष्ठानों का पता चलता है :—

१—मकर संक्रान्ति।

२—सकट चौथ।

३—बूढ़ा बाबू।

४—बसंत पंचमी।

३७.१. मकर संक्रान्ति वास्तव में सौर गणना का त्यौहार है। यह भारत के बड़े दिन की भाँति है। इस दिन दान करने का महत्व माना जाता है।

३७.१.१. इस दिन खिचड़ी, गुड़, तिल तथा घी का दान दिया जाता है। तिल के बने लड्डू या गजक की पट्टियाँ भी दी जाती हैं। ये मंस्स दी जाती हैं, और मंस्स के ब्राह्मणों को ही बाँटी जाती हैं।

३७.१.२. घर में भी खिचड़ी ही पकाई जाती है। दाल-चावल भी बनाये जा सकते हैं, पर खिचड़ी आवश्यक है। खिचड़ी पक जाने पर एक अंगारा लेकर उस पर तिल छोड़कर तिल चटकाये जाते हैं. और खिचड़ी का आग पर पूजा-भोग दिया जाता है।

तिल चटकने पर यह विश्वास है कि 'तिल चटके जाड़े सटके।'

३७.१.३. घर की, नाते रिश्तेदारों की, पड़ोसियों की लड़कियाँ न्योंती जाती हैं। पहले जब वे खा-लेती हैं, तभी घर के लोग खिचड़ी खाते हैं।

३७.१.३ (१) लड़कों की पूछ कम होती है, इस पर बहुधा हँसी में लड़कों को चिढ़ाते हुए यह कहा जाता है :—

'सकट संकरांत्ति
बिलैया बैठी पांति
बिलौटा करैं
टाँइ, टूँइ, ठुस्स'

किसी-किसी के यहाँ संक्रान्ति पर संध्या के समय पूड़ी-पकवान भी बनते हैं।

३७.२. सकट चौथ

यह माघ कृष्ण चतुर्थी को होती है। इस महीने का यह त्यौहार बहुत महत्वपूर्ण है।

३७.२.१. तिल कूट कर तिलकुटे बनाये जाते हैं। इस तिलकुटे पर ५–७ पुरियाँ बनाई जाती हैं। ये छोटी-छोटी टिकियों के रूप की होती हैं। एक पटे पर खड़िया से एक पुरुषाकृति बनाली जाती है। एक लोटा जल रख लिया जाता है। कहानी सुनी जाती है, कहानी सुनकर पुरियाँ पटे के देवता पर चढ़ा दी जाती है। और पानी से उन पर अर्घ्य दे दिया जाता है। कहीं-कहीं रात को चन्द्रमा को भी अर्घ्य दिया जाता है।

३७.२.१. (अ) कहीं-कहीं एक थाली में तिलकुटे की मानवाकृति या अजाकृति बनायी जाती है। उसके मुख पर काफी घी और गुड़ रखा जाता है फिर घर के एक लड़के से चाकू से उसकी गर्दन काटने को कहा जाता है। गर्दन काटते समय लड़का 'मेंऽऽ' बोलता है। अर्थ यह बताया जाता है कि 'में' कहने वाले अर्थात् 'अहंकार' को काटा जा रहा है। अहंकार को मारने से ही मुक्ति मिलती है।

३७:२:१:१. इस अवसर पर जो कहानी या कहानियाँ कही जाती हैं, वे यहाँ दी जाती हैं।

३७:२:१:१. (अ) कहानी या सकटचौथ-संकलन कर्त्ता-प्रभुदयाल गोस्वामी विशारद-जैपुर धर्मशाला नंदगाँव बरसाना।

दो द्योरानी और जिठानी ई। द्योरानी तौ ई गरीब और जिठानी भागिमान सो बू द्योरानी जिठानी के गोबर थापिबे जायौ करई सबेरे के गखत गोबर थापि देई बाकी जिठानी बाकू आस्सेर जौ की भुसी थपाई में दे औ करेइ सो बू बाइ आस्सेर भुसी की रोटी करके अपने बुल्हा हारी कू पहुँचाय देऔ करेई आई बरस दिना की सकट चौथ बा दिना द्योरानी अच्छी तरह न्हाइ धोई मूड़ धोयौ चौका बासन किए कोरे-कोरे बासन पानी ते भरे बा पीछें नित्त की नाई जिठानी को गोबर थापिबे गई गोबर तौ थापि दियो परि बा दिना जिठानी नें बू भुसी ऊ बाकू नाय दई।

सो हर पै हारी भूखो घर में इत उत ते बाकी बाकी के नीचे ते समेट के भुसी की चुनी को एक पिंडा बनाय दियौ और बू एक छींके पै धरि दियौ और तिलकौ तिलकुटा कूट के धरि दीयौ आयौ हर पै ते हारी बाने कही कि आजु तैंने रोटी क्यों नाइ भेजी बू बोली कै में जिठानी को गोबर तौ करि आई परि बाने आजु मोकू कछूई नांय दियौ ई सुनि के बाने अपनी बहू में खूब मार लगाई मारी कूटी बू एक कौने में जाय परी राति कूं शकट देवता बांके पास आयों और कही कै मै तौ भूको ऊँ बाने कही महाराज ले औ छींके पे चुनी भुसी को चूरमा धर्‌यौ एँ फिर कही प्यासौ ऊँ पानी पीले औ कहा महाराज कोरी-कोरी जेहरि भरी धरी एँ फिर कही न्हिमीटा सौ ऊँ बा नें कही न्हिमिटिले औ महाराज चारो कोने पाचइ देहरी गाढ़ कहाँ धोऊँ महाराज पोंछले औ मो बुलिया के लिलार ते यों सुनि के सकट देवता अपने स्थान कूं चले गए सबेरौ भयौ जब उठी तौ कहा देखै कै चारों ओर जगर मगर है रही एँ मुंहड़े पे हाथु मार्‌यौ तौ मोती मूंगा लटकि रहे हैं। और चारों ओर धन दौलत अर्याय परी। फावरे ते समेट रहे हैं। परि समिटि बे मेई नांय आवैं या मारे कूं जिठानी को गोबर थापबे नाय गई जिठानी

ने अपनी छोरी ते कहीं कै लाली बायें बोल्ला आजु गोबर करिबे क्यों नाय आई लाली ने कही कें मैया आजु बू गोबर करिबे काए कू आवेगी आजु तौ बे फावरे तें माया ऐ समेट रहे हैं। पर सिमिटिबे मेंई नाइ आवै फिर जिठानी ने अपने लोग ते कही बा छोरानी के तौ कल्ल के शकट कूं बरत रहे ते घर में माया अर्याय परी यें अगली साल शकट कूं में ऊँ बरत रहूँगी सो तुमें मोए खूब मारियों अगली साल बानें सकट कौ बरत करयौ बाने अपनों दूल्हा हर जोत बे भेज्यौ छोरानी की तरह रोटीऊ नायं भेजी घर आय के जेंठ ने कही कै तैनें रोटी क्यों नायं भेजी बानें कही कि अब तुम मोए मारौ लोग नें कही कि राड़ क्यौ पिटे में नाइ मारूँ जब नाइं मारी तौ बानें पड़डा छोड़िके भेंसि कौ सबरौ दूध चुआय दियौ जेठं आई रिसि सो बू खूब मारी मारि-मारि के सुंझा इ दई लीली करि दई छोरानी की तरह पिटि के बोऊ घर के कौने में जाय परी आयौ राति कूं शकट देवता बाने कही भूखौ ऊँ बानें दिन मेंई सब कामु तैयार करि लियौ चूरिमाऊ बनायौ कोरी जेहरि ऊं भरी सो बाने कही महाराज जं लेउ छींके पे चूरमा धरयौ ये तिलकुटा धरयौ ऐ। प्यासौ ऊँ पानी पीलेउ महाराज कोरी-कोरी जेहरि भरि रहीएं।

३७.२.१.१ (आ) कहानी सकट-चौथि की

एक डोकरी कें एकु छोरा ओ, बु डोकरी व्वा छोरा के सोच में सूखतीई, जाती, व्या गाम में बु रहंतीई, व्वा गाम में कुम्हार कौ 'अवा' हर पोत एक आदमी की बलि लेंतौ ओ—जब तीसरे महीना में जाइकें बांसन पकते ये। ज्याई सोच में बु डोकरी सूखि रही कै मेरेऊ बेटा को ओसरौ आउ आयें, कहा करूं, मेरे जिही एकु बेटा यें, सकट चौथि के दिना डोकरी उपासी रही, और व्वानें खूब अच्छे माल पूरी पापरी सबु चीज बनाई, और अपने बेटा ते बोली, बेटा तू खूब पेटु भरि कें जं लै, और जब भूक लगे जबई खा, बेटा काल्लि कौ तेरौ अवा कौ ओसरौऐ, ज्याई मारें मैंने सबु चीज करींऐं कै तू मनखति मानि कें खाइतऊ जाइगो, और में फिरि कौन कूं करिबे बैठूगी, डोकरी ने खूब अच्छी तरियाँ लाड़ प्यार ते अपनों बेटा जिमायौ, जब दूसरौ दिनां भयौ, कुम्हार कौ—डोकरी के न्यां आयौ और बोल्यौ, मइया भेज कहाँएं तेरौ छोरा, हम अवा चढ़ांमिगे—जौ जू छोराऊ आइ गयौ, डोकरी बोली चलि भइया में छोराएं लेंकें आमतूं—कुम्हार चल दीयौ, डोकरी नें गनेश चौथि कौ बरतु ऊ न खोल्यौ, गनेश जी कौ ध्यानु धरिकें और छोरायें लेंकें बु कुम्हार के न्या पोंहची, और अवा के बीच में बानें अपनों बेटा बैठारि दीयौ, और बाके चार्यों ओर जौ बखेर दिये, ऊपर ते नाँद औंधी मारि दियी और बाके चारों ओर ते कुम्हार ने अवा चिन दीयौ, जब अवा चिन गयौ, तौ कुम्हार ने आंच लगाइ दई। भगमान की ऐसी माया भई कै तीसरे दिनाई बांसन पक गये, कुम्हार बोल्यौ भाई जि कहा माया भई कै कहां तौ अवा तीसरे महीना में पकत्वो—और कहाँ अब तीसरे दिनाई पक गयौ, कुमार बांसन देखि देखि कें निकारिबे लग्यौ, बांसन बजाये तौ खूबु पके, कांसे की तरह बाजे, और अवाऊ और सोरौ है गयौ, कुम्हार ने बांसन निकारे, जब नाद दीखन लग गई तौ बु डोकरी कौ बेटा बोल्यौ भइया होलें-होलें कोई बांसनु फूट ना, कुम्हार बोल्यौ भइया ब्यामें तौ कोई ब्यार बलाए जब सब बासन निकरि लये तौ नाद उठाई, कहा देखें बा

डोकरी कौ बेटा पालती मारि बैठ्यौ यै, श्रौर बाके चारों लंग जौ हरे श्रौर बाके मूड़ मूड़ ठाड़ेएं। कुम्हार बड़े श्रचम्भे में, दोर्‌यौ दोर्‌यौ राजा के ढिंग गयौ श्रौर बोल्यौ महाराज श्रवा तीसरे ई दिना उतरि श्रायौ श्रौर बा डोकरी कौ बेटाऊ जीमतौ निकरौयै राजा नें बुडोकरी बुलाई श्रौर बाते पूछी मइया तैनें कुंसौ ऐसौ कामु कीयौऐ ज्याते तेरौ बेटा जीमतौ निकरि श्रायौ श्रबाऊ तीसरेई दिना पक गयौ, डोकरी बोली राजा साव मैंनें तो कोई ऐसौ कामु नांइ कीयौ, एकु जि कामु तौ कीयौ ऐ कै गनेश चौथि उपासी तौ जरूर रहीऊं, गनेश महाराजई मेरे तौ सहाई भये एं, राजा नें डोंढ़ी पिटवा ई कै भाई सब गनेश चौथि कूं उपासे रह्यौ करौ, श्रौर खूब उच्छिव मनायौ करौ—गनेश देव पर्वों बैबे बारे एं। बा दिना ते गाम के कहा ल्हौरौ कहा बारौ बूढ़ौ मर्द बइयर छुई छापरी सब गनेश बरत रहन लगे।

३७:२:१:१. (इ) कहानी सकट चौथि की

एक डोकरी कें एकु छोरा श्रो वु डोकरी बा छोरा के सोच में सूखती ई, जाती ज्यां गाम में बु रहं ती ई, बा गाम में कुम्हार कौ 'श्रवा' हरपोत एक श्रादमी की बलि लें तौं श्रो जब तीसरे महीना में जाइंके बांसन पकते ये। ज्याई सोच में बु डोकरी सूखि रही कै मेरेऊ बेटा कौ 'श्रोसरौ' श्राउ श्रायै। कहा करूं मेरे जिही एकु बेटा ए सकट चौथि के दिना डोकरी उपासी रही श्रौरु बाने खूब श्रच्छे माल पूरी पापरी सबु चीज बनाईं श्रौरु श्रपने बेटा ते बोली बेटा तू खूब पेटु भरि कें जें लें श्रौर जब भूक लगे जबई खा, बेटा कल्लि कौ तेरौ श्रवा कौ श्रौसरौ ऐ। ज्याई मारें मैंने सबु चीज करी ए कै तू मनखति मानि कें खाइ तऊ जाइगौ श्रौर में फिरि कौन कूं करिवे बैठुंगी। डोकरी ने खूब श्रच्छी तरियां लाड़ प्यार ते श्रपनो बेटा जिमायौ। जब दूसरौ दिना भयौ कुम्हार कौ डोकरी के न्यां श्रायौ श्रौरु बोल्यौ मइया भेजि कहांए तेरौ छोरा, हम श्रवा चढ़ामिंगे—जो जू छोरा ऊ श्राइ गयौ, डोकरी बोली चलि भइया में छोरा ऐ लेकें श्रामतूं—कुम्हारु चल दियौ डोकरी ने गणेश चौथि कौ बरतु ऊ न खोल्यौ, गणेश जी कौ ध्यानु धरिकें श्रौरु छोराऐ लेकें बु कुम्हार के न्यां पोंहची श्रौरु श्रवा के बीच कें बाने श्रपनौ बेटा बैठारि दियौ श्रौरु बाके चार्‌यौ श्रोर जौ बखेर दिये, ऊपर ते नाद श्रोंधी मार दई श्रौर बाके चारों श्रोर ते कुम्हार ने श्रवा चिन दीयौ जब श्रवा चिन गयौ तौ कुम्हार ने श्रांच लगाइ दई भगमान की ऐसी माया भई कै तीसरे दिनाई बासन पक गए, कुम्हार बोल्यौ भाई जि कहा माया भई कै कहां तौ श्रवा तीसरे महीना में पकत्तो श्रौरु कहां श्रब तीसरे दिनाई पक गयौ, कुमार बासन देखि-देखि कें निकारि बे लग्यो, बांसन बजाये तौ खूबे पके कासे की तरह बानें श्रौरु श्रवाऊ सीरौ है गयौ, कुम्हार ने बासन निकारे जब नांद दीखन लग गई तौ बु डोकरी कौ बेटा बोल्यौ भइया होंले-होंले कोई बांसन फूटै ना, कुम्हारु बोल्यौ भइया ज्यामें तौ कोई ब्यार बला ऐ जब सब बांसन निकारि लए तौ नाद उठाई कहा देखें बा डोकरी कौ बेटा पालती मारे बैठ्यौ ऐ श्रौर बाके चारों लंग जौ हरे श्रौर-श्रौर ब्याके मूंड़-मूंड़ ठाड़े हें। कुम्हारु बड़े श्रचम्भे में दोरयौ-दोरयौ राजा के ढिंग गयौ श्रौर बोल्यौ महाराज श्रवा तीसरे ई दिना उतरि श्रायौ श्रौर ब्वा डोकरी कौ बेटाऊ जीमतौ निकरौऐ—राजा ने बु डोकरी बुलाई श्रौर बाते पूछी मइया तैनें कुंसौ ऐसो कामु कीयौ ऐ ज्याते तेरौ बेटा जीमतौ निकरि श्रायौ श्रवाऊ तीसरेई दिना

पक गयौ, डोकरी बोली राजा साब मैंने तौ कोई ऐसौ कामु नाइं कयौ, एक जि कामु तौ कीयौ ऐ कै गणेश चौथि उपासी तौ जरूर रही ऊं गनेश महाराजयई मेरे तौ सहाई भये ऐ, राजा ने डोढ़ी पिटवाई कै भाई सब गनेश चौथि कूं उपासे रहह्यौ करौ, और खूब उच्छिव मनायौ करौ—गनेश देव सब पर्वों वंबे बारे ऐं। व्या दिना ते गाम के कहा ल्हौरो कहा बारौ बूढ़ौ मर्द बइयर छई छापरी सब गनेश बरत रहन लगे।

३७:२:१:१ (ई) सकट चौथि की कहानी

एक द्यौरानी और जिठानी ई, द्यौरानी कें भागुमानी ई, और जिठानी कँई कंगाली। जिठानी अपनी द्यौरानी कौ गोबर कूरौ डारिबौ करै, और व्याकौ मर्दु अपने ल्हौरे भइया कौ हल जोत्यौ करै, और जो कछू बे दें दें व्याई ते अपनी गुजर बसर करें, सकट चौथि कौ त्यौहार आयौ, तौ कोई तौ बरतु रही और कोई अपनों त्यौहार बिनाईं बरतें मनाय रहीं, बढ़िया बढ़िया पकमान बनायें और खूब आनन्दु उड़ामें—व्याकी जिठानीऊं उपासी रही, जो कछु द्यौरानी कैंते मिल्यौओ व्यानें करि कराइ कें अपने बाल बच्चे जिमाइ पिवाइ दीये, कछू विचारे-भिके और कछू अध भिके से अपनों सोइ साइ रहे, बुह बिचारी भूकी प्यासी सोइ रही, राति कूं सकट देवता आयौ और व्याते बोल्यौ, अरी हमतौ भूकेऐं बु बोली भूके औ तौ जो कछू मोपै हत्वो सो करि के में धरि दीयौऐ, सो तुम व्या में ते जें लेउ और पानी कहा ते पीऊं बु बोली पानी मेरे अंधौरे में चौका में धरौ है सो पीलेउ और में हंगू कहां चारयों कोने और पांचई देहरी परी तिहारे मन आवै जहां हंगि लेउ और गाँड़ि कहां पोंछू बु बोली मो अभागी के लिलार ते, बु चारों कौने और पाँचई देहरी में हंगि कें और व्याके लिलार ते पोंछिकें चल्यौ गयौ, भोंताई भये बु उठि उठि कें घर माऊ चाही तौ घर जगर मगर करै, चार्‌यों लंग सोनों चांदी निधा परै और व्याकौ माथौऊ दम दमावै, व्याकौ मरदु आयौ, अब तौ बे भरि भरि डला समेंटन लगे, द्वै डला भरे तौ चार बढ़े दीखें, दोऊ मर्द बइयर ढोइ रहे, ढोमत-ढोमत बिन्नें बलाइसौ दिन चढ़ि आयौ, देखि-देखि पेंड़ौ व्याकौ ल्हौरो भइया आयौ, और बोल्यौ आजु तौ भइया हर कूं बलाइ अबेर है गई, आजु कहा बातै, बड़ौ भइया बोल्यौ—भइया तुही देखिलै अब व्या काम पैते मोई सोफतौई नायें, अब तुही जोत्यौ करियौ। ल्हौरौ भइया खिस्यानों सौ जांतु रह्यौ नेंक पीछें व्याकी द्यौरानी आई, आइकें बोली—ए भैना आजु तौ तैनें बड़ी अबेर करी, सार बुसारन में गोगरु परयौ सर रहयौ है। जिठानी बोली भैना मोइ व्याकेई काम पै ते आजु सोफतौ नाएं अब तुही उठायौ करि, द्यौरानी बोली, ये ऐसी गरभाय गई, कहा पाइगयौ भैना तोइ, कौन की चोरी डांकौ डारियौं ऐ—जिठानी बोली ये भैना न तौ मैनें काऊ की चोरी करी और न मैंने डांकौ डार्‌यौ मोइतौ भगमान नें दीयौ—ये भैंना कैसे दीयौ ऐ—व्याने अपनों सबु किस्सा सुनायौ—द्यौरानी बोली भैना अब कब सकट चौथि आवै और कब में उपासी रहूँ। जैसे तैसे लै दे कें व्याने बरस बिना काढ्यौ और जब वुही सकट चौथि कौ बिना आयौ तौ व्यानें घर की खूबु सफाई करी लीप्यौ पोत्यौ घर आँगन में खूब चौका लगायौ, और कोरी कोरी जेहरि लायकें बढ़िया पानी भरयौ, फिरि खूब पूरी पापरी और सब सामानु बनायौ—बाल बच्चे खूब जिमाये, अब सांझ भई व्याकौ मालिक आयौ, बु बोली अपने मालिक ते कै तुम मोइ

मारौ, बु बोल्यौ जि पागल कहा कहूँत्यै, त्यौहार के त्यौहार अच्छे भले में क्लेश करै, अरे राँड तेरे काये बात कौ टोटौए लो तू ज्या ठठकरमें रोपि रहीऐ—बु बोली नाँइ तुम मोई मारौ, मरबु बोल्यौ ज्यों मदरौत्यै अच्छे भले में तोई पै चन्दुर चढ़यौ सो मरिबे डोलि रही यै—न मानी हट परि गई व्वायै आई रिस और व्वाने मारी लै तोइ मारूं सो कछू ईंट पत्थर डंडा हात परौ बुही मारौ मारि मूरि के बु तौ बाहर कूँ चल्यौ गयौ और बु पिटि कुटि कें भूकी प्यासीई सोइ रही, जब आधी राति कौ खनु भयौ तौ सकट देवता आये और व्वाते बोले कहा खाँऊँ बु बोली ये व्वाकें तौ खरिके में ते लाओ मेरे तौ डला भरे पूरी-पूआ धरएँ खूब खूब खा और हंगू कहाँ बु बोली ये व्वाकौ घर तौ बिल दूर सो परौ मेरौ तौ देखि कैसो लिप्यौ पुत्यौ परयौ ऐ—चारों कौन पाँचई देहरी तेरे मन आयें जाँ हंगि और पोंछू कहाँ बु बोली ये मोवड़ भागिन के माथे ते सकट देवता चारों कौन पाँचई देहरी हंगि वगधौ—और व्वाके माथे ते पोंछि के चलौ गयौ—थोंतायें भयें बु उठी तो व्वाके घर में चारों लंग मैलोई मैलौ परौ और माखी भिन भिनाय रहीं अब तौ बु व्वा दिल घर डारे हैं डला भरै और चारि डला है जाय व्वाकौ मदुँ आयौ और बोल्यौ डारयौ करि तू ज्याई ऐ चांहती नहीं हमारें टोटौ कहा ओ—बु बोली ये सकट देवता पनमेसुरे अब तौ तू ज्या दिलद्दरै दूरि करि, सकट देवता बोले दिलद्दर जब दूरि करिंगो जब अपने धन में ते आधौ धन और खेत में ते खेत और नाज में ते नाज अपने बड़े भइया कूँ बाटि देगौ बु मदुं बोल्यौ भइया बाँटि दुँगो—परि दिलद्दर दूरि करि—सकट देवता ने दिलद्दर दूरि करौ—और बड़े भइया कूं सब में ते आधौ-आधौ बाँटि दीयौ।

३७:२:१:१. (उ) सकट चौथ की कहानी

माह लगा सो सकट आया। घर में मा बेटा दो ही थे। बुढ़िया तो घर की मजूरी करती, बेटा राजा के ढोर चराता। सकट के दिन बुढ़िया कहानी कह पूरी-पूआ लायी, तिलकुट लायी। माँ-बेटों ने खूब खाया, बचा हुआ नाँद के नीचे दाब कर रख दिया। आधी रात हुई, सकट देवता बूढ़े का भेस धर के आये, और लगे चिल्लाने—भूखा-भूखा। बुढ़िया ने उसे रखा हुआ सब खवा दिया, फिर भी भूखा ही रहा तो उसने बिनौले रांध कर खवा दिये। खाकर उसके पेट में दर्द उठा। बोला—बुढ़िया में पाखाने आऊंगा। बुढ़िया ने उसे घर भर बता दिया। बोला—टट्टी कहाँ पौंछूँ सब जगह तो भर गई। बोली—मेरे लिलार से। सो बुढ़िया के लिलार से पोंछ दी। सुबह को उठी तो क्या देखा चारों कौने और पांचवी देहली जगर-मगर हो रहे हैं, हर जगह लक्ष्मीजी का प्रकास है। बुढ़िया के माथे पर हीरा और लाल लटकने लगे। धन को रखते सम्हालते बेटा को देर हो गई। राजा के नौकर उसे बुलाने आये। उसने जवाब दिया कि कह देना मुझे सकट देवता ने बहुत धन दिया है, मुझे तुम्हारी नौकरी की परवा नहीं। नौकरों ने ऐसे ही कह दिया। राजा बोला, भाई, तुम्हारे भी सकट हुआ है, क्या तुम्हें भी धन मिला है? वे बोले हमें तो न मिला। कहा—अच्छा उसे पकड़ लाओ यहाँ से चुरा के ले गया है। आदमी पकड़ लाए। राजा ने पूछा। उसने कह दिया कि हाँ मझे सकट ने धन दिया है। राजा ने उसे खूनी हाथी के नीचे डलवा

दिया। वह मन में सकट देवता का ध्यान करता जाता हाथी सूँघ-सांघ कर अलग हो गया। राजा पर खबर गयी कि उसे हाथी ने नहीं मारा। कहा—अच्छा उसे सूली पर चढ़ाओ सूली जो लगाई तो तख्ता टेढ़ा हो गया। वह सूली से भी बचा फिर राजा ने हुक्म दिया कि इसे कुम्हार के अवा में चिनवाओ। चिनवा दिया उसने क्या काम किया कि अपने चारों ओर तो जौ बो लिये बीच में बैठ कर भजन करने लगा और वार तो अवा पाँच छः दिन में उतरते थे अबके तीसरे दिन ही उतर आया। कुम्हारी अपने बर्तन उतारने चली। वह भीतर से बोला—अरी धीरे-धीरे उतारियो। कुम्हारी न जाकर राजा से कहा। राजा बोला उसका सकट देवता सच्चा है उसे अपनी ओर से इनाम दिया और उसकी माँ को बुलवा भेजा। माँ आयी और गाजे-बाजे में खुशी घर ले गयी। जैसा इसे सकट आया परमात्मा करे सबको आवे।

३७.२.२. सकट का संस्कृत रूप संकष्ट है। सकट गुंसाई या संकष्ट गुसाई कोई और नहीं गणेश जी ही हैं। गणेश चतुर्थी को इस रूप में गणेश का पूजन करने की एक लोक-विधि प्रचलित हो गयी है। इसके संबंध में 'स्कंद पुराण' में यह विधान और कथा दी गयी है :—

३७.२.२. (अ) अब कार्तिक कृष्ण चतुर्थी व्रत को लिखते हैं। पार्वतीजी पूछने लगीं हे लंबोदर! हे महाभाग! हे कहने वालों में श्रेष्ठ! कार्तिक मास कृष्णपक्ष की चतुर्थी को गणेशजी की पूजा किस प्रकार करनी चाहिये सो कहो। कृष्णजी कहने लगे कि, माता के बचनों को सुनकर गणेशजी बोले कि, कार्तिक मास के कृष्ण पक्ष की जो संकष्टा चतुर्थी होती है। उसमें पिंगनाम वाले गणेशजी की पूजा करनी चाहिये और पूर्वोक्त विधान से एक भोजन करें। ब्राह्मणों को भोजन कराने के पश्चात् नियम पूर्वक अपने आप भोजन करे, इस व्रत के माहात्म्य को आदर पूर्वक सुनो मैं कहता हूँ। कार्तिक मास के कृष्णपक्ष की चतुर्थी को उत्तम संकट व्रत होता है, उस दिन उड़द घृत द्वारा हवन करने से मनुष्यों को सर्व सिद्धियों की प्राप्ति होती है। गणेशजी कहने लगे, जब वृत्रासुर महादैत्य महान् वृद्धि को प्राप्त हुआ उस बली ने त्रिलोकी को जीत कर सब देवता पराजित किये। देवता स्थान से भ्रष्ट हुए कातर होकर सब दिशाओं में फिरे इंद्र सहित सब देवता विष्णु भगवान् की शरण में आये। उनके कथन को सुनकर विष्णु भगवान् बोले कि ये दुर्मद दैत्य समुद्र के द्वारा अभय को प्राप्त हुए प्रबल हो रहे हैं। और देवता के हाथ से हम न मारे जायें इस प्रकार का वर ब्रह्मा जी से प्राप्त किया है, किंतु अगस्त्यमुनि समुद्र को पीकर सुखा देंगे। तब सुख पूर्वक तुम्हारे पिता ब्रह्माजी के पास स्वर्ग में आ जायगा, इस कारण अगस्त्यमुनि की सहायता से तुम्हारा कार्य होगा। यह सुनकर अगस्त्य के आश्रम में जाकर मुनि की स्तुति करने लगे तब अगस्त्य जी प्रसन्न होकर देवताओं से बोले कि, निश्चय तुम मत डरो। इसके उपरान्त देवता तो स्वर्ग को गये और अगस्त्य जी समुद्र के सुखाने की चिंता करने लगे। लाख योजन के विस्तार वाले समुद्र को किस प्रकार पिऊँ। उस समय गणेशजी का स्मरण करके महामुनि अगस्त्यजी सम्यक्विधि से संकष्ट चतुर्थी का व्रत आचरण करने लगे। तीन महीने में गणेशजी मुनि के ऊपर प्रसन्न हो गये, और उस व्रत के प्रभाव

से अगस्त्य मुनि ने सुख पूर्वक समुद्र को पी लिया। इस व्रत के प्रभाव से ही अर्जुन ने निवात कवच आदि से सम्पूर्ण शत्रुओं को जीता। इस प्रकार गणेशजी के वचन को सुनकर पार्वतीजी बोलीं कि, मेरा पुत्र गणेश संसार में पूजने योग्य और सर्व सिद्धियों का देने वाला है। श्रीकृष्ण युधिष्ठिर से कहते हैं कि, हे राजेंद्र ! तुम भी इस व्रत का आचरण करो संपूर्ण शत्रु समूह को जीत लोगे और राज्य की प्राप्ति भी शीघ्र ही होगी। इस कथा सुनने मात्र से हजार (१०००) अश्वमेध यज्ञ और (१००) वाजपेय यज्ञ करने का फल होता है और पुत्र पौत्र आदिको की वृद्धि होती है।

३७:२:२. (आ) किन्तु यह स्पष्ट है कि लोक-प्रचलित कहानी इस स्कंद पुराण की कहानी से बिल्कुल भिन्न है। पर फाल्गुन मास में गणेश चतुर्थी की जो कथा स्कंद पुराण में दी गयी है वह ब्रज की एक प्रमुख लोककथा से मिलती है—वह कथा इस प्रकार है:—

सतयुग में युवनाश्व राजा हुआ वह धर्मात्मा और देव ब्राह्मणों का पूजक था। उसके राज्य में वेद शास्त्र के तत्व का ज्ञाता और धर्मशास्त्र के अर्थ जानने वाले एक विष्णुशर्मा महा तपस्वी ब्राह्मण था। धन धान्य से संपन्न उसके सात पुत्र हुए, आपस में क्रोध के कारण उसके सातों पुत्र पृथक पृथक हो गये। उनका पिता क्रम से एक-एक दिन उनके यहाँ भोजन कर लेता। इस प्रकार बहुत दिन बीतने पर वह वृद्ध और निर्बल हुआ। तब उसकी पुत्रवधू जैसा कि, पहिले आदर करती थी वैसा आदर नहीं करती हुई। वह वृद्ध दुःख से घबड़ा कर रोने लगा। एक समय विष्णुशर्मा श्रद्धापूर्वक संकष्टनाशन चतुर्थी के व्रत को करने की इच्छा करता हुआ और बड़ी पुत्रवधू के घर गया। विष्णुशर्मा बोला। हे पुत्रवधू ! मेरे इस व्रत की सामग्री संपादन करो इस व्रत के करने से प्रसन्न हुए गणेश जी बहुत धन देते हैं। इस प्रकार ब्राह्मण के कहने पर पुत्रवधू निष्ठुर वचन बोली। हे तात ! घर के काम धन्धे के कारण मुझे अवकाश नहीं है। हे तात ! तुम चेटक, नाटक करते हो, व्रत को नहीं जानती, कौन गणेश है, तुम यहाँ से चलो जाओ। इस प्रकार तिरस्कृत हुआ ब्राह्मण छहों पुत्रों के घर गया, उन छहों बहुओं करके तिरस्कृत हुआ निर्बल और क्लेशित होकर छोटी पुत्रवधू के घर में जाकर बैठ गया, उसको अति दीन और दरिद्र समझकर बोला। ब्राह्मण बोला। हे पुत्रवधू ! पुत्र और पुत्रवधुओं करके तिरस्कृत बूढा मैं कहाँ जाऊँ तेरे घर में अपने व्रत के निमित्त कुछ धन नहीं देखता हूँ। हे कल्याणी ! मैं बारम्बार विचारता हूँ कि, इस व्रत के करने से सिद्धि होगी, इस प्रकार ब्राह्मण के वचन को सुनकर छोटी पुत्रवधू आदर पूर्वक बोली। हे तात ! किस लिये दुःखी होते हो ? तुम इच्छा पूर्वक व्रत करो, मैं सदा भक्ति पूर्वक संकष्टनाशक व्रत का आचरण करूँगी। गणेशजी की कृपा से शीघ्र सिद्धि होगी, इस प्रकार कहकर वह पुत्रवधू ग्राम में भिक्षा माँग कर घर में आई। अपने और श्वसुर के निमित्त पृथक् पृथक् मोदक बनाये। चन्दन, पुष्प, दूर्वा, सुन्दर अक्षत, फल, धूप, दीप और नैवेद्य, ताम्बूल इनसे पृथक्-पृथक् श्वशुर के साथ गणेशजी की पूजा करके और श्वशुर को प्रीतिपूर्वक भोजन कराकर वह शोभना भोजन के अभाव से उस दिन निराहार रही। आधी रात के समय उसका श्वशुर बारम्बार वमन (कै) करने लगा, हे देवी !

पुरीष (विष्ठा) भी की, उसकी पुत्रवधू ने यह देखा तब जल लेकर हाथ पैर धुवाये और शय्यापर बैठाय पीछे वह सोच करने लगी कि, मेरे मंदभाग्य से तुम्हारी ऐसी दशा क्यों होगई। क्या करूँ, कहाँ जाऊ? हे तात! सो मुझसे शीघ्र कहो, इस प्रकार वह पुत्रवधू रात्रि में विलाप करने लगी, तब तक सूर्य का उदय होगया। तब वहाँ उस साध्वी ने बड़ी काँतिवाले रत्न, हीरा, मणि और मोतियों के ढेर को देखा, विष्ठा, वमन आदि को नहीं देखा। वह साध्वी बड़े आश्चर्यपूर्वक भ्रम में होकर श्वशुर से बोली और विस्मित होकर दिखाने लगी कि, यह क्या है और यह किसकी संपत्ति है। मेरे घर में मणि, मूँगा संबंधि धन साक्षात् किसका है? हे श्वशुर! यह किसका धन आगया अथवा कोई इस समय फेंकर चला गया? इस प्रकार उसके वचन को सुनकर वृद्ध ब्राह्मण बोला। हे भद्रे! तेरी श्रद्धा का फल है कि, गणेशजी प्रसन्न होगये। इस व्रत के प्रभाव से तेरे घर में संपत्ति प्रगट हुई है, वधू बोली। हे श्वशुर! तुम धन्य हो, तुम्हारी कृपा से ही गणेशजी प्रसन्न हुए हैं। मेरे दारिद्र का नाश हुआ और मेरे घर में संपत्ति आई, तुम्हारी कृपा से ही मैं भी धन्य हूँ, इस प्रकार उसने अपने श्वशुर से कहा। तब वे छहों पुत्रों पुत्रों की स्त्रियें उस छोटी बहू को देख कर क्रोध करने लगीं, भय से घबड़ा कर विष्णुशर्मा उन सबसे कहने लगा। वह मेरा दोष नहीं है, न मैंने विषमता की है, किन्तु इसके व्रत के प्रभाव से गणेशजी प्रसन्न हो गये हैं। जैसे पूर्व में कुबेर के पास संपत्ति थी, वैसे ही अब इसको मिली है, तुम छहों पुत्रवधुओं से तिरस्कृत हुआ निर्बल ब्राह्मण मैं पीछे से छोटी पुत्रवधू के घर में गया। गणेशजी कहने लगे। हे गिरिजे! तब उसके छहों पुत्र दारिद्र और व्याधि से पीड़ित हो गये, और एक (छोटा) पुत्र इन के समान धनवान् हुआ। फिर परस्पर ईर्षा से वे पुत्र भी गणेशजी का व्रत करने लगे, उस व्रत के प्रभाव से सब धनवान् हुए। और भी जो पुरुष विधि पूर्वक गणेशजी का व्रत करते हैं उनके घर में गणेशजी की कृपा से धन धान्य की प्राप्ति होती है।

३७:२:३ (इ) ऊपर जो एक और लोक प्रचलित अनुष्ठान की सकट चौथ की 'अवे में जीवित रहने वाले बालक' की कहानी दी गयी है उसका भी एक पौराणिक रूप मिलता है। यह माघ मास की कहानी पुराणानुसार है और यों है:—

पार्वतीजी पूछने लगी। हे सुत! माघमास में कौन से गणेश जी की पूजा करनी और उस दिन क्या भोजन करना, क्या नाम है क्या नैवेद्य है? उसको विशेष रूप से कहो। श्रीगणेशजी पार्वती के प्रति कहने लगे माघ मास में भालचन्द्र नामक गणेशजी की पूजा करै श्रद्धा पूर्वक षोडश उपचारों से गणेशजी को पूजे। हे मातः हे पार्वती! तिल के दश लड्डू बनावै पाँच गणेशजी के आगे रक्खै और पाँच ब्राह्मण को दे। भक्ति भाव से देवता की बुद्धि से ब्राह्मण की पूजा करके यथाशक्ति दक्षिणा समेत मोदक दे। हे देवि! दश मोदकों को भक्ति पूर्वक स्वयं खावै, इस विषय में राजा हरिश्चन्द्र का इतिहास कहते हैं। पहिले त्रेतायुग में हरिश्चन्द्र नामक प्रतापी राजा था क्षत्रिय धर्म में तत्पर और साधु सत्यवादी तथा ब्राह्मणों का पूजक था। हे देवि! उसके राज्य में कहीं अधर्म नहीं होता था, कोई अंगहीन वा दरिद्री न था। कहीं व्याधि का भय नहीं था, न मनुष्यों की अल्पायु होती थी, उनके राज्य में एक ऋष्यशर्मा नामक तपस्वी ब्राह्मण था। थोड़े समय में ही उसको पुत्र उत्पन्न हुआ, इसके उपरान्त ऋष्यशर्मा तो स्वर्गवासी हुआ और उसकी स्त्री

पुत्र की रक्षा करने लगी। वह महा दीन हुई भिक्षावृत्ति से पुत्र का पालन करती थी एक समय उस दरिद्र ने संकष्ट चतुर्थी का व्रत किया। गोबर के गणेश बनाकर सदा उनकी पूजा करती थी। हे पार्वती ! भिक्षा माँग कर तिल के दश मोदक विधान से बनाये, तब तक अपनी इच्छा से उसका पुत्र गणेशजी की मूर्ति को गले में बाँध कर खेलने के निमित्त बाहर निकल गया। पाँच वर्ष के उसके बालक को एक कुबुद्धि कुम्हार ने पकड़ कर पात्र पकने की इच्छा से आँवे में रखकर आग लगादी। विलाप करती हुई उसकी माता सब स्थानों में ढूँढती हुई कहीं भी पुत्र को न पाती हुई महादुःखी गणेशजी को पूजती हुई वह ब्राह्मणी विलाप करती हुई हे गणेश ! हे महाकाय ! हे अरुण सूर्य के समान काँतिवाले ! जटाओं के समूहों को धारण करने वाले ! हे सुभग ! पुत्र के दुःख से दुःखी हुई मेरी रक्षा करो। हे गजानन ! हे चतुर्बाहो। हे भालचन्द्र ! हे विनायक ! हे अनाथों के स्वामी ! हे वर के दाता ! मुझ दुःखिया को पुत्र दो। इस प्रकार उस सती ने आधी रात तक विलाप किया, इसके उपरान्त प्रातःकाल पात्र पकने की इच्छा से कुम्हार आँवे को खोलने लगा उस आँवे में जंघापर्यन्त जल में डूबे हुए और क्रीड़ा करते हुए उसी अद्भुत बालक को देखा। देखकर काँपने लगा और शीघ्र ही राजा के भवन में पहुँचा वहाँ जाकर राजा के सामने सब किया हुआ वृतान्त सुनाया। कुलाल (कुम्हार) बोला हे हरिश्चन्द्र ! हे महाबाहो ! हे जलती हुई अग्नि के समान कान्ति वाले ! जिससे मैंने ऐसा कर्म किया इसलिये मैं निश्चय वध करने योग्य हूँ। हे राजन् ! कन्या के विवाह के निमित्त में बारम्बार पात्रों को पकाता था किन्तु वे किसी प्रकार भीं नहीं पकते थे। तब भयभीत हुए मैंने चेटक और मंत्र जानने वाले एक पुरुष से पूछा, उसने मुझसे कहा कि, तू एकान्त में अर्थात् किसी दूसरे के बिना जाने बालक को बलि दे। तब मैं चिन्ता करने लगा कि ; किसके बालक की बलि दूँगा वह मुझे शीघ्र ही मार डालेगा। हे महाराज ! इस भय से इस बिधवा (राँड) स्त्री के बालक की बलि दूँगा तो मेरे सब पात्र पक जायँगे पात्रों का समूह कर उसमें बालक को बिठाकर निश्चय अग्नि दूँगा। इस प्रकार अपनी स्त्री से कहा कि, ऋष्यशर्मा तो मर गया है उसकी विधवा स्त्री नित्य भिक्षा वृत्ति से जीती है। हे बाले ! वह हमारा क्या करेगी उसका यह बालक हम मार देंगे तो हमारे सब पात्र पक जायँगे और हमारा कार्य भी सिद्ध हो जायगा। इस प्रकार रात्रि में सुख पूर्वक सोकर प्रातःकाल पात्रों को देखने की इच्छा से वहाँ गया और आँवे को जब तक खोला तब तक शीघ्र ही जैसे उस बालक को रक्खा था वैसे ही निर्भय हुआ बैठा है इस प्रकार उसको देखकर काँपता हुआ और भ्रम को प्राप्त हुआ मैं यहाँ आपके सम्मुख आया हूँ। इस प्रकार उस कुलाल के वचन को सुनकर राजा को बड़ा आश्चर्य हुआ और जहाँ वह बालक खेल रहा था. राजा शीघ्र ही वहाँ आया। इस प्रकार से बालक को देखकर राजा मंत्री से बोला यह क्या है और बालक किसका है ? तुम इसका निश्चय करो। कमलों से शोभित जंघापर्यन्त जल कहाँ से आया, वैदूर्यमणि के समान हरी दूर्वा इस दरिद्री को कहाँ से आई ? दाह, क्षुधा, प्यास इसको कुछ भी बाधा नहीं देती जैसे कोई घर में निर्भय हो इस प्रकार यह बालक खेल रहा है। इस प्रकार राजा कह ही रहे थे कि ब्राह्मणी आगई, गौ अपने बछड़े को देखकर जैसे रँभाती है इस प्रकार पुकारती हुई अपने बालक को देखकर और उठाकर चिपटाकर चुम्बन करने लगी काँपती हुई और

रुदन करती हुई वह ब्राह्मणी राजा के आगे बैठ गई। हरिश्चन्द्र कहने लगे। हे विप्रपत्नि तुम्हारे बालक को अग्नि ने भस्म क्यों नहीं किया, क्या कुछ चेटक जानती है अथवा तैंने कोई धर्म किया है ? ब्राह्मणी बोली। न चेटक जानती हूँ न धर्म किया है और न कोई तप किया है न योग है न दान है और न विधान है न वलि है। केवल एक संकष्टनाशन व्रत का आचरण करती हूं। हे राजेन्द्र ! उसी के प्रभाव से मेरा पुत्र कुशल पूर्वक है। इस प्रकार उस ब्राह्मणी के वचन को सुन कर फिर राजा बोले कि, मेरी सब प्रजा इस व्रत का आचरण करै यह मेरा संमत है।

३७:२:२:१. वस्तुत: गणेशजी के संकष्ट चतुर्थी व्रत की प्रत्येक महिने की कहानी पुराणानुसार मिलती है। ऊपर जो कहानियाँ हमने दी हैं वे उन्हीं में से हैं। ये कहानियाँ 'श्रीगणनायक व्रत कथा भाषा' से ली गयी हैं। ये कथाएँ श्री बाबू राम शर्मा ने भाषा टीका सहित दी हैं और श्री वेंकटेश्वर प्रेस से मुद्रित हुई हैं।

३७:२:२:२. पुराणों से ली गयी ऊपर की कहानियों से यह स्पष्ट हो जाता है। ये सब कहानियाँ सामान्य लोकों से संबंधित वस्तुत: लोक-कहानियाँ हैं जिन्हें पौराणिक भूमिका के साथ ग्रहण कर लिया गया है।

३७:२:२:३: शकट व्रत का माहात्म्य

श्रीकृष्ण कहते हैं कि हे महाराज यह जो हमने अति गंभीर नरक समुद्र वर्णन किया यह व्रत उपवास रूप नौका से तरा जाता है अति दुर्लभ मनुष्य जन्म पाकर ऐसा कर्म करे जिससे पश्चात्ताप न करना पड़े जिसकी यहाँ व्रत उपवास आदि की कीर्ति बनी है वह परलोक में सुख भोगता है व्रत करने वाले पुरुष सदा सुखी होते हैं इसलिये व्रत अवश्य करने चाहिये। इसमें एक प्राचीन इतिहास हम वर्णन करते हैं योग सिद्ध करके संसिद्ध कोई एक सिद्ध अति भयंकर विकृत रूप धार भूमि पर विचरता था कि जिसके लम्बे ओष्ठ टूटे दाँत पिंगल नेत्र चपटे कान फटा मुख लम्बा पेट टेढ़े पैर और भी संपूर्ण अंग कुरूप थे उसको मूलजालिक नाम ब्राह्मण ने देखा और पूछा कि आप स्वर्ग से कब आये औ किस प्रयोजन से यहाँ आगमन भया आपने देवताओं के चित्त को मोहन करनेहारी और स्वर्ग के भूषण रम्भा को देखा कि नहीं अब आप स्वर्ग में जायँ तो रम्भा से कहना कि अवन्तिपुरी का निवासी ब्राह्मण तुमको कुशल पूछता था यह ब्राह्मण का वचन सुन सिद्ध ने चकित हो पूछा कि हे ब्राह्मण तुमने हमको क्योंकर पहिचाना तब ब्राह्मण ने कहा कि महाराज कुरूप पुरुषों का एक दो अंग विकृत होता है औ आपके सब अंग टेढ़े औ विकृत हैं इसी से मैंने अनुमान किया कि ये अपना रूप गुप्त किये कोई स्वर्ग के निवासी सिद्ध हैं यह ब्राह्मण का वचन सुनते ही सिद्ध वहाँ से अन्तर्द्धानभया औ कई दिनों के अनतर फिर ब्राह्मण के समीप आया औ उससे कहा कि हे ब्राह्मण हम स्वर्ग में गये और इन्द्र की सभा में सब नृत्य हो चुका उसके अनन्तर एकाँत में रंभा से तुम्हारा संदेश कहा परन्तु रंभा ने यह कहा कि मैं उस ब्राह्मण को नहीं जानती यहाँ तो उसी का नाम जानते हैं जो निर्मल बिद्या पौरुषदान तप यश अथवा व्रत आदि करके युक्त होय औ उसका नाम स्वर्ग भर में चिरकाल स्थिर रहता है यह सिद्ध के मुखसे रंभा का बचन सुन ब्राह्मण ने कहा कि हम शकट व्रत

नियम से करते हैं। आप रंभा से कह दीजिये यह सुनते ही फिर सिद्ध अंतर्द्धान भया औ स्वर्ग में जाकर रंभा से ब्राह्मण का संदेश कहा औ उसके गुण वर्णन किये तब रंभा प्रसन्न होकर कहने लगी कि हे सिद्ध महाकाल बनके निवासी उस शकट ब्रह्मचारी को मैं जानती हूँ दर्शन से संभाषण से एकत्र निवास से औ उपकार करने से मनुष्यों का परस्पर स्नेह होता है परन्तु मुझे उस ब्राह्मण का दर्शन संभाषण आदि एक भी नहीं हुआ केवल नाम श्रवण से ही इतना स्नेह हो गया है इतना सिद्ध से कह इन्द्र के समीप जाय रंभा ने ब्राह्मण के व्रत आदि का करना औ अपने ऊपर अनुरक्त होना वर्णन किया इन्द्र ने भी प्रसन्न हो रंभा से पूछ उत्तम बिमान में बैठाय दिव्य वस्त्र भूषण आदि से अलंकृत कर उस ब्राह्मण को स्वर्ग में बुलाया औ बड़ा सत्कार ब्राह्मण का करके रम्भा को उसके आधीन कर दिया वह ब्राह्मण भी अपनी प्रिया रम्भा को पाय चिरकाल दिव्य भोग भोगता भया। यह शकट व्रत का माहात्म्य हमने संक्षेप से वर्णन किया है। राज्य लक्ष्मी उत्तम लोक मनोवांछित फल आदि कोई पदार्थ जगत में दृढ़ व्रत पुरुष के लिये दुर्लभ नहीं हैं इसलिये सदा व्रत में तत्पर रहना चाहिए।

३७:३: बूढ़ा बाबू

किसी-किसी के मतानुसार बूढ़ा बाबू या पितामह माघ शुक्ला द्वितीया को मनाते हैं। यह ब्रह्मदेव के पूजन का दिन माना जाता है। किन्तु जिस क्षेत्र का सर्वेक्षण हमने किया है, उसमें इस दौज का पता नहीं चला।

३७:३:१. हाँ, विवाह के अवसर पर इधर 'अछूते' का जो अनुष्ठान होता है, उसे बूढ़े बाबू की पूजा कहा जाता है। यह पूजा विवाह के अवसर पर ही होती है, उसे स्पष्ट करने के लिए, यह 'ब्रज साहित्य के अध्ययन' से यहाँ उद्धृत किया जाता है।

३७:३:१:१ बूढ़ा बाबू—माढ़वे के दिन होता है।[१] सब कुटुम्बी पहले अछूते का सामान खाते हैं, बाद में और सामान खाते हैं।

१—सामग्री

- क—कढ़ी
- ख—बाजरा
- ग—चाबल
- घ—उर्द की दाल की चँदियाँ
- ङ—नेवज
  - १—छल्ला
  - २—गुँझिया
  - ३—पूजा
  - ४—लढिया

१—फिर तेल चढ़ता है।

२—तेल चढ़कर बरना या बरनी दई-देवताओं के पास जाता है। मौंज माँच कर।

४—घी का एक छापा बरना रखता है। दो मुठिया रखता है।

५—एक दीवला में एक हरदी की गाँठ, एक टका रखा जाता है। उर्द की पिठी से उसे बूढ़े बाबू के नाम पर चिपका दिया जाता है।

६—कुम्हरिया बुलाई जाती है। वह एक हँडिया और परिया लाती है।

चून का चौमुखा दीपक जलाकर कुम्हरिया को दे देते हैं और एक खीकरी भी।

८—फिर कुम्हरिया से पढ़ने को कहा जाता है। वह पढ़ती है।

सौने को आसन, सौने को सिंहासन
जापै बैठे बूढ़े बाबू घोड़ा पलान
ताँबे कौ आसन, ताँबे कौ सिंहासन
जापै बैठे बूढ़े बाबू घोड़ा पलान
चाँदी को आसनु
चाँदी कौ सिंहासनु
जामें बैठे बूढ़े बाबू
घोड़ा पलान

कुम्हरिया—बैरी मूंदूं ?
कजैतिन—मूंदि।
कुम्हरिया—बैरी मूंदूं ?
कजैतिन—मूंदि।
कुम्हरिया—बैरी मूंदूं ?
कजैतिन—मूंदि।

झट खीकरी से वह दीपक को मूंद देती है।

९—जिस हंडिया को वह लाती है उसे कढ़ी बाजरे आदि से भर देते हैं। इसे बूढ़े बाबू का भंडारा कहते हैं।

३७:३:१:२ इस अवसर पर एक गीत भी गाया जाता है जो यह है :—

बूढ़े बाबू का गीत—
न्यों मति जाने रे स्वामी अन्नु अछूतो
अन्नु सुरेहरी बिढ़ारिये।
न्यौं मति जानै रे स्वामी पानी अछूतो
पानी कीरनु बिढ़ारियै।
न्यौं मति जानै रे स्वामी धीअ अछूती,
धीअ बिढ़ारी साजन के बेटा।
न्यौं मति जाने स्वामी बहू ऐ अछूती।
बहू बिढ़ारी अपनेऊ बेटा।

---

१. वह अछूता कहीं-कहीं विवाह के उपरान्त (और कहीं-कहीं द्विरागमन के उपरान्त) होता है। अछूता हो जाने के पश्चात् ही 'सुहाग रात' होती है। इस अवसर पर स्त्रियाँ जो गीत गाती हैं वह आगे दिया हुआ है।

न्यौं मति जानै स्वामी दूधु अछूतो
दूधे बिढारियौ गैयन के ऊ बछरा ।

३७.३.१.३. मथुरा जिले में बूढे बाबू का एक मंदिर भी है, यह तरौली में है। यहाँ भी एक भारी मेला लगता है ।

३७.४. **बसंत पंचमी**—यह माघ शुक्ला पंचमी को होती है । यह किसी व्रतानुष्ठान का त्यौहार नहीं । यह आनन्दोत्सव का दिन है ।

३७.४.१.(अ) छोटी कुल्हियों में पीली सरसों के पुष्पों तथा गेंदों के स्तवक मालिनें घर घर में प्रातः काल ही पहुँचा देती हैं । इस प्रकार घर घर में बसंत पहुँच जाते हैं ।

(आ) बाल-बच्चे, बड़े-बूढे, स्त्रियाँ-पुरुष सभी पीतवस्त्र धारण करते हैं । आज पीले रंग का ही माहात्म्य है । भोजन में भी केसरिया चावलों को प्रमुखता दी जाती है ।

(इ) यह तिथि बड़े महत्व की मानी गयी है इस दिन बच्चों का विद्यारंभ संस्कार कराना, या यज्ञोपवीत संस्कार कराना बहुत शुभ माना जाता है । इस दिन असूझ विवाह भी हो जाते हैं । इस दिन से एक प्रकार से बसंत ऋतु आरंभ हुई मानी जाती है । कवि लोगों को बसंत ऋतु अत्यन्त प्रिय है । बसंत पर जितनी काव्य रचना हुई है, उतनी अन्य किसी ऋतु पर संभवतः नहीं हुई । इसी दिन होली के गीतों का गायन आरंभ होता है । इसी दिन के उत्सव को मदनोत्सव कहते हैं ।

फाल्गुन

३८. फाल्गुन या फागुन के महिने में ये व्रतानुष्ठान होते हैं :—

१—शिवरात्रि
२—फुलैरा दौज
३—रंगभरनी एकादशी
४—होली

३८.१. शिवरात्रि एक महत्वपूर्ण त्यौहार है । फाल्गुन कृष्ण चौदस को होता है ।

३८.१.१. भविष्य पुराण में शिव चतुर्दशी का विधान और फल दिया गया है । पर उसमें फाल्गुन का उल्लेख नहीं चतुर्दशी मात्र का उल्लेख है । इस चतुर्दशी का संबंध इस पुराण में अग्नि की पुन: प्रतिष्ठा से माना गया है । इसका सीधा संबंध शिव से नहीं बिठाया गया ।

३८.१.२. इसे ठीक-ठीक समझने के लिए भविष्य पुराण का उद्धरण विस्तारपूर्वक यहाँ दिया जाता है—

उतथ्यमुनि औ अंगिरामुनिकीकथा, शिवचतुर्दशीका विधान औ फल ।।

राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्ण चन्द्र पूर्व काल में जब अग्नि नष्ट हो गया औ देवताओं को अग्नि का काम पड़ा उस समय अग्नि का काम किस ने किया यह

आप वर्णन करें आप सब कुछ जानते हैं इसलिये पूछा है यह राजा का वचन सुन श्रीकृष्ण भगवान् बोले कि हे महाराज जब तारकासुर ने देवताओं को पराजित कर स्वर्ग से निकाल दिया उस समय सब देवता ब्रह्मा जी के समीप गये औ उनसे प्रार्थना करी कि महाराज तारकासुर ने हमको बहुत सताया है उसके नाश का कोई उपाय कल्पना कीजिये तब ब्रह्मा जी ने कहा कि हे देवताओ पार्वती औ शिव जी के वीर्य से उत्पन्न औ गंगा अग्नि कृत्तिका आदि करके बर्द्धित बालक इस दैत्य को मारैगा यह ब्रह्मा जी का वचन सुन देवता शिव जी के समीप गये औ प्रणाम कर सब वृत्तान्त सुनाया शिव जी ने भी बालक उत्पन्न करना अंगीकार कर देवताओं को विसर्जन किया औ आप मैथुन में प्रवृत्त भये इसमें एक हजार दिव्य वर्ष से भी अधिक काल बीत गया औ मैथुन समाप्त न भया तब देवताओं को बड़ा भय हुआ परस्पर विचार करने लगे कि शिव पार्वती से जो बालक उत्पन्न होगा वह तारकासुर का बध करैगा परन्तु अभी तो सुरत ही समाप्त नहीं होता बालक क्या जाने कब उत्पन्न होगा इसलिये इनके सुरत निवृत्ति का उपाय करना चाहिये यह सब देवताओं ने विचार कर अग्नि औ वायु को वहाँ भेजा अग्नि को पार्वती जी ने देखा औ लज्जित हो शिव जी को सूचन किया तब शिव जी ने कहा कि हे प्रिये अब हमारे वीर्य को अग्नि धारण करेगा यह शिवजी का वचन सुनते ही अग्नि वहाँ से अन्तर्द्धानभया तब देवता अग्नि को ढूंढ़ने लगे परन्तु स्वर्ग भूमि आकाश आदि में कहीं पता न लगा तब देवताओं ने कृमि कीट पतंग औ मण्डूकों को पूछा उनने अग्नि का मार्ग बताया इसलिये उनको अग्नि ने शाप दिया कि तुम्हारी मनुष्य बाणी जाती रहै फिर देवताओं ने हाथियों को पूछा हाथियों ने कहा कि अग्नि हमारे शरण में आया है यह सुनते ही हाथियों को अग्नि ने शाप दिया कि तुम्हारी जिह्वा उलटी हो जाय यह शाप दे अग्नि हाथियों के मुख से निकल चला गया तब देवताओं ने हाथियों को वर दिया कि अग्नि के शाप से तुम्हारी जिह्वा उलटी तो हो जायगी परन्तु संज्ञा औ चेष्टा करके सब कुछ कह सकोगे औ समझोगे इतना कह देवता आगे गये वहाँ जीवंजीव नामक पक्षी देखा उसको देवताओं ने अग्नि का पता पूछा परन्तु वह कुछ न बोला औ बारम्बार पूछने पर भी चुप रहा तब अग्नि ने प्रसन्न हो उसको वर दिया कि हे जीवंजीव मैं प्रसन्न होकर तुझको वर देता हूं कि जब तक तेरी इच्छा हो तब तक जीता रह औ मनुष्य के सामन तेरी वाणी होय औ जो तेरा मांस भक्षण करै वह भी अजर औ अमर हो जाय एक सौ बारह वर्ष के अनन्तर क्षण मात्र तू म्लान हुआ करैगा परन्तु मृत नहीं होगा यह वर जीवंजीव को देकर अग्नि वहाँ से चला औ बांस के बीच जाय छिपा देवता भी वहाँ पहुँचे औ बाँस से कहा कि उष्मा करके तेरा वर्ण कलुष हो रहा है इसलिये तेरे गर्भ में अग्नि है हे बंश तू हमको अग्नि बता दे हम तुझ को वर देते हैं कि जो गृहस्थी अथवा ब्रह्मचारी तेरी यष्टि धारण करैगा उसको पंचाग्नि तपने का फल प्राप्त होगा यह देवताओं से वर पाय बंश ने अग्नि को प्रकट कर दिया तब प्रसन्न हो देवताओं ने अग्नि से कहा कि तुम शिवजी का वीर्य धारण करो अग्नि ने देवताओं के कहे से शिव जी का वीर्य धारा परन्तु उसके तेज से दग्ध होने लगा तब जाकर वह बीर्य अग्नि ने गंगा में डाला गंगा भी दग्ध होने लगी तब अपने तट पर शर बन के बीच फेंक दिया वहाँ कुमार उत्पन्न भया जिसने तारकासुर को मारा इतनी कथा सुन राजा युधिष्ठिर ने पूछा कि हे श्रीकृष्णचन्द्र जितने

काल अग्नि गुप्त रहा उतने समय में अग्नि का काम किसने किया यह आप कथन करें तब श्री कृष्ण भगवान् कहने लगे कि हे महाराज उतथ्य मुनि औ अंगिरा मुनि का विद्या में औ तप में परस्पर बड़ा बिवाद हुआ उतथ्य कहें कि हम अधिक हैं औ अंगिरा कहै कि हम । इसका निश्चय करने के लिये दोनों ब्रह्मलोक में गये औ ब्रह्माजी से सब बृत्तान्त कहा तब ब्रह्मा जी ने उनसे कहा कि तुम जाकर सब देवता औ लोक पालोंको ले आओ तब सब के सम्मुख तुम्हारा बिवाद देख कर निश्चय कहेंगे यह ब्रह्माजी का बचन सुन दोनों मुनि गये औ देवता ऋषि गन्धर्ब किन्नर यक्ष राक्षस दैत्य दानव आदि सब को बुला लाये केवल सूर्य्यभगवान् नहीं आये तब ब्रह्माजी ने कहा कि सूर्य्य को भी किसी प्रकार से लाओ यह सुन उतथ्य मुनि सूर्य नारायण के समीप गये औ उनसे कहा कि आप शीघ्र हमारे साथ ब्रह्मलोक को चलें तब सूर्य्यभगवान् ने कहा कि हे उतथ्य मुनि हमारा चलना किस प्रकार हो सके जो हम तुम्हारे साथ जायें तो जगत् में अंधकार छा जाय इसलिये हम नहीं चल सकते यह सुनि उतथ्य मुनि वहाँ से चले आये औ ब्रह्माजी को सब वृत्तान्त सुनाया तब उनने अंगिरा मुनि से सूर्य्यभगवान् के लाने के लिये कहा अंगिरा मुनि ब्रह्माजी की आज्ञापाय सूर्य्यनारायण के समीप गये औ सब बात कही सूर्य्यनारायण ने वही उत्तर इनको दिया जो उतथ्य को दिया था तब अंगिरा ने कहा कि आप ब्रह्मलोक को जाइये हम आपके बदले यहाँ रहकर प्रकाश करेंगे यह सुन सूर्य्यनारायण ब्रह्मलोक को गये औ अंगिरा प्रचण्ड तेज से तपने लगे सूर्य्यभगवान् ने ब्रह्माजी से पूछा कि किस लिये हमको आप ने बुलाया है तब ब्रह्माजी ने कहा कि आप तो शीघ्र अपने स्थान पर जायें नहीं तो अंगिरामुनि सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को दग्ध कर डालेगा देखो गो-लोक दग्ध होकर कृष्ण वर्ण हो गया है शाकद्वीप जला जाता है इसलिये शीघ्र ही आप जायें यह सुनते ही सूर्य्यभगवान् उलटे अपने स्थान पर आये औ अंगिरा-मुनि को प्रशंसा कर विसर्जन किया तब अंगिरा देवताओं के समीप आये औ देवताओं से कहा कि हम तुम्हारा कौन कार्य करें तब देवताओं ने अंगिरामुनि की बड़ी स्तुति करी औ कहा कि जब तक हम अग्नि को ढूंढें तब तक आप अग्नि का काम दीजिये यह देवताओं का बचन सुन अंगिरामुनि अग्नि का काम देने लगे जब अग्नि आये तो देखा कि अंगिरामुनि अग्नि बन रहे हैं उनसे कहा कि हे मुनि हमारा स्थान छोड़ दो हम तुम्हारे ज्येष्ठ पुत्र बनेंगे औ और भी बहुत पुत्र तुम्हारे होंगे यह वर पाय अंगिरा ने अग्नि का स्थान छोड़ दिया अग्नि का अवतार वृहस्पति अंगिरा के ज्येष्ठ पुत्र भये औ सैकड़ों पुत्र पौत्र और भी अंगिरा मुनि के उत्पन्न भये अग्नि को अपना स्थान चतुर्दशी तिथि को प्राप्त भया इसलिये यह तिथि अग्नि को अति प्रिय है। स्वर्ग में देवता औ भूमि-पर मान्धाता मनु नहुष आदि बड़े-बड़े राजाओं ने इस तिथि को माना है जो पुरुष युद्ध में मारे जायें सर्प आदि काटने से मरें नदी पर्वत अग्नि विष आदि निमित्त से मरे हों औ जिनने आत्मघात किया हो उनका इस तिथि में श्रद्ध करना चाहिये जिससे वे सद-गति को प्राप्त होयं इस तिथि के ब्रत का हम विधान कहते हैं चतुर्दशी को उपवास करै औ गन्ध पुष्प धूप दीप नैवेद्य आदि से त्रिलोचन श्री सदा शिव का पूजन करै औ रात्रि को पंचगव्य अथवा लवण तेल रहित भोजन करै औ अग्नयेस्वाहा हव्यवाहायस्वाहा सोमायस्वाहा अंगिरसेस्वाहा । इन मन्त्रों से अष्टोत्तरशत कृष्ण तिलों का हवन करै दूसरे

दिन प्रभात ही स्नान कर पंचामृत से शिवजी को स्नान कराय भक्ति से पूजन करै औ पूर्वोक्त रीति से हवनकर हाथ जोड़ (नमोस्तुभूतपतयेनम) सूर्याग्निरूपिणे। पुत्रान्यच्छ-सुखंयच्छमोक्षंयच्छनमोस्तुते: यह मन्त्र पढ़ै पीछे आरती कर ब्राह्मण को भोजन कराय उनको दक्षिणा दे मौन से आप भी भोजन करै इस प्रकार एक वर्ष व्रत कर सुवर्ण की शिव प्रतिमा बनाय चाँदी के वृष पर चढ़ाय दो श्वेत वस्त्रों से आच्छादित कर ताम्र पात्र में स्थापन करै पीछे गन्ध श्वेत पुष्प धूप दीप नैवेद्य आदि से पूजन कर ब्राह्मण को देवै जो बन पड़ै तो इस व्रत को सदा ही करता रहै एक वर्ष जो इस व्रत को करै वह दीर्घ आयुष् भोगकर तीर्थ पर प्राण त्यागता है औ दिव्य विमानों में बैठ दिव्य नारियों करके सेवित स्वर्ग में जाय देवताओं के साथ विहार करता है वहाँ बहुत काल सुखभोग भूमि पर राजा होता है औ दाता यज्ञ करने हारा चतुर ब्राह्मण प्रिय पुत्र पौत्र औ उत्तम पत्नी करके युक्त होता है शुक्ल चतुर्दशी को जो मनुष्य भक्ति से शिव पूजन करैं उनको सब दुर्लभ पदार्थ भी प्राप्त होते हैं।

३८:१:३. किन्तु वस्तुतः शिवचतुर्दशी या शिवरात्रि के माहात्म्य की कथा पुराणों में लुब्धक व्याध की कथा है।

(अ) एक व्याध शिकार के लिए निकला, किन्तु उसके महाजन ने कर्ज न चुकाने के कारण उसे शिव मंदिर में बंद कर दिया। यह शिव चौदस का दिन था। शिकारी को बंधन में भूखों दिन भर पड़े रहना पड़ा। दिन भर पूजा करने वालों की 'शिव-शिव' की ध्वनि उसके कानों में पड़ती रही। भक्तों ने उसे भूखा-प्यासा बंधन में देख चंदा करके उसका कर्ज चुकाया और महाजन से उसे मोक्ष दिलायी।

(आ) शाम को मुक्त होकर वह भक्तों पर हँसता हुआ, और 'शिव-शिव' की नकल करता हुआ वह शिकार करने बन में चला गया, क्योंकि उसे अपने समस्त परिवार के पोषण के लिए माँस की आवश्यकता थी। बन में अँधेरा होगया पर शिकार न मिला। हार कर एक बेल के पेड़ पर चढ़ गया। भूखा प्यासा नींद तो आयी नहीं, वह बेल के पत्ते तोड़ कर नीचे डालने लगा। नीचे शिवलिंग था। उस पर बेल पत्र गिरते रहे, और नींद न आने के कारण वह शिव-शिव भी करता रहा।

प्रातःकाल होते ही प्रसन्न होकर शिव ने उसे दर्शन दिये, और वह मुक्त होगया। उसके समस्त पाप धुल गये। क्योंकि वह चौदस को भूखा भी रहा और रात्रि जागरण भी उसने किया तथा शिव लिंग पर बेल-पत्र भी चढ़ाये।

(इ) इस माहात्म्य कथा में एक अंश और जुड़ा मिलता है—वह यह है कि—

"जब वह पेड़ पर बैठा हुआ था एक हरिणी वहाँ आयी उसके पेट में बच्चा था। व्याध ने बाण मारना चाहा, पर वह हरिणी बोली—भयी व्याध, मेरे पेट में बच्चा है। उसका जन्म हो जाने पर मैं तुम्हारे पास आ जाऊँगी, तब तुम मुझे मार लेना।

उसने यह भी बताया कि वह पिछले जन्म में रंभा नाम की अप्सरा थी। वह एक दैत्य से प्रेम करने लगी। इस पर शिव ने रुष्ट हो उसे हरिणी हो जाने का शाप दिया। आज मेरी मुक्ति का भी दिन है, क्योंकि शिवजी ने यही दिन मुक्ति का बताया था। तुम थोड़ी देर ठहरो। व्याध रुक गया। हरिणी चली गयी।

एक दूसरी हरिणी आयी, वह ऋतुमती थी। उसने व्याध से कहा—मैं पति से मिलने के लिए तड़प रही हूँ, उससे ऋतुदान लेकर तुम्हारे पास आ जाऊँगी। तब तक रुको। व्याध रुक गया।

तब काला हरिण आया— उसने कहा कि मेरी पत्नी ऋतुमती है उसे ऋतुदान दे आने दो, जिससे मैं अपने पति-कर्तव्य से च्युत न हो जाऊँ, फिर तुम्हारे पास आ जाऊंगा। हरिण भी चला गया।

भूखा प्यासा व्याध घर गया। घर के सभी प्राणी भूखे प्यासे थे। वह क्या करता। तब तक वह काला हरिण समस्त परिवार के साथ व्याध के पास पहुँचा—बोला —व्याध मैं आ गया हूँ, अब तुम मुझे मारकर कुटुम्ब का पालन करो, हरिणियाँ कहने लगीं कि पहले हमें मारिये हरिण को बाद में। व्याध यह देखकर बहुत लज्जित हुआ। उसने हिंसा न करने का प्रण किया। तभी भगवान शिव प्रकट हुए, और सबको मुक्त किया। यह सब शिव चतुर्दशी के व्रत के प्रताप से हुआ।

३८:१:४. किन्तु व्रज में 'शिव चौदस' की व्रत-कथा भी मिलती है। वह अद्भुत है और इस प्रकार है :—

शिव चौदश के व्रत की कथा

एक दिनाँ महादेव पारवती जी आपस में बात कर रहे। सो महादेव बोले ह पारवती जी कल तो तेरे गाँव चलेंगे। दूसरे दिनाँ महादेव पारवती ससुराल गये। इनके सासु सुसर गरीब ए। शिवजी के लें पारवती जी की माता कऊँ ते चावल शक्कर लै आई। महादेव जी जिमाइ दए। पारवती जी नें बु ही साग रोटी खाई। जब का दूसरे दिनाँ लौटे, रास्ते में महादेव जी नें पूछी 'पारवती' आपनें का खायो ? पारवती नें कही जो आपने खायो सो हमने खायो। चलाचल दुपहर है गयो। ये छाँय के नीचे रुकि गये। पारवती जी सोइ गईं। महादेव जी सोचें देखूं तो सही जि झूंठ बोल्ति ऐ कै सच्च। पहले सतजुगों में जनावर बोलते थे, आदमी मूंड़ ऐ उतारि कें नीचें राखि लेत्ये। पेट की पारी टूंड़ी ते उतरि आमती। सो महादेव जी नें पेट की पारी उतारि कें देखी तो पारवती जी के पेट में रोटी और साग के दो पिंडे रक्खे। जब पारवती जी जगीं तो शिवजी नें कही, तू बड़ी झूंठ बोल्ति ऐ। पारवती जी बोलीं: कैसें महाराज ! महादेवजी ने कही कि तू तो कैहती कि सो आपनें खायौ सो मैंने खायौ। मैंने तेरे पेट में देखौ तौ रोटी साग के दुऐ पिंडे रखे ऐं। तब तौ पारवती जी नें भगवान् ते डोर लगाई कि हे महाराज जैसे आज मोते कीनी है ऐसी कोई ते मति करियों। वाही दिन ते बु पेट की पारी उघरनी बन्द है गई है।

(सं० क०—चन्द्रभान, लोहवन)

३८:१:५. (अ) शिवरात्रि का लोक-प्रचलित नाम व्रज में 'सोमर्त' है। इस दिन स्त्रियाँ व्रत रखती हैं, पुरुष भी रखते हैं। दिन में सिंघाड़े के आटे का हलुआ बना कर जमाया जाता है और उसके बर्फी के जैसे कतरे काट लिये जाते हैं। आलू उबाल कर

छील, सूखे, पहाड़ी नमक और काली मिर्च मिलाकर बनाये जाते हैं। कूटू के अन्न की पूड़ियाँ पकौड़ियाँ बनायी जाती हैं। ये सब पदार्थ फलाहार के काम में आते हैं।

(अ) बेर, बेलपत्र, सिंघाड़े आदि लेकर शिव मंदिर में पूजा की जाती है। शिवजी पर जल भी चढ़ाया जाता है। पूजा के बाद ही फलाहार किया जाता है। इस दिन बेर खाने का उत्सव सा रहता है। पास ही बेरियों में लड़के चले जाते हैं और खूब बेर तोड़-तोड़ कर खाते हैं। या बेर मोल लेकर खाये जाते हैं। घरों में पूजा के बाद कहीं-कहीं चौदस की कथा भी सुनी जाती है।

(इ) शिव-मंदिरों में रात्रि को जागरण होता है। मंदिर को दीपदान से जगमगा दिया जाता है। भक्त लोग शिवोपासना में मग्न मंदिर में जागरण करते हैं।

३८:५. फुलैरा दौज

फाल्गुन शुक्ल दौज को घरगुली रखी जाती है, और होली के दिन तक बराबर इस पर सायंकाल को टिकुलियाँ रखी जाती हैं।

३८:५. (अ) इस घरगुली पर गेहूँ के चून से जो चित्र बनाया जाता है, उसके कितने ही रूप मिल सकते हैं। इसका एक रूप यहाँ दिया जाता है—

३८:५:१. इसी दिन से गोबर से गूलरियाँ, ढाल-तलवार आदि बनाने का क्रम आरंभ होता है।

३८:६. रंगभरनी एकादशी का विशेष उत्सव तो ब्रज के विविध मंदिरों में होता है। कहीं-कहीं भगवान् की सवारी निकलती है और उन पर खूब अबीर तथा गुलाल फेंका जाता है। विविध मंडलियाँ होली के रसिया होली आदि की तानें उड़ाती हैं।

घरों में घरगुली पर रंगीन टिकुलियाँ दी जाती हैं और दिन सादे आटे की टिकुलियाँ दी जाती हैं। रंगभरनी को ही रंग की टिकुलियाँ दी जाती हैं।

३८:७. होली की लोकवार्त्ता

होली फाल्गुण की पूर्णिमा को होती है। किन्तु यह एक ऐसा आवेगाकुल और मस्ती पूर्ण त्यौहार है कि इसका रंग फाल्गुण महिने के आरंभ होते ही दिखायी पड़ने लगता है, और बाद में भी चैत्र के प्रायः अन्त तक इसका समारोह किसी न किसी रूप में चलता ही रहता है। इसके समारोह के रूप में होली खेलने के विविध प्रकार होते हैं। रंग की होली, धूल की होली, लठा पाटी की होली। इन्हीं के साथ फूलडोल आदि मेले होते हैं, जिनमें होली-रसिया आदि गीत मंडलियों द्वारा गाये जाते हैं, विविध स्वाँग भी होते हैं। इस अवसर पर विविध रूप में नये-नये प्रकार से मनोविनोद किये जाते हैं। वस्तुतः तो यह उत्सव बसंत पंचमी से ही आरंभ हो जाता है।

३८:७:१. किन्तु इस होली का भी अनुष्ठान-पक्ष होता है। ब्रज में यह अनुष्ठान तिथि बसंत पंचमी से आरंभ होता है। इस अनुष्ठान के भी दो पक्ष होते हैं। १—पुरुष पक्ष। दूसरा स्त्री पक्ष। पुरुष एक विशिष्ट स्थान पर एक पताका गाड़ कर विशिष्ट तिथि को होली की स्थापना करता है। उस दिन से होली को बढ़ाने का कार्यक्रम नियमित रूप से रहता है। बालक और युवक जहाँ तहाँ से लकड़ी-कंडे लाकर इस स्थान पर जमा

करते जाते हैं। प्रत्येक घर भी कुछ कंडे या लकड़ी होली को प्रदान करता है। जिस दिन होली-दहन होता है, उस दिन तक इसे जितना बढ़ाया जा सकता है, बढ़ाया जाता है। होली-दहन होने से पूर्व उस गाँव या मुहल्ले की स्त्रियाँ घर से पूड़ी-पकवान लाकर होली की पूजा कर जाती हैं। फिर समय होने पर 'खेरापति' उपस्थित होता है, पंडित मंत्र पढ़ता है, और 'खेरापति' अग्न्याधान करता है। अग्न्याधान के समय सूचना नाई के द्वारा खेरापति समस्त गाँव या मुहल्ले में करा देता है। इस सूचना को पाकर प्रत्येक घर के पुरुष-बालक-युवक-वृद्ध होली के स्थान की ओर चल पड़ते हैं। प्रत्येक के हाथ में एक बाँस होता है, जिसमें जौ-गेहूँ की बालें एक छोर पर बँधी रहती हैं। होली पर पहुँच जाने पर, और होली मँगर[1] जाने पर उन बालों को होली की लपटों में भून लिया जाता है। जौ के ये भुने दाने बड़े-छोटों को परस्पर भेंट करते हैं और परस्पर मिलते हैं। मंडलियाँ होली गाने में मग्न हो उठती हैं। लोक अबीर-गुलाल मलना आरंभ कर देते हैं। घर का एक व्यक्ति होली से अँगारे का एक टुकड़ा घर ले आता है।

३८:७:२. जैसा सभी त्यौहारों में होता है, होली के अनुष्ठान का स्त्री-पक्ष भारी होता है। विशिष्ट तिथि से स्त्रियों को दो काम करने होते हैं। विशिष्ट दिन घर का आँगन बीच में साफ करके उसमें 'घरगुली' खोदी जाती है। घरगुली का रूप यह होता है :—

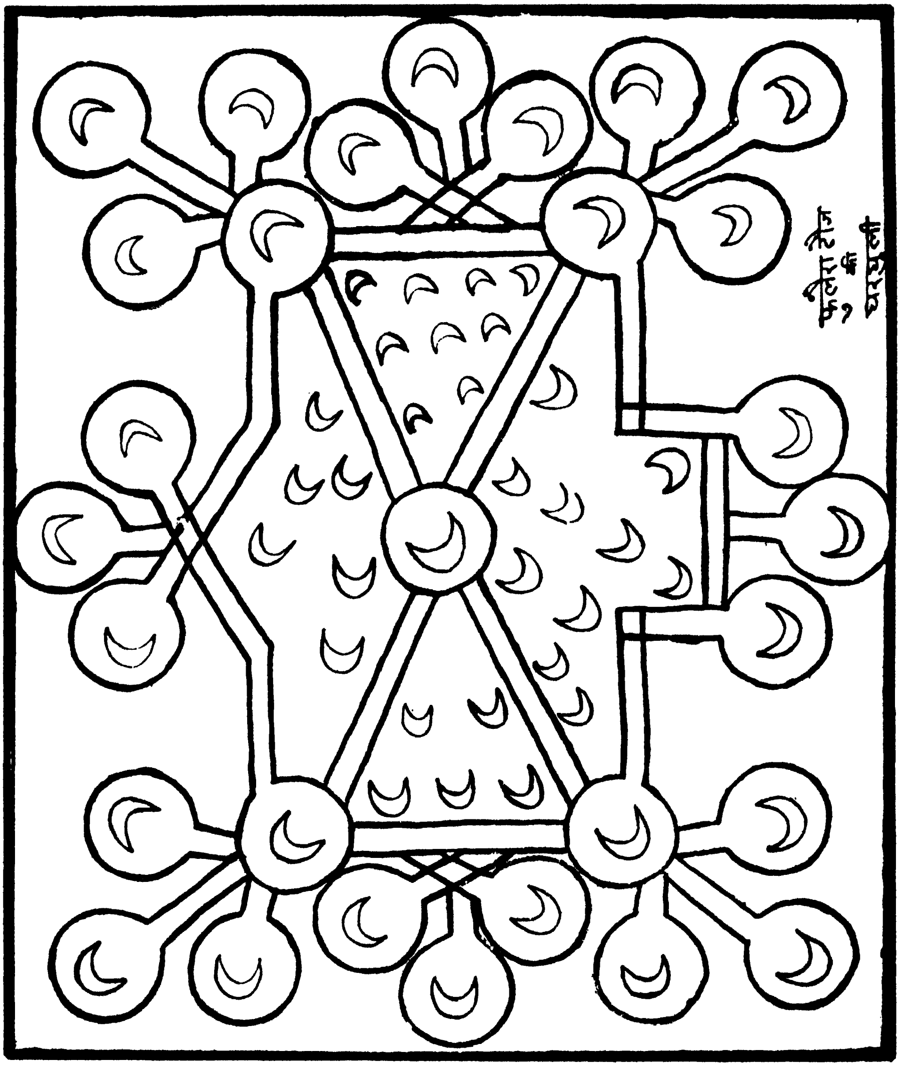
३८:७:३. घर गुली खुद जाने पर लीपी जाती है, और उस पर टिकुलियाँ रखी जाती हैं। ये टिकुलियाँ गेहूँ के आटे से रखी जाती हैं। टिकुलियों के अलावा चन्दा-सूरज-पान आदि भी बनाये जाते हैं। इस प्रकार आँगन चित्रित हो उठता है। यह चित्रण प्रति दिन सायंकाल के समय होता है। चित्रित 'घरगुली' का रूप कुछ इस प्रकार का होता है :—

रंगभरनी एकादशी के दिन यह चित्रण गुलाल से किया जाता है। टिकुलियाँ रखने की बहुत ही सरल विधि होती है। आटा एक चुटकी लेकर अँगूठे के पास की उँगली को सीधा रख कर आटे को उस उँगली के पोर पर इस प्रकार फैलाया जाता है कि वह जमीन पर गिर कर टिकुली बना देता है।

३८.७.४. एक ओर तो यह क्रम चलता रहता है। दूसरी ओर प्रतिदिन गोबर से गूलरियाँ थापी जाती हैं। गोबर का एक छोटा सा टुकड़ा लेकर उसको छोटे गोल पहिये का रूप का आकार देकर बीच में छेद कर देते हैं। इसी को 'गूलरी' कहते हैं। ये प्रतिदिन कुछ-न-कुछ बनायीं जाती हैं, और धूप में सूखती रहती हैं। इन्हीं के साथ चंदा और सूरज भी बनाये जाते हैं। और ढाल तथा तलवार भी बनायी जाती है। होलिका-दहन पर इन गूलरियों की माला मूंज की रस्सी से गूँथी जाती हैं। तीन, पाँच, सात, क्रम से मालाएँ बनती हैं। चंदा, सूरज, ढाल, तलवार की एक माला अलग बनती है। होलिका-दहन से पूर्व 'घरगुली' को लीपकर उस पर टिकुलियाँ रख के ये गूलरी की मालाएँ एक के

---

१. यह बात विशेष ध्यान देने की है कि होली में अग्न्याधान को 'मँगरना' कहते हैं। जलाना कहना वर्जित है।



ऊपर एक सूच्याकार सजा दी जाती हैं। सब के ऊपर चंदा-सूरज ढाल-तलवार वाली माला रखी जाती है। होली मँगर जाने पर पुरुष जब गाँव या मुहल्ले की होली से अग्नि लाता है तो उस से ये गूलरियाँ प्रज्वलित की जाती हैं। पर इससे पहले चंदा-सूरज ढवल तलवार उठाकर सुरक्षित स्थानपर रख दिये जाते हैं। पिछले वर्ष के चंदा आदि इस घर गुली पर अग्नि प्रज्वलत होने पर रख दिये जाते हैं। घर की स्त्रियाँ इसके चारों ओर बैठ जाती हैं। पास में एक लोटा पानी रहता है। एक सूप में जौ की बालें, नारियल की गिरी आदि रहती है। घर गुली के पास बैठकर गीत गाये जाते हैं, बालें, भूनी जाती

हैं, गिरी भूनी जाती है। फिर पुरुषों की तरह स्त्रियों में भी भुने जौओं का आदान-प्रदान होता है।

३८.७.४.१. होली के इस अवसर पर विविध प्रकार के पकवान बनाये जाते हैं, जिनमें 'गूझा' लड्डुआ मुख्य वस्तु हैं।

३८.७.५. होली मँगरने के दूसरे दिन प्रतिपदा को 'धुलेंडी' होती है। यह होली खेलने का विशिष्ट दिन है। इस दिन कोई अनुष्ठान नहीं होता। धुलेंडी में गांव के पुरुष गांव की दहनावर करते हैं, और होली की राख अपने मस्तक पर लगाते हैं।

३८.७.६. द्वितीया के दिन पुनः किन्हीं-किन्हीं जातियों में भाईदूज दिवाली की भाँति मनायी जाती है।

३८.७.७. होली के अवसर पर अश्लील गालियाँ देने का महत्व माना जाता है, काम-चेष्टाएँ भी की जाती हैं। फूहड़ और अश्लील मज़ाक और हास्य भी रिवाज में है। भंग अथवा शराब का नशा भी किया जाता है।

३८.७.८. होली के आरम्भ के संबंध में भविष्य पुराण में यह उल्लेख है :—

होलिका की उत्पत्ति और फल सहित विधान

राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र फाल्गुन पूर्णिमा को ग्राम-ग्राम और नगर-नगर में क्यों उत्सव होता है बालक क्यों क्रीड़ा करते हैं और घर-घर में होली क्यों जलाई जाती है। शीतोष्ण और अडाडा उसको क्यों कहते हैं और किस देवता का पूजन उस दिन किया जाता है यह आप वर्णन करें। यह राजा का प्रश्न सुन श्रीकृष्ण भगवान् कहने लगे कि हे महाराज सत्युग में रघु नाम राजा शूर प्रियवादी सर्वगुण युक्त और बड़ा दानी हुआ वह सब पृथ्वी को जीत सब राजाओं को अपने वश में कर पुत्रों की भाँति प्रजा का पालन करता था। उसके राज्य में दुर्भिक्ष-व्याधि भय अकाल मरण आदि कोई उपद्रव नहीं था और सब प्रजा के लोक धर्म में आसक्त थे। एक समय सब पुर के लोक एकत्र हो राजा के द्वार पर आकर त्राहि-त्राहि पुकारने लगे। राजा ने उनके त्रास का कारण पूछा तब उन सबने कहा कि महाराज ढोढा नाम राक्षसी नित्य हमारे बालकों को पीड़ा देती है और औषध मन्त्र तन्त्र आदि उस पर कुछ भी नहीं चलता। यह पौरों का वचन सुन राजा ने अपने पुरोहित श्री वशिष्ठ मुनि से पूछा ! मुनि ने कहा कि राजन् सुमाली नाम दैत्य की पुत्री यह ढोढा है इसने बहुत काल उग्रतप कर शिवजी को प्रसन्न किया। शिवजी ने प्रसन्न हो इससे कहा कि वर माँग तब इसने यह वर माँगा कि देवता दैत्य मनुष्य आदि कोई मुझे न मार सकें और शस्त्र अस्त्र से बध न होय दिन में रात्रि में शीतकाल उष्णकाल वर्षाकाल में और भीतर बाहर कहीं मुझको भय न होय शिवजी ने कहा तथास्तु और यह भी कहा कि ऋतु संधि के बीच उन्मत्त और बालक तुझे त्रास देंगे इतना कह शिवजी अन्तर्धान भये। वही राक्षसी नित्य बालकों को और प्रजा को पीड़ा देती है। अडाडा शब्द करके कुटुम्बियों का सिद्ध अन्न ग्रहण करती है इसलिए उसको अडाडा कहते हैं वह तो उस राक्षसी का चरित है अब उसके निवारण का उपाय हम कहते हैं। फाल्गुन शुक्ल पूर्णिमा को सब लोक निःशंक हो क्रीड़ा करें अश्लील भाषण करें नाचें

हँसें बालक काष्ठ के खड्ग लेकर योद्धाओं की भाँति हर्ष से युद्ध के लिए उत्सुक हो दौड़ते फिरें बहुत सा सूखा काष्ठ और उपले इकट्ठे कर उनमें रक्षोधन मंत्रों करके अग्नि लगायें उसमें हवन करें सब लोक किलकिला शब्द करते ताली बजाते उस अग्नि की तीन प्रदक्षिणा करें गावें हँसे और निःशंक हो जो जिसके मन में आवे सो बोलें इस प्रकार लोगों के कोलाहल से रक्षोधन मंत्रों करके हवन करने से बालकों के खड्ग प्रहार से वह दुष्ट राक्षसी क्षय को प्राप्त होगी यह वशिष्ठ जी का वचन सुन राजा ने सम्पूर्ण राज्य में इसी प्रकार बड़ा उत्सव कराया जिससे वह राक्षसी नाश को प्राप्त भई। उसी दिन से यहाँ ढोढा का उत्सव लोक में प्रसिद्ध हुआ सर्व दुष्टापह और सर्व रोगों का शांत करने हारा होम इस दिन किया जाता है इसलिए इसको होलिका कहते हैं। सब तिथियों का सार परम आनन्द देनेहारी पूर्णिमा तिथि है सारत्व से ही इसका नाम फल्गु है। गोबर से लिपे हुए आँगन में इस रात्रि को बालकों की रक्षा करनी चाहिए बहुत से खड्गहस्त बालक अपने घर में बुलावें वे घर में रक्षित बालकों को काष्ठ के खड्गों से स्पर्श करें हँसे गावें पीछे उनको गुड़ और पकवान देकर विसर्जन करें इस रात्रि को बालकों का अवश्य रक्षण करना चाहिए इस विधि के करने से ढोढा दोष शांत होता है। इतना सुन राजा युधिष्ठर ने पूछा कि हे श्रीकृष्णचन्द्र दूसरे दिन चैत्रमास और बसन्त ऋतु का प्रारम्भ होता है इस दिन क्या करना चाहिए तब श्रीकृष्ण भगवान् कहने लगे कि हे महाराज होली के दूसरे दिन प्रभात उठ आवश्यक काम कर पितर और देवताओं का तर्पण पूजन कर सर्व दुष्टोपशांति के लिए होलिका की विभूति का बन्दन करे और घर के अँगण में गोबर से लीप कर और अक्षतों करके चौक पूरे उसमें शुक्लवस्त्र से आच्छादित पीठ रखकर पुष्पमाला आदि से भूषित और सुवर्णसहित कलश स्थापन करे पीछे उस पीठ पर चंदन रख सौभाग्यवती स्त्री उत्तम वस्त्र भूषण पहिन दही दूर्वा अक्षत शिरीष पुष्प आदि से उस चंदन का पूजन करे फिर आम्र के पुष्प सहित उस चंदन को प्राशन करे और कामदेव का पूजन कर सूत मागध बन्दी और ब्राह्मणों का यथाशक्ति सत्कार कर (कामदेव प्रीयताम्) यह वाक्य कहे और भोजन के समय प्रथम पहिले दिन का बासी पकवान थोड़ासा यथेष्ट भोजन करे इस विधि से जो फाल्गुनोत्सव करै उसके सब मनोरथ अनायास से सिद्ध होते हैं आधि व्याधि नाश को प्राप्त होती हैं पुत्र पौत्र धन आदि की प्राप्ति होती हैं यह पूर्णिमा सब विघ्न हरने हारी जयदा पवित्रा औ सब तिथियों में उत्तम है। शिशिर ऋतु की समाप्ति औ बसन्त के आरम्भ होते ही चैत्रकृष्ण प्रतिपदा को चन्दन सहित आम्रपुष्प को जो प्राशन करै वह वर्ष भर सुखी रहता है ॥

३:८:७:८:१. होली के अनुष्ठान का एक सामान्य विवरण 'ब्रजलोक साहित्य का अध्ययन' नामक पुस्तक में भी दिया गया है—उसका आवश्यक अंश यहाँ उद्धृत किया जाता है जिससे कि इस अवसर पर स्त्रियों द्वारा गाये जाने वाले गीतों का कुछ परिचय मिल सके।

३८:७:८:१ (अ) यों इस महिने में होली और फाग-धमार ही विशेष गाये जाते हैं, पर अनुष्ठान:त्यौहार सम्बन्धी गीत इस महिने में भी कम ही हैं। 'घरगुली' (ग्रह-होली) फागुन सुदी दौज को रखी जाती है। प्रत्येक घर में पट्टी के आकार

की 'घरगुली' खोदी जाती है। इस अवसर पर एक गीत गाया जाता है, इसका आरम्भ यों है—

रामा बलि के द्वार चढ़ी ए होरी
कौन के हाथ रंगीलौ ढफु सोहै,
कौन के हाथ गुलाब की छड़ी।

उत्तर में विविध नाम लेते जाते हैं, इस 'घरगुली' पर प्रतिदिन लीप कर संध्या के समय 'टिकुलियाँ' रखी जाती हैं। ये आटे से रखी जाती हैं। उंगली के पोरुए के आकार ( ) की ये होती हैं।

होली में आग लगने से पूर्व उसे पूजने जाते हैं, उस समय के गीत में स्त्री तो यह शिकायत करती है कि मेरे पास कोई आभूषण ही नहीं होली कैसे पूजूँ? पति कहता है इस बार ऐसे ही पूजो, अगली बार दो-दो बनवादूँगा। सीधा-सा अभिप्राय यह है कि आगामी फसल अच्छी हो। जिससे बहुत से आभूषण बन सकें। आग लग जाने पर बालें उस पर भूनी जाती हैं। उस समय भी गीत गाया जाता है। वह कुछ ऐसे हैं—

बालि

बालि बलूलरियाँ
जौकी लामनियाँ
कृष्ण जी भैनि बुलाई, कै जौ की लामनियाँ
सहद्रा दौरी दौरी आवै, ,,
भैना गूंजा खाइबे आउ ,,
कै हिस्सी खाइबे आउ ,,

होली मँगर जाने के बाद घर लौटते समय स्त्रियों द्वारा कुछ ऐसा गीत गाया जाता है :

होरी के हुरिहारे आये राम चना रे
कोरे दतार आये राम चना रे
कृश्न जी दतार आये राम चना रे
होरी मँगारि घर दाऊजी[1] आये राम चनारे
पइदै मइया रोटी राम चना रे
ईंधन नाइ बाँधन नाँइ
कैसें पैंइ बेटा रोटी राम चना रे

३८:७:८:१. (आ) हरियाने में होली के त्यौहार के मनाने का ढंग इस प्रकार है :—

'माघ सुदी पूर्णिमा को पंडित कैर का दंड्डा गाँव के बाहर कालर में गाड़ता है। एक महीने तक गाँव वाले उस डंडे के चारों ओर लकड़ियाँ डालते रहते हैं। उत्तर

१. भैयों का नाम लिया जाता है।

पक्ष में होली गाई जाती है । इन्हीं दिनों रात्रि को डप बजाते हैं और मिल कर धमाल गाते हैं ।

होली वाले दिन सायंकाल शृंगार करके साथ में जौ की बाल, कच्ची कूकड़ी, पानी का लोटा, चावल हल्दी और गोबर की बनी ढाल तलवार आदि ले जाती हैं । होली के स्थान पर सभी बैठकर कच्ची कूकड़ी का तागा पूरती हैं और हल्दी चावल से पूजन करती हैं ।

लड़कियाँ दो दलों में बैठकर आमने सामने खड़ी होती हैं बीच में एक रेखा खींचली जाती है । एक बार एक ओर की लड़कियाँ कंधा पकड़ कर गाती हुई रेखा तक आती हैं और फिर गाती गाती वापिस लौट जाती हैं । दूसरे पक्ष की लड़कियाँ भी इसी प्रकार करती हैं । रात्रि में शुभ लग्न पर होली जलाई जाती है । अगले दिन धूलण्डी को स्त्रियाँ छाज में आग लाती हैं । होली जलाते समय पुरुष बाल भूनते हैं, परिक्रमा करते हैं । गाँव खेड़े की जय बोलते हैं ।[1]

३८:७:८:२. यहाँ तक फाल्गुन के त्यौहारों और व्रतों का परिचय दिया गया । किन्तु धुलैंड़ी और भैया दूज ये दो त्यौहार भी होली के ही अभिन्न अंग की भाँति हैं । ये यद्यपि चैत्र में पड़ते हैं, फिर भी इनका कुछ परिचय यहाँ होली के साथ ही देना समीचीन प्रतीत होता है ।

३८:७:८:३. धुलैंड़ी या 'धूर' चैत्र कृष्ण प्रतिपदा को होली जलाने के उपरांत खेली जाती है ।

३८:७:८:३. (१) इस दिन प्रत्येक गाँव में 'दहनावर' चलती है । दहिनावर ग्राम की परिक्रमा को कहते हैं । होली के स्थान से आरम्भ होकर पूरे गाँव का चक्कर लगा कर एक स्थान पर यह रुकती है, वहीं से फिर यह विसर्जित होती है ।

३८:७:८:३. १-(अ) दहनावर में रंगों की झालियाँ भरे गाँव या नगर के पुरुषों के टोल एक दूसरे से मिलते और रंग बरसाते, स्थान-स्थान पर ठंडाई—भाँग का पान करते हुए चलते जाते हैं । साथ में गान-मंडलियाँ भी चलती हैं, उसमें वेश्याओं, बेड़िनियों, या स्त्री वेशधारी लड़कों को भी नाचने के लिए सम्मिलित कर लिया जाता है । अब यह रिवाज कम हो गया है । अब मंडलियाँ ही रसिया या होली-धमार गाती हुई साथ रहतीं हैं । धूल, पानी, कीच, तथा अन्य गन्दी चीजों का भी उपयोग होता चलता है ।

३८:७:८: ३ १-(आ) पहले लड़के मिल कर स्वाँग भी रचते थे, और अपने परिचित घरों में जा-जाकर ये स्वाँग दिखाते थे । इनमें मुँह मटकनों का भी उपयोग किया जाता था । इधर अब यह रिवाज समाप्त हो गया है ।

३८:७:८:४. समस्त वातावरण अट्टहास, परिहास, मजाक, नौंक-झौंक से परिपूर्ण रहता है । यह हंसी-मजाक अश्लीलता और हाथा-पाई तक पहुँच जाता है ।

---

१. 'हरियाना का लोक साहित्य' विषयक एक शोध-प्रबन्ध से उद्धृत ।

स्त्रियों तक से भद्दे मजाक करना और होली खेलना इसमें सम्मिलित रहता है। दोपहर तक यह क्रम चलता है।

३८:७:८:४ (अ) संध्या समय भव्य वस्त्र पहन कर लोग फिर एक दूसरे से मिलने जाते हैं।

३८:७:८:४ (आ) मंदिरों में भगवान के साथ भी होली खेली जाती है। जब रियासतें थीं तो राजाओं की सवारी भी होली खेलने के लिए निकलती थी।

३८:७:८:४ (इ) होली का त्यौहार साहित्यकारों को भी अत्यन्त प्रिय है—अनेकों पत्र-पत्रिकाएँ होली पर अपने विशेषांक निकालती हैं, जिनमें अधिकाधिक हास्य की सामग्री दी जाती है।

३८:७:९. होली के बाद चैत्र कृष्ण द्वितीया को दिवाली के बाद की द्वितीया की भाँति ही कहीं कहीं फिर 'भैया दौज' मनायी जाती है—इसका विधान भी दिवाली की भैया दौज की तरह होता है। जो इस प्रकार है :—

३८:७:९: (१) भैयादौज गीत तथा कहानी—

भूमि लीपकर, गुलाल से चौक पूर कर, गौर गोबर की बसायी जाती है। उसके हाथ पैर मुंह नहीं बनाते। उढ़ायी भी नहीं जातीं। उसके सिर पर गुलाल के घोल में रंगी लाल 'आब' रखी जाती है। ये 'आब' रुई और कपास मिलाकर बनाई जाती है। उसे करवाचौथ के बचे ऐंपन में हल्दी मिलाकर उसे रुई और कपास से गुने की शक्ल का बना लिया जाता है। ये सूप में रखली जाती है, उसमें खील, बताशे, हल्दी का दिबला भी रहता है। गौर को भूमि पर गोबर का घर बना कर उसमें कटेरी के पत्ते बिछाकर रखा जाता है। हल्दी से पूजने वाली बायें हाथ के ऊपर साँतियाँ रख लेती हैं और चार आब व्याही दो आब क्वारी बायें हाथ से गौर पर चढ़ाती हैं। फिर कहानी होती हैं। कहानी हो जाने पर गौर हटा दी जाती है। कटेरी पर लोटा रखा जाता है। उस हल्दी का साँतिया काढ़ा जाता है। लोटे के गले में हंसली डाल दी जाती है। उसमें बायें हाथ की छिगुनी उंगली डाल ली जाती हैं। फिर गीत गाये जाते हैं।

इसके उपरान्त हँसली पहन ली जाती है। एक धनकुटे पर पांच जगह हल्दी के बन्ध लगा दिये जाते हैं। कटेरी और घर का गोबर बटोर लिया जाता है। द्वार पर जाकर बाँयी ओर जमीन पर कटेरी, गोबर, खील, बताशे, पूड़ी के टुकड़े डाल कर कूद हैं। गीत गाये जाते हैं। फिर दिवाल पर पानी डाल कर 'कौरे ठंडे' कर दिये जातेहैं। वहाँ दरवाजे के दोनों ओर हल्दी से साँतिये बना दिये जाते हैं। लौटते समय स्त्रियाँ बधाया गाती हुई लौटती हैं।

अन्य व्रतादि

३९. इन नियमित व्रतों के अतिरिक्त कुछ ऐसे व्रतादि हैं जो विशेष नियम से नहीं अपनी सुविधा से या आवश्यकता से किये जाते हैं। इनमें से **'सत्यनारायण कथा'** का व्रत सब से अधिक महत्वपूर्ण कहा जा सकता है।

४०. **सत्यनारायण व्रत**—यह व्रत सामान्यतः किसी विशेष उपलक्ष्य में किया जाता है। कोई सफलता मिलने पर या किसी अनिष्ट के टल जाने पर किसी अभीप्सित कार्य की सिद्धि हो जाने पर यह व्रत किया जाता है। इसमें व्रत का इतना महत्व नहीं जितना कथा सुनने का है। यह कथा मुख्यतः पंडित या पुरोहित ही कहते हैं, और यह पूरे आडंम्बर से कही जाती है। इस आडंबर में एक तो चौकी पर श्वेत वस्त्र बिछाकर केले के पत्तों से उस पर कुंज बनाया जाता है, उस चौकी पर विविध देवी देवताओं का आवाहन किया जाता है। साथ में एक कलश स्थापित किया जाता है, उसकी भी पूजा होती है। कहीं कही या कभी कभी सुन्दर चौक पूर कर बीच में वेदी बनाकर हवन या होम भी किया जाता है। इन सब के उपरान्त शंख ध्वनि के साथ पंडित जी कथा आरम्भ करते हैं।

४:०१. इस कथा का संक्षेप यह है :—

काशीपुरी में शतानन्द नाम का दरिद्र ब्राह्मण था। भगवान ने प्रकट हो उससे कहा कि तुम सत्यनारायण की पूजा करो तो दारिद्रय दूर हो जायगा। उस ब्राह्मण ने पूजा की और प्रसाद लिया। वह सम्पन्न हो गया।

एक बार निषाद ने आकर शतानन्द से सत्यनारायण की पूजा का विधान पूछा। शतानन्द ने जो विधि चन्द्रचूड़ राजा को बताई थी, वह निषाध को बताई। निषाध ने पूजा का संकल्प किया, उसी दिन उसका काष्ठ चौगुने मूल्य में बिका। पूजा करने पर वह भी धन, पुत्र, कलत्र से सम्पन्न हुआ।

मणिपुर पति राजा चन्द्रचूड़ को पूजा करते देख रत्नपुर के साधु नामक बनिये ने कहा कि यदि मेरे पुत्र या कन्या हो तो मैं भी पूजा करूंगा।

इस संकल्प से उसकी लीलावती नाम की स्त्री के कलावती कन्या पैदा हुई। विवाह योग्य होने पर उसका विवाह कर दिया। पर पूजा नहीं की।

साधु बनिया अपने जमाई के साथ व्यापार के लिए निकला। एक देश में वे ठहरे। वहां राजा के यहां से चोर चोरी करके भाग गये। सिपाहियों ने उन विदेशी बनियों को पकड़ कर चोर बताया। राजा ने बिना जाँच किए धन खजाने में डलवा दिया और दोनों को बन्दी गृह में पहुंचा दिया। उधर उसकी स्त्री-पुत्री दरिद्र हो गयीं।

एक दिन कलावती शतानन्द के यहाँ सत्यनारायण की पूजा देख आयी। तब माँ-बेटी दोनों सत्यनारायण की पूजा करने लगीं। इससे प्रसन्न हो सत्यनारायण ने राजा को स्वप्न दिया कि तुम उन दोनों बनियों को छोड़ दो, वे चोर नहीं हैं।

राजा ने प्रातः ही उन्हें छोड़ दिया। उनका सम्मान किया उनका समस्त धन लौटा दिया। ये धन नौका में भरे घर की ओर चले। मार्ग में तपस्वी रूप धारी सत्यनारायण इन दोनों को मिले और पूछा—कि इस नौका में क्या है। बनिये ने उत्तर दिया कि महाराज। घासपात है। तपस्वी ने कहा—तथास्तु। नौका में घासपात हो गया। जमाई के कहने पर बनिया तपस्वी के पास गया तपस्वी ने बताया कि तू अपने सभी वचनों को भूल गया। पुत्री के होने पर भी पूजा नहीं की। बनिये

को स्मरण हुआ और सामने साक्षात् सत्यनारायण को देख बहुत विनय की तथा घर पहुंचते ही पूजा करने का संकल्प किया । अब उसकी नौका फिर पूर्ववत् धन पूर्ण हो गयी ।

नौका जब नगर के पास पहुँची तो माँ-बेटी को दोनों के आने का समाचार मिला। दोनों लीलावती तथा कलावती पूजा कर रही थीं । लीलावती पूजा को पूरा कर नौका की ओर चली । कलावती ने जल्दी की, प्रसाद का अनादर कर वह भी नौका की ओर पतिद-र्शनार्थ चली ।

पर नौका जमाई के साथ जल में डूब गई । हाहाकार मच गया । तब आकाश-वाणी ने कहा कि कलावती प्रसाद का अनादर करके आयी है, जब प्रसाद ग्रहण करके आवेगी तो पति का दर्शन कर सकेगी । कलावती घर गयी, विधि और आदर से प्रसाद ग्रहण किया, और लौट कर आयी तो जमाई सहित फिर नौका ऊपर आ गई, सब मिले और सत्यनारायण की पूजा करते हुए सुख-समृद्धि से जीवन यापन करने लगे ।

४०:१:१. इस कथा के उपरांत आरती होती है और प्रसाद बाँटा जाता है, जिसमें पंचामृत तथा पँजीरी दिये जाते हैं ।

४०:१:२. इस कथा के संबंध में एक विवेचन 'ब्रज लोक साहित्य का अध्ययन' में दिया गया था । वरुण-कथा ही सत्यनारायण कथा है यह इससे विदित होता है । यह अंश यहाँ उद्धृत किया जाता है—

वैदिक बीज: वरुण—यदि समस्त वैदिक साहित्य को लिया जाय तो वेद की ऋचाओं के बीज से एक पूर्ण कथा का विकास इस साहित्य में भी मिल जाता है । उदाहरण के लिए ऋग्वेद में 'वरुण' की वह प्रार्थना ली जा सकती है जो शनु:शेप ने की है । ऋग्वेद में इसका कोई वृत्त नहीं मिलता । आगे उपनिषदों तक पहुँचते-पहुँचते इसका एक अच्छा कथानक बन गया है । इसमें 'वरुण' ने हरिश्चन्द्र को रोहित इस शर्त पर दिया कि वह अपना पुत्र उसे प्रदान कर देगा । रोहित उत्पन्न हुआ, वरुण ने उसे कई बार टाला अन्त में रोहित बन में चला गया । वहाँ अजीर्गत को कुछ गौएँ देकर शुन: शेप को उसने रोहित के स्थान पर बलि देने के लिए क्रय कर लिया । कुछ और गायों के लोभ में अजीर्गत स्वयं ही शुनः शेप की बलि चढ़ाने के लिए तत्पर हो गया । विश्वामित्र ने उसे अपना पुत्र बनाया और वरुण से प्रार्थना कर मुक्त कर दिया । यह कथा बड़ी महत्वपूर्ण है । राज्याभिषेक के अवसर पर इस वेदांश का पाठ इसके अर्थ गौरव को और भी बढ़ा देता है[1] । ऋग्वेद के कुछ मन्त्रों से शुनः शेप के बलिदान की कहानी तो वैदिक साहित्य में ही प्रस्तुत हो गई । लोकवार्ता में इसने और भी रूप बदला । यदि अत्यन्त सूक्ष्म दृष्टि से देखा जाय तौ यही कहानी 'सत्य-हरिश्चन्द्र' की प्रसिद्ध लोक-गाथा बनी है । प्राय: नाम सभी वैदिक है । हरिश्चन्द्र हैं ही, रोहित रोहिताश्व हो गया है । विश्वामित्र बदल नहीं सके । वैदिक कहानी के मूल में दो तत्व थे, विश्वामित्र का शुन:शेप के पक्ष में हरिश्चन्द्र के यज्ञ का विरोध । इससे लोकवार्ता को यह सूत्र मिला कि विश्वामित्र

१. विलियम ऐच० रावन्सन लिखित 'दी गोल्डन लीजेंड आफ इण्डिया की भूमिका ।

हरिश्चन्द्र के विरोधी थे। रोहित बन-बन मारा-मारा फिरा, वरुण जब तब आकर अपनी बलि माँगने लगा। इस तत्व में बहुत परिवर्तन हुआ। आगे वैदिक देवताओं का जो विकास हुआ उसमें 'वरुण' का कोई स्थान नहीं रहा; कहानी में भी वह स्थान कैसे रहता। 'वरुण' हरिश्चद्र से बलि माँगता था, उसका स्थान 'विश्वामित्र' को ही मिला। विश्वामित्र हरिश्चन्द्र से बार-बार दक्षिणा माँगने आते हैं। 'रोहित' का बन-बन डोलना, हरिश्चन्द्र के सकुटुम्ब काशी जाने के रूप में बदला दूसरा प्रधान-तत्व है 'रोहित' के स्थान पर शुनःशेप की बलि की तैयारी, कुछ ही क्षण शेष हैं कि उसकी बलि करदी जायगी तभी विश्वामित्र आदि की प्रार्थना से वरुण द्वारा उसकी मुक्ति। लोक-गाथा या धर्म-गाथा में रोहित ही शुनःशेप बना है, उसे सर्प ने काटा है, वह मर गया है। अजीगर्त और बलि का काण्ड लोक-गाथा के ब्राह्मण और सर्प के रूप में हो गया है। यहाँ भी देवताओं ने उसे प्राणदान दिया है।

आगे के विकास में मूलतः यही 'वरुण—कथा' 'सत्यनारायण' की कथा में बदली है। दोनों के प्रधान तत्व यहाँ तुलना की दृष्टि से दिये जाते हैं—

१—हरिश्चन्द्र वरुण से पुत्र की याचना करता है, वरुण उसे पुत्र देता है। किन्तु यह वचन ले लेता है कि वह उस पुत्र को वरुण को दे देगा।	१—सेठ पुत्र-कामना से सत्यनारायण की पूजा का संकल्प करता है।
२—पुत्र होता है, वरुण माँगता है। हरिचन्द्र उसे कभी कोई बहाना बना कर कभी कोई बहाना बना कर टालता जाता है।	२—पुत्री होती है। सेठ कथा को टालता जाता है। कभी किसी बहाने कभी किसी बहाने।
३—रोहित वरुण से बचने के लिए घर छोड़ कर बन में चला जाता है।	३—पुत्री का विवाह हो जाता है। अब जामातृ ने रोहित का स्थान ले लिया। सेठ जामातृ के साथ व्यापार के लिए वहाँ से बाहर चला जाता है।
४—रोहित कोई चारा नहीं देखता तो अपने स्थान पर शुनःशेप की बलि देने को प्रस्तुत होता है।	४—कई संकटों के बाद सत्यनारायण की मानता करते हुए जब ये घर लौटते हैं, तो जामातृ के साथ नाव पानी में डूब जाती है।
५—विश्वामित्र आदि की प्रार्थना से प्रसन्न वरुण शुनःशेप के रूप सें रोहित को मुक्त कर देता है।	५—कथा द्वारा पूजा की सविधि पूर्णता से प्रसन्न सत्यनारायण जामातृ को पुनः प्रकट कर देते हैं।

देवताओं के विकास में 'वरुण' विशेषतः जल के देवता ही रह गये हैं। सेठ की कहानी में अधिकांशतः सत्यनारायण की कृपा की अभिव्यक्ति जल में ही हुई है। लोक-

वार्ता में कथा की सृष्टि करनेवाला हमें 'सत्यनारायण'[1] में उसी 'वरुण' के दर्शन कराता मिलता है।

इससे और आगे इस कथा के 'पुत्र-दान' वाले अंश ने तो एकानेक रूप ग्रहण किये हैं। 'वरुण' का स्थान कहीं किसी देवता ने ले लिया है, कहीं किसी सिद्ध पुरुष ने। जिस सम्प्रदाय ने इस कथावस्तु को ग्रहण किया उसने अपने अनुकूल ही 'वरुण' के स्थान पर किसी अपने इष्ट को स्थानापन्न कर दिया। गोरखपन्थियों के प्रभाव से प्रभावित कहानियों में यह कार्य सिद्ध ही करते मिलते हैं, बहुधा स्वयं गोरख या उनके कोई पहुँचे शिष्य। किन्तु ब्रज में प्रचलित एक कहानी में लोक-मानस ने इस 'वरुण' को दानव का रूप भी प्रदान कर दिया है। दाना बाबाजी बनके आता है, पुत्र का वरदान देता है, पर कहता है पुत्र मुझे देना पड़ेगा। आखिर बाबाजी पुत्र का क्या करेगा? वरुण को तो उसकी बलि दी जाती, बाबाजी वरुण तो हो नहीं सकता। तब वह उसे खायेगा, मनुष्य को खाने वाला 'दानव या दाना'। लोक मानस में कहानी की रूप-रेखा ठीक हो गयी, और 'वरुण' को यहाँ 'दाना' बनना ही पड़ा। अब वह 'तेल के कड़ाह' में पका कर उस बालक को खायेगा। उस बालक से सात परिक्रमाएँ भी करायेगा। 'दाना' तो बना, पर लोक-मानस उसे भी धार्मिक कर्मकाण्डी बना गया। यह दाना वह दाना नहीं जो अन्य कहानियों में मनुष्यों को यों ही बिना किसी अनुष्ठान के मार-मार कर खा जाता है। 'तेल का कड़ाह' यज्ञ का प्रतीक है, सात परिक्रमा उसे और भी धार्मिक रंग दे देती हैं। इस कहानी में कहीं तो वह बालक मारा जाता है, और बाद में उसका बड़ा या छोटा भाई आकर उसे पुनरुज्जीवित करता है, दाने को मारता है, कहीं स्वयं बालक ही दाने को अपने स्थान पर तेल के कड़ाह में डाल देता है, और यहाँ वरुणत्व के द्योतक 'मणि मूंगा' हमें मिल जाते हैं। वह दाना कड़ाह में पड़ते ही मणि-मूंगा में परिणत हो जाता है। बालक हर दशा में शुनःशेप की भाँति ही मुक्त हुआ है। किसी-किसी उदार लोक-मानस ने उस बाबा जी को दाना न बनाकर जादूगर ही बना दिया है, वह बालक वहाँ विद्या सीखता है और अन्त में अपनी विद्या से अपने गुरु बाबाजी से झपटें करके और उसे मार अपने माता-पिता के पास आ जाता है। वरुण में दानवत्व का आरोप भी अकारण नहीं। उनका बीज ऋग्वेद में आये शब्दों में हमें मिलता है। वरुण के लिए वेद में 'असुर' शब्द का प्रयोग हुआ। भाषा-वैज्ञानिक जानते हैं कि यह 'असुर' जेन्दावस्ता का 'अहुर' है जो 'अहुरमज्द' नाम से जरथुस्त्र मतावलम्बियों के लिए 'वरुण' जैसा ही प्रधान देवता है। 'असुर' शब्दार्थतः शक्तिशाली

---

१. 'सत्यनारायण' शब्द मे भी 'वरुण' का अर्थ दीखता है। 'सत्य' और 'ऋत' वेद में 'अनृत' से विरुद्ध भाव रखते हैं। ऋत वेदों में प्रायः तीन अर्थों में प्रयुक्त हुआ है: तीनों अर्थ परस्पर सुसम्बद्ध हैं। एक अर्थ ऋत का 'सत्य' भी है; तभी जो सत्य नहीं है उसे 'अनृत' कहा जाता है। वरुण 'ऋत' का स्वामी है, ऋत का रक्षक, ऋत का उद्गम (ऋतस्य, २, २८, ५) कहा गया है। 'नारायण' शब्दतः 'नार+अयण' है। यह 'सिन्धुपति' का पर्याय माना जा सकता है। वेद में 'सिन्धुपति' शब्द मित्र और वरुण दोनों के लिए आया है।

व्यक्ति को कहा जायगा; किन्तु 'सुरों' के विरोध में आगे चलकर 'असुरों' की जो कल्पना हुई उससे यह शब्द राक्षस और दानव का अर्थ देने लगे तो आश्चर्य की बात नहीं। वरुण को ऋग्वेद ने मायिन भी बताया है, 'प्रति यच्चेष्टे अनृतमनेना अव द्विता वरुणो मायी नः सात।' यही मायावी वरुण कभी बाबाजी बन जाय, और जादू आदि के विविध चमत्कार दिखाये तो अपने विकास से मार्ग के दूर नहीं पड़ेगा।

४०:१:३ यह कथा तो पुराण से ली गई है। एक लोक-कथा भी इस सम्बन्ध में प्रचलित है।

एक राजा था, एक बामन था। बामन राजा के यहाँ कथा कहने जाया करता था। जो कुछ धन उसे मिलता उससे घर का काम चलता। जब बामन के बुरे दिन आये तो रानी ने कथा कहलानी छोड़ दी। अपनी बहू से बोला कि अब तो मेरी कथा-कहानी भी बन्द हो गई है, घर का काम कैसे चलेगा। बोली जैसे तुम वहाँ कहते थे ऐसे यहाँ कहना। तुम कहो, मैं सुनूँगी। बामनी ने अपना घर लीप-पोत कर साफ किया। सोचा कि परसाद काहे का बनावें, घर में तो कुछ है ही नहीं। बहुत ढूंढ़ने पर चार जौ पाये; दो तो कथा सुनकर सत्यनारायण के नाम के चढ़ा दिये और एक-एक आप खाकर सो गये। सुबह को बोली कि हम तो जैसे होगा अपने दिन काट लेंगे पर ये जो हमारी दो बेटी हैं उनका दुःख हमसे नहीं देखा जाता; इससे इन्हें कहीं दे दो। बामन कन्या लेकर चला गया। जंगल में जो पहुँचा तो वहाँ दो राजा आये हुए थे एक हिमाचल एक दसरथ। एक-एक कन्या को दोनों राजा ले गये। सत्यनारायण की कृपा से बामन ने अपने घर में क्या देखा कि चौकी के नीचे हीरा, लाल, मोती, पन्ना जगर-मगर कर रहे हैं। बामनी बोली कि देखो यहाँ यह कैसी माया रखी है। बामन बोला कि यह माया कोई चोर राजा की चुराकर रख गया है। बामन ने राजा से जाकर कहा कि महाराज आप अपना खजाना देख लें मेरे आँगन में कोई रख आया है। राजा ने अपने खजाने दिखवाये। खजाने भरपूर पाकर बोला कि भाई यह माया मेरी नहीं है तुझे ही नारायण ने दी है, तू इसे खा-पी मौज कर। बामन खुस होता अपने घर आया। बामनी बोली कि अब उन कन्याओं की खबर लो, वे कहाँ हैं? बामन बड़ी बेटी के घर गया। बेटी ने बहुत आदर सत्कार से पिता को बैठाया और बोली कि भोजन कर लो। बोला कि बेटी यह तो तुम्हें मालूम है हम कथा कह कर और सुन कर भोजन करते हैं। बेटी बोली पिता तुम कहो मैं सुनूं। बामन ने कन्द-मूल-फल मँगवा कर कथा कही, बेटी ने सुनी। अब वह दूसरी बेटी के गया। उसने भी मान-आदर करके कहा कि पिता भोजन कर लो। बोला कि बेटी हम तो कथा कह-सुन कर भोजन करते हैं। बोली कि पिता हम तो तेरी कथा कहने-सुनने में तेरे घर में भूखों मरतीं थीं, हम तेरी कथा सुनने के झगड़े में अब नहीं पड़ते। पिता वहाँ से चल दिया और बड़ी बेटी से कहता आया कि अपनी बहिन की सुध लेती रहियो। निन्दा करते ही छोटी के यहाँ बहुत गरीबी आयी और वह भूखों मरने लगी। बड़ी ने सुना कि छोटी के घर में बड़ी गरीबी आयी है तो उसने बहुत सा धन भेजा। पर रास्ते में लुटेरों ने धन लूट लिया।

छोटी ने उन धन लाने वालों से सुना कि बहिन का भेजा धन रास्ते में लुट गया तो वह बड़ी दुखी हुई। आदमी बोले कि तेरे ऊपर सत्यनारायण नाराज हैं। तू अपने पिता को बुला उनसे कथा सुन। जब उसने अपने पिता को बुलाकर बड़े हित-चित से कथा सुनने का सामान जोड़ा और पति से बोली कि आओ हम और तुम सत्यनारायन की कथा सुन लें। पति बोला कि अब हम क्या कहानी सुनें, न जाने कहाँ तुम जाओगी और कहाँ मैं जाऊँगा, इतने दिन दुःख पाते हो गये। बहू बोली कि जो होगा देखा जायगा, पहले कथा तो सुन लें। कथा सुनते वक्त चार घड़ा जल के भरकर रखे, दो सत्यनारायण के, एक कहने वाले का, एक सुनने वाले का। उनका घर फिर से पहला जैसा हो गया। स्वर्ग से विमान आया और बहू-दूलह दोनों स्वर्ग चले गये।

४०:१:३:१ यह स्पष्ट है कि इस कथा का भाव वही है जो ऊपर की कथा का है। कथा सुनने से समृद्धि और कथा का अनादर करने से दुःख दारिद्रय।

४१: सत्यनारायण की कथा तो चाहे जब हो सकती है। पर एक ऐसी ही व्रत कथा 'गणेश-चौथ' की है। वह किसी भी चतुर्थी को हो सकती है। ऊपर विशेष चतुर्थियों का विवरण दिया जा चुका है। पर वे सभी प्राय: स्त्रियों के अनुष्ठान से संबंधित हैं। सत्यनारायण की कथा की भाँति ही पंडित या पुरोहित द्वारा किसी भी चतुर्थी को, पर विशेषत: भादों बदी चतुर्थी को एक गणेश कथा कही जाती है, और उसका व्रत भी रखा जाता है।

४१:१ इस अवसर पर जो कथा कही जाती है, वह संक्षेप में इस प्रकार है—

नारद जी ने पार्वती से कहा कि क्या आप जानती हैं कि शिवजी के गले में मुण्डमाल क्यों है? नारदजी चले गये। पार्वती जी ने शिवजी से पूछा कि मुण्डमाल का रहस्य क्या है? शिवजी ने कहा कि ये आपके ही मुण्ड हैं, जन्म-जन्म में आपके प्रेम के कारण मैं इन्हें धारण किये हुए हूँ। पार्वती जी ने कहा कि हमारा जन्म-मरण क्यों होता है। हमें भी वह सिद्धि दीजिए। शिवजी ने एकान्त किया और देख लिया कि और-पास कहीं पशु-पक्षी-कीड़ा-मकोड़ा तक नहीं है। तब उन्होंने वह गोप्य मंत्र पार्वती जी को सुनाया। वहाँ एक शुक का अंडा था। वह उसी समय फूटा और शावक उसमें से निकल आया। पार्वती जी तो सो गयीं, शिवजी कहते रहे, शुक सुनता रहा और हुंकारा भरता रहा। जब शिवजी को विदित हुआ कि किसी और ने सुना है तो वे क्रुद्ध हुए, वह शुक भयभीत वहाँ से उड़ा, शिवजी के त्रिशूल ने पीछा किया, पर वह शुक व्यासजी की स्त्री के पेट में उनके जंभाई लेते समय प्रवेश कर गया। वही बाद में शुकदेव के रूप में व्यासजी की स्त्री के गर्भ से उत्पन्न हुआ।

उधर शिवजी को रुष्ट देख पार्वती जी भी रूठ गयीं और पर्वत की एक अगम्य गुफा में चुपचाप जा बैठीं। वहाँ बहुत समय हो गया तो एक दिन शरीर से उन्होंने मैल उतारा और उसका एक सुन्दर-सा पुतला बनाया, उसमें प्राण फूँक दिये। उन्होंने अपने इस पुत्र का नाम गणेश रखा। एक दिन पार्वती जी स्नान कर रही थीं,

उन्होंने गणेश को द्वार पर बिठा दिया कि किसी को भी अन्दर मत आने देना। तभी ढूँढते खोजते शिवजी पहुँच गये। गणेश जी ने उन्हें माँ के पास जाने से रोका। शिवजी ने क्रोध करके उसका सिर काट दिया। भीतर पार्वती जी से मिले। पार्वती जी ने गणेश की बाबत पूछा। उसकी मृत्यु का समाचार सुन उसे जीवित कर देने का आग्रह किया। तब एक हथिनी के बच्चे का सिर लाकर उनके शरीर पर रख गया, तब गणेश जी जीवित हुए। इन्हें लेकर शिवजी देव-सभा में गये। वहाँ स्वामि कार्तिक और गणेश की परीक्षा ली गयी। दोनों से कहा गया कि जो सबसे पहले तीनों लोकों की परिक्रमा करके आजायेगा उसे लड्डू मिलेगा। स्वामी कार्तिक मोर पर चढ़ कर दौड़े। गणेश जी ने सोचा कि ये भगवान स्वयं ही त्रिलोकी हैं। उन्होंने वहीं उनकी परिक्रमा कर ली। भगवान ने उनकी बुद्धि से चकित हो उन्हें लड्डू तो दिया ही यह आशीर्वाद भी दिया कि तुम बुद्धि के देवता माने जाओगे, और तुम्हारी पूजा ही सबसे आरम्भ में हुआ करेगी। स्वामि कार्तिक लौटे, और गणेश के हाथ में लड्डू देख समझ गये कि वे बाजी हार गये हैं।

४२ः गणेश चतुर्थी की ही भाँति 'सोमवती अमावस्या' का भी विशेष महत्व होता है। यों तो प्रत्येक अमावस्या ही व्रतानुष्ठान का, दान-पुण्य का, स्नान का दिन होती है, किन्तु सोमवार को पड़ने वाली अमावस्या को सोमवती अमावस्या होती है। गंगा-यमुना स्नान का इस दिन बहुत महत्व माना जाता है। कभी-कभी मानता के अनुसार सोमवती अमावस्या को बटवृक्ष या पीपल की १०८ परिक्रमाएँ दी जाती हैं और उसे १०८ बार कच्चे तागे से लपेटा भी जाता है। ब्राह्मणों को १०८ चीजें दान में भी दी जाती हैं।

४२.१. इस व्रत की यह कथा पुराण में मिलती है—

राजा के राज्य में एक देवस्वामी नाम का एक ब्राह्मण रहता था। उस ब्राह्मण की अति सुन्दरी धनवती नाम की पत्नी थी। धनवती अपने नाम के अनुसार मूर्तिमती दूसरी लक्ष्मी थी। उस पत्नी से देवस्वामी के ही सदृश बड़े गुणी सात पुत्र और गुणवती नाम की एक कन्या हुई। उन सातों पुत्रों का विवाह हो गया और वे आनन्द से अपनी-अपनी पत्नियों के साथ विहार करने लगे। गुणवती कन्या अपने अनुरूप पति चाहती थी। इसी बीच एक ब्राह्मण एक दिन उसके घर भिक्षा के लिए आया। वह अपने ब्रह्मतेज से मूर्तिमान् अग्नि के समान तेजस्वी था, सो उस भिक्षुक ब्राह्मण ने द्वार पर आकर आशीर्वाद प्रदान किया। उसकी मधुर वाणी सुनकर देवस्वामी की सातों पुत्र-वधुएँ बड़े संभ्रम से अलग-अलग भिक्षा लेकर आईं और उन्होंने पृथक्-पृथक् भिक्षा उस ब्राह्मण को दिया। भिक्षा के बदले उस भिक्षुक ने उन स्त्रियों को 'सदा सौभाग्यवती भव' कह कर आशीर्वाद दिया। धनवती ने अपनी कन्या गुणवती को भी भिक्षा देने को भेजा। गुणवती ने आकर प्रस्थान के लिए उद्यत भिक्षुक को रोककर भिक्षा दी, तो उस भिक्षुक ने गुणवती को भी आशीर्वाद देते हुए कहा—हे शुभे! तुम धर्मवती होवो। आशीर्वाद सुनकर गुणवती अपनी माता के पास गई और कहा—माताजी! भिक्षुक ने मुझे धर्मवती होने का आशीर्वाद दिया है। इस पर गुणवती की माता अपनी पुत्री गुणवती को साथ

लेकर भिक्षुक के पास आई और गुणवती से उस भिक्षुक को फिर प्रणाम करवाया। भिक्षुक ने फिर गुणवती को वही आशीर्वाद दिया, जो पहले दिया था। तब उसकी माता धनवती बड़ी चिन्तित होकर बोली। हे भगवान ! हे विप्र ! आप मुझ पर प्रसन्न हों और मेरे बचन को ध्यान देकर सुनें और मन मे विचार कर उसका उत्तर दें। क्योंकि मुझे बहुत बड़ा सन्देह है कि आपने मेरी पुत्रबधुओं को सदा सौभाग्यवती रहने का बरदान दिया तथा मेरी गुणवती कन्या को आपने विपरीत वरदान क्यों दिया। हे भद्र ! तुम सदा धर्मवती हो, यही वर बार-बार आपने दिया है। परन्तु इसे आपने सदा सौभाग्यवती होने का वर नहीं दिया है। हे विप्र ! इसका कारण आप मुझे बतलाइये, मुझको बड़ा सन्देह हो रहा है। तब भिक्षुक ने कहा—हे धनवती ! तुम धन्य हो और जगत् में विख्यात चरित्रवती हो। देखो धनवती को मैंने जो आशीर्वाद दिया है सो इसके योग्य है। क्योंकि तेरी गुणवती को सप्तपदी पड़ने के समय ही वैधव्य प्राप्त होगा, इससे इसको सदा धर्माचरण करना पड़ेगा। इसीसे मैंने इसे यही वर दिया है कि तू 'सदा धर्मवती होवे'। यह कथन सुनकर धनवती को बड़ी चिन्ता हुई। उसने उसे पुन: पुन: प्रणाम करके प्रार्थना की कि हे विप्रेन्द्र ! आप इसके प्रतिकार का उपाय भी अवश्य जानते होंगे सो हे दयानिधे ! मुझे दया करके कोई उपाय बतादें। तब भिक्षुक ब्राह्मण ने कहा—जब कभी तेरे घर में सोमा आये, तब हे सुन्दरि। उस सोमा का विधिवत् पूजन करने से ही इसका वैधव्य दोष दूर हो जायगा। धनवती ने कहा—हे द्विज देव ! वह सोमा कौन है, कौन जाति की है और वह कहां रहती है। और क्यों उसके आने मात्र में हो वैधव्य दोष नष्ट हो जाता है। हे महाभाग ! यह मुझे बता दो, अब बिलम्ब करने का समय नहीं रहा। यह सुनकर भिक्षुक ब्राह्मण ने कहा, अच्छा सुनो ! सोमा जाति की धोबिन है और सिंघल द्वीप की निवासिनी है वह यदि तेरे घर में आयेगी तो वैधव्य दोष भंग हो जायगा। इतना कहकर वह ब्राह्मण भिक्षुक भिक्षा के लिये अन्यत्र किसी घर को गया। तब धनवती ने अपने पुत्रों से कहा—हे पुत्र ! तुम्हारी बहिन गुणवती का सोमा के आगमनमात्र से वैधव्य दोष दूर हो जायगा। सो जिसको पिता की भक्ति तथा माता के बचन का ध्यान हो वह अपनी बहिन को साथ लेकर सोमा को लाने के लिये जाय। पुत्रों ने कहा—हे माता ? हमने तुम्हारे अन्त:करण का भाव जान लिया है। तुम्हारा हृदय पुत्री के स्नेह वश व्याकुल है। यही कारण है कि तुम पुत्रों को सोमा को लाने के लिये दुर्गम स्थान में भेज रही हो। क्योंकि उस मार्ग में सौ योजन विस्तृत दुर्लंघ्य दुस्तर समुद्र आ पड़ता है। उसे पार करके आना जाना साधारण काम नहीं है। हम वहाँ जाने में सर्वथा असमर्थ हैं। देवस्वामी ने कहा—मैं सात पुत्रों का पिता होकर भी निपूता हूँ। अच्छा कोई मत जाओ। मैं स्वयं सिंगल द्वीप जाऊँगा। और पुत्री का वैधव्य नाश करने वाली सोमा को जैसे बनेगा लाऊँगा। कुपित पिता देवस्वामी के बचन सुनकर उसी समय शिवस्वामी नाम के सबसे छोटे पुत्र ने कहा—पिताजी ! आप इस तरह कुपित न हों और ऐसा वचन मत कहें। भला मेरे रहते सिंगल द्वीप में जाने को दूसरा कौन समर्थ हो सकता है, आप क्रोध त्याग दें। मैं ही गुणवती बहिन को साथ लेकर सिंहल द्वीप को जाऊंगा। ऐसा कहकर शिवस्वामी उठा और पिता को प्रणाम करके

अपनी बहिन गुणवती को साथ लेकर सिंहलद्वीप को चल पड़ा। वह बहुत दिनों में जाकर समुद्र के तीर पर पहुँचा और उस समय समुद्र को पार करने के लिये शिवस्वामी ने बहुत प्रयत्न किया। शिवस्वामी ने उसके समीप में ही एक बड़ा भारी बट् का वृक्ष देखा। उस वृक्ष के खोते में गीध के बच्चे रहते थे। उसी के नीचे बैठकर शिवस्वामी और गुणवती ने वह दिन बिता दिया। उसी समय वह गीध बच्चों के लिये चारा लेकर आया और उन बच्चों को चुगाने लगा। पर उस दिन शावकों ने गीध से चारा नहीं खाया तब चिन्ताकुलित मनवाले बच्चों से गीध ने कहा—हे पुत्रो ! तुम भूखे होकर भी आज क्यों नहीं चारा चुग रहे हो ? मैं तुम्हारे लायक कोमल और ताजा माँस लाया हूँ। फिर भी तुम नहीं खाते ? तब बच्चों ने कहा—सुनिये पिताजी ! आज वृक्ष के नीचे दो मनुष्य बैठे हुए हैं। उनके खाये बिना हम भला कैसे भोजन करलें। बच्चों के वचन को सुनकर करुणा से गृध्रका हृदय भर आया और उन दोनों के पास आकर उसने कहा—हे द्विज ! तुम्हारा काम हो गया। मैं स्वयं तुम्हारा काम करूँगा। जो तुम्हारा काम हो सो कहो और कुछ भोजन करो। शिवस्वामी ने कहा—मैं इस समुद्र के पार सिंहलद्वीप को जाना चाहता हूँ। और यह भी इच्छा है कि इस गुणवती का वैधव्य नष्ट करने वाली सोमा फिर चली आवे। तब वह गीध बोला—मैं कल प्रातःकाल ही तुमको इस समुद्र के पार पहुँचा दूंगा और सोमा नामवाली रजकी का घर भी मैं सिंहलद्वीप में दिखा दूंगा। तब रात्रि के बीतने और सूर्य के उदय होने पर उस वेगवान गृध्रराजने शिवस्वामी तथा गुणवती को समुद्र के पार ले जाकर पहुँचा दिया। वे दोनों सिंहल द्वीप में आकर सोमा रजकी के घर के समीप ही टिक गये। तब से वे दोनों नित्य प्रातःकाल के समय सोमा के आँगन को झाड़-बुहार लीपने लगे। इस प्रकार प्रतिदिन बुहारी देते और लीपते-लीपते एक बर्ष का समय बीत गया। एक दिन सोमा ने अपनी पतोहू तथा पुत्रों को बुलाकर पूछा कि यहाँ आँगन में बुहारी कौन दे जाया करता है और कौन लीप जाता है यह मुझको बतलाओ। तब वे बोले—हमने तो न कभी बुहारी लगायी और न लीपा ही है। यह सुनकर सोमा को बड़ा बिस्मय हुआ। इस बात की बहुत कुछ तालाश भी तब एक दिन रजकी सोमा ने प्रातःकाल के समय ब्राह्मण की पुत्री को आँगन में झाड़ू लगाते और उसी दिन उसके भाई को आँगन में गोबर से लीपते हुए भी देखा। तब सोमा ने उनसे पूछा कि तुम कौन हो ? उन्होंने उत्तर दिया कि हम दोनों ही ब्राह्मण हैं। तब सोमा ने हाय ! हाय, ऐसा कहकर कहा—तुमने मुझे भस्म कर दिया कि जो तुम दोनों ही ब्राह्मण होकर भी मेरे घर में झाड़ू लगाते और लीपते हो। हाय ! मैं इस महापाप से कौनसी गति पाऊँगी। क्योंकि मैं तो जाति की रजकी (धोबिन) हूँ और आप ब्राह्मण हैं। तुम ब्राह्मण होकर मेरे घर में बुहारी देते हो यह नीति विरुद्ध काम तुम क्यों करते हो ? शिवस्वामी ने कहा—यह मेरी गुणवती नाम की सुमध्यमा बहिन है। इसके भाँवर पड़ते ही वैधव्य होना लिखा है सो तुम्हारे समीप होने से इसका वैधव्य नष्ट हो जायगा। अतएव मैं अपनी भगिनी गुणवती को लेकर तुम्हारी सेवकाई करने को यहाँ आया हूँ। सोमा ने कहा—बस, अब तुम आज से यह काम मत करो। मैं तुम्हारी आज्ञा से जहाँ तुम कहोगे वहाँ चलूँगी तुम्हारी आज्ञा पालन करूँगी। ऐसा कह और घर में जाकर सती सोमा ने अपनी पतोहुओं से कहा

कि मैं यहाँ से इनके साथ जा रही हूँ। आज से यदि कोई भी प्राणी मेरे राज्य में मरे तो तुम उसकी बराबर रक्षा करना। जब तक मैं न आऊँ तब तक किसी को किसी के कहने से अग्नि में जलाना नहीं। उसकी पुत्रबधुओं ने अपनी सास की बात को अंगीकार किया और सोमा वहाँ से चलकर महासागर के पास गई और उसने क्षणभर में उन दोनों को लेजाकर समुद्र के पार पहुँचा दिया। तदनन्तर वह स्वयं आकाश मार्ग से उड़कर क्षण में समुद्र को पार कर गयी तब ये तीनों एक निमेष में कांचीपुरी में आ पहुँचे। तब धनवती ने सोमा को आयी भयी देखकर प्रसन्न मन पूजा की। इसी बीच में शिवस्वामी भी देशान्तर से अपनी भगिनी के बर पाने की इच्छा से उज्जयनी नाम नगरी में चला गया। वहाँ से देवशर्म्मा ब्राह्मण का पुत्र रुद्रशर्मा जोकि बड़ा गुणी था, उसे अपनी बहिन गुणवती के बर के हेतु लाया। तब रजकी सोमा के समक्ष गुणवती का रुद्रशर्मा के साथ विवाह होने लगा। तब सुन्दर नक्षत्र तथा सुन्दर लग्न में देवस्वामी रुद्रशर्मा को अपनी कन्या दान करके दी। तदन्तर जब कि विवाह मन्त्रों से अग्नि में हवन किया जा रहा था, तो भाँवर पड़ते ही गुणवती का वर रुद्रशर्मा मर गया। यह दशा देखकर घर के सभी लोग रोने लगे, पर सोमा को कुछ आकुलता नहीं हुई और उस समय लोगों के रुदन से बड़ा कोलाहल मच गया। तत्काल उस सोमा रजकी ने गुणवती के लिए व्रतराज के पुण्य का संकल्प करके उसे दे दिया, जो कि अपमृत्यु का विनाशक था। उस व्रतराज के प्रभाव से रुद्रशर्मा तुरन्त सोये हुए के समान जाग उठा। इस प्रकार उस विवाह कार्य को समाप्त कर तथा व्रतराज का उपदेश देकर उसमें धनवती से आज्ञा माँगी और सोमा धोबिन मरे हुए उस ब्राह्मण को पुनः जिलाकर हर्ष से पूर्ण मनोरथ होकर अपने घर को लौट गई। इसी बीच सोमा के घर में पहले तो उसके पुत्र मरे। बाद को उसका स्वामी भी मर गया और उसके पश्चात् उसका दामाद स्वर्ग सिधारा। सोमा के आने के बाद ही सोमवार युक्त अमावस्या तिथि आ पहुँची, जो मृतसंजीवनी तिथि भी कहलाती है। इसी समय सोमा ने कहीं जल के समीप खड़ी एक बृद्धा स्त्री को देखा, जो बृद्धा स्त्री रुई के बोझ से दबी जा रही थी और बड़ी दु:खिनी होकर बुरी तरह रो रही थी। उस बृद्धा ने सोमा को देख कर कहा—हे बेटी! मेरे शिर से रुई के भार को उतार लो, मैं इसके बोझ से दबी जा रही हूँ और इसीसे रोती हूँ। सोमा ने कहा—हे बृद्धे! आज एक तो अमावस्या तिथि है दूसरे सोमवार भी है इसलिये आज के दिन मैं रुई नहीं छुऊँगी, मेरा आज के दिन का नियम है। उसी जगह एक मूलियों का बोझ लिये जाती हुई अन्य स्त्री को भी सोमा ने देखा। उसे देखकर इस मूलीवाली ने भी सोमा से कहा कि मैं इनके बोझ से दब रही हूँ। तुम मेरा बोझ उतार दो। और तनिक देर मेरे पास खड़ी हो जाओ—मैं भी तुम्हारे संग चलूँगी। सोमा ने कहा—क्या तुम को नहीं मालूम कि आज सोमवती अमावस्या का दिन है। सो मैं आज का दिन मूली और तूल का कभी स्पर्श भी नहीं करती। इसके बाद पीपल के वृक्ष तले पहुँच और नदी के तट पर जा तथा स्नानकर तूल के उसने शर्करा से विष्णु भगवान् का पूजन किया। तदनन्तर उस बड़भागिनी ने एक सौ आठ बार प्रदक्षिणा की। भीष्मपितामह कहते हैं—जब उसने शर्करा हाथ में लेकर अष्टोत्तर सत बार प्रदक्षिणा की तभी उसके जमाता, पति तथा पुत्र सब जी उठे और वह नगर शोभा से पूर्ण हो गया और वह घर भी अपरिमित धन से

भर गया। तब सोमा अपने घर को आई, उसने जब अपने भर्त्ता और पुत्रों तथा दामाद को जीवित देखा और उन जाने हुए लोगों के पास आई तो उसने अपने को कृतकृत्य माना। तब सब पुत्रवधुओं ने आकर उस तपस्विनी को प्रणाम किया और यह पूछने लगीं—हे देवि ! तुम्हारे पति जामाता बान्धव मर गये थे, तब वे सब कैसे और इस तरह जी गये, यह हमें बताओ। तब सोमा बोली—मैंने गुणवती को व्रतराज का पुण्य अर्पण किया था, उस पुण्य दान से इनकी आयु समाप्त हो गई इसीसे ये सब मर गये थे। फिर मैंने तूल का तथा मूल को जो नहीं छुआ और हे पुत्रवधुओ ! जो पीपल में विष्णु का पूजन करके शर्करा का हाथ में लेकर अष्टोत्तरशत (एक सौ आठ) प्रदक्षिणा कीं इस पुण्य के प्रभाव से पति, जामाता तथा पुत्र फिर जी गये। अब से तुम सब भी इस व्रतराज का विधान अवश्य करती रहो ! इससे तुम लोगों को कभी भी वैधव्य नहीं प्राप्त होगा और सदा सौभाग्य बढ़ता रहेगा। यों कहकर सोमा ने सब पुत्रवधुओं से यह व्रत कराया।

४३. इनके अतिरिक्त सामान्य रूपेण दिवस व्रत भी होते रहते हैं। कोई मंगल का व्रत रखता है, कोई वृहस्पति का, कोई रविवार का।

४४ सामान्य तिथियों में शिवत्रयोदशी या शिवचतुर्दशी का व्रत रखा जाता है।

परिशिष्ट

(१)

हिन्दी में धर्म तथा अनुष्ठान विषयक कथा-साहित्य

प:१:१. हिन्दी में यदि समस्त कथा-साहित्य पर दृष्टिपात करें तो उसमें एक अच्छा अंश धर्म तथा व्रत विषयक कथाओं के ग्रंथों का मिलेगा। इन ग्रन्थों पर 'ब्रजलोक साहित्य का अध्ययन' नामक शोध-प्रबंध में कुछ प्रकाश डाला गया है। सुविधा की दृष्टि से उस अंश का यहाँ दुहरा देना आवश्यक है :—

प:१:१:१. दूसरे प्रकार का लोक-वार्त्ता साहित्य जो ग्रन्थ-रूप में खोज मिला है 'धर्म-महात्मय-कथा' सम्बन्धी है। ये ग्रन्थ कई विभागों में रखे जा सकते हैं—इनमें पहले तो ऐसे ग्रन्थ हैं जो धार्मिक व्रत के अनुष्ठान के प्रधान अंग हैं। उदाहरण के लिए 'गणेश जू की कथा'। गणेश-चतुर्थी को गणेशजी की प्रसन्नतार्थ व्रत रखा जाता है। इस व्रत का फल बिना कथा सुने नहीं होता। व्रत-कथा तथा चन्द्रमा के उदय पर जल चढ़ाना ये इस गणेश-चतुर्थी के धार्मिक अनुष्ठान के प्रधान अंग हैं। ऐसी कथाएं दो सम्प्रदायों से सम्बन्ध रखने वाली मिली हैं। एक हिन्दुओं की, दूसरी जैनों की। हिन्दुओं की कथायें कम मिली हैं। वे ये हैं—

१—श्री गणेश जू की कथा
२—श्री सत्यनारायण की कथा
३—यम द्वितीया की कथा
४—पूर्णमासी और शुक्र की वार्त्ता

५—शिव व्रत कथा
६—एकादशी महात्म्य
७—हरतालिका कथा

शेष निम्न ग्रन्थ जैनियों के व्रतों से सम्बन्धित हैं—

१—अनन्तदेव की कथा
२—लघु आदित्यवार कथा
३—पंच कल्याणक व्रत
४—आदित्यवार कथा
५—निशि भोजन त्याग व्रत-कथा
६—शील कथा
७—श्रुत पंचमी कथा
८—रोहिनी व्रत की कथा
९—आकाश पंचमी की कथा
१०—रविव्रत कथा
११—रवि कथा

इनमें एक वर्ग ऐसे ग्रन्थों का है जो 'माहात्म्य' से सम्बंध रखते हैं। अथवा किसी व्रत का महत्व और आवश्यकता बताते हैं। ये अनुष्ठान के अंग नहीं विदित होते। इनमें ये ग्रन्थ आ सकते हैं। १—सूर्य माहात्म्य, २—व्रत-कथा कोष। इनमें से व्रत-कथा कोष जैन-ग्रन्थ है। कुछ वे ग्रंथ हैं जो धर्म के प्रचार की दृष्टि से उपयोगी हैं। इसमें किसी विशेष धर्म की श्रेष्ठता सिद्ध की गयी है। ऐसे ग्रन्थ बहुधा जैन-धर्म की महत्ता के द्योतक हैं। संयुक्त कौमुदी भाषा, वारांग कुमारचरित, नर्मद सुन्दरी, पद्मनाभ चरित्र में जैन धर्म का महत्व प्रतिपादित किया गया। 'मोहमरद की कथा' जैसे ग्रन्थ में धर्म के मर्म की सूक्ष्म परीक्षा की कहानी दी गयी है। 'चण्डी चरित्र' भी धार्मिक महत्व की पुस्तक है। यह दुर्गापाठ का अनुवाद है।

एक बहुत बड़ी संख्या उन ग्रन्थों की है जो धार्मिक-अनुष्ठान अथवा उसके माहात्म्य से तो संबंधित नहीं, पर जो धार्मिक दृष्टि से लिखे गये हैं। वे धर्म-ग्रन्थों में गिने जा सकते हैं, और उनका स्वभाव पुराणों से मिलता जुलता है। उनका विषय अंग्रेजी शब्द माइथालाजी से अभिव्यक्त किया जा सकता है। ये ग्रन्थ या तो किसी पुराण के अथवा उसके किसी अंश के अनुवाद हैं। अथवा पुराणों के लिए किसी विषय पर स्वतन्त्रता पूर्वक लिखे गये हैं। इन सब के विषय उनके नामों से विदित हैं। इनमें से आदि पुराण जैनियों का पुराण है। महापद्मपुराण भी उन्हीं का है। धर्म संपद की कथा में युधिष्ठिर संवाद महाभारत से लिया हुआ है। जैमुन कथा में जैमिनी अश्वमेघ का विषय है। हरिश्चन्द्र की कथा कहीं-कहीं आदित्यवार की कथा का अंग मानी गयी है। नासकेत कठोपनिषद के नचिकेता का हिन्दी में आवर्त्तन है। चण्डी चरित्र प्रसिद्ध दुर्गापाठ का अनुवाद है। नृसिंह-चरित्र में नृसिंह अवतार का, बहुला-कथा में 'भविष्योत्तर पुराणान्तर्गत कंदुला व्याघ्र सम्वादे' बहुला कथा का, सुदामाजी की बारहखड़ी में सुदामा-

चरित्र का, श्रावणाख्यान में श्रवणकुमार के चरित्र का, नृगोपाख्यान में राजानृग के चरित्र का, शिवसागर में नारद-चरित्र, देवी-देव-चरित्र, गंगाचरित्र, जालन्धर कथा, तुलसी चरित्र, सावित्री चरित्र आदि का, वीर-विलास में महाभारत के द्रोण पर्व का, उषा-चरित्र में उषा-अनिरुद्ध की कथा का, प्रद्युम्न चरित्र में कृष्ण के पुत्र प्रद्युम्न के चरित्र का, सुन्दरी चरित्र में राजा सुरथ और समाधि वैश्य के संवाद द्वारा देवीजी की उपासना के फल तथा देवी-चरित्र का वर्णन है।

तथा

८:१:१:२. धर्म और महातम्य सम्बन्धी कुछ पुस्तकों का उल्लेख ऊपर किया जा चुका है। यहाँ कुछ अन्य का विवरण दिया जाता है :—

आदित्यवार की कथा का संक्षिप्त यह है :—

काशी में मतिसागर नामक श्रेष्ठों के होने का वर्णन तथा अपनी स्त्री सहित उनकी श्रद्धा जैन-धर्म में होना —आठ पुत्र होना।

एक मुनि का आगमन—सेठानी का उन सेआदित्य व्रत के विषय में पूछना—मुनि का आसाढ़ में रविवार के दिन सत्य संयम युक्त व्रत करने का विधान—नव वर्ष तक पालन करने का आदेश—आदेश ठीक पालन न हो सकने के कारण हानियाँ।

पुत्रों के विछोह से सेठानी का विकल होना। एक मुनि से उनके आने के विषय में पूछना—मुनि का सेठानी का ध्यान व्रत की ओर आर्कषित करना—व्रत करना—पुत्रों को उन्न अवस्था में प्राप्त करना—

इन व्रत कथाओं में प्राय: सभी में विशेष 'तिथि' अथवा 'वार' को व्रत रखने का महात्म्य वर्णन है। विवाह, पुत्र-प्राप्ति धन-प्राप्ति जैसे फल व्रत रखने से मिलते दिखाये गये है। व्रत में विघ्न डालने वाले को कष्टों का सामना करना पड़ा है। व्रत रखने वाले के संकट दूर होते दीखते हैं। 'श्रुत पंचमी' की कथा[१] में सेठ धनपति की कथा है। मुख्य उद्देश्य है श्रुत पंचमी के व्रत से खोए हुए पुत्र का मिलना। सुरेन्द्र कीर्ति विरचित 'रवि-व्रत कथा' में उस मस्तिसागर सेठ की कहानी है, जिसने अपनी स्त्री के रविव्रत लेने की निन्दा की, फलत; सब धन नष्ट हो गया। पुन: लड़कों द्वारा व्रत साधन करके पूर्व समृद्धि मिली। आकाश पंचमी[२] का व्रत रखने से एक स्त्री लिंग भेद कर पुरुष रूप में जन्म ग्रहण करती है। निशि भोजन त्याग व्रत कथा[३] में अत्यन्त प्रचलित लोक-कहानी के एक तत्व का उपयोग है। पत्नी के निशिभोजन त्याग पर शैव पति रुष्ट होता है। वह सर्प लाकर पत्नी के गले में डालता है। वहाँ वह हार हो जाता है। पति के गले में वह सर्प बनकर उसे डस लेता है। पत्नी फिर उसे जिला लेती है। 'धर्म परीक्षा'[४] में जैन और ब्राह्मण धर्म का विवाद है, जिसमें ब्राह्मणों को परास्त हुआ दिखाया गया है।

१. लेखक ब्रह्मरायमल, रचना काल संवत् १६३३।
२. लेखक खुसाल कवि, रचना काल संवत् १७८५।
३. लेखक भारामल।
४. लेखक मनमोहनदास, रचना संवत् १७०५।

'पुण्यार्णव कथा'[५] तो पुण्यकथाओं का छोटा कोश है। 'रुक्मांगद की कथा'[६] में एकादशी व्रत का महात्म्य बताया गया है। बहू से लड़ाई हो जाने के कारण बुढ़िया को एकादशी का उपवास करना पड़ा था, इसी उपवास के प्रताप से उसके स्पर्श से उस मोहिनी का रुका हुआ रथ चल पड़ा था, जिस मोहिनी को इन्द्र ने छल करके रुक्मांगद के राज्य में एकादशी व्रत बन्द कराने भेजा था। 'बन्दीमोचन कथा' अ-जैन है। काशी की बन्दी देवी की पूजा से पुत्र प्राप्ति का इसमें उल्लेख है। सुदर्शन लिखित 'एकादशी महात्म्य' में प्रत्येक मास की एकादशी व्रत का फल बताने के लिए एक कथा दी हुई है। उदाहरणार्थ कुछ अंश की संक्षिप्ति यहाँ दी जाती है :—

अगहन शुक्ला एकादशी की उत्पत्ति, कृस्ण अर्जुन संवाद, देवासुर संग्राम, विष्णु का गुफा में छिपना, स्त्री का गुफा से निकल कर राक्षस को मारना, वह एकादशी थी।

माघ कृष्णा एकादशी के व्रत का नियम उसका इतिहास एक ब्राह्मणी की नारायण द्वारा परीक्षा, भिक्षा माँगने पर मिट्टी डालना, उसको स्वर्ग होना, केवल मिट्टी का घर मिलना, नारायण का खाली मकान देने का कारण बताना, मुनि-नारियों का उसे व्रतदान का फल प्रदान करना, उसके घर में सब कुछ हो जाना।

एकादशी व्रत का नियम इतिहास, पतित और अभिशप्त गन्धर्व और पुष्पवती अप्सरा का पिशाच पिशाची होना, एकादशी के अज्ञात व्रत से उनका उद्धार।

फागुन शुक्ल पक्ष की एकादशी का नियम सुरथ का एकादशी के प्रभाव से शत्रुओं का नाह।

चैत्र कृष्ण एकादशी—एक ऋषि की तपस्या देख कर और इन्द्रासन जाने के भय से इन्द्र का विघ्न डालना। मुनि का स्त्री के साथ ५७ वर्ष निवास, ज्ञात होने पर स्त्री को मुनि का अभिशाप. एकादशी व्रत से दोनों का कल्मष दूर होना।

चैत्र शुक्ल एकादशी—नागपुर के ललित नामक पुरुष का अपनी पत्नी ललिता के एकादशी व्रत करने से फल, पति देने से ललित का शाप मोचन।

बैशाख कृष्ण एकादशी— लखनपुर के राजा हरिसेन के एक चमार द्वारा एकादशी का फल प्राप्त करने पर एक गदहा बने हुए ब्राह्मण का उद्धार।

५. लेखक रामचन्द्र, रचना संवत् १७६२।
६. लेखक सूरदास कवि।
१. रचना संवत् १७७०।

बैशाख शुक्ल एकादशी—सेठ के पापी बेटे का एकादशी व्रत से उद्धार।

ज्येष्ठ कृष्ण एकादशी—एक अप्सरा का विमान बैंगन के धुंए से नीचे गिरा, एक एकादशी को भूखी दासी के फल से ऊपर चढ़ा।

ज्येष्ठ शुक्ल एकादशी—गन्धर्व जिन्द हुआ, एकादशी व्रत के महात्म्य सुनने से राजकुमार हुआ, एकादशी से उसका उद्धार।

आसाढ़ कृष्ण एकादशी—एक कुष्ठी ब्राह्मण का उद्धार।

आसाढ़ शुक्ल एकादशी—बलि की कटा, इस प्रकार सभी एकादशियों का वर्णन ।

फिर सब का फल, इनमें पौराणिक कथायें दी गयी हैं ।

'गणेश चतुर्थी' की कथा की भी कई पुस्तकें मिली हैं । सत्य नारायण की कथा भी मिली है ।

प:१:१:३. कथायें—

पहले 'कथा' वर्ग को ही लिया जाय । धार्मिक अभिप्राय से जो कथा कही सुनी जाती है उसे 'कथा' कह सकते हैं । कथावाचक पण्डित का इसमें पूरा हाथ रहता है । ऐसी कथाओं के दो रूप मिलते हैं । एक तो साहित्य में समादृत है । यह पूर्ण 'चरित' अथवा 'सकल-कथा' के रूप में होता है । 'राम-कथा' ऐसी ही कथा है । दूसरी कथा साहित्यकार को उतना आकर्षित नहीं कर पाती । यह कथा भी पंडितों अथवा पुरोहितों के द्वारा ही कही जाती है, पर इसे 'चरित' नहीं कहा जा सकता । इन कथाओं में पौराणिक आस्था तो होती है, पर ऐतिहासिक विश्वास नहीं होता । ब्रज में ऐसी दो कथायें विशेष प्रसिद्ध हैं सत्यनारायण की कथा तथा गणेशजी की कथा । 'सत्यनारायण की कथा' तो महात्म्य कथा है । सत्यनारायण व्रत रखने से क्या फल मिलता है, न रखने से क्या होता है, इसी को 'सत्यनारायण' की कथा में विविध वृत्तों से प्रकट किया गया है । 'गणेश-कथा' में तीन भाग हैं—एक में शिव-पार्वती का कलह, पार्वती का एकान्त सेवन, दूसरे में गणेश जन्म । शरीर के मैल के पुतले में प्राण-संचार, उसका द्वारपाल बनना । शिव से युद्ध, सिर कट जाना, पार्वती का विलाप, हाथी का सिर लगा कर जीवित करना । तीसरे में गणेश जी के बुद्धि वैभव का वर्णन । स्वामी कार्तिक से तुलना, पर गणेश की विजय । यह पौराणिक वृत्त है और धर्मगाथा है । इसमें कितने ही अर्थ हैं, साथ ही लोकवार्ता की ही बातों का इसमें समावेश है । 'मैल का पुतला बनाकर प्राण-संचार' और 'कटे धड़ पर हाथ का सिर रख कर सजीव करना' ये दो विशेष बातें इसमें साधारण लोकवार्ता के तत्व को प्रकट करती हैं । इन कथाओं पर ब्रज का कोई विशेषाधिकार नहीं । हिन्दू धर्म की पौरोहित्य-प्रणाली इन कथाओं को सर्वत्र प्रचलित किए हुए है । ये एकानेक लिखित रूप में विद्यमान हैं ।

व्रत की कहानियाँ—इनके उपरान्त 'व्रत के अंग' वाली वे कहानियाँ हैं जो बहुधा स्त्रियों में प्रचलित हैं । वे स्त्रियों के व्रत-अनुष्ठान के अंग होती हैं । अध्याय तीन के (इ) भाग में व्रत के संक्षिप्त विवरण में यह बताया जा चुका है कि किन व्रतों के साथ कहानी आवश्यक है । ऐसी कहानियाँ निम्नलिखित हैं ।

(१) नागपंचमी की कहानी, (२) भैया पाँचें की कहानी, (३) दूबरी सातें की कहानी, (४) ओष द्वादशी की कहानी, (५) अहोई आठें की कहानी, (६) करवाचौथ की कहानी, (७) शिवचौदस की कहानी, (८) सोमवार की कहानी, (९) रविवार की कहानी, (१०) शनिवार की कहानी, (११) शुक्रवार की कहानी, (१२) वृहस्पतिवार की कहानी, (१३) बुद्धवार की कहानी, (१४) मंगलवार की कहानी, (१५)

अनन्त चौदस की कहानी, (१६) भैया दौज की कहानी, (१७) दिवाली की कहानी, (१८) सकट चौथ की कहानी ।

वृत्त और भाव—इन कहानियों के वृत्त में विशेष भाव परिव्याप्त मिलता है । इसमें कोई संदेह नहीं कि ये व्रत और अनुष्ठान किसी कामना और फल प्राप्ति के लिए किये जाते हैं । ये कामनायें तथा फल लौकिक हैं । इनमें आध्यात्मिक भाव नहीं मिलते । घर-गृहस्थ में जिन बातों की आवश्यकता रहती है, जो अभाव खटकते हैं उनकी प्राप्ति की कामना कहानी कहने के साथ रहती है । इसमें अशुभ परिणाम का निवारण तथा कल्याण की दृष्टि से देवताओं को प्रसन्न करने की बात भी रहती है । इन कहानियों में जो भाव व्याप्त हैं :—(१) भाई-बहन के प्रेम और कल्याण का भाव—यह भाव नाग पंचमी, भैया पाँचें, भैया दूज की कहानी में है । (२) पुत्र प्राप्ति—यह भाव अहोई आठें की कहानी में है । (३) सौभाग्य-प्राप्ति—यह भाव दूबरी सातें, करवा चौथ, सोमवार की कथा में है । (४) धर्म और समृद्धि की प्राप्ति—यह भाव सबसे अधिक कहानियों में है, दिवाली की कहानी, सकट चौथ, मंगल, वृहस्पति, रविवार की कहानियाँ इस भाव से युक्त हैं । (५) देवताओं के महात्म्य का भाव—यह भाव वैसे तो प्रतिदिन के देवता के प्रत्येक कहानी में है पर शुक्र और शनि की कहानी को छोड़कर अन्य कहानियों में इन देवताओं के रूप का वर्णन है । (६) स्त्री की मान-रक्षा का भाव—यह शिव चौदस की कहानी में है । (७) पूर्व जन्म के पाप के फल-भोग और उसके निवारण का भाव—यह भाव अनन्त चौदस की कहानी में है । (८) गाय की हत्या के प्रायश्चित का भाव—यह ओघद्वादशी की कहानी में अभिव्यक्त हुआ है । इन कहानियों के अन्त में प्रायः एक 'आशीर्वादात्मक' वाक्य रहता है । यदि कहानी का परिणाम 'शुभ' है तो कहा जाता है कि "जैसो वाकूं भयो वैसो सब काहू कूं होइ ।" यदि कोई अशुभ परिणाम होता है तो कहा जाता है कि "जैसा" उनको हुआ वैसा किसी को न हो ।" ये सभी कहानियाँ जीवन में आशावादी भाव और आस्था उत्पन्न करने वाली हैं ।

सर्प—इन कहानियों के वृत्त पर दृष्टि डालने से विदित होता है कि 'सर्प' कई कहानियों में अभिप्राय की भाँति आया है । नागपंचमी की कहानी में एक स्त्री 'सर्प' की प्राणरक्षा करती है ।[1] इस कृतज्ञ भाव से सर्प उस स्त्री को अपनी बहिन मान लेता है । वह भाई की भाँति अपनी उस बहिन को बुलाता-चलाता है और उसके अभावों को दूर करता है । भैया-पाँचें की कहानी इसी नागपंचमी की कहानी का शेषांश है । बहिन को अपने माने हुए भाई के प्रति भी कितना गहरा प्रेम हो जाता है । यह इससे विदित होता है । बहिन अपने भाई की झूठी सौगन्ध कभी नहीं खा सकती, यह भी इसी कहानी ने बताया है । दूसरी सातें की कहानी में 'सर्प' पति रूप में आया है । स्त्री अपनी नाधिकार चेष्टा में दूसरे के बहकावे में आकर वर्जित बात पूछ बैठती है, फलतः वह अपने पति को खो देती है । अन्त में एक वृद्धा की बताई विधि से सर्पों

१. यही कहानी काठियावाड़ के भावनगर से मिली है । इसमें नागिन प्रसन्न हुई है । और स्त्री को अपनी बेटी बनाया है ।

के राजा को दूध पिला कर प्रसन्न करके वह अपने पति को पुनः प्राप्त कर लेती है।

स्याहू—अहोई आठें की कहानी में 'स्याहू' का उल्लेख है। 'स्याहू' के सम्बन्ध में ब्रज के गाँवों में प्रचलित मत यह है कि यह एक स्याँपिन है। भाषा-विज्ञान की दृष्टि से भी यह असम्भव नहीं। सर्प से साँप, स्याँपु, स्यांउ, स्याऊ, स्याहू यह निरुक्ति हो सकती है। अहोई आठें को जो भित्ति-चित्र स्त्रियाँ पूजने के लिए बनाती हैं उनमें भी सर्प-आकृतियाँ बनाई जाती हैं। दिवाली के उपरान्त प्रतिपदा को सूर्योदय से पूर्व ही 'स्याहू' का पूजन स्त्रियों के द्वारा किया जाता है। गोबर का एक गोल चोथ बीच में रख लिया जाता है। सींकों के सिर पर रुई के फूल लगाकर उन सींकों को उस गोबर में चारौं ओर गाड़ देते हैं। इस पर एक दीपक जला दिया जाता है। स्याहू को यदि सर्प ही माना जाय तो यह उसके मणिधर फण का प्रतीक हो सकता है। यह भी हो सकता है कि यह 'स्याहू' 'स्यावढ़' हो सर्प नहीं। दीपावली 'शस्य' का त्यौहार है। शस्य की जो ढेरियाँ 'भूमि-गणेश' के निमित्त बनाई जाती हैं वे उजरी या स्यावढ़ कहलाती हैं।[1] कुछ भी हो अहोई आठें की कहानी की 'स्याहू' साँपिन ही है। उसे स्याही माता भी कहा गया है। एक स्त्री से मिट्टी खोदते समय फावड़े से अनजाने ही अंडे-बच्चे कट गये।[2] उनकी माँ अब प्रतिवर्ष उस स्त्री के बच्चे ले जाया करती, इस प्रकार प्रति अहोई आठें को उसे रोना पीटना पड़े। उसकी ननद, दौरानी, जिठानी ने उसका नाम 'सद-रोमनी' रख लिया। उसके इस दुःख से करुणा-कातर हो एक बुढ़िया[3] ने उपाय बताया कि आने वाली, 'अहोई आठें' को तू किसी नाँद में कढ़ी, किसी में कुछ, किसी में कुछ पका के रख लेना[4]। बिटौरा में पुत्र जनना, आधी रात को स्याहू माता आयेगी, उसके जूंए देखना, उससे कानों की तुरपुती या तरकी माँग लेना। तेरे बच्चे जी उठेंगे। उसने ऐसा ही किया, और उसके बच्चे उसे मिल गये।

---

१. देखिए:—सर हेनरी ऐम० ईलियट० की 'मेमोयर्स आन दी हिस्ट्री, फोक-लोर एण्ड डिस्ट्रब्यूशन आव दी रेसेज आव दी नार्थ वेस्टर्न प्राविन्सेज आव इंडिया'। भाग १, पृष्ठ ३११ की पाद टिप्पणी।

२. ये अण्डे-बच्चे 'स्याहो' के ही थे। अकबरपुर से पातीरामजी ने जो कहानी संग्रह की है उसमें ये 'चकोल-चकवा' के लिखे गये हैं। लोहबन की में स्यांपिन के लिखे गये हैं। अकबरपुर की कहानी में किसी भ्रम से ही ये चकोल-चकवा के बच्चे हो गए हैं। आगे उसमें भी स्याहो द्वारा प्रतिकार की बात कही गई है।

३. लोहबन वाली कहानी में दो नाँदों में दूध भर कर रखने की बात है। एक में मीठा दूध, दूसरी में नमकीन। कहीं-कहीं इस 'अभिप्राय' का उल्लेख ही नहीं किया गया।

४. किसी-किसी कहानी में बुढ़िया ने तो केवल इतना बताया है कि पड़ोस की एक गाय की स्याहू से मैत्री है। उसकी सेवा कर। उस स्त्री ने गाय की मन लगाकर सेवा की। प्रसन्न होकर गाय ने स्याहू को प्रसन्न करने का उपाय बताया।

इन कहानियों में तो सर्प पात्रों की भाँति आये हैं। 'भइया दौज' की कहानी में रात्रि में भइया के लिए लड्डू या रोटी बनाने के लिए आटा पीसते समय आटे में सर्प पिस गया। इस आशंका से कि भाई कहीं वे लड्डू खा न ले, बहिन भाई के पीछे-पीछे गयी। तभी उसे भाई पर आने वाली भावी विपत्तियों की सूचना मिली तो वह उसके साथ ही चल दी। गाली देती हुई वह गयी। उसने आने वाली आपत्तियों से भाई के प्राण बचाये। भैया-दौज की यह कहानी अद्भुत और मर्म-स्पर्शी है। सौभाग्य-प्राप्ति की कहानी में 'करवा-चौथ की कहानी का विशेष स्थान है। करवा-चौथ का त्यौहार ही 'सौभाग्य' का त्यौहार है। भाई बहिन का प्रेम इस कहानी में मूलवृत्त का आधार-साधन है। भूखे भाई बहिन के साथ ही भोजन करते थे। करवा-चौथ के दिन बहिन बिना चन्द्रमा को अर्घ्य दिये भोजन नहीं करेगी। भाइयों ने पेड़ पर चढ़ कर एक चलनी में दीपक रख बहिन को चन्द्र-दर्शन का धोखा दिया। बहिन का व्रत खंडित हो गया, फलतः बहिन के पति की मृत्यु हो गयी। बहिन ने पति के शव के चारों ओर जौ बो दिये और उस शव की रक्षा करती रही। अन्ततः उसने दूसरी करवा चौथ को अपने पति को पुनरुज्जीवित कर लिया। इस कहानी के दो रूपान्तर मिलते हैं। एक में वह पति के शव पर उगी 'घास' को उखाड़ने लगी। सब घास उखाड़ ली, केवल आँखों के ऊपर की रह गयी। तभी बाँदी आ गयी, उसने कहा मैं ही उखाड़े देती हूँ। बाँदी उखाड़ने लगी, रानी सो गयी। अंतिम घास उखड़ आने पर पुरुष उठ बैठा। बाँदी रानी बनी, रानी को बाँदी बना लिया। गुड्डियां-गुड्डे की कहानी के द्वारा रानी ने यथार्थ-वृत्त अपने पति को सुना दिया। दूसरे रूप में बहिन अपने पति के शव को अपने मायके ले गई। वहाँ छोटी भावज से उसने सुहाग माँगा। उसकी छिगनी अंगुली में अमृत था। अंगुली चीर कर उसने अमृत शव के मुख में डाल दिया, वह जीवित हो गया। धन और समृद्धि की कामना वाली कहानियों में एक कहानी, दिवाली की कहानी में तो युक्ति से लक्ष्मी को वश में किया गया है। भाट और भाटिनी ने राजा से यह वरदान माँग लिया है कि दिवाली के दिन उन्हीं के घर में दीपक जलेगा और किसी के घर में नहीं जलेगा। सर्वत्र अंधेरा था केवल भाट के घर में प्रकाश था। लक्ष्मी सर्वत्र अंधकार देखकर भाट के ही यहाँ आई। भाट ने उसे उस समय तक घर में नहीं घुसने दिया जब तक कि लक्ष्मी ने यह वचन न दिया कि वह उनके जीवन-पर्यन्त उन्हीं के रहेगी। मंगलवार की कहानी में हनूमान की सेवा के फलस्वरूप दरिद्र ब्राह्मण को यह वरदान मिला कि उसके घर में सवा पहर कंचन बरसेगा। एक बनिया यह सुन रहा था। उसने ब्राह्मण से अपना मकान बदल लिया। अब बनिया इस प्रतीक्षा में कि सोना बरसेगा पर सोना न बरसा। बनिया बड़ा क्रुद्ध हुआ। वह हनूमानजी के मन्दिर में आया और मूर्ति में एक लात मारी। लात मूर्ति में चिपक गयी। वह तब छूटी जब उसने हनूमानजी के कहने से उस दरिद्र ब्राह्मण को और धन दिया। इसमें भक्ति का फल दिखाया ही गया है, हनूमान जी के स्वभाव की भी झाँकी मिल जाती है, और लोभ का दुष्परिणाम भी। ऐसी ही एक 'सकट चौथ' की कहानी है। दरिद्र जिठानी अत्यन्त दुखी है। सकट चौथ का दिन है। उसके पति ने भी उसे मारा है, फिर भी

सकट गोसाईं की पूजा उसने की है। रात में सकट गोसाईं आते हैं। उस के दरिद्र उपहार को स्वीकार करते हैं। वे उसके मकान में चारों कोनों में मल-विसर्जित करते हैं, और उस अभागिन के ललाट से पोंछ जाते हैं। प्रातः उठने पर उस अभागिन, को अपने घर में कंचन भरा दीखता है। जहाँ-जहाँ गुसाईं ने मल विसर्जन किया था, वह मल कंचन बन गया था। उसके ललाट पर भी सोना जगमगा रहा था। पति-पत्नी ने भर-भर कर डला कंचन बटोरा। एक डला भरें दो डले पैदा हो जायें। द्यौरानी ने यह देखा तो आगामी सकट-चौथ को उसने भी जिठानी की नकल की। सकट गुसाईं उसके भी आये, पर दूसरे प्रातः घर भर मल से भिनभिना रहा था। मल उठाये न उठता था। सकट गोसाईं ने जब उनसे यह वचन ले लिया कि वे अपने धन का आधा अपने जेठ-जिठानी को दे देंगे। तब उन्होंने मल-माया समेटी। इसमें भी ईर्ष्या का दुष्परिणाम दिखाया गया है। वास्तव में दुखी पर भगवान कृपा करता है। सकट-चौथ की एक कहानी और कही जाती है। उसमें कुम्हार के उस अवे की कहानी है जो बिना बालक की बलि लिए पकता ही नहीं था। एक ब्राह्मणी के इकलौते पुत्र की इसके लिए बारी आयी। वह ब्राह्मणी सकट-चौट का व्रत रहती थी। उसने अपने पुत्र को कुम्हार के यहाँ भेजा। बालक को अवे में बैठा कर चारों ओर जौ बो दिये। अवा तीन दिन में पक गया। बालक जीवित निकल आया। जौ हरे हरे खड़े थे। इन कहानियों से यह विदित नहीं होता कि ये सकट देवता कौन हैं। सकट नाम भी शुद्ध नहीं। यह 'संकट' है। चौथ का सम्बन्ध गणेश से है। गणेश संकट के देवता हैं ही। फलतः संकट देवता से अभिप्राय गणेश जी से है। वृहस्पति देवता की कहानी में वृहस्पति के व्रत रखने से सम्पन्नता प्राप्ति का उल्लेख है। कोई विशेष देवता सम्बन्धी वृत्तान्त नहीं है।

रविवार की कहानी अद्‌भुत है। सूरजनारायण की माँ थी और बहू थी। बहू कुछ काम नहीं करती थी। सूरजनारायण आधा धन स्त्री और बहू को, आधा शेष सृष्टि को देते। घर में तब भी टोटा रहता। सूरजनारायण ने बहू को खेलने को कण्टू दिये। वह घर-घर घूम आयी, सब काम में व्यस्त, किसी ने उसके साथ खेलना स्वीकार ही नहीं किया। वहू का भी मन काम करने में लगा। अब धन बढ़ने लगा। इन्होंने यज्ञ किया सूरजनारायण साधु बन कर आये। भिक्षा माँगी, सूरजनारायण के आसन पर बैठ कर, उन्हीं के थाल में खाना माँगा। उन्हीं के पलंग पर सोने का आग्रह। पेट के दर्द में सूरजनारायण की बहू के हाथ से चूर्ण चाहा। सूरजनारायण ने अपना रूप अपनी स्त्री और माँ को दिखाया। ठीक भाव से यज्ञ किया गया है या नहीं यह परीक्षा लेने इस रूप में आये थे। इसके एक अन्य रूपान्तर में साधू आया है, उसने सूरजनारायण की बहू के पेट पर हाथ फेरा है, वह गर्भवती हुई, पुत्र हुआ। सूरजनारायण ने कहा यह पुत्र किसका? मेरा होगा तो गंगासागर की धार में से निकल जायगा। वह निकल गया। इस प्रकार साधू को आरम्भ से ही सूरजनारायण का रूप नहीं बतलाया। लड़के परीक्षा के व्याज से उसे प्रकट किया है। इस कहानी में काम करने से समृद्धि होती ह, यह दिखाया है। एक कहानी में यज्ञ के स्थान पर कार्तिक में राईदमोदर की पूजा

का वर्णन है। दोनों में भाव यही है कि मन-कर्म-वचन से ही कोई मन्त्र या पूजा होनी चाहिए। पूर्व-जन्म के कर्म के फल से अनन्त चौदस की कहानी का सम्बन्ध है। एक व्यक्ति अनन्त भगवान की खोज में चला है। उसे मार्ग में कितने ही प्राणी तथा वस्तुयें मिली हैं, वे अपना दुःख उससे कहती हैं और कहती हैं अनन्त भगवान से पूछना कि हमारे लिये क्या है? अनन्त भगवान उनके पूर्व जन्म का वृत्त बता देते हैं और उससे मुक्ति का मार्ग भी बता देते हैं। उदाहरण के लिये दो नादियाँ सड़ रही हैं, उनका पानी कोई नहीं पीता। अनन्त भगवान बताते हैं कि वे पूर्व-जन्म की दौरानी-जिठानी हैं। वे आपस में लड़ती थीं, एक दूसरे के काम नहीं आती थीं, तभी आज वे सड़ रही हैं और उनका पानी कोई नहीं पीता। तुम एक का पानी दूसरे में, और दूसरी का पहली में डाल देना, उनका पानी बहने लगेगा, और तुम पानी पी लेना फिर सब पीने लगेंगे। इस विधि से कर्म-विपाक से मुक्ति मिली। 'शिव चौदस' की कहानी में यह बतलाया गया है कि मनुष्य और स्त्री के पेट पर पहले 'परिया' थी। उसे उठाकर देखा जा सकता था कि पेट में क्या है? पार्वती गरीब माता-पिता की पुत्री थीं। उसने शिवजी के लिये जो माँग-जाँच कर चावल-शक्कर का प्रबन्ध कर दिया, पार्वतीजी ने वही मोटा-झोंटा खाया, किन्तु शिवजी से कहा जो तुमने खाया वह मैंने। पार्वतीजी के सो जाने पर शिवजी ने पेट की परिया उघार कर देखा तो उन्हें भेद विदित हो गया। पार्वतीजी से उन्होंने कहा तो वे बहुत दुखी हुई। तभी से पेट की परिया उघरनी बन्द हो गयी। इसमें स्त्री की मानरक्षा का भाव व्याप्त है, अन्य कोई नैतिक उद्देश्य नहीं। शिवजी पार्वतीजी से सम्बन्धित सोमवार की कहानी है। इसमें शिवजी ने पार्वतीजी के कहने से एक सेठ-सेठानी को बारह बरस के लिए सन्तान दी। वह लड़का मामा के काथ काशी पढ़ने गया। मार्ग में एक काने वर के स्थान में उसे वर बनाकर उसका विवाह हुआ। वह लड़की के चीर पर लिख गया। लड़की उसी की होकर रही। वह काशी में पढ़ा। बारह वर्ष जिस दिन पूरे हो रहे थे उस दिन उसने ब्राह्मण-भोज किया। ठीक समय जब कि ब्राह्मण भोजन के लिए बैठे उसकी मृत्यु। काशी में शोर मच गया। पार्वती ने आग्रह करके उस स्त्री की आधी उम्र उसे देकर उसे जीवित किया। सभी प्रसन्न हुए। इसमें पार्वती की करुणा प्रकट हुई है। इसी प्रकार शुक्र देवता की कहानी में सूक डूबते स्त्री की विदा कराने का निषेध है। एक पुरुष सूक डूबते स्त्री को बिदा करा के ले चला। वह मार्ग में पानी लेने गया तो शुक्र उसका सा वेष बना कर उसके रथ को ले चले। वह पुरुष पीछे से आया। अब दोनों में स्त्री के लिए झगड़ा। गाँव के न्याय में भेद खुला। शुक्र ने रहस्य बतलाया। शनि की कहानी में शनि के आने पर दुःख होना अनिवार्य है, यह प्रकट किया गया है ब्राह्मण शनि के प्रकोप से बचने एक नदी के किनारे तपस्या करने गया। राजा के दो राजकुमारों के शिर कट गये। किसने काटे यह ढूंढने दूत निकले। ब्राह्मण नदी के पास दो तरबूज बह कर आये, राजकुमारों के शिर बन गये, दूत पकड़ ले गये। फाँसी का दण्ड। शनि ने रहस्य बताया। 'आस मइया प्यास मइया' की भी एक कहानी कही जाती है। इसमें एक बहू ने चार डोकरियों का न्याय किया है। चार डोकरियाँ थीं भूख मइया, प्यास मइया, नींद मइया, आस मइया। इनमें झगड़ा उठ खड़ा हुआ था कि

कौन सबसे बड़ी । बहू ने आस मइया को सबसे बड़ा बताया । उसके पैर पूजे । 'आशा' का यह 'माता' रूप लोकवार्त्ता के अनुरूप है और जन-जीवन में आशावादिता का संचार करता है ।

कुछ अनुसन्धान—इन कहानियों में देवी-देवताओं का वह रूप हमें नहीं मिलता जो धर्मगाथाओं में दिया हुआ है । इन कहानियों के द्वारा इस धार्मिक लोकवार्त्ता और धर्मगाथा का अन्तर स्पष्ट देख सकते हैं । देवताओं के कार्य में विलक्षणता तो है, या वे देवता अपने व्यक्तित्व में बहुत ही साधारण व्यक्ति के रूप में आये हैं । शिव, गणेश, हनुमान, सूर्य सभी का रूप अत्यन्त साधारण है । शिव पार्वती के पेट की परिया उघार कर देखते हैं सन्तुष्ट नहीं होते. गणेश मलमाया फैलाते मिलते हैं, हनुमान बनिया का पैर ही पकड़ लेते हैं । सूर्य अपनी माँ स्त्री के बीच में बहुत ही साधारण हो गया है । धर्म-गाथाओं के देवताओं में जो दिव्यता का ओज सदा वर्तमान रहता है, वह लोकवार्ता में, भले ही वह धार्मिक लोकवार्ता ही क्यों न हो, नहीं रह जाता ।

सर्प सम्बन्धी कहानियों में सर्प को देवता की भाँति नहीं उपस्थित किया गया । उनमें मानवीय कृतज्ञ-भाव दिखाया गया है । वे रूप बदल कर मनुष्य हो सकते थे यह इन कहानियों से सिद्ध है । भूमिगर्भ में उनके बड़े-बड़े भवन थे, उनमें सब कोई नहीं जा सकते थे । साधारण सर्प-वार्ताओं में सर्पमणि के साथ जल-मार्ग से अपने पाताल-प्रदेश को जाते हैं । यहां सर्प के बिल का उल्लेख है । केवल 'दूबरी सातें' की कहानी में प्रसंगवश सर्प और जल का सम्बन्ध प्रकट किया गया है । पुरुषवेषी सर्प से जब उसकी स्त्री उसकी जाति पूछती है तो वह पानी में जाकर ही अपना वास्तविक रूप प्रकट करता है । हमें जो दूबरी सातें की कहानी व्रज में प्रचलित मिली है, वह अधूरी-सी लगती है । उसका पूर्वभाग यह बतलाता है कि सर्प किस प्रकार पुरुष बना । इस कहानी का सम्बन्ध उस दुखिया से है जिसने अपने पति को प्रसन्न करने के लिए यह कह दिया था कि उसके पुत्र हुआ है, यद्यपि वह बाँझ थी । इस झूठ को वह बनाये ही चली गयी, यहाँ तक कि विवाह सम्बन्ध भी पक्का हो गया । राजकुमार की बारात भी चल पड़ी, माँ साथ गयी, पर रो रही थी कि अब आगे कैसे विवाह होगा । बारात एक तालाब के किनारे रुकी कहीं सर्प ने दुखी होकर उस माँ के पुत्र का रूप धारण कर माँ को प्रसन्न किया । सर्प राजकुमार का विवाह हो गया । वह सर्पिणी थी, जो अपने पति का वियोग न सह सकने पर उसे पुनः प्राप्त करने आई थी । उसी राजकुमारी की जाति पूछने के लिए विवश किया । राजकुमार ने कहा कि उसकी जाति न पूछे, पूछने पर पछताना पड़ेगा, पर त्रियाहठ जो ठहरा । तब वह पानी में जाकर सर्प बना । इस पूर्ण कहानी का मूल वेद की 'भैकी' वाली कहानी में हो सकता है । 'भेकी' एक सुन्दरी राजकुमारी थी । एक राजकुमार उस पर मोहित हो गया, उससे विवाह करना चाहा । भेकी ने कहा मुझे स्वीकार है किन्तु आप कभी मुझे पानी की बूँद भी न देखने देंगे । उसने स्वीकार कर लिया । एक दिन बहुत क्लान्त होकर राजकुमारी ने पीने का पानी माँगा । राजकुमार अपनी प्रतिज्ञा भूलकर जल उसके सामने ले गया, वह लुप्त हो गयी । भेकी की कहानी सूर्य उदय और अस्त की कहानी है ।[१] यह भेकी

लोकवार्त्ता में अनेकों रूप ग्रहण कर चुकी है। यही सर्प राजकुमार के रूप में इस कहानी में आया है। जल से निकला, जल में विलीन हुआ।

ओघद्वादशी की कहानी में राजा द्वारा खुदबाये तालाब में उस समय जल आता है। जब उसे इकलौते पुत्र और उसकी पुत्रबधू की बलि दी जाती है। इस बलि का उल्लेख मदारी के ढोले के अन्तिम भाग में भी हुआ है।[२] मनुष्य बलि का एक रूप सकट-चौथ की कहानी में भी है, यद्यपि इस कहानी में सकट देवता की कृपा से उस बालक की रक्षा हो जाती है। अबे में से बालक के जीवित निकलने की घटना प्रह्लाद की कहानी में बिल्ली के बच्चों के जीवित निकलने से मिलती है।

अहोई आठें में स्यापिन अथवा स्याहू द्वारा स्त्री के छः सात बच्चों का अपहरण का भाव कुछ दूरान्वेष से वृत्र की वैदिकवार्त्ता में मिल जाता है। पर वस्तुतः वही भाव है, यह आग्रहपूर्वक नहीं कहा जा सकता। सर्प वृत्र है यह तो निर्विवाद है, वह स्त्रियों का अपहरण करता है, यह साँपिन बच्चों का अपहरण करती है। वृत्र से स्त्रियों की मुक्ति इन्द्र करता है। यहाँ वह स्त्री ही स्यांपिन को प्रसन्न कर उसकी तुरपुती में बन्द बालकों को प्राप्त कर लेती है

अनन्त चौदस की कहानी का संविधान 'जैन' कहानी का संविधान है। इसमें पूर्वजन्म का विवेचन जैन प्रणाली सिद्ध करता है। 'अनन्त' की व्याख्या भगवान का एक नाम मानकर हम कर सकते हैं, पर जैनियों में 'अनन्त' नाम के एक प्रसिद्ध तीर्थंकर हुए हैं। इसी कहानी में नदियों की वार्त्ता मानसरोवर और रावनहृद के सम्बन्ध में प्रचलित एक तिब्बतीय वार्त्ता से मिलती है।

भैयादूज की कहानी का संविधान 'यारु होइ तौ ऐसौ होइ' के अन्तर्राष्ट्रीय कथा-विधान से मिलता है। इसमें मित्र का कार्य बहिन ने किया है। वह भाई से पृथक होकर जब पानी पीने जाती है तब भाई पर आने वाली विपत्तियों का ज्ञान उसे होता है। ब्रज में प्रचलित भैयादूज की सभी कहानियों में ऐसा लगता है कि कुछ छूट गया है। वह तालाब के किनारे पर देखती है कि शिलायें गढ़ी जा रही हैं। वह बढ़ई या ग्वारिया से पूछती है कि किसके लिए ये गढ़ी जा रही हैं। वहाँ उसे विदित होता है कि 'अनकोसी के भइया' को। अब शिला का ज्ञान तो उसे यहाँ से हुआ। वृक्ष के गिरने, सर्प के आने, पानी के सूखने का वृत्त, वह कैसे जान सकी? इनके निराकरण का उपाय उसे कहाँ मिला? यहाँ अवश्य ही कहानी की एक वार्त्ता लोककथाकारों ने भुला दी है और वह ब्रज भर में भुलादी गयी है। धोबिन अथवा कुम्हारिन के गदहों की लीद उठा कर धोबिन कुम्हारिन की बात और भाएला प्राप्त करने और धोबिन कुम्हारिन की उँगली में अमृत होने की बात इस कहानी में अनोखी है।[१] यह कहीं-कहीं प्रचलित है; कहीं-कहीं यह कहानी इसकी अपेक्षा नहीं रखती। बहिन सर्प को मुकट में देख लेती है और उसमें सुइयाँ छेद कर सर्प को मार देती है, इस संस्करण में सर्प के काटने और

---

१. देखिये—बिलियम टाइलर आलकाट, ए० एम० लिखित, 'सनलोर' आव आल एजेज', पृष्ठ १२१।

२. देखिये—ब्रजलोक साहित्य का अध्ययन, दूसरा अध्याय, पृष्ठ १०४।

भाई के मरने पर धोबिन कुम्हारिन की अँगुली से अमृत डालने की आवश्यकता ही नहीं रही।

दिवाली की कहानी भी भारत भर में प्रचलित विदित होती है। इण्डियन एण्टीटक्वेरी में इसी कहानी का रूपान्तर जो अन्य प्रान्तों में प्रचलित है, दिया हुआ है। यहाँ तक व्रत के अंग वाली कहानियों के साथ माहात्म्य-बोधक कहानियों का भी परिचय दिया जा चुका है।

परिशिष्ट

(२)

थापे : चीतने

प (२) भारत भर में विविध व्रतानुष्ठानों, त्योहारों तथा संस्कारों के अवसर पर भूमि या भित्ति (भीत) पर विविध रूपेण चित्र बनाने की प्रथा है।

प (२) १. व्रज में ये कई प्रकार के होते हैं।

१— चीतने
२— थापे
३— धरने
४— भरने
५— काढ़ने
६— लिखने
७— खोदने
८— जमाने

प (२) २ **चीतने**—सामान्यतः तो यह शब्द बंगाल के चित्तिर[1] की भांति प्रत्येक प्रकार के लोक-चित्रांकन के लिए प्रयोग में आता है। इसी प्रकार इसी के पर्याय के रूप में 'लिखने' शब्द का भी प्रयोग हो सकता है। प्रत्येक प्रकार का लोक-चित्रांकन 'लिखना' कहा जा सकता है। फिर भी इनके विशेष अर्थ भी होते हैं।

प (२) २. १. **चीतने'** का विशेष प्रयोग विवाहादि अवसरों पर मिठाई आदि भर कर भेजने के लिए जो घड़े प्रस्तुत किये जाते हैं उन पर चित्र बनाने के लिए आता है। वे घड़े चीते जाते हैं। चीतने के लिए घड़ों पर आटा और हल्दी का लेप तैयार कर उसे लीप दिया जाता है। सूखने पर महावर से उस पर मांगलिक चित्र बना दिये जाते हैं। कभी-कभी ये घड़े गोबर से भी चीते जाते हैं। इस रूप में ये पुत्र के जन्म के समय चीते जाते हैं और 'चरुए' कहलाते हैं। गोबर की बनायी गयी बत्तियों को चिपका-चिपका कर विविध मांगलिक चिन्ह 'स्वस्तिकादि' 'चरुए' पर चीते जाते हैं।

---

१. देखिये—जे० डी० एल० सी० फोक रिक्युअल ड्राइंग आफ बंगाल, पृष्ठ ८२।

प (२) ३ **'थापे'**—यों तो राहुल जी ने थापे शब्द का प्रयोग बंगाली 'ग्रालपना' के लिए किया है, जिसके ग्रन्तर्गत सभी प्रकार के चीतने-काढ़ने ग्रादि ग्रा जाते हैं किन्तु ब्रज में इस शब्द का प्रयोग विशेष ग्रर्थ में होता है। हल्दी या रोली से पूरे हाथ की छाप या छाप तथा मुट्ठी बाँध कर ग्रंगूठे के दूसरे ग्रोर के भाग की छाप या थाप ही थापे के ग्रन्तर्गत ग्राती है। विवाह के ग्रवसर पर नवागत वधू ग्रपने कुटुम्ब-परिवार के लोगों के घरों में जाती है, तो उसे प्रत्येक घर में ग्रपने हाथ के थापे लगाने होते हैं। इसी प्रकार जब विवाह का मंडप या मांड़वा छाया जाता है तब उसे छाने वाले मान्य की पीठ पर पूरे हाथ के थापे दिये जाते हैं।

प (२) ४ **धरने**—धरने, काढ़ने ग्रौर लिखने ऊपर से सामान्यतः पर्यायवाची प्रतीत होते हैं, कभी-कभी इनका उपयोग पर्याय की भाँति होता भी है—यथा 'दिवाली धरिग्राई का ? दिवारी काढ़ि ग्राई का ? या दिवारी लिखि लई का ? पर 'धरना' शब्द सामान्यतः ऐसे प्रयत्नों के लिए ग्राता है जिनमें किसी पदार्थ विशेष से कोई उठा हुग्रा या उभरा हुग्रा चित्र खड़ा किया जाता है, जैसे 'गोवर्द्धन' ग्रौर 'कोट' बनाने में धरने की क्रिया काम में ग्राती है। दोनों गोबर से धरे जाते हे। 'घरगुली' पर भी ग्राटे से टिकुलियाँ धरी जाती हैं।

प (२) ५. **भरने**—'भरने' कोई पारिभाषिक शब्द नहीं पर यह चीतने को एक विशेष क्रिया ग्रवश्य है, जिससे इस क्रिया से प्रस्तुत चित्र दूसरों से भिन्न हो जाते हैं। जब कोई चित्र रंगों को भरकर बनाया जाता है तो उसे भरने की क्रिया के ग्रन्तर्गत रखा जाता है सभी चित्र नहीं भरे जाते। न्यौरता को रंगों से भरा जाता है, 'दसमी' के दिन, दशहरे की पूजा से पहले। कितने ही परिवारों में कुछ ग्रन्य व्रतों के चित्र भी रंग कर प्रस्तुत किये जाते हैं।

प (२). ६. **काढ़ने**—यों तो किसी भी प्रकार के चित्र का ग्रंकन 'काढ़ने' के ग्रन्तर्गत ग्रा सकता है, जो केवल रेखाग्रों से ही खींचा गया हो। पर काढ़ना शब्द विशेषार्थक है "कढ़ाई" के लिए —कपड़ों पर सुई-तागे से जो रेखांकन होते हैं प्राय: वे ही 'काढ़ने' कहलाते हैं। व्रतानुष्ठानों में कहीं कहीं सुविधा के लिए दिवालों पर चित्र न बनाकर कपड़ों पर ही काढ़ लिये जाते हैं। ऐसा एक चित्र हमें लालटूल पर कढ़ा हुग्रा करवा चौथ का मिला है। इन चित्रों को दिवाल पर टाँग उनकी कर पूजा कर ली जाती है। यह प्रणाली शहरों में पक्की मोज़ेक की दीवालों के कारण काम में लाई जा रही है ऐसा प्रतीत होता है।

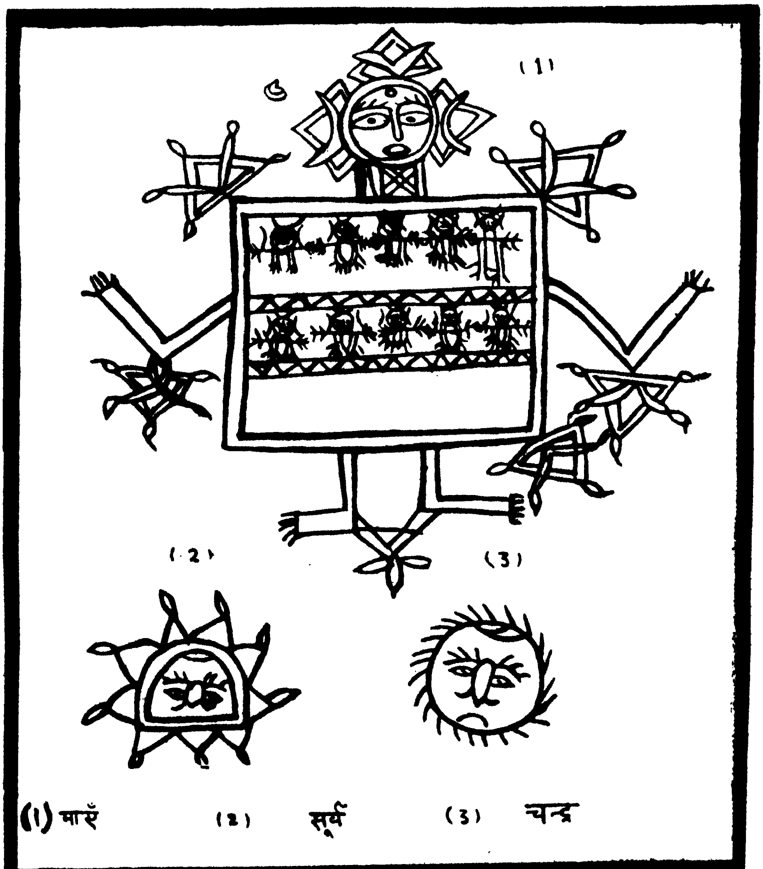
प (२). ७. **लिखने**—लिखने एक सामान्य शब्द है, पारिभाषिक नहीं। किसी भी प्रकार के काढ़े हुए चित्र लिखने कहे जा सकते हैं। पर कभी-कभी पट्टों या पाटों पर गौरें या कुछ ग्रंकन करके पूजा जाता है, ग्रौर उन्हें 'लिखने' कहा जाता है।

प (२). ८. **खोदने**—कुछ व्रतों या ग्रनुष्ठानों में भूमि खोद कर कोई ग्राकार प्रस्तुत किया जाता है, ग्रौर उस पर कोई ग्रनुष्ठान किया जाता है। यह खोदना कहलाता है। ब्रज में होली के ग्रवसर पर 'घरगुली' खोदी जाती है। फिर उस पर प्रतिदिन होली तक घुरगुली धरी जाती है।

प (२). ९. जमाने—विविध सूखे रंगों को जमा कर जब कोई चित्र प्रस्तुत किया जाता है, प्रायः भूमि पर, तो वे 'जमाने' क्रिया से प्रस्तुत किये माने जाते हैं। मंदिरों में प्रायः सांझियाँ जमायी जाती हैं। सामान्य व्रतों में यह प्रणाली विशेष काम में नहीं लायी जाती। यज्ञादि के अवसर पर वेदी के सजाने में सूखे रंगों का प्रयोग होता है। घरगुली धरने में सूखे रंग तो काम में आते हैं पर वस्तुतः वे रंग जमाये नहीं जाते। हाँ, रंग भरनी एकादशी के दिन, कहीं-कहीं घरगुली पर भी रंग जमाये जाते हैं, कोई चाहे तो जमा सकता है। कोई वैधानिक रोक नहीं।

प (२). १०. व्रतों और अनुष्ठानों के अवसरों पर जो चित्र बनाये जाते हैं वे उन व्रतों के विवरणों के साथ यथास्थान दे दिये गये हैं। किन्तु कुछ ऐसे चित्र और चौक हैं, जो हमें प्राप्त हुए हैं और ऊपर नहीं दिये जा सके हैं। उन्हें भी यहाँ दिया जाता है।

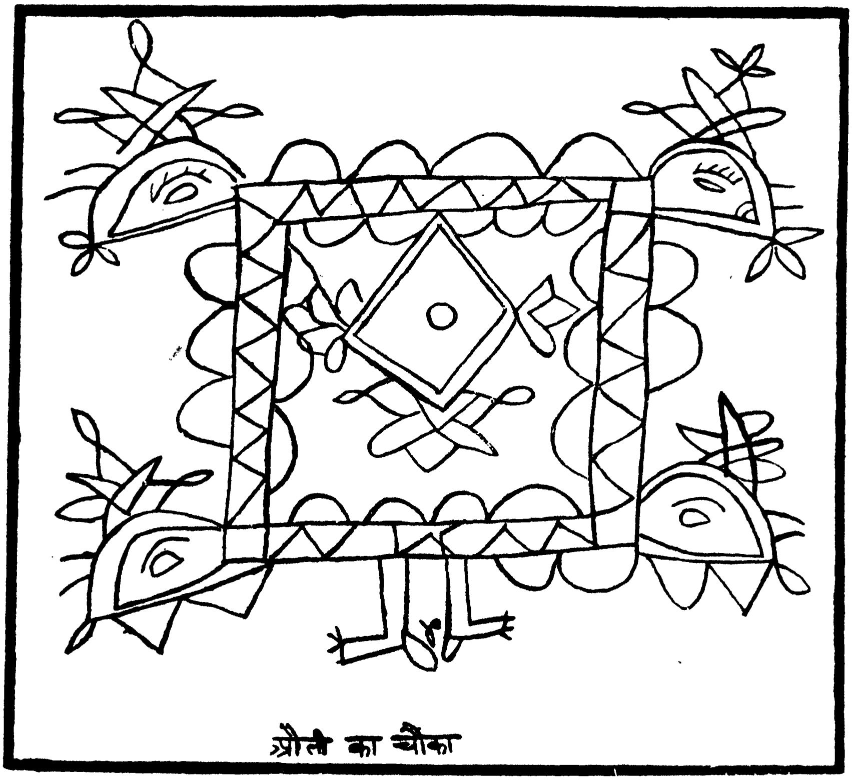
प (२). १०. १ माएँ



प (२). १०. १. (अ) ये माएँ हैं। विवाह आदि संस्कारों पर यह माएँ अंकित

की जाती हैं। घर में संस्कारोत्सव में सम्मिलित होने जब अतिथि आते हैं, तब इन्हें चित्रित करके भाई बंधु पूजते हैं। यह पूजा शुभ शकुन कर की जाती है। घर का सबसे बड़ा आदमी इसे बनाता है।

प (२)-१०. २.



प (२) १०. २. (अ) यह चौक बहुत महत्व पूर्ण है। कुछ जातियों म यह पुत्र-जन्म, मुंडन, जनेऊ, विवाह आदि के अवसर पर पहले ही दिन लगाया जाता है।

प (२) १०. २ (आ) इस चित्र में कुछ बातें विशेष ध्यान आकर्षित करती हैं। एक तो यह चौक 'ओली का चौक' कहलाता है। नाम के अतिरिक्त इस चौक के पैर भी बनाये गये हैं। चारों कोनों पर चौक के ही रूप हैं जिनमें आँख सी दिखायी गयी है। ऊपर मयूरमुकुट जैसा भी दिया गया है। भीतर वर्गाकार में सूर्याकार गोला है। लोकवार्त्ता की दृष्टि से इनका अनुसंधान अपेक्षित है।

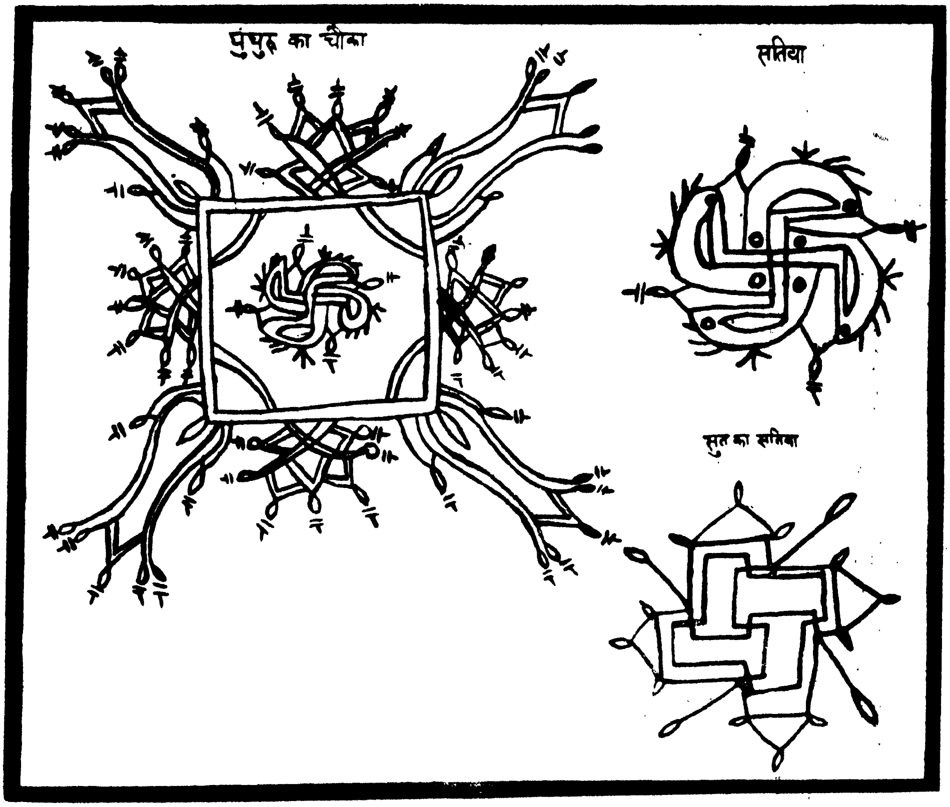
प (२) १०. ३.

प (२) १०. ३. (अ). ऊपर के चित्र में तीन चित्र हैं। उनके नाम चित्र के साथ लिखे हुए हैं।

प (२)१०. ३. (अ-१) इनमें से घुंघरू का चौक झोली के चौक के ऊपर नीचे लगा दिया जाता है । यों भी यह शुभावसरों पर बनाया जा सकता है ।

प (२) १०. ३. (अ-२) 'सुत का सतिया' कार्तिक महिने में कार्तिक स्नान के दिनों में पूरे महिने भर तुलसा जी के सामने रखा जाता है ।

प (२) १०. ३.



प (२) ११. इन चित्रों में विविध अभिप्राय (motif) का उपयोग किया गया है । उन अभिप्रायों का उल्लेख यहाँ कर देना आवश्यक प्रतीत होता है—

अभिप्रायः (ये हैं)
सोना

१. फूल-पत्तियाँ—सजावट के लिये
२. त्रिकोण कंघा कृति ,,
३. शतपद स्वस्तिक
४. द्विमयूर मुखी स्वस्तिक

५. त्रिशूल या तिपतिया शीर्ष
६. त्रिकोणोदर
७. द्विमुखी सर्पाकार शीर्षी स्वस्तिक चतुष्क
८. त्रिशूल शीर्ष हीन द्विमयूर मुखी

नाग पंचमी

९. नाग रेंगते हुए
१०. नाग कुंडलित
११. नाग मानवमुखी
१२. अर्द्ध चंद्र
१३. सूर्य
१४. अंगीठी या यज्ञ-कुंड

ओघ द्वादशी

१५. नाँद
१६. गाय-बछड़ा
१७. चमचा
१८. चकला-बेलन
१९. घड़ा
२०. सात-सात कौरें
२१. चूल्हा कड़ाही
२२. मानवाकृति

करवाचौथ

२३. बड़
२४. गणेश जी
२५. अक्षय वट
२६. बहिन अर्घ्य देती हुई
२७. गौर
२८. गोवर्द्धन
२९. पढ़ेली (पन्हैढ़ी) (जलपूर्ण घट रखने की चौकी)
३०. तुलसी
३१. बिछुए
३२. करुए वाली कुम्हारिन
३३. मृत पति, घास उखाड़ती हुई पत्नी
३४. स्याहू
३५. करुए
३६. चौकी
३७. स्वस्तिक चौक

३८. मन्दिर द्वार (गौर के ऊपर)
३९. सारफां से—चौपड़िया
४०. छबरिया
४१. पाँच दौरानी जिठानी या मातृकाएँ
४२. सरमन काँवरि
४३. कृष्ण को सिर पर लिये वसुदेव
४४. हनूमान जी
४५. कुम्हारिन के साथ कुम्हार करवे वाले
४६. तोता-तोती
४७. चौक-स्वस्तिक
४८. अर्घ्य देती स्त्रियाँ
४९. त्रिशूल धारणी देवी
५०. तराजू

अहोई अष्टमी

५१. सजावट युक्तपाटियों में
अ—फूल
आ—फूल-पत्तियाँ
इ—झिझरी
५२. कंघी
५३. शृंग-शीर्ष
५४. जंजीरी शिखर
५५. पक्षी
५६. पशु
५७. शीर्ष तोरण
५८. चौकी
५९. शिव-गंगा
६०. ऐरावत
६१. सुरा-सुरापायी
६२. आभूषण

देवठान

६३. धनुर्धारी
६४. तालाब

फुलैरा घरगुली

६५. टिकुलियाँ
६६. पुस्तक
६७. विद्यार्थी
६८. द्वारपाल

क० मुं० हिन्दी तथा भाषाविज्ञान विद्यापीठ के
प्रकाशन

१. "ग्रंथ-वीथिका।" अलभ्य एवं अप्रकाशित हस्तलिखित तथा अप्राप्य मुद्रित ग्रंथों का संग्रह। १९५६ के अंक में नौ ग्रंथ हैं और १९५७ के अंक में छः ग्रंथ हैं। मूल्य—१०) रु०।

२. "हिन्दी धातु-संग्रह।" प्रसिद्ध भाषातत्त्ववेत्ता हार्नले के निबन्ध का हिन्दी रूपान्तर। मूल्य—२) रु०।

३. "जाहरपीर गुरु गुग्गा।" सं०—डा० सत्येन्द्र। जाहरपीर का लोकगीत तथा उसकी गवेषणापूर्ण विवेचना। मूल्य—३|५० रु०।

४. "भारतीय ऐतिहासिक उपन्यास।" प्रमुख भारतीय भाषाओं में ऐतिहासिक उपन्यासों के विकास का अध्ययन। मूल्य—२|५० रु०।

५. "छन्दोहृदयप्रक … सं०—डा० … —५) रु०।

६. "मानस में उवि … १५ न० पै०।

७. "अनुसंधान के … ल्य—२) रु०।

८. "अली आदिल … र्मा और श्री मुबारिज … रु०।

९. "शोला का क … ोला') सं०—डा …) रु०।

१०. चंदायन।" … ० रु०।

११. "नल-दमन। … ७) रु०।

१२. "पदमावत।" … घोषाल।

१३. "पिंगल-संग्रह … र प्रसाद।

१४. "कबीर का क … र प्रसाद।

१५. "तुलनात्मक … गानोव। … ण शुक्ल।

१६. बंगाल की … सत्येन्द्र।

१७. "ब्रज-लोकवा … सत्येन्द्र।

१८. "शालिमाला- … द शास्त्री।

१९. "नाटक-संग्रह … र माथुर। … र ओझा।